सन्त-मत दर्शन

भाग १

महाराज चरणसिंहजी

राधास्वामी सत्संग, ब्यास



पहली बार : ५०००—अक्टूबर, १९७०



प्रकाशक—
के. एल. खन्ना,
सेक्रेटरी
राधास्वामी सत्संग, ब्यास
डेरा बाबा जैमलसिंह
(ज़िला अमृतसर, पंजाब)

मुद्रक—
माडर्न प्रिन्टरी लिमिटेड,
५५, कडावघाट इन्दौर—२

अनुक्रमणिका

प्रकाशक की ओर से

प्रस्तुत पुस्तक हुजूर महाराज चरणसिंहजी की प्रसिद्ध अंग्रेजी पुस्तक "लाइट ऑन सन्त-मत" का हिन्दी अनुवाद है। इसमें हुजूर महाराजजी के चार सत्संग और देश-विदेश के सत्संगियों तथा जिज्ञासुओं को लिखे पत्रों में से उद्धरण है। सत्संगों का अनुवाद मूल गुरुमुखी से किया गया है तथा इसमें महाराजजी के वचनों और शैली को यथा-वत रखने की कोशिश की गई है।

पत्रों का अनुवाद अंग्रेजी से किया गया है। इन पत्रों में जहाँ एक ओर सन्त-मत के सिद्धान्तों का स्पष्ट विवेचन है, वही साथ-साथ अभ्यास की सही विधि और प्रेम, भक्ति तथा नियमितता के साथ अभ्यास करने की प्रेरणा भी है। यद्यपि ये पत्र सत्संगियों और जिज्ञासुओं को उनके पत्रों के उत्तर मे लिखे गये है, किन्तु इनमें अभ्यास के मार्ग मे आनेवाली कठिनाइयों का हल तथा सांसारिक व सामाजिक उलझनों से लेकर भोजन, विवाह, आचार-व्यवहार आदि व्यक्तिगत समस्याओं के बारे में भी सुझाव हैं जो हर संतसगी के लिये उपयोगी हो सकते है, इसीलिये इन पत्रों को आम संगत के लाभ के लिये प्रकाशित किया गया है।

सभी सन्तों का एक ही सन्देश है। वे बताते है कि आत्मा परमात्मा का अंश है, उस दिव्य ज्योति की एक किरण है, परन्तु यहाँ स्थूल मण्डल मे आकर वह उस परमपिता को भूल गयी है, मन और माया के परदों ने उसके प्रकाश को ढँक दिया है। सन्त हमे इस परदे को बेध कर वापस अपने निज-धाम जाने का मार्ग बतलाते है। हम भ्रमों मे उलझकर परमात्मा को बाह्य संसार में, जंगलों-पहाड़ों में, तीर्थों-सरोवरों में ढूँढ रहे है। वे हमें इस भ्रम में से निकाल

कर परमात्मा को अपने अन्तर में तलाश करने की सिर्फ प्रेरणा ही नही देते, वल्कि विधि भी सिखाते है।

सन्तो का यह क्रम अनादि काल से चला आ रहा है। कवीर, गुरु नानक, तुलसी साहिव, पलटू, दादू, मौलाना रूम शम्स तवरेज, स्वामीजी महाराज, वावा जैमलसिंहजी, महाराज सावणसिंहजी, सरदार वहादुर जगतसिंहजी आदि सभी सन्त उसी परम-पिता के धाम से आये और यहाँ शब्द और नाम का प्रचार करके वापिस उसी मे समा गये। सन्तों की इसी महान परम्परा मे अनुपम आत्मिक तेज और रूहानी शोभा से परिपूर्ण हुजूर महाराज चरणसिंहजी आज देश-विदेश के सत्संगियो और अध्यात्म के जिज्ञासुओं का मार्ग-दर्शन कर रहे हैं और सभी धर्म, जाति और देशों के जिज्ञासु अपने समस्त भेद-भाव भुलाकर उनसे रूहानी जाग्रति और आत्मिक लाभ प्राप्त कर रहे है।

इन पत्रो का अनुवाद लखनऊ निवासी वहिन कुमारी कमला पुरुस्वानी द्वारा हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान प्रो. ग--प्रसाद वहुगुणा के मार्ग-दर्शन मे किया गया है। प्रेस के कार्य तथा पाडु-लिपि तैयार करने मे इन्दौर निवासी श्री रमेन्द्र मोहन जोशी ने व-ुत सहायता की है। इस प्रेम-पूर्ण सेवा के लिये हम कुमारी पुरुस्वानी, प्रो. वहुगुणा और श्री जोशी के आभारी है।

प्रस्तुत पुस्तक अग्रेजी मे वहुत लोक-प्रिय हुई है और कुछ ही वर्षो मे इसके तीन संस्करण छप चुके है। आशा है परमार्थ के प्रेमी इस हिन्दी अनुवाद को भी प्रेरक और लाभ-प्रद पायेगे।

के. एल. खन्ना
सेक्रेटरी
राधास्वामी सत्संग व्यास

डेरा वावा जैमलसिंह,
अक्टूबर, १६७०

वाणी हुज़ूर स्वामी जी महाराज

चितावनी भाग दूसरा

बचन पन्द्रहवाँ, शब्द पन्द्रहवाँ

मन रे क्यो गुमान अब करना ।

तन तो तेरा खाक मिलेगा ।
चौरासी जा पड़ना ॥१॥

दीन गरीबी चित मे धरना ।
काम क्रोध से बचना ॥२॥

प्रीत प्रतीत गुरू की करना ।
नाम रसायन घट में जरना ॥३॥

मन मलीन के कहे न चलना ।
गुरु का बचन हिये बिच रखना ॥४॥

यह मतिमद गहे नहि सरना ।
लोभ बढाय उदर को भरना ॥५॥

तुम मानो मत इसका कहना ।
इसके संग जगत बिच गिरना ॥६॥

इस मूरख को समझ पकड़ना ।
गुरु के चरन कभी न विसरना ॥७॥

गुरु का रूप नैन मे धरना ।
सुरत शब्द से नभ मे चढना ॥८॥

राधास्वामी नाम सुमिरना ।
जो वह कहे चित मे धरना ॥९॥

सत्संग के वचन

मन रे क्यों गुमान अब करना ।

तन तो तेरा खाक रलेगा । चौरासी जा पड़ना ।।

यह श्री हुजूर स्वामीजी महाराज की वाणी है । हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है, हम उस परमात्मा रूपी समुद्र की बूँदे है और जब तक हमारी आत्मा वापस जाकर परमात्मा से नही मिलती, उसका जन्म-मरण के दु.खों से कभी किसी हालत मे भी छुटकारा नही हो सकता । इसीलिये हम सबको उस परमात्मा की तलाश है । महात्मा समझाते है कि यह मनुष्य चोला उस परमात्मा ने अपनी भक्ति और अपने प्यार के लिये हमे बख्शा है । चौरासी लाख योनियाँ भुगतने के बाद हमे यह मौका परमात्मा सिर्फ इसलिये देता है कि हम इस देह में बैठ कर मालिक की भक्ति कर सके और इस प्रकार देह की कैद से हमेशा के लिये छुटकारा प्राप्त कर सके । यह जो कुछ भी हम देख रहे है, यह चौरासी का बहुत बड़ा जेलखाना है । इस जेलखाने से निकलने का परमात्मा ने सिर्फ एक ही दरवाजा रखा है और वह है मनुष्य का चोला । जो मनुष्य इस चोले मे बैठ कर आत्मा और मन की गाँठ खोल लेते है, अपने आप को पह-चानने के योग्य हो जाते है, परमात्मा भी उन पर दया-मेहर करके उन्हे अपने साथ मिला लेता है । परन्तु अगर मन के अधीन हो कर इन्द्रियों के भोगों मे फँस कर दिन-रात बुरे व खोटे कर्म ही करते रहेगे, तो इन कर्मो का नतीजा हमें बार-बार इस चौरासी के जेलखाने मे आकर भुगतना पड़ेगा । गुरु नानक साहिब उपदेश देते है—

"लख चउरासीह जोनि सबाई,
माणस को प्रभि दीई वडिआई ।।
इसु पउडी ते जो नर चूकै
सो आइ जाइ दुखु पाइंदा ।।"

परमात्मा ने सारी दुनिया की रचना करके इसे चौरासी लाख जूनो मे बॉट दिया है। बडाई किसे बख्शी है? मनुष्य चोले को वडाई बख्शी है। यह सीढी का आखिरी डण्डा है। अगर पैर फिसलेगा तो नीचे आ गिरेगे और अगर मालिक की भक्ति करके मालिक से विसाल कर लेगे तो वह हमे अपने साथ मिला लेगा और फिर विछोह नहीं होगा। अगर हम परमात्मा को भूल कर, मन के ताबे होकर दिन-रात बुरे और खोटे कर्म करते रहते है तो इस सीढी से नीचे गिर जाते है, अर्थात मनुष्य के जन्म से वापस नरकों मे जाना पड़ता है, निचली योनियो में जाना पडता है, जिनमे से पहले ही बड़ी मुश्किल से निकले थे। गुरु रामदासजी समझाते है––

"काइआ नगरु नगरु है नीको विचि सउदा हरि रस कीजै ।।"

हमारा शरीर एक बडा सुन्दर नगर है। इसमे बैठ कर हम हरि का सौदा खरीद सकते है। ऐसा और कोई भी चोला नही है जिसमे बैठ कर हम यह सौदा कर सकें। मनुष्य का शरीर ही नाम रूपी दुकान है। इसमे आने का यही लाभ है कि हम नाम का सौदा खरीदे, मालिक की भक्ति करें। लेकिन हम दुनिया के जीव इस देह मे बैठ कर उस परमात्मा को भूल जाते है, विषय-विकार, शराब-कबाब से हमे फुरसत ही नही मिलती। हम समझते है, 'यह जग मिट्ठा, अगला किन डिट्ठा' और 'बाबर बायश कोश के आलम दोबारा नेस्त'। हम सोचते है कि शायद परमात्मा ने यह इन्सान का जामा हमे भोग-विलास या दुनिया के

धन्धे या कारोबार के लिये बख्शा है । हम इन्द्रियों के भोगों मे इतने फँस जाते है कि और तो और अपनी मौत को भी भूल जाते है । देख रहे है कि हमारे साथी किस तरह चले जा रहे है । उनको ले जाकर हम श्मशान-भूमि मे भी छोड आते है, लेकिन हमारे दिल मे यह विचार या खयाल पैदा नही होता कि एक दिन हमे भी इसी घाटी पर पहुचना है । हम समझे बैठे है कि शायद मौत लोगो के लिये है, हमारे लिये तो आमोद-प्रमोद है, दुनिया के धन्धे और कारोबार है । स्वामीजी महाराज हमे इस गफलत की नीद से वेदार करते है । आप फरमाते है कि भाई ! इस बात को अच्छी तरह सोच कर देख, इस दुनिया को आँखो के सामने रख कर देख, मौत के वाद तेरे सब यार-दोस्त, बहन-भाई इकट्ठे होकर तुझे उठाकर श्मशान भूमि मे ले जायेगे और जिस देह का तू इतना मान करता है, जिस पर तुझे इतना नाज है, उसे आग के सुपुर्द कर देगे या मिट्टी में दवा देगे और जिस तरह अब लोगो की मिट्टी हमारे पैरो के नीचे रौदी जा रही है इसी तरह हमारी मिट्टी भी लोगो के पैरो तले रौदी जायेगी । अगर हमारी यह दुर्दशा होनी है तो फिर हम मान किस चीज का करते है ! क्या जवानी का गरूर करते है ? कभी किसी का बुढापा नजर नही आया ? धन-दौलत का मान करते है तो क्या कंगालो को कभी सडको पर ठोकरे खाते नही देखा ? सेहत या अच्छे स्वास्थ्य का अभिमान करते है तो क्या अस्पतालो मे बीमारों की चीख-पुकार नही सुनी ? अतएव आप प्यार के साथ समझाते है कि मन मे अहकार नही करना चाहिये । कबीर साहब उपदेश देते है—

"लूट सके तो लूट ले, राम नाम नित लूट ।
अत काल पछताओगे, जब तन जाएगा छूट ।।"

जब अंत मे इस देह को छोड़ते है तब पछताना पडता है कि हमने इस देह में बैठ कर किस चीज को इकट्ठा किया, कौन-सी चीज है जो हमारा साथ देगी! जिनको सारी उमर अपना-अपना कहते थे उन्हें एक पल-भर में छोड कर अलग हो जाते है। कबीर साहिब फरमाते है—

"यह तन है कागज की पुड़िया, बूँद पड़त गल जाओगे।
कहत कबीर सुनो भई साधो, इक नाम बिना पछताओगे।"

जिस प्रकार कागज की पुडिया पर अगर पानी गिर जाता है तो कागज़ गल जाता है, इसी प्रकार हमारी देह को भी गल जाना है, आग या मिट्टी में जाकर खत्म हो जाना है। आखिर मौत के वक्त हमें पछताना पड़ता है कि हमने अपने अमूल्य समय को व्यर्थ में बर्बाद कर दिया। गुरु नानक साहिब फरमाते है—

"बिनु नावै को संगि न साथी, मुकते नामु धिआवणिआ।।"

भाइयो! नाम के बगैर कोई भी आपकी सहायता न तो कर सकता है और न कर सकेगा। आप किस चीज का मान करते है, किस बात का अहंकार करते है? वह कौन-सी चीज है जिसे हम अपना बना सकते है, जिसे अपना बना कर ही वापस जाकर हमें परमात्मा से मिलना है? वह नाम है। उसे तो भूले फिरते है, उसकी ओर तो हमारा कोई खयाल और ध्यान ही नही है, जिनका सम्बन्ध या तअल्लुक हमारी देह से है उनको हम सारी उम्र अपना अपना कहते है और उन्हें अपना बनाने की कोशिश करते है। महात्मा हमे इस बेसुधी की नीद से सचेत करते है और समझाते है कि भाई, उस अन्तिम समय को आँखों के सामने रख कर देख, देह या शरीर का मान क्या करता है! यह तो काल का पिजरा है, किराये का मकान है। किसी को चालीस-पचास साल के लिये मिला है, तो किसी को अस्सी नब्बे साल के लिये।

जब हमारा साँसों का भण्डार खत्म हो जाता है तो हम सबको इस देह को यही छोड़ कर जाना पड़ता है। कबीर साहिब फरमाते है—

"लकड़ी कहे लुहार को, तू क्या जारे मोहि।
इक दिन ऐसा आएगा, मै जारौगी तोहि ।।"

लुहार लकड़ी को जला-जला कर उसके कोयले बनाता है, लेकिन लकड़ी लुहार से कहती है कि कभी तूने उस वक्त के बारे मे भी सोचा है जब तुझे अपने अन्दर मिला कर मै भी इसी तरह तेरे कोयले बना दूँगी। कबीर साहिब आगे फरमाते है—

"माटी कहे कुम्हार को, तू क्या रूँदै मोहि।
इक दिन ऐसा होयगा, मै रूँदूँगी तोहि ।।"

कुम्हार मिट्टी को रौद-रौद कर उसके बरतन बनाता है, परन्तु मिट्टी कहती है कि कभी उस समय के बारे में भी सोचने की कोशिश कर जब मे तुझे अपने अन्दर इसी तरह रूँध डालूँगी।

इसी प्रकार महात्मा हमे समझाते है कि जब आखिरी वक्त आता है तब हमे धर्मराज के पास जाना पडता है और हमारी कामनाओ तथा कर्मो के अनुसार जहाँ वह उचित समझता है वहाँ जाकर हमे जन्म लेना पड़ता है। एक देह की कैद से छुटकारा नही होता कि दूसरी देह का कलबूत पहले ही हमारे लिये तैयार खडा होता है। उसमे बाद में प्रवेश करते है, मौत आँखो के सामने पहले ही नाचना शुरू कर देती है। दस नम्बरियो की तरह हम सबको हथकड़ियाँ लगी ही रहती है, हम चौरासी के जेलखाने में फँसे ही रहते है। इसीलिये स्वामीजी महाराज हमे अच्छी तरह समझाते है :—

दीन गरीबी चित में धरना। काम क्रोध से बचना ।।

स्वामीजी महाराज हमारी हालत देखकर सिर्फ अफसोस ही नहीं करते, तरस ही नही खाते, बल्कि हमे इस जेलखाने से निकलने का साधन और तरीका भी बतलाते है। आप फरमाते है कि सबसे पहले काम और क्रोध से बचना है। ये दो ऐसी जबरदस्त ताकते है जिनके अधीन होकर हम ऐसे बुरे और खोटे कर्म कर बैठते है जिनका नतीजा भुगतने के लिये जन्म-जन्मान्तरों के चक्कर में पड़ जाते है। काम मे फॅस कर हमारी रूह नीचे की ओर गिरती है। क्रोध की अवस्था में हमारा ख़याल फैल जाता है। जब तक हम अपने ख़याल को वापस लाकर आँखो के पीछे इकट्ठा नहीं करेंगे, हम अपने घर की ओर कभी भी यात्रा नही कर सकेंगे। जब तक हमारा ख़याल काम-क्रोध में फॅसा हुआ है, तब तक हम उस नुक्ते या केन्द्र पर खयाल इकट्ठा ही नही कर सकते जहाँ से कि हमें अपने असली घर की ओर सफ़र शुरू करना है। आप देखे कि काम के प्रभाव में आकर हम अपना परिवार बढ़ा लेते है, रोजी पूरी नही पड़ती, सारे दिन दुखी रहते है और ऐसी ऐसी बुरी बीमारियाॅ मोल ले लेते है जिनका इलाज कराते सारी सारी उमर बीत जाती है। क्रोध मे आकर हम एक-दूसरे की जान तक लेने को तैयार हो जाते है, जिससे हमें जेलखानो मे जाकर चक्कियाॅ चलानी पडती है, फाॅसी के तख़्तों पर चढना पडता है। फिर पछताते है। पर उस वक्त कौन हमारी फरियाद व पुकार सुनता है। इसलिये महात्मा समझाते है कि काम-क्रोध से हमेशा बच कर रहना चाहिये। कबीर साहिब उपदेश देते है—

"कामी क्रोधी लालची, इन से भगति न होय।
भगति करे कोई सूरमा, जात बरन कुल खोय ॥"

कामी, क्रोधी तथा लालची कभी भी परमात्मा की भक्ति नही कर सकते। कोई सूरमा और बहादुर ही इन विकारो

मे से ख़याल निकालता है और उसी का ख़याल परमात्मा की भक्ति की ओर जा सकता है। कवीर साहिव और स्पष्ट रूप से समझाते है–

"जहाँ काम तहाँ नाम नहि, जहाँ नाम, नहि काम ।"

जहाँ काम है वहाँ नाम किस तरह आ सकता है, जहाँ नाम वस जाता है वहाँ काम किस तरह रह सकता है ? इसलिये हमे काम और क्रोध रूपी इन दोनो शत्रुओ को अपने अधीन करना है ताकि हम नाम-भक्ति कर सके, मालिक से मिलने के मार्ग पर चल सके ।

दूसरी सीख स्वामीजी यह देते है कि मन मे हमेशा नम्रता और दीनता रखना चाहिये । आखिर हम गरूर या अहंकार किस चीज का करते है ! हमारे पास ये दुनियावी चीज़ें कोई अनोखी नही आयी है । ये सव दुनिया वालो के पास होती रही है और है । परमात्मा हमें जितना अधिक देता है हमारे अन्दर उतनी ही अधिक दीनता और नम्रता आनी चाहिये । पानी हमेशा नीचे की ओर ही वहता है । हम व्यर्थ ही अहंकार में फँस कर अपने आपको वड़ा समझने लग जाते हैं । सन्तो-महात्माओ की वाणी, खास कर गुरु नानक साहिब की वाणी पढ कर देखें, कितनी नम्रता और दीनता से पूर्ण है । आप फरमाते है–

"कहु नानक हम नीच करमा, सरनि परे की राखहु सरमा ।।"

गुरु नानक साहिव इतने उच्च कोटि के महात्मा होकर, वल्कि खुद कुल मालिक होकर अपने आपको 'नीच करमा', 'दासन दास', 'लाला गोला' कह कर वर्णन करते है । हुजूर महाराजजी (वावा सावनसिह जी महाराज) अपने लिये कितने नम्रता-पूर्ण शव्दो का प्रयोग करते थे । महात्मा स्वयं अपनी जिन्दगी की मिसाल पेश करके हमे वताते है कि मन मे कितनी नम्रता तथा आजिजी होनी चाहिये । कवीर साहिव फरमाते है–

"बुरा जो ढूँढन मै गया, बुरा न मिलिया कोय।
जब दिल खोजा आपना, मुझ से बुरा न कोय॥"

जब अपने अन्दर खोज की तो पता लगा कि दुनिया मे हम से बुरा कोई नही। फिर फरमाते है –

"कबीर सब ते हम बुरे, हम तज भले सब कोइ।
जिन ऐसा कर बूझिया, मीत हमारा सोइ॥"

यह स्वाभाविक है कि जो मनुष्य अपने आपको नीचा समझेगा तथा अपनी त्रुटियो को देखेगा, वही उन्हे दूर करने की कोशिश भी करेगा। जो सारी उम्र दुनिया को ही बुरा तथा छोटा समझता है और अपने आपको अच्छा और बड़ा समझता रहता है, वह अपने दोष या नुक्स किस प्रकार दूर करेगा। उसके नुक्स तो और भी बड़े हो जाते है। हमारे मन मे जितनी अधिक नम्रता और दीनता होती है, हमारा ख़याल उतना ही अधिक मालिक की भक्ति की ओर जाता है। इसीलिये महात्माओ ने तन, धन और मन की सेवा रखी है ताकि हमारे मन में नम्रता तथा दीनता बनी रहे। जब हम इस तन के द्वारा साध-सगत की सेवा करते है तो हमारे अन्दर से खुदी या अहकार निकल जाता है। जो धन-दौलत का अहकार हमें एक-दूसरे के साथ बैठने नही देता, एक-दूसरे के साथ चलने नही देता, जब हम एक समान होकर साध-संगत की सेवा करते है तो वह अहंकार हमारे अन्दर से अपने आप निकल जाता है। सन्तो-महात्माओ ने तन की सेवा इसीलिये रखी है कि जिस तन की वजह से हम मान-बड़ाई मे इतने फँसे हुए है उसके प्रति हमारा मोह और प्यार न रहे और वह साध-संगत की सेवा में लग जाये। मन की सेवा है मन को इन्द्रियो के भोगो की ओर जाने से रोकना, उसे विषय-विकार, शराब-कबाब आदि की ओर से हटाना। यह तन, मन और धन की सेवा सन्तो ने इसलिये रखी है

कि हम सुरत-शब्द की सेवा कर सकें; हमारे मन में नम्रता और दीनता आ जाये और हमारा खयाल अथवा हमारी सुरत उस शब्द या नाम को पकड़ सके। महात्माओं ने सुरत-शब्द की सेवा को सबसे श्रेष्ठ और उत्तम सेवा बताया है। सो स्वामीजी महाराज फरमाते हैं कि भाई, मालिक की भक्ति करने के लिये काम-क्रोध को छोड़ना चाहिये, मन में नम्रता और दीनता रखनी चाहिये ताकि हम परमात्मा की भक्ति करने के योग्य बन सकें।

प्रीत प्रतीत गुरु की करना। नाम रसायन घट में जरना॥

अब फरमाते हैं कि गुरमुखों के साथ प्रीति करनी चाहिये, उन पर प्रतीति करनी चाहिये। जब उनके प्रति प्रेम और विश्वास रखते हुए हम मालिक की भक्ति करते हैं, नाम की कमाई करते हैं तब जाकर वह नाम रूपी रसायन प्राप्त होता है। उस नाम रूपी रसायन को अपने अन्दर हजम करने की, अपने अन्तर मे जज्ब करने की कोशिश करना चाहिये। जब तक गुरमुखो के साथ हमारी प्रीत नही होगी, तब तक हमारी उन पर प्रतीति नही हो सकेगी। आप देखे कि जिन मित्रो और साथियों के साथ हमे प्यार होता है, उन पर हमे कितना विश्वास और भरोसा होता है। उनके प्यार मे बँधे हुए उन पर विश्वास करके हम उनके साथ हजारो-लाखो रुपयो का लेन-देन कर लेते हैं। जब कोई दुख या तकलीफ होती है तो हम उनकी सलाह भी लेते है और मानते है कि वे जो भी सलाह देगे वह हमारे भले के लिये, हमारे फायदे के लिये होगी। हम उनकी सलाह पर चलने की कोशिश भी करते है।

दुनिया के कार्यों में भी बगैर भरोसे और विश्वास के एक कदम भी चलना कठिन है। हम रोज हवाई जहाजों मे सफर करते है। हमे इजिनियरो पर भरोसा है कि उन्होने

एसी चीज बनायी है जिसमे बैठने से हमारी जान को कोई खतरा नही है। हम देहली जाने के लिये ग्रांड ट्रक रोड पर मोटर दौडाये चले जाते है, क्योंकि हमे पूरा विश्वास है कि यह सड़क सीधी देहली को जाती है और साथ ही हमे यह भी भरोसा है कि रास्ते में जितनी भी नदियाँ आती है उन पर अच्छे पुल बने हुए है। हम बेखटके मोटर चलाये जाते है, हमारा मन जरा भी नही डरता। इसी प्रकार जब तक हमारे मन में भरोसा नही आता, हमारा मन कभी भी मालिक की भक्ति की ओर नही जा सकता। अगर मन मे थोडा सा भी भ्रम पैदा हो जाये, जरा सा सशय या सन्देह उठ खडा हो या कोई डर उत्पन्न हो जाये तो मन तत्काल मालिक की भक्ति और नाम की कमाई करना छोड देता है। इसीलिये स्वामीजी महाराज सतगुरु से प्रीति करने का उपदेश देते है। हम सन्तों-महात्माओ की वाणी पढ़ते है ताकि हमारे मन मे मालिक से मिलने का शौक बना रहे, मालिक का प्यार बना रहे। हम सन्तो-महात्माओ का सत्संग सुनते है ताकि हमारा उन पर विश्वास बना रहे, हमारे अन्तर मे उनके लिये प्यार उत्पन्न हो और हमारा मन उनके आदेश के अनुसार नाम का अभ्यास करने मे लगा रहे।

फिर स्वामीजी महाराज फरमाते है कि प्रीति और प्रतीति के साथ जब हम नाम की कमाई करते है तो उसके फलस्वरूप मालिक की ओर से मिलनेवाली बख्शिश को हमें अपने अन्दर ही हजम करने की कोशिश करना चाहिये। उसे कौडियो की तरह उछालते नही फिरना चाहिये, लोगो को लडके-लड़कियाँ देना नही शुरू कर देना चाहिये। जो कुछ परमात्मा ने दिया है उसे अहकार मे आकर या मान-बड़ाई की भावना के वश मे होकर व्यर्थ नष्ट नही करना है। उस दौलत को हम जितना अधिक सँभाल कर रखेंगे,

परमात्मा हम पर उतनी ही और बख्शिश तथा दया करेगा। अगर बेटा मेहनत करता है और अपनी कमाई को सँभाल कर रखता है, तो बाप खुश होकर उसे और अधिक दौलत दे देता है। परन्तु जो बेटा कमाई नही करता और बाप की जायदाद को उजाड़ता है, बाप उसे कभी कुछ नही देता। जब तक पुत्र कीमती वस्तु को सँभालने के योग्य नही बनता तब तक पिता कभी भी अपनी सम्पदा पुत्र के हवाले नही करता। इसलिये स्वामीजी महाराज समझाते है कि अगर मालिक को दया-मेहर करना है तो वह जरूर करेगा, परन्तु हमे उस बख्शिश को हजम करने के योग्य बनना चाहिये। गुरु अमरदास जी भी यही उपदेश देते है, "पारखीआं वथु समालि लई गुर सोझी होई" कि जिन्हे इस वस्तु की परख होती है, वे इस दौलत को बहुत सँभाल-सँभाल कर रखते है। हम दिन भर मे थोड़ा ही कमाते हों, पर उसे जोड कर रख ले तो धीरे-धीरे हमारे पास काफी बड़ी पूंजी जमा हो जायेगी, इसके विपरीत अगर हम दिन भर की कमाई शाम को जाया कर देते है तो हमारी सारी मेहनत ही फिजूल चली जाती है। इसलिये महात्मा समझाते है कि दुनिया की मान-बड़ाई मे फँस कर या लोगो से मत्थे टिकवा कर परमात्मा की दी हुई दौलत को व्यर्थ नही खो बैठना चाहिये। मन मे बडी नम्रता और दीनता रखनी चाहिये ताकि उस दौलत को कोई हमसे छीन न ले। यही कबीर साहिब समझाते है—

"नाम रतन धन पाय कर, गाँठ बाँध ना खोल।
नही पटण नही पारखी, नहि गाहक नहिं मोल।।"

आप फरमाते है कि भाई! उस नाम रूपी दौलत को पाकर इतनी अच्छी तरह मजबूती से गाँठ बाँध ले कि उसकी खुशबू तक बाहर न जा सके। कबीर साहिब फरमाते है कि

इस नाम रूपी अनमोल रतन का न कोई अधिकारी है, न ही किसी को इसकी परख है, न कोई इसका सच्चा ग्राहक है और न ही कोई इसकी कीमत दे सकता है। उस परमात्मा ने हम पर यह बख्शिश हमारे लिये ही की है। जितना हम इसे अपने अन्दर हजम करने की कोशिश करेंगे, परमात्मा हम पर उतनी ही अधिक दया-मेहर और बख्शिश करेगा। महात्मा कौन-सी दौलत को सँभाल कर रखने का उपदेश दे रहे है? नाम या शब्द की कमाई की दौलत को।

यह नाम या शब्द क्या है? यह कोई लफ्ज नही है। यह वह ताकत है जिसने सारी दुनिया की रचना की है, जिसके आधार पर सम्पूर्ण खण्ड-ब्रह्माण्ड टिके है और जो हम सबके अन्तर मे मौजूद है, हम सबके अन्दर दिन-रात धुनकारें दे रही है। हम इस शब्द या नाम के साथ तब जुड़ सकते है जब हम अपने ख़याल को नौ द्वारों से निकाल कर आँखों के पीछे इकट्ठा कर ले। शरीर मे हमारे सोचने का जो केन्द्र है वह हमारी आँखों के पीछे है। इस केन्द्र से ही हमारा सबका ख़याल नीचे नौ द्वारो मे उतरता है। ये नौ द्वार है—दो आँखे, दो कान, दो नाक के छिद्र, मुंह तथा नीचे दो इन्द्रियो के छिद्र। इन्ही नौ द्वारो से हमारा ख़याल सारी दुनिया मे फैल रहा है। हमे अपने फैले हुए ख़याल को वापस लाकर फिर उसी केन्द्र पर एकत्रित करना है, जहाँ से उतर कर यह नीचे आया है। इस केन्द्र को महात्माओ ने दसवी गली, घर-दर, तीसरा तिल, शिव-नेत्र, मुक्ति का दरवाजा आदि नामो से पुकारा है। तीसरी पातशाही श्री गुरु अमरदासजी समझाते है—

"नउ दर ठाके धावतु रहाए ॥
दसवै निज घरि वासा पाए ॥
ओथै अनहद सबद वजहि दिनु राती,
गुरमती सबदु सुणावणिआ ॥"

आप फरमाते है कि जब तू अपने ख़याल को नौ द्वारो से निकाल कर आँखों के पीछे तीसरे तिल मे–जो तेरे असली घर का दरवाजा है–खड़ा करेगा तो तुझे अपने आप पता चल जाएगा कि उस नुक्ते या केन्द्र पर मीठी से मीठी तथा सुरीली से सुरीली आवाज धुनकारें दे रही है। यह मालिक के दरगाह से उठ रही है और हम सबके अन्दर है। वहाँ किसी कौम का सवाल नही, किसी मजहब का सवाल नही, किसी मुल्क का सवाल नही। चाहे कोई हिन्दू होकर अन्दर जाये, चाहे सिक्ख या ईसाई होकर अन्दर जाये, सबको एक ही रास्ते से अन्दर जाना है और अपने खयाल को उसी शब्द या नाम के साथ जोड़ना है। भिन्न-भिन्न धर्मो, जातियो, देशो तथा भिन्न-भिन्न समय मे आये अलग-अलग महात्माओ ने उसी शब्द को भिन्न-भिन्न लफ्जो और नामो के द्वारा हम दुनियादारों को समझाने का प्रयत्न किया है। गुरु नानक साहिब ने इस ताकत का कई लफ्जों के द्वारा वर्णन किया है। आप उसे गुरु की वाणी, धुर की वाणी, सच्ची वाणी, अमृत वाणी, निर्मल वाणी, हुक्म, नाद, नाम, आदि कहते है। इसी को राम-नाम, अकथ-कथा, हरि-कीर्तन, मंगल-गान आदि भी कहा है। गुरु साहिबानो ने कई लफ्जो के द्वारा उस नाम या शब्द की महिमा करने का यत्न किया है। हिन्दू ऋषियों, मुनियो तथा महात्माओ ने वेदो-शास्त्रों मे इसी को राम नाम, राम धुन, आकाश-वाणी, निर्मल नाद, दिव्य-धुन आदि नामो से पुकारा है। मुसलमान फकीरो ने इसे कलमा तथा हजरत ईसा ने इसे 'वर्ड' या 'लोगास' कहा है। लफ्ज अलग-अलग है, परन्तु वस्तु एक ही है। हमारा लफ्जों से कोई वाद-विवाद नही है। चाहे जिस लफ्ज के द्वारा अपने ख़याल को वापस मोड़ कर आँखों के पीछे इकट्ठा कर लीजिये। हमारा असली उद्देश्य तो अपने ख़याल को सच्चे शब्द या सच्चे नाम के साथ जोड़ना है।

उस सच्चे शब्द को न ऑखे देख सकती है, न कान सुन सकते है और न जबान उसका वर्णन कर सकती है। उसे हुजूर महाराज (बाबा सावनसिहजी महाराज) अलिखित कानून और अनबोली भाषा कहते थे। सच्चा शब्द ऑखो से नीचे-नीचे नही मिलता। वह ऑखो के पीछे तीसरे तिल अथवा शिव-नेत्र मे निरन्तर गूज रहा है। जब तक हम अपने खयाल को उस नुक्ते या केन्द्र पर इकट्ठा नही करते, जहॉ वह दाता दान दे रहा है, जहॉ नाम रूपी अमृत बरस रहा है, हम उस अमृत को पीने के योग्य किस तरह हो सकते है। स्वामीजी महाराज समझाते है कि जब भी परमात्मा हमारे अन्दर उस नाम की दात बख्शे और उसकी दया-मेहर से अन्दर रूहानी नजारे दिखाई देने लगे तो हमे चाहिये कि हम उन्हे अपने अन्दर ही हजम करने की कोशिश करे। कभी भी इस बख्शिश को बाहर दिखाने और व्यर्थ नष्ट करने की कोशिश नही करना चाहिये। हम कितने दु:ख और कितनी मुसीबते उठा कर उस बख्शिश को प्राप्त करते है। किस लिये? क्या लोगों को बेटे-बेटियां देने के लिये, जग मे मान-बड़ाई पाने या औरों से मत्थे टिकवाने के लिये? नही, ऐसा करना हमारी गलती है। जितना हम इस दात को सॅभालेगे, परमात्मा हम पर उतनी ही अधिक दया-मेहर व बख्शिश करेगा।

मन मलीन के कहे न चलना।
गुरु का बचन हिये बिच रखना॥

स्वामीजी महाराज फ़रमाते है कि मन-मत छोड देना चाहिये तथा गुरुमत पर चलना चाहिये। गुरुमत क्या है? अपने खयाल को वापस मोड कर, ऑखों के पीछे इकट्ठा करके शब्द या नाम के साथ जोड़ना ही गुरुमत है। इसके विपरीत, मन के अधीन होकर कर्म करना मन-मत है। अगर

हम मन के कहने मे चलेगे, मन के अधीन होकर दिन-रात बुरे व खोटे कर्म करते रहेगे, विषय-विकार, शराब-कबाब के स्वाद मे लगे रहेगे तो जो-जो बुरे कर्म करेगे उनका फल भुगतने के लिये हमे बार-बार इस चौरासी के चक्कर मे आना पड़ेगा। पिछले किये हुए बुरे कर्मो का फल अभी भुगत रहे है और आगे भी अगर इसी प्रकार बुरे कर्म करते जायेग तो उनका फल भुगतने के लिये फिर से इस चौरासी के जेलखाने मे आना पड़ेगा। गुरु नानक साहिब इस ससार को 'करमॉ सदड़ा खेत' अर्थात कर्म-भूमि कहते है। जो जो बीज यहॉ हम बोते है उनका वैसा ही फल हमे मिलता है। अगर हम बुरे कर्मो के बीज बोयेगे तो बुरे फल भुगतने आ जायेगे, अगर अच्छे कर्मो के बीज डालेगे तो अच्छे फल भोगने आयेगे। न अच्छे कर्म हमे इस देह के बन्धनों से मुक्त करवा सकते है न बुरे कर्म। बुरे कर्मो के नतीजे के रूप मे नरक और चौरासी तैयार है ही। अगर नेक कर्म करेगे तो क्या नतीजा होगा ? सेठ-साहूकार बन कर आ जायेंगे, राजा-महाराजा बन कर आ जायेगे, कौमों, मजहबो या मुल्को की हुकूमत प्राप्त हो जायेगी, लोहे की बेडियाँ उतर कर सोने की चढ़ जायेगी, 'सी' श्रेणी से बच जायेगे, 'ए' श्रेणी प्राप्त कर लेगे। परन्तु 'सी' श्रेणी हो या 'ए' श्रेणी, कैदी तो कैदी ही है। अगर बहुत ही अच्छे कर्म होगे तो ज्यादा से ज्यादा हम स्वर्गो-बैकुण्ठो मे पहुँच जायेगे। परन्तु ये भी भोग-योनियॉ ही है, निश्चित समय अथवा खास मियाद के लिये ही है। उसके बाद वापस इसी चौरासी के जेलखाने मे, नरको में आना पड़ता है। तात्पर्य यही है कि मन के अधीन नही होना चाहिये, क्योकि मन हमेशा हमे कर्मो के जाल मे ही फँसाये रखता है। केवल सतगुरु ही इस बन्धन से छुडा सकते है। गुरु नानक साहिब उपदेश देते है—

"सतिगुरु है बोहिथा सबदि लंघावणहारु ॥"

हमें उस शब्द रूपी जहाज में सवार होना है जिसके मल्लाह सतगुरु होते है। सतगुरु हमेशा शब्द और नाम का ही बेड़ा लेकर आते है, शब्द और नाम का ही होका देते है और वापस जाकर शब्द या नाम में ही समा जाते है। गुरु तेगबहादुर जी बड़ा सुन्दर दृष्टान्त देकर समझाते है कि जिस प्रकार मल्लाह नाव लेकर नदी के किनारे खड़ा होकर पुकारता है कि जिसे भी नदी की लहरों से बचकर पार जाना हो वह मेरी नाव मे आकर बैठ जाय। जो भाग्यशाली सज्जन उस नाव में बैठ जाते है वे नदी की लहरों से बचकर नदी के दूसरे किनारे पर पहुँच जाते है, परन्तु जो उस नाव में पैर ही नही रखते वे इसी किनारे रह जाते है। इसी तरह सतगुरु नाम का बेड़ा लेकर आते है। जो लोग उनका उपदेश मानकर उनके कहने के अनुसार शब्द या नाम की कमाई करते है वे हमेशा के लिये भव-सागर से पार हो जाते है। गुरु रामदासजी बड़ी अच्छी तरह समझाते है—

"राम नामु है ज्योति सबाई, ततु गुरमति काढ़ि लईजै।"

आप फरमाते है कि राम नाम की ज्योति आप सबके अन्दर आँखों के पीछे तीसरे तिल में जल रही है। लेकिन जब तक आप गुरमुख अथवा सतगुरु के मत पर नही चलते, कभी भी उस जोत के दर्शन नही कर सकते और जब तक उस जोत के दर्शन नही करते किसी भी तरह मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। गुरुमत क्या है? आप फरमाते है—

"नऊ दरवाजे नवे दर फीके, रसु अमृतु दसवै चुईजै।"

गुरुमत अथवा सन्तों का मत यह है कि जब तक मनुष्य का ख़याल आँखो से नीचे है, जब तक मनुष्य इन्द्रियों के भोगों में फँसा हुआ है, विषय-विकार, शराब-कबाब आदि के स्वादों में भटक रहा है तब तक वह सन्तों के मार्ग से बहुत दूर है। जब हम अपने ख़याल को नौ द्वारों से निकालकर

आँखों के पीछे तीसरे तिल पर इकट्ठा करेंगे तब हमे सच्चे गुरुमत का बोध होगा। तब हमे पता लगेगा कि हमारे अन्दर इस केन्द्र पर अमृत बरस रहा है। जब तक हम इस केन्द्र पर अपने खयाल को इकट्ठा नही करते, हम गुरुमत पर चलने के योग्य किस तरह हो सकते है। गुरुमत यह नही है कि मनुष्य हिन्दु से सिख बन जाये या कोई खास प्रकार का भेस या बाना धारण कर ले या ग्रन्थों-पोथियो का भोग डालना शुरू कर दे। हम बाहरमुखी हुए बैठे है। गुरुमत का अर्थ यह है कि हम सतगुरु अथवा गुरुमुखो के उपदेश के अनुसार अपने खयाल को नौ द्वारो से निकाल कर अन्दर शब्द या नाम के साथ जोड़ें। जब तक हमारी सुरत या आत्मा शब्द को नही पकडती तब तक हम मन-मत पर चल रहे है और जब तक हम मन के मत पर चल रहे है हमारा चौरासी के बन्धनो से कभी छुटकारा नही हो सकता।

यह मति मंद गहे नहीं सरना। लोभ बढ़ाय उदर को भरना।।

मन के कहने पर क्यो नही चलना चाहिये ? स्वामीजी महाराज फरमाते है कि हमारा मन खोटी बुद्धि वाला है, खोटी मति वाला है। पहले तो यह सतगुरु की संगति करने ही नही देता और अगर हम उनकी सगति करते भी है तो उन पर भरोसा और विश्वास नही आने देता। अगर थोड़ा बहुत विश्वास आ भी जाय तो यह हमारे ख़याल को नाम की कमाई की ओर नही जाने देता। मन के वश होकर हम तृष्णाएँ और इच्छाएँ लेकर सतगुरु के पास जाते है। अगर वे पूरी नही होती तो मन मे अभाव आ जाता है और हम मालिक की भक्ति या नाम की कमाई करना ही छोड़ बैठते हैं। हमारा मन तो हमेशा इच्छाओ और तृष्णाओ मे ही फँसा रहता है ! आज तक न किसी की सब इच्छाएँ व तृष्णाएँ पूरी हुई है और न हो सकती है। परन्तु जो भी इच्छाएँ और कामनाएँ हम करते है उन सब को पूरा करने के लिये हमे

बार-बार जन्म लेना पड़ता है। गुरु नानक साहिब इसी बारे मे फरमाते है—

"देंदा दे, लैदे थकि पाहि। जुगा जुगंतरि खाही खाहि ॥"

परमात्मा देते देते नही थकता, हम ही लेते लेते थक जायेगे। हम जो भी परमात्मा के आगे दिन-रात अरदास और याचनाएँ कर रहे है, जो कुछ भी उससे माँग रहे है, अगर इस जन्म में वे सब कामनाएँ पूरी नही होती तो उनको पूरा करने के लिये मालिक फिर से जन्म दे देता है। फिर हम और इच्छाएँ तथा कामनाएँ करते है और मालिक हमें और जन्म दे देता है। जब हम इन कामनाओ से तंग आकर परमात्मा से परमात्मा को मांगना शुरू कर देते है तो हम पर दया-मेहर करके वह हमे अपने साथ मिला लेता है। क्योंकि मन निरन्तर इच्छाएँ पैदा करता रहता है इसलिये स्वामीजी महाराज फरमाते है कि हमारा मन खोटी मति वाला है, यह हमे सतगुरु की शरण प्राप्त नही करने देता, हमे अपने आपको उनके हवाले नही करने देता, हमारे ख़याल को विषय-विकारो से नही निकलने देता और हमें इन्द्रियों के भोगो से बाज नही आने देता। जिसे शब्द को पकडना है, वह ताकत तो काम-क्रोध की लहरों में बह रही है, बाल-बच्चो के प्यार मे उलझी हुई है, कौमों, मजहबो, मुल्को की भक्ति मे लगी हुई है। जब तक हम अपने खयाल को इनकी ओर से समेट कर आँखों के पीछे तीसरे तिल मे इकट्ठा नही करेगे तब तक हम शब्द को किस तरह पकड़ सकेगे।

तुम मानो मत इसका कहना, इसके संग जगत बिच गिरना।

स्वामीजी महाराज फरमाते है कि अगर हम मन के अधीन रहेगे, मन को ही अपना गुरु, पीर, प्रभु समझते रहेंगे, तो इसके वश में होकर हमें बार-बार इस जगत में आना

पड़ेगा, काल के जाल में फँसे रहना पड़ेगा। इसीलिये गुरु नानक साहिब ने कहा है, "बाबा जगु फाथा महाजाल"। हम दुनिया के जीव बड़ी बुरी तरह से इस काल के जाल में फँसे हुए है। परमात्मा का किसी को पता ही नही, परमात्मा की भक्ति की ओर किसी का खयाल ही नही। विषय-विकार, शराब-कबाब, इन्द्रियों के भोगों से किसी को फ़ुरसत ही नहीं मिलती। पिछले कर्मो का नतीजा अब इस जीवन मे भुगत रहे है तथा इसी तरह बुरे और खोटे कर्म करने में दिन रात लगे हुए है, और उन्ही में डूबे हुए है। यह भूले बैठे है कि उनका फल भोगने के लिये हमें फिर इस चौरासी के जेलखाने में आना पड़ेगा। इसलिये स्वामी जी महाराज हमें समझाते हैं कि अगर हम मन के अधीन रहेंगे तो इस चौरासी के बन्धनों से हमारा कभी भी छुटकारा नहीं हो सकेगा। परन्तु अगर हम नाम के अधीन हो जाते हैं, शब्द के ताबे हो जाते हैं, तो जहाँ से यह शब्द उठ रहा है हमें पकड कर वह वही ले जायेगा। यह शब्द सचखंड से आ रहा है और दिन-रात हमारे अन्तर मे धुनकारें दे रहा है। अगर हम अपने आप को शब्द के सुपुर्द कर दें तो वह हमारी आत्मा को खीच कर वापिस सचखंड में ले जायेगा और हमारा जन्म-मरण के दुखो से, देह के वन्धनों से हमेशा के लिये छुटकारा हो जायेगा।

इस मूरख को समझ पकड़ना।
गुरु के चरन कभी न बिसरना॥

आप फरमाते है कि हमारा मन मूर्ख है जो अपना फायदा नही सोचता। यह खुद ही काल के जाल मे फँस कर दु:खी हो रहा है। इसलिये स्वामीजी महाराज फरमाते है कि हमें होशियारी और बुद्धिमानी के साथ मन को वश में करने की कोशिश करना चाहिये। मन जो कि दुनिया में

फँसा हुआ है किस प्रकार वश में आता है ? हमें सतगुरु के बताये हुए उपदेश और सुमिरन के द्वारा इसे तीसरे तिल पर इकठ्ठा करना है। शरीर के अन्दर जो सोच और विचार करने का केन्द्र है, वह हमारी आँखों के पीछे है, जहाँ से हमारा ख़याल नौ द्वारों से होकर सारी दुनिया में फैल रहा है। हमारा खयाल किस तरह फैलता है ? हम दुनिया की नाशवान और फ़नाह चीजों का सुमिरन करते है। जिन चीज़ों का सुमिरन करते है उनका सुमिरन के साथ ही अपने आप ध्यान भी होता है और संसार की नाशवान वस्तुओं के सुमिरन के साथ उनका ध्यान भी पक्का हो जाता है। मन कभी स्थिर या निश्चल तो बैठता नही, किसी न किसी चीज के बारे में सोचता ही रहता है। अच्छी तरह विचार करके देख लें कि जिस चीज के बारे में हम सोचते हैं उसकी शक्ल भी हमारी आँखों के सामने आ जाती है। बाल-बच्चों का ख़याल करते है तो बाल-बच्चों की शक्ल आँखों के सामने आ जाती है, मित्रों-सम्बन्धियों का विचार करते है तो उनकी सूरत आँखों के सामने आ जाती है। जिनका सुमिरन करते हैं उनका ध्यान भी जरूर ही पक जाता है। जिनका सुमिरन और ध्यान पक जाता है उनके साथ हमारा मोह और प्यार हो जाता है। और जिनसे प्यार हो जाता है उनकी शक्लें भी मौत के समय सिनेमा के चल-चित्रों की तरह हमारी आँखों के सामने फिरना शुरू हो जाती है। 'जहाँ आसा तहाँ बासा' जिस ओर भी मौत के समय हमारा ख़याल होता है, हम दुनिया के जीव उसी धारा मे बह जाते है। यह दुनिया की नाशवान और फ़नाह वस्तुओं का सुमिरन और ध्यान ही है जो हमे बार-बार इस चौरासी के जेलखाने मे ले आता है। सुमिरन करने की आदत हम सबको स्वाभाविक रूप से पड़ी ही हुई है लेकिन हम नाशवान और फ़नाह चीजो का सुमिरन करते हैं। सुमिरन की इस आदत से फायदा उठा कर हमें

परमात्मा के नाम का सुमिरन करना चाहिये जो कि कभी नष्ट या फनाह नही होता। गुरु अर्जुनदेवजी का उपदेश है–

"निहचलु एकु आपि अविनासी,
सो निहचलु जो तिसहि धिआइंदा ।।"

परमात्मा निश्चल और अविनाशी है। वह कभी जन्म-मरण के दुखों मे नहीं आता। जो उस परमात्मा के नाम का सुमिरन करता है, उसका ध्यान करता है, वह भी निश्चल हो जाता है, उसका भी जन्म-मरण के दुखों से छुटकारा हो जाता है। सो हमे अपने खयाल को आँखो के पीछे रख कर उस परमात्मा के नाम का सुमिरन करना चाहिये। सुमिरन के द्वारा हमारा खयाल पैरो के तलवो से सिमट कर ऊपर की ओर आना शुरू हो जाता है। यह सुमिरन छोटे बच्चे से लेकर वृद्ध मनुष्य तक सभी कर सकते है। आप देखे कि हम सारे वक्त काम-काज में लगे रहते है, गाडियों-मोटरो मे भागते फिरते है तब भी हमारा मन स्थिर नही रहता, निरन्तर सोचता रहता है, दलीले करता रहता है। हम इस समय अपने मन को सुमिरन मे रख सकते है। किसान लोग हल चलाते समय या रहट चलाते हुए सुमिरन कर सकते है। हमे सुमिरन करने की इतनी आदत पड जानी चाहिये कि अगर हम एक-दूसरे से बातचीत भी कर रहे हो तो भी हमारे अन्दर अपने आप सुमिरन चलता रहना चाहिये। यह सुमिरन ही है जिसके द्वारा हम अपने फैले हुए खयाल को फिर वापिस लाकर आँखो के पीछे तीसरे तिल मे इकठ्ठा कर सकते है। जब इस केन्द्र पर हमारा खयाल इकठ्ठा होना शुरू हो जाता है तो इसके बाद जिस साधना की जरूरत पड़ती है उसके बारे मे स्वामीजी महाराज आगे समझाते है।

गुरु का रूप नैन में धरना। सुरत शब्द से नभ पर चढ़ना ।।

जब हम अपने ख़याल को आँखों के पीछे इकठ्ठा करते है तो वह यहाँ ठहरता नही, क्योकि इसे बार-बार नीचे आने की आदत पड़ी हुई है। उसे इस केन्द्र पर ठहराने के लिये हमें गुरुमुखो का ध्यान करना पडता है। उनके स्वरूप का ध्यान करने से ख़याल को आँखों के पीछे ठहरने की आदत पड जाती है। हमारे मन में यह सवाल जरूर उठता है कि गुरुमुखो के स्वरूप का ध्यान क्यों किया जाय। यह बात तो निश्चित है कि ध्यान के बग़ैर हमारा ख़याल आँखों के केन्द्र पर नही ठहर सकता। सवाल सिर्फ यह है कि ध्यान करे तो किसका करे? इस पर विचार करने के लिये हम सम्पूर्ण सृष्टि को अपनी आँखों के सामने रखकर देखें कि कौनसी चीज हमारे ध्यान के योग्य है, किस स्वरूप के ध्यान के द्वारा हमें अपने खयाल को अपनी आँखों के पीछे ठहराना है। जितनी भी दुनिया की चीजे है सब पाँच तत्वो की बनी हुई है। यह पाँच तत्व है पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। हरएक प्राणी के अन्दर इनमे से कोई न कोई तत्व मौजूद होता है। मनुष्य के अन्दर पाँचो तत्व पूर्ण रूप से मौजूद हैं। इसीलिये मनुष्य को पाँच तत्वो का पुतला कहा गया है। महात्माओं ने उसे सृष्टि का सिरमौर तथा 'अशरफुल-मख्लूकात' कहा है।

सृष्टि मे जीवो की पहली श्रेणी वह है जिसके अन्दर सिर्फ एक ही तत्व होता है जैसे फल-फूल, सब्जियाँ, घास-फूस आदि। इनमें केवल पानी का तत्व होता है। अगर पाँच तत्वों के पुतले होकर घास-फूस, फल-फूल, तुलसी-पीपल आदि का ध्यान करना शुरू करेगे तो आप खुद ही विचार कर देखें कि हम ऊपर को जायेंगे या नीचे गिरेगे, क्योकि 'जहाँ आसा, तहाँ बासा', जिसके स्वरूप का हम ध्यान धरेगे मरने के बाद जाकर हमे उसी की शक्ल धारण करना होगी। अतएव ये पेड़-पौधे हमारे ध्यान के योग्य नही है। दूसरी श्रेणी साँप

बिच्छू आदि की है जिनमे दो तत्व–अग्नि और पृथ्वी प्रधान है। ये भी हमारे ध्यान के योग्य नहीं हो सकते। तीसरी श्रेणी पक्षियों की है जिनके अन्दर तीन तत्व होते है। परन्तु हमारे अन्दर तो पाँचो तत्व मौजूद है। अगर हम पॉच तत्व के पुतले होकर गरुड, कबूतर, चिड़ियों आदि का ध्यान करने लग जायेगे तो उन्ही के जामें में चले जायेंगे, कोई उन्नति न कर सकेगे। चौथी श्रेणी चौपायों की है। इनके अन्दर चार तत्व होते है परन्तु अक्ल या बुद्धि नही होती, इसलिये गायो, घोडो आदि का ध्यान करके भी हम नीचे की ओर ही गिरेगे। पॉचवी श्रेणी मनुष्य की खुद अपनी है। अब मन में यह विचार जरूर आता है कि मनुष्य मनुष्य का ध्यान धरे तो क्यों धरे, खास कर आज के जमाने मे जबकि हम सबके समान अधिकार है।

मनुष्य मनुष्य का ध्यान नही धरता तथा और कोई चीज़ ध्यान करने के योग्य दिखाई नही देती। यहाँ आकर हम परमात्मा के अस्तित्व को ही अस्वीकार करने लगते है और किसी का भी ध्यान नही करते। हूजूर महाराजजी एक बड़ी खूबसूरत मिसाल देकर हमें समझाया करते थे कि अगर एक कमरे मे हम कुछ रेडियो रख दे जो बिजली या बेटरी से जुड़े हुए न हो, तो हम उनके द्वारा किसी भी देश की खबरें नही सुन सकते, लेकिन उन्हे बिजली या बेटरी से जोड़ दिया जाय तो हम जिस देश की चाहें खबरे सुन सकते है। हमें उन गुरुमुखो को, मालिक के उन भक्तो और प्यारो को ढूंढना है जिनकी लिव उस परमात्मा के चरणो मे लगी हुई है। हमे उनके स्वरूप का ध्यान धरना है, क्योकि वे अपने प्यार के बँधे हुए मालिक से जा मिलते है और हम भी उनके प्यार के बँधे हुए वापिस जाकर मालिक से मिल जायेगे। उन गुरु-मुखों का असली स्वरूप भी शब्द या नाम ही होता है। मनुष्य ही मनुष्य का शिक्षक या गुरु हो सकता है, क्योकि गाय-भैसों

की बोली हमें समझ मे नहीं आती और देवी-देवता कभी किसी ने देखे नही। गुरुमुख शब्द या नाम मे से ही आते है, शब्द या नाम का ही होका देते है और वापस जाकर शब्द या नाम मे ही समा जाते है। हमारा असली गुरु शब्द है, नाम है और गुरुमुखों का जो असली स्वरूप है, वह भी शब्द है, नाम है। गुरु नानक साहिब फरमाते हैं, "बाणी गुरु, गुरु है बाणी।" अर्थात् वाणी (शब्द) हमारा गुरु है और जो गुरु है उसका असली स्वरूप वाणी है। गुरु साहिब का यहाँ वाणी से मतलब उस सच्ची वाणी से है जिसे शब्द या नाम कहते है और यह शब्द या वाणी ही गुरुमुखों का असली स्वरूप है। गुरु अर्जुनदेवजी फरमाते है--

"हरि का सेवकु सो हरि जेहा ।।
भेदु न जाणहु माणस देहा ।।"

मालिक के भक्त या प्रेमी मालिक की भक्ति करके मालिक का रूप हो जाते हैं। उनमे और परमात्मा में कोई अन्तर या फ़रक नही होता। उनका परमात्मा के साथ वही सम्बन्ध होता है जो कि एक लहर का समुद्र के साथ होता है। गुरु अर्जुनदेवजी फरमाते है--

"जिउ जल तरंग उठहि बहुभाती ।।
फिरि सललै सलल समाइंदा ।।"

जिस प्रकार पानी में दो-चार मिनिटों के लिये लहरें उठती है और फिर पानी मे ही समा जाती है, इसी प्रकार गुरुमुख परमात्मा रूपी समुद्र मे से आते है और वापस जाकर उसी मे समा जाते है। अगर हम कोई चीज लहर के हवाले कर दें तो लहर उसे साथ लेकर समुद्र की तह में समा जाती है। इसी प्रकार अगर हम गुरुमुखों का ध्यान करके अपने आप को उनके हवाले कर देंगे तो हम भी उनके प्यार में बँधे हुए सतनाम रूपी समुद्र में समा जायेंगे, क्योंकि उन्हें भी

वापस सतनाम रूपी समुद्र मे ही समाना है। गुरु अमरदास जी फरमाते हैं–

"एको अमरु एका पतिसाही,
जुग जुग सरकार वणाई है ।।"

आप फरमाते है कि वह परमात्मा एक है, वह सबका दाता है, बादशाह है। सन्त-महात्मा उसके द्वारा भेजे हुए शासक है जो हर युग मे आते है। वे मालिक के हुक्म से आते है, उसके हुक्म का पालन और उसीके हुक्म का प्रचार करते है और वापस जाकर उसके हुक्म मे ही समा जाते है। हमे गुरुमुखो का ध्यान करना चाहिए, क्योकि उनका असली स्वरूप शब्द होता है, नाम होता है। अब सवाल उठता है कि हमे किस गुरुमुख का ध्यान करना है? जिन्होंने हमे शब्द का भेद दिया है, नाम प्रदान किया है। अगर वे महात्मा नाम-दान के बाद चाहे दूसरे दिन ही चोला बदल ले, तो भी हमे उन्ही का ध्यान करना है, अपने खयाल को डोलने नही देना है, सदा अपने ख़याल को उनकी ओर ही रखना है। वे हमे नाम देकर निश्चिन्त या बेफिकर नही हो जाते। वे हमे धुर-धाम ले जाने के जिम्मेदार होते है। हमे हमेशा अपने ध्यान को उनकी ओर रखने की कोशिश करना चाहिये। हमे अपने सतगुरु का ध्यान करना चाहिये। उनके स्वरूप के ध्यान के द्वारा हमारी आत्मा अथवा सुरत को अन्दर तीसरे तिल मे ठहरने की आदत पड़ जाती है। स्वामीजी महाराज ने समझाया है कि पहली पौड़ी सुमिरन की है और दूसरी ध्यान की है। तीसरी क्या है? जब सुमिरन द्वारा सिमटा हुआ खयाल ध्यान के द्वारा टिक जायेगा तो फिर शब्द हमारी आत्मा को खीच कर मालिक की ओर ले जायेगा। इसलिये हमे सुमिरन और ध्यान का साधन करना है और अपनी सुरत या आत्मा को शब्द के साथ जोडना है।

राधास्वामी नाम सिमरना। जो वे कहें चित्त में धरना ।।

स्वामीजी महाराज फरमाते है कि उस परमात्मा के नाम का सुमिरन करना चाहिये, परमात्मा के नाम की ओर अपनी तवज्जह रखना चाहिये।

यह राधास्वामी नाम न किसी कौम का नाम है, न किसी मजहब का। जिस प्रकार अन्य अनेक सन्तों-महात्माओं ने प्यार में आकर उस अकाल पुरुष, परमपिता परमात्मा के अनेक नाम रखे है, इसी प्रकार हुजूर स्वामीजी महाराज उस परमात्मा को राधास्वामी कह कर याद करते है। राधा से आपका मतलब आत्मा है और स्वामी से परमात्मा। आम सन्तों-महात्माओ ने हमारी आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध को स्त्री और पति का सम्बन्ध कह कर याद किया है। सो स्वामीजी महाराज का मतलब राधा से आत्मा और स्वामी से मतलव आत्मा के मालिक से है। जैसे परमात्मा के और कई नाम है, वैसे ही राधास्वामी भी उसका एक नाम है। यह कोई जाति या धर्म नहीं है और न ही हमें स्वामीजी महाराज की इस उच्च शिक्षा को किसी जाति या धर्म का रूप देने की कोशिश करनी चाहिये। उनकी शिक्षा सारे संसार के लिये है और किसी भी जाति या धर्म का व्यक्ति उनकी शिक्षा से लाभ उठा सकता है। महात्मा तो हमेशा केवल रूहानियत का प्रचार करते है, सच्चे नाम का होका देते है। वे यहाँ पर कोई कौम, मजहब या मुल्क बनाने के लिये नही आते।

इस शव्द मे स्वामीजी महाराज ने हमे बडी अच्छी तरह समझा कर उपदेश दिया है कि हमे क्यों परमात्मा की भक्ति करना है, परमात्मा ने हमें यह इन्सान का जामा क्यो बख्शा है, किस प्रकार हम गुमान और अहकार में आकर अपने कीमती वक्त को खो रहे है, किस तरह काम-क्रोध की लहरो मे बह रहे है, मन मे नम्रता और दीनता क्यो रखनी चाहिये, किस तरह गुरुमुखों से प्रीति करना चाहिये तथा उन पर

प्रतीति या भरोसा रखना चाहिये और जो नाम की कमाई करते है उसे हमें अपने अन्दर हजम करने की क्यो कोशिश करना चाहिये । आपने समझाया है कि मन का कहना क्यों नही मानना चाहिये, सतगुरु के कहने पर क्यों चलना चाहिये, सुमिरन कैसे करना है, ध्यान किसका और किस तरह करना है और आत्मा को शब्द के साथ किस प्रकार जोडना है । अतएव हमे भी चाहिये कि उनके उपदेश से फ़ायदा उठा कर शब्द की कमाई करें ताकि हमारा इस देह में आने का असली उद्देश्य पूरा हो सके ।

वाणी गुरु ग्रन्थ साहिब

राग रामकली महला ३

हरि की पूजा दुलंभ है संतहु कहणा कछू न जाई ।।
संतहु गुरमुखि पूरा पाई नामो पूज कराई ।। १ ।।
हरि बिन सभु किछु मैला संतहु किआ हउ पूज चढ़ाई ।। २ ।।
हरि साचे भावै सा पूजा होवै भाणा मंनि वसाई ।। ३ ।।
पूजा करै सभु लोकु संतहु मनमुखि थाई न पाई ।। ४ ।।
सबदि मरै मनु निरमलु संतहु एह पूजा थाई पाई ।। ५ ।।
पवित पावन से जन साचे एक सबदी लिव लाई ।। ६ ।।
बिनु नावै होर पूज न होवी भरमि भुली लोकाई ।। ७ ।।
गुरमुखि आपु पछाणै संतहु राम नामि लिव लाई ।। ८ ।।
आपे निरमलु पूज कराए गुर सबदी थाइ पाई ।। ९ ।।
पूजा करहि परु बिधि नही जाणहि दूजै भाइ मलु लाई।।१०।।
गुरमुखि होवै सो पूजा जाणै भाणा मनि वसाई ।।११।।
भाणे ते सभि सुख पावै संतहु अंते नामु सखाई ।।१२।।
अपणा आपु न पछाणहि संतहु कूड़ि करहि वडिआई ।।१३।।
पाखंडि कीनै जमु नही छोड़ै लै जासी पति गवाई ।।१४।।
जिन अंतरि सबदु आपु पछाणहि गति मिति तिनही पाई।।१५।।
एहु मनूआ सुन समाधि लगावै जोती जोति मिलाई ।।१६।।
सुणि सुणि गुरमुखि नामु वखाणहि सत संगति मेलाई ।।१७।।
गुरमुखि गावै आपु गवावै दरि साचै सोभा पाई ।।१८।।
साची बाणी सचु वखाणै सचि नामि लिव लाई ।।१९।।
भै भंजनु अति पाप निखंजनु मेरा प्रभु अंति सखाई ।।२०।।
सभु किछु आपे आपि वरतै नानक नामि वडिआई ।।२१।।

सत्संग के वचन

मालिक से बिछुड कर जहॉ भी जाकर जन्म लेना पडता है---दुनिया मे नजर मार कर देख ले---दु ख ही दु ख, मुसीबते ही मुसीबते सहनी पडती है। हमारी खुराक के लिये, हर रोज हजारों की तादाद मे जानवर जिवह किये जाते है। उन रोते-पीटते, चीखते-चिल्लाते जानवरो के गलो पर हम किस तरह छुरियॉ चलाये जा रहे है। कभी हमारे मन मे यह विचार और खयाल नही आया कि अगर कही कर्मो के हिसाब के अनुसार हमे वहॉ जन्म लेना पड़ जाये तो क्या हम सुख महसूस करेगे या दु ख ? घोड़े की हालत देखिये, किस तरह सवारियॉ तॉगे पर वैठी है और तॉगेवाला तडातड़ चाबुक मारे चला जाता है। कितना जुल्म हो रहा है और किस तरह मजलूमों (पीडितो) को भार और बोझ उठाना पड़ता है। बैल के जामे की हालत देखिये, वेचारा थक कर गिर पड़ता है; हम लोहे की आर चुभा कर उसे फिर जोत लेते हैं। खुद इन्सान के जामे की हालत देखिये, जिसे हम 'अशरफुल-मख्लूकात' कहते है, जिसका 'नर-नारायणी देह' कह कर वर्णन करते है, किस तरह रोजगार के लिये ठोकरे खाते फिरते है। कोई औलाद से दु खी हुआ बैठा है, तो कोई औलाद के न होने से ! किसी को कर्ज लेने का दु ख लगा हुआ है, तो किसी को कर्ज देने का। गरज यह कि दुनिया के सब जीव अपनी-अपनी जगह दु.खी और परेशान हैं।

हर रोज कौमों, मजहबों और मुल्को की लडाइयॉ होती है। कितने गरीबो का खून होता है, कितनी औरते बेवा

होती है, कितने बच्चे यतीम होते है ! जिस नगरी मे यह दुर्दशा होती हो उस नगरी मे सुख किस तरह मिल सकता है ?

यह सब दु:ख हम मालिक से बिछुड कर ही पा रहे है। इसलिये, हम सब, दुनिया के जीव, उस मालिक से मिलना चाहते है, उस मालिक का विसाल करना चाहते है, ताकि हमारा चौरासी के बन्धनों से, चौरासी के दु:खों से हमेशा के लिये छुटकारा हो जाय।

महात्मा समझाते है, वह मालिक एक है, यह नही कि हिन्दुओ का और हो, मुसलमानों का कोई और। हिन्दुस्तान के रहनेवालो का भी वही है, अमेरिका के रहनेवालो का भी वही है, और हमेशा से वही मालिक चला आता है। सब से पहले वह मालिक था, सब कुछ उस मालिक ने पैदा किया है। गुरु अर्जुन साहिब उपदेश करते है––"वरन जात चेहन नहि कोई।" उस मालिक की न कोई शक्ल है, न कोई रग, न रूप है, न कौम है, न मजहब, न मुल्क।

हमारी रूह उस मालिक का अंश है। हम वापस जाकर उस मालिक के साथ मिलना चाहते है। वह मालिक कहाँ है? वह कही जगलो-पहाडों मे छिपा नही बैठा है। वह मालिक हमारी देह के अन्दर है। अगर कोई प्रयोगशाला है जिसके अन्दर जाकर मालिक की खोज की जाय, तो वह केवल हमारा वजूद है, शरीर है। जिसको भी मालिक मिला है, अपने अन्दर मिला है। जब भी वह हमे मिलेगा, हमारी देह के अन्दर ही मिलेगा। गुरु अमरदास साहिब उपदेश करते है–

"घर अंदरि सब वथु है, बाहर किछु नाही ।।"

हम दिन-रात जिसको ढूँढते फिरते है, वह हमारे शरीर के अन्दर है, देह के अन्दर है। गुरु अमरदास साहिब फिर फरमाते है–

"हर मंदर एह सरीर है, गिआन रतन परगट होए ।।

हम हरि-मन्दिर किसे कहते है ? जहाँ हरि बसता हो, मालिक बसता हो । वह मालिक हमारी देह के अन्दर है । इसलिये दुनिया मे अगर कोई सच्चा गुरुद्वारा है, सच्चा मन्दिर, मस्जिद, ठाकुरद्वारा या गिरजा है, तो वह केवल हमारा शरीर है। गुरु अमरदास साहिब साफ-साफ फरमाते है–

"इस गुफा में अखुट भंडारा,
तिस विच वसै हरि अलख अपारा।।"

यह जो हमारा शरीर है, यह केवल रूह के रहने की गुफा ही नही है, बल्कि जिसका हम अलख और अगम कह कर वर्णन करते है वह मालिक भी हमारी देह के अन्दर है । इसलिये, हमे उस मालिक की तलाश अपनी देह के अन्दर करना है । अब मन मे खयाल आता है कि जब वह मालिक हमारी देह के अन्दर है तो फिर हमे नजर क्यों नहीं आता ? हमें किस तरह अपनी देह के अन्दर जाकर उस मालिक को प्रकट करना है ? गुरु अमरदास साहिब इस बात को अच्छी तरह समझाते हैं–

हरि की पूजा दुलंभ है संतहु, कहणा कछू ना जाई ।।
संतहु गुरमुखि पूरा पाई ।। नामो पूज कराई ।।

उपदेश करते है कि अगर कोई पूरा गुरुमुख मिल जाय अर्थात किसी सन्त-महात्मा से मिलाप हो जाय, वे हमे अन्दर जाने का भेद दे दें, मालिक की भक्ति करने का तरीका समझा दे और हम उस रास्ते पर चल पड़े, तो हम अपने अन्दर ही उस मालिक के साथ हमेशा के लिये मिलाप कर सकते है । सन्त हमे नाम-भक्ति का तरीका बताते है; 'नामो पूज कराई'–हमे नाम की कमाई करने की युक्ति

बतलाते हैं। वे सुरत को शब्द के साथ जोड़ने का उपदेश देते हैं। शब्द की कमाई ही मालिक की भक्ति है। आप स्पष्ट समझाते हैं—

"जग जीवन साचा एको दाता
गुर सेवा ते सबदि पछाता ॥"

वह मालिक, जिसने सारे जगत को जीवन दिया है, जो कि एक है, सबका दाता है, उससे हम किस प्रकार मिल सकते हैं? गुरु-भक्ति के द्वारा, शब्द और नाम की कमाई के जरीये। आप फिर उपदेश करते है——

"सदा हजूर दूर न जानहु
गुर सबदी हरि अंतर पछानहु ॥"

उस मालिक को ढूंढने के लिये हमें घर-बार छोड़ कर जंगलों-पहाड़ों में भटकते फिरने की जरूरत नही और न ही मन्दिरों-मस्जिदों मे उसकी तलाश करना है। बल्कि, उस मालिक को, शब्द और नाम की कमाई के द्वारा, अपनी देह के अन्दर ही पहचानने की कोशिश करना है। शब्द और नाम की कमाई करने का मतलब ही मालिक की भक्ति करना है, मालिक को ढूंढने की कोशिश करना है।

शब्द और नाम की कमाई के भेद का पता कहाँ से लगता है? आप फरमाते है, इसका पता सन्तों-महात्माओं से लगता है। जब हम उनकी सोहबत करेंगे, उनकी संगति में बैठेंगे, तो वे बताएँगे कि किस तरह शराबों-कबाबों, विषयों-विकारों व दुनिया के धन्धों से अपने ख़याल को निकाल कर अपने अन्दर इकठ्ठा करना है और किस रास्ते से चलकर अन्तर में मालिक को ढूंढने की कोशिश करना है।

सब स [illegible] उस शब्द का होका देते [illegible]
का प्रचार [illegible] मन में विचार आता है [illegible]

का 'नाम' से क्या मतलब है ? वह नाम कहाँ है ? अपने ख़याल को किस प्रकार नाम या शब्द के साथ जोड़ना है ? और नाम या शब्द का भेद लेने के लिये हमें क्यों सन्तों-महात्माओ की सगति करनी पडती है ? गुरु अमरदास साहिब समझाते है कि नाम दो प्रकार का है, एक वर्णात्मक और दूसरा धुनात्मक । हम वर्णात्मक नाम उसे कहते हैं जो लिखने पढने और बोलने मे आता हो । हमने अपने प्यार में आकर जितने भी मालिक के नाम रखे है, सब ही लिखने, पढ़ने और बोलने मे आते है । कोई वाहिगुरु कहता है, कोई अकाल पुरुष, कोई अल्लाह, कोई परमेश्वर और कोई राधास्वामी ।

हमारे कई मुल्क है, एक-एक मुल्क की कई कई जबानें है और एक-एक जबान मे हम हजारों-अनेकों शब्दो और नामो से उस मालिक को याद करते है । ये सब ही वर्णात्मक नाम है और इनकी कोई न कोई मियाद है, वक्त है, हद है । इतिहास पढकर देखते है तो पता चलता है कि कोई नाम पाँच सौ साल पुराना है, कोई हजार साल पुराना है और कोई इससे भी पुराना होगा । हमने उस मालिक के कई नाम रखे, कई को हम भूल गये । आगे भी हजारो व अनेकों महात्मा आयेंगे और हजारो-अनेको लफ्जो से उस मालिक को याद करेगे । श्री गुरु नानक देव जी आये और हमने उस मालिक को 'वाहिगुरु वाहिगुरु' कह कर याद करना शुरू कर दिया । हुजूर स्वामीजी महाराज आये और हमने उस मालिक को 'राधास्वामी राधास्वामी' कह कर पुकारना शुरू कर दिया । इसी तरह, हजरत मुहम्मद साहिब आये और हमने 'अल्लाह अल्लाह' कहना शुरू कर दिया और श्री रामचन्द्र जी महाराज आये तो 'राम राम' पुकारना शुरू कर दिया । इतिहास से पता लगता है कि इन महा-

ाओं को आये, किसी को सौ साल हुए है, किसी को पाँच साल और किसी को हजार साल हुए है।

लेकिन जिस नाम की गुरु साहिब इतनी महिमा करते वह धुनात्मक नाम है जो न आँखो से देखा जा सकता न जबान के द्वारा बयान किया जा सकता है और न ानो से सुना जा सकता है। हुजूर महाराज जी (बाबा वनसिंहजी महाराज) उस नाम का 'अनरिटन लॉ' और ानस्पोकन लेंग्वेज' (अलिखित कानून और न बोली जा कनेवाली भाषा) कह कर वर्णन करते थे। गुरु अंगद ाहिब इस नाम की महिमा करते हुए फरमाते हैं--

"अखी बाझों वेखणा, विण कंनां सुणना ।
पैरां बाझो चलणा, विण हथां करना ।।
जीभे बाझों बोलणा, इउं जीवत मरना ।।
नानक हुकमु पछाण के, तिउ खसमे मिलना ।।"

हम उस नाम के भेद को प्राप्त करने के लिये सन्तों-हात्माओ की सगति करते है।

सब से पहले वह नाम था, सब-कुछ उस नाम ने पैदा किया है। वाणी मे आता है--"नामे ही ते सब किछु ोआ . ."। यह जो दुनिया की रचना नजर आती है, इसे उस मालिक ने शब्द या नाम के जरिये पैदा किया है। हम र रोज वाणी मे पढते है--

"सबदे धरती सबदे आकाश,
सबदे सबदि भइआ परगास ।।"

हमारी धरती, आकाश, सूरज, चन्द्रमा वगैरह जो कुछ भी है, सब शब्द के आधार पर खड़े है। ये हमारे लफ्ज तो केवल साधन या जरिया है, वह शब्द हमारा ध्येय और मंजिल है। इनके जरिये हमें अपने खयाल को वापस ले

जाकर उस शब्द और नाम के साथ जोड़ना है, न कि इनके साथ प्यार करके कौमों, मजहबों और मुल्कों के झगड़ों में फँस जाना है और एक-दूसरे के साथ लड़ना-भिड़ना शुरू कर देना है। किसी ने उस मालिक को 'राम-राम' कह कर याद करना शुरू कर दिया, वह हिन्दू बन कर बैठ गया, किसी ने 'अल्लाह अल्लाह' पुकारना शुरू कर दिया, वह अपने को मुसलमान समझने लग गया और किसी ने 'वाहिगुरु' लफ़्ज का जाप शुरू कर दिया, वह सिक्ख बन कर बैठ गया। नतीजा यह हुआ कि मजहबी तअस्सुब (पक्षपात) और अपने-अपने नामों के भेद-भाव मे आकर हमें एक-दूसरे की शक्ले देखना भी मुश्किल हो गया। पर हमे अपने मन में सोच और विचार करना है कि हमारे लफ्ज हमे किस ओर ले जा रहे है। अगर हमारा ख़याल आज उस धुनात्मक नाम के साथ जुड़ जाय, तो न हमारी कोई कौम रह जाती है, न हमारा कोई मजहब और न हमारा कोई मुल्क! सब झगडे उतनी देर तक है जितनी देर हम उस असल से विछुडे हुए है और लफ़्जो के चक्कर मे पडे हुए है।

महात्मा तो दुनिया मे केवल नाम का होका देने के लिये, नाम का प्रचार करने के लिये आते है। लेकिन हम दुनिया के लोग कर्म-काण्ड मे इतने फँसे हुए है और बाहरमुखी हुए बैठे है कि उन महात्माओ के जाने के बाद, उनकी वाणी और उपदेश को छोटे-छोटे दायरों मे लाकर मजहबो की शक्ले दे देते है और सारी उमर आपस में लडने-भिडने में ही गुजार देते है। महात्माओ की मूल शिक्षा तो यही है कि हम अपनी सुरत को नौ द्वारो मे से निकाल कर नाम के साथ जोड़ें, पर हम उस पर चलने की कोशिश ही नही करते। इसलिये, गुरु साहिब प्यार के साथ समझाते है कि अगर कोई मालिक की भक्ति का साधन है, मालिक से मिलने

का तरीका है, तो वह शब्द या नाम की कमाई है। गुरु अमरदास साहिब एक और जगह फरमाते है—

"बिन सबदै अन्तर आन्हेरा,
न वस्तु लहे न चूके फेरा ॥"

उस शब्द या नाम की कमाई के बगैर न हमारे अन्दर से अज्ञानता का अँधेरा दूर होता है, न मालिक से मिलाप होता है और न ही चौरासी से छुटकारा होता है। स्वामीजी महाराज भी फरमाते हैं—

"गुर कहें खोल कर भाई, लग शबद अनाहद जाई।
बिन शबद उपाय न दूजा, काया का छुटे ना कूजा।"

हम सभी देह की कैद में फँसे हुए है। अगर हमारा इस कैद से छुटकारा हो सकता है, तो केवल एक ही साधन के द्वारा, एक ही तरीका अपनाने से। वह क्या है? 'बिन शबद उपाय न दूजा'—शब्द और नाम की कमाई के सिवाय और कोई तरीका या साधन है ही नही जिसके द्वारा हम इस देह की कैद से छुटकारा प्राप्त कर सकें। अगर कोई भक्ति मालिक को मंजूर है, तो वह शब्द की कमाई है, नाम की कमाई है।

अब मन मे खयाल आता है कि महात्मा जिस नाम की इतनी महिमा करते है, वह नाम कहाँ है? हमारी ग्रन्थ-पोथियाँ उस नाम की महिमा से भरी पड़ी है। उनको पढ़ने से हमारे मन मे शब्द या नाम की कमाई करने का शौक पैदा होता है, विरह, तड़प और प्यार पैदा होता है। मालिक से मिलने की युक्ति प्राप्त करने की अर्थात नाम का भेद जानने की इच्छा पैदा होती है। लेकिन, नाम की ऊँची और पवित्र दौलत ग्रन्थों-पोथियों में से नही मिलती, वह तो हमारे अन्दर है। वह जब भी मिलेगी, केवल हमे अपने अन्दर से ही मिलेगी। हुजूर महाराज जी बड़े सुन्दर उदाहरण देकर

समझाया करते थे कि डाक्टर की किताबों में नुस्खे लिखे होते हैं, लेकिन दवाई उसकी अलमारी में होती है। अगर किसी के पेट में दर्द होता हो और वह डाक्टर की किताब लेकर पाठ करना शुरू कर दे, एकाध दिन नही वल्कि चाहे सालों तक उन्हे याद करता रहे, तो भी इसके द्वारा उसका वीमारी से छुटकारा नही हो सकता। लेकिन, अगर हम डाक्टर के बताये उस नुस्खे के मुताविक दवा वना कर खा लेते है, तो डाक्टर के पास जाने का भी फायदा हो जाता है, नुस्खा बनाने का भी फायदा हो जाता है और वीमारी से भी छुटकारा हो जाता है।

इसी प्रकार, महाजन की वही मे रुपयो के लेने-देने का हिसाव-किताब लिखा होता है, लेकिन रुपया उसकी तिजोरी मे होता है। अगर कोई उसकी बही चुराकर ले जाये तो वह उसकी पूंजी या रुपया तो चोरी करके नहीं ले जा सकता। इसी तरह ग्रन्थो-पोथियों, धर्म-पुस्तकों को पढने से हमारे मन मे मालिक से मिलने का विरह तो पैदा होता है, मालिक की भक्ति करने की वाकफ़ियत (जानकारी) तो मिलती है, लेकिन जो कुछ हम पढ़ते है, जव उस पर हम अमल करना शुरू कर देगे तव जाकर कही उस उद्देश्य को, उस मकसद को प्राप्त कर सकेगे। हुजूर महाराजजी फरमाया करते थे कि अगर हम सारी उम्र 'लड्डू-लड्डू' ही करते रहे, तो न पेट भरेगा और न स्वाद ही आयेगा। अगर लड्डू वना कर खा लेगे, तो पेट भी भर जायेगा और स्वाद भी आ जायेगा।

हमें ग्रन्थो-पोथियों को पढ़ने मे ही सारी उम्र नहीं गुजार देनी चाहिए, वल्कि जो कुछ वे कहते है उस पर चलने की कोशिश करना चाहिये। ग्रन्थ-पोथियाँ क्या चीज है? ऋपियों-मुनियों, पीरो-पैगम्वरो, सन्तो-महात्माओं ने मेह-

नत की, मालिक से मिलाप किया और जो-जो नजारे उन्होने अन्दर देखे और जो अनुभव उन्हे हुए, हमारे मार्ग-दर्शन और हमारी हिदायत के लिए उनका जिक्र ग्रन्थों-पोथियों मे कर दिया। अब, जब हम उन ग्रन्थो-पोथियों को पढ़ते है तो हमें अपनी मंजिले-मक्सूद का पता लगता है, उन रुकावटों का पता चलता है जो राह मे आती है। लेकिन, पढने से वे रुकावटे न रास्ते से दूर होती है और न ही मंजिले-मक्सूद नज़र आती है। जो कुछ पढ़ते है, जब उस पर हम अमल करना शुरू कर देगे, तो वे रुकावटे भी दूर हो जायेंगी और मंजिले-मक्सूद भी नजर आने लगेगी। इसका मतलब यह नही लेना चाहिये कि हमें ग्रन्थों-पोथियों, वेदों-शास्त्रों को पढ़ना छोड़ देना है। जब तक पढ़ेगे नही, किसी चीज की समझ कैसे आयेगी? किसी चीज का भेद किस प्रकार मालूम होगा? किसी चीज का प्यार कैसे जागेगा? लेकिन पढ़ना ही काफी नही, उस पर अमल करना भी जरूरी है। अगर दूध को किसी बर्तन मे रखना हो, तो सबसे पहले हम उस बर्तन को अच्छी तरह से साफ़ करते है, तब जाकर कही वह दूध रखने के काबिल होता है। इसके विपरीत, अगर हम सारी उमर उस बर्तन को साफ करने में ही गुजार दें और उसमें कोई वस्तु या चीज न रखें तो हमारी सारी मेहनत फिजूल चली जायेगी। न पढने से पढ़ना हजार दरजे अच्छा है, लेकिन पढने से उस पर अमल करना लाख दरजे अच्छा है, जैसे मैले बरतन से साफ बर्तन अच्छा है, पर साफ़ बर्तन से भरा हुआ बर्तन कही ज्यादा अच्छा है।

महात्मा हमे क्या उपदेश देते है? वे हमे बताते है कि हमे अपने ख़याल को किस तरह शब्द के साथ जोड़ना है। गुरु अमरदास साहिब कहते है—

"नौ दर ठाके धावत रहाए दसवे निज घर वासा पाए ।।
ओथे अनहद शबद वजे दिन राती गुरमती शब्द सुनावणिया ।।"

हमारा जो सफर है, वह पैरों के तलों से लेकर सिर की चोटी तक है । इस सफर की दो मंजिले है । एक आँखो तक है, दूसरी आँखो से ऊपर । हमारा जो सोचने का केन्द्र या मरकज और नुक्ता है, वह दोनों आँखों के पीछे है । कभी किसी समस्या के बारे मे सोचना हो, कुछ विचार करना हो, किसी भूली हुई बात को याद करना हो तो हमारा हाथ अपने आप ही हमारे मस्तक पर जाता है । हमारे सोच-विचार का इस स्थान के साथ बहुत गहरा सम्वन्ध है । किसी भूली हुई बात को याद करते समय हम कभी लातों और पैरों पर हाथ नही मारते ।

हमारा खयाल यहां (दोनों आँखो के बीच) से उतर कर इन नौ द्वारों के जरीये सारी दुनिया मे फैला हुआ है । ये नौ द्वार है—दो आँखों के और दो कान के सूराख, एक मुँह का, दो नाक के और नीचे के दो इन्द्रियो के सूराख । हम यहाँ बैठे है, मगर हमारा खयाल कभी बेटे-वेटियो की ओर जाता है, कभी कौमो और मुल्को की ओर जाता है; कभी घर के चौके-चूल्हे याद आते है, कभी दफ्तरों की मिसले याद आती है और कभी दूकान के ग्राहक याद आते है । जिन-जिन चीजो के बारे मे खयाल आता है, उनकी शक्ले भी हमारी आँखो के आगे फिरना शुरू हो जाती है । हम दुनिया की नाशवान और फनाह चीजो का सुमिरन करके और उन्ही का ध्यान करके दुनिया का ही रूप बने बैठे है और यहाँ बार-बार जन्म-मरण के चक्कर मे पड़े हुए है ।

गुरु अमरदास साहिब समझाते है कि सबसे पहले हमें अपने खयाल को मोड़ कर वापस आँखो के पीछे इकट्ठा

करना है और उसे बाहर जाने से रोकना है। जब खयाल आँखों के पीछे इकट्ठा हो जायगा, तब क्या होगा? — "ओथे अनहद शबद बजे दिनराती", उस जगह अनहद शब्द, वह मीठी से मीठी और सुरीली से सुरीली आवाज जो कि मालिक की दरगाह से आती है और हम सबके अन्दर आ रही है, बजना शुरू हो जाएगी।

वहाँ न कौम का सवाल है, न मजहब का सवाल है और न मुल्क का। उस आवाज को हम शब्द, नाम, गुरुवाणी, कलामे-इलाही, बाँगे-आसमानी, वर्ड, लोगास या चाहे जिस नाम से पुकार सकते है। वह चोरों के अन्दर भी है, ठगो के अन्दर भी है और सन्तों-महात्माओं के अन्दर भी है। जब तक हम अपने ख़याल को उस शब्द और नाम के साथ नही जोड़ते, हमारा दुनिया के साथ सम्बन्ध टूट नही सकता और मालिक के साथ लिव लग नही सकती। गुरु नानक साहिब उपदेश करते है—

"नौ दरवाजे दसवें मुकता, अनहद शब्द वजावणियां ॥"

जब तक हमारा ख़याल आँखों के नीचे-नीचे है, हम इन्द्रियों के भोगों मे भटक रहे है। यहाँ मुक्ति नही मिल सकती। मुक्ति का दरवाजा कहाँ है? दसवी गली से आगे। उसकी निशानी क्या है?—"अनहद शबद वजा-वणिया।" उस जगह वह अनहद शब्द हम सबके अन्दर दिन-रात धुनकारें दे रहा है। अपने ख़याल को उस शब्द या नाम के साथ जोडने का मतलब ही मुक्ति के द्वार पर पहुँचना है। अगर हम जीते-जी अनपढ़ है, तो मौत के बाद बी० ए० या एम० ए० की डिग्री प्राप्त नहीं कर सकते। अगर जीते-जी हमारी करतूते बुरी और खोटी है तो मौत के बाद जाकर हम कोई सन्त-महात्मा तो नही बन जायेंगे। जो कुछ भी प्राप्त करना है, जीते-जी करना है। वह नाम

रूपी अमृत, जिसे पीकर अमर होना है, मुक्ति प्राप्त करनी है, हमें बाहर कहीं से भी नहीं मिलेगा। वह हमारे सबके अन्दर दिन-रात बरस रहा है। हम उसे किस तरह पी सकते हैं? गुरु रामदास साहिब उपदेश करते हैं—

"नौ दरवाजे नवे दर फीके रस अमृत दसवें चवीजे ॥"

आँखों से नीचे-नीचे वह अमृत नहीं मिल सकता। नीचे तो केवल इन्द्रियों के भोग हैं, विषयों-विकारों की फीकी लज्जतें हैं। जब हम दसवीं गली लांघ जायेंगे तब वह नाम रूपी अमृत मिलेगा, जो कि उस जगह बरस रहा है। जब तक हम अपने ख़याल को उस जगह इकट्ठा नहीं करते जहाँ कि वह नाम रूपी अमृत बरस रहा है, तब तक उस अमृत को पी कैसे सकते हैं? वह अमृत दोनों आँखों के बीच में बरस रहा है और हमारा ख़याल यहाँ से उतर कर कभी कौमों-मजहबों के झगडों में फँस बैठता है, कभी बाल-बच्चों में उलझ जाता है और कभी दुनिया के और कई झगडों में लग जाता है। जब तक हम अपने ख़याल को इधर से हटाकर, आँखों के पीछे इकट्ठा करके, उस नाम रूपी अमृत को पीना शुरू नहीं करते, हमारा हृदय, हमारा वह कमल कभी भी उस अमृत से भर नहीं सकता। महात्मा उसका इसीलिए अमृत कह कर वर्णन करते हैं कि अगर हमारा ख़याल उस अमृत के साथ जुड जाता है तो हम हमेशा के लिए अमर हो जाते हैं, हमारा जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा हो जाता है।

हुजूर महाराज जी समझाया करते थे कि चाहे कितनी भी जबरदस्त बारिश क्यों न होती हो, अगर किसी बर्तन को हम उलटा या औंधे मुँह रख दें तो उसके अन्दर बारिश की एक बूँद भी नहीं जा सकती। पर अगर हम उसे सीधा कर दें तो पहली बारिश से नहीं तो दूसरी या तीसरी बारिश

से अवश्य भर जायेगा। इसी प्रकार जब तक हमारे ख़याल का रुख दुनिया की ओर से हट कर उस शब्द या नाम की ओर नही होता, तब तक हमारा हृदय का कमल उस नाम रूपी अमृत से कभी भी नही भर सकता।

महात्मा प्यार के साथ समझाते है कि अगर मुक्ति प्राप्त करना है, उस शब्द की कमाई करना है, नाम की कमाई करना है, अगर वापस जाकर मालिक से मिलना है, तो किसी सन्त-महात्मा से मिलो। अब दिल मे ख़याल आता है कि बेशक वह शब्द तो हमारे अन्दर है और मालिक ने हमारे वास्ते ही उसे हमारे अन्दर रखा है, तो क्या हम अपनी कोशिश के द्वारा, अपने मन और बुद्धि से अपने ख़याल को उस शब्द के साथ नही जोड सकते? गुरु अर्जुन साहिब फरमाते है—

"जिसका गृह तिन दीआ ताला, कुंजी गुरु सौपाई ॥"

जिस मालिक ने हमे पैदा किया है, उसने हमारे अन्दर हमारे लिए नाम की दौलत को रखकर उसका भेद सन्तों-महात्माओ के सुपुर्द कर दिया है। सो बेशक वह नाम हमारे अन्दर है, पर जब तक वे अन्तर मे प्रवेश करने का भेद नही देते, अन्दर जाने का तरीका नही बतलाते, तब तक हमारा ख़याल उस नाम या शब्द के साथ जुड़ नही सकता। दुनिया मे भी हम देखते है कि कोई मामूली सा काम या हुनर सीखना हो तो हम किसी न किसी की ताबेदारी या सेवा करते है, कोई उस्ताद धारण करते है, कोई मास्टर या शिक्षक की तलाश करते है। यह लुहारी, सुतारी, या राजगिरी का काम देखने में तो बडा आसान सा लगता है, पर जब हाथ मे हथौड़ी लेकर देखते है तो ईंट पर पडने के बजाय वह उँगली पर आ लगती है। सो ऐसे कामों को सीखने के लिए भी उस्ताद धारण करते है। रूहानियत का

मसला तो बड़ा ही पेचीदा है। सन्तों-महात्माओं के मार्ग बताये बिना एक कदम भी अन्दर जाना मुश्किल हो जाता है। लोगों ने डाक्टरी और वकालत पर कितनी रिसर्च या खोज की है, कितनी किताबे लिखी है। लेकिन कभी कोई ऐसा सज्जन नहीं मिलेगा जो घर वैठकर, खुद किताबें पढकर ही डाक्टर या वकील बन गया हो। वल्कि, यूनिवर्सिटी की डिग्रियाँ प्राप्त करके भी अमली या व्यावहारिक ट्रेनिग लेनी पड़ती है। गुरु अमरदास साहिव प्यार के साथ समझाते है—

"सचै सबदि सची पति होई बिन नावे मुकति न पावै कोई ।।
बिन सतगुर कोई नाम ना पावै प्रभ ऐसी बणत बणाई है ।।"

हम उस शब्द की कमाई करके ही सच्ची इज्जत हासिल कर सकते है। गुरु अमरदास साहिब ने यहाँ "सच्चा शब्द" का इस्तेमाल (प्रयोग) किया है। इसका मतलव है कि कोई और भी ऐसा शब्द है जो कि सच्चा नही है, पवित्र नही है। सच्चे शब्द से आपका मतलब धुनात्मक शब्द से है जो कभी नष्ट नही होता, कभी फनाह नही होता। फिर आप स्पष्ट समझाते है—'बिन नावें मुकति ना पावे कोई।' हम जितने चाहे तरीके इख्तियार कर ले, अपना ले, पर जब तक उस शब्द और नाम की कमाई नही करते, हम कभी भी मुक्ति प्राप्त नही कर सकते। उस शब्द की कमाई किस प्रकार करना है ?

"बिन सतगुर कोई नाम न पाए ।।"

हम अपनी अक्ल से, मन-बुद्धि से जितनी चाहे उधेड़-बुन कर ले, हमारा खयाल कभी भी उस शब्द के साथ नही जुड़ सकता। बल्कि सन्तों-महात्माओं के बतलाए हुए तरीके पर चलकर ही हम नाम रूपी अमृत को पी सकते है। सन्तो-महात्माओ के पास जाने की क्यो जरूरत पड़ती है ? आप

फरमाते है—'प्रभु ऐसी बणत बनाई है।' मालिक ने अपने मिलने का कुछ ऐसा ही तरीका रखा है। वह खुद-मुख्तार (स्वाधीन) है, जो चाहे अपने मिलने का तरीका रख सकता है।

गुरु अमरदास साहिब समझाते है कि जब हम साधु-सन्तो और महात्माओं की संगति करेगे, वे हमें शब्द और नाम का भेद दे देगे और हम शब्द और नाम की कमाई करने लग जायेगे, तब उस मालिक को हमेशा के लिए अपनी देह और शरीर में ही प्रकट कर लेंगे।

हरि बिन सभु किछु मैला संतहु किआ हउ पूज चढ़ाई ।।

अब समझाते है कि जब हम किसी की भक्ति या पूजा करते है, तो कोई न कोई चीज भेंट करते है, कोई वस्तु पेश करते है। कोई पताशे लेकर आता है, कोई फूल पेश करता है, कोई अनाज लेकर आता है तो कोई रुपया, सिक्का वगैरह पेश करता है। आप फरमाते है कि ये जितनी भी चीजे है, मालिक की पूजा के काबिल नहीं, उसकी भक्ति के काबिल नही, क्योकि इन चीजो को नष्ट हो जाना है, फनाह हो जाना है। और वह मालिक कैसा है? वह मालिक एक है और हमेशा से वही चला आ रहा है। 'हरि बिन सब किछु मैला सन्तहु'—उस मालिक के सिवाय जो कुछ भी दिखाई दे रहा है उसे फनाह और नष्ट हो जाना है। ये फनाह और नाशवान वस्तुएँ उस मालिक की भक्ति, उसकी पूजा और प्यार के काबिल किस तरह हो सकती है? गुरु नानक साहिब अपनी वाणी में समझाते है—

"आदि सचु जुगादि सचु,
है भी सच, नानक होसी भी सचु ।।" (जपुजी साहब)

वह मालिक हमेशा से सच है अर्थात् उसका कभी नाश नही होता, वह कभी फनाह नही होता । यह नही कि पहले उसकी गद्दी किसी और के पास थी या आगे किसी और के पास चली जाने वाली है । सो आप प्यार के साथ समझाते है कि उस मालिक के वगैर यह जो कुछ भी नजर आता है, सव मैल है, कूड है । इसे नष्ट और फनाह हो जाना है । ये कूड और नाशवान चीजे उस मालिक की भक्ति और उसकी पूजा के काविल नही हो सकती । मालिक की भक्ति करने के लिए कौन-सी चीज पेश करना है, कौन-सी वस्तु भेट करना है ? आप आगे स्पष्ट वतलाते है—

हरि साचे भावै सा पूजा होवै भाणा मंनि वसाई ।।

सवसे पहले आप समझाते है कि 'हरि साचे भावे सा पूजा होवे' । जव उस मालिक को मंजूर होगा, मालिक को भायेगा, मालिक की मौज होगी तव जाकर हम उसकी भक्ति कर सकेगे । अपना प्यार और अपनी भक्ति करने का तरीका मालिक ही वख्शे तो वख्शे । हमारा प्यार तो शराव-कवाव तथा और और दुनिया के धन्धो के वीच इतना उलझा हुआ है कि जव तक हम पर मालिक की दया, मेहर और कृपा नही होती, हमारा खयाल कभी भी मालिक की भक्ति की ओर नही जा सकता ।

मालिक की भक्ति किस तरह करना है ? "भाणा मंनि वसाई", मालिक के भाणे मे रहते हुए उसकी भक्ति करना है । भाणे का मतलव है जिस हालत मे मालिक रखे उसमे रहते हुए अपने खयाल को शब्द और नाम के साथ जोडकर रखना । अगर वह मालिक दर-दर भीख मँगवाता है तो भी उसकी भक्ति करना है, उसे छोड़ नही देना है । अगर वह मालिक राज-पाट दे देता है, दुनिया

की मान-बढाई देता है तो भी उनमे न उलझकर मालिक की भक्ति करना है। भाणे का मतलब अपने प्रारब्ध कर्मो का हिसाब-किताब खुशी-खुशी भुगतना है। अगर दु:ख आने पर दु:खी हो जावेगे तो हमारा खयाल दुनिया में फैल जायेगा। अगर सुखो के समय ऐशो-इशरत में फँस जायेंगे तो भी उस मालिक को भूल जायेगे।

जो भी दु:ख और सुख है हम सबको ही उन्हे अपने प्रारब्ध कर्मो के अनुसार भुगतना पडता है। लेकिन अगर हम शब्द और नाम की कमाई करते रहेंगे तो हमारी इच्छा-शक्ति इतनी मजबूत हो जायेगी कि हम उन कर्मो का हिसाब-किताब बडी खुशी के साथ अदा कर देंगे। जो लोग शब्द और नाम की कमाई करते है, उन पर मालिक दया करके उनकी सूली को शूल भी कर देता है। लेकिन शर्त यह है कि वे मालिक के भाणे मे रहकर उसकी भक्ति करें, नाम की कमाई की कोशिश करे। सो मालिक की भक्ति के लिए कौन-सी चीज पेश करनी चाहिये? हमे अपने आपको मालिक के हवाले करना है कि ऐ मालिक! तू जिस हालत मे भी रखेगा, हम उसी हालत में रहते हुए अपने खयाल को शब्द के साथ जोड़ेगे, नाम के साथ जोड़ेगे।

पूजा करै सभु लोकु संतहु मनमुखि थाई न पाई ॥

अब आप समझाते है कि उस मालिक की पूजा तो हम सब जीव करते है और अपनी अक्ल के अनुसार हजारो ही तरीको और युक्तियों के द्वारा उस मालिक को ढूँढने की कोशिश करते हैं। कोई जप-तप करता है, कोई पूजा-पाठ करता है, कोई घरबार छोड़कर जंगलों और पहाड़ों में छिपा बैठा है और कोई मन्दिर मस्जिद और गुरुद्वारों में उस मालिक को ढूँढने की कोशिश करता है। आप समझाते

है कि हमने मालिक को ढूंढने के इन तरीकों को मन के पीछे लग कर अपनाया है और यह जो मन है, यह हमारा दुश्मन है, यह हमे वाहर-मुखी कर रहा है, कर्म-काण्ड मे फँसा रहा है और हमें वापस जाकर मालिक से मिलने नही देता है। अगर हम दुश्मन के हाथो अपनी वागडोर पकडा देंगे, अपना कमान सौप देगे, तो हम फतह किस तरह हासिल कर सकेंगे ?

हम मन के कहने मे आकर क्या-क्या करते है ? कभी समाधियो से वँध कर वैठ जाते है, कभी तीर्थो मे नहाने में मुक्ति समझते है और कभी ग्रन्थों-पोथियों के पढ़ने में मुक्ति मान वैठते है। मालिक से मिलने का जो असली तरीका है, वह गुरु साहिव ऊपर समझा आये है कि अपनी सुरत को नौ द्वारो मे से निकाल कर शब्द और नाम के साथ जोड़ो। पर मन हमें इस रास्ते पर चलने ही नहीं देता। हुजूर महाराज जी फरमाया करते थे कि मन काल का एजेन्ट है। काल कव चाहता है कि कोई जीव उसके दायरे से निकल कर वापस जाकर मालिक से मिल जाये ! वह कभी मित्र वन कर समझाना शुरू कर देता है कि लोगो ने यों ही नरक और स्वर्ग की वातें वनाई हुई है, कि यह मौका मालिक ने वड़े भाग्य से शराव-कवाव और विपयों-विकारों के लिए हमे वख्शा है—'एह जग मिट्ठा, अगला किन डिठा' या 'वाबर वायश कोश कि आलम दो वारा नेस्त' —सो शराव-कबाव का स्वाद लेकर इस इन्सान के जामे से पूरा फायदा उठाना चाहिये। और कभी दुश्मन वनकर मन हमे डराने लग जाता है कि अगर हम साधु-सन्तो और महात्माओ के पीछे भागते फिरेगे तो दुनिया क्या कहेगी ? विरादरी वाले ताने मारेगे कि इतना वड़ा आदमी होकर सन्तों, महात्माओ और साधुओं के पीछे भागा फिरता है। फिर हम कभी-कभी देवी-देवताओं का डर महसूस करने

लगते है। कोई मामूली सी बीमारी आ जाती है तो मन हुज्जते शुरू कर देता है कि अमुक देवी नाराज हो गई होगी या फलाँ देवता गुस्सा हो गया होगा।

सो आप फरमाते है कि यह मन हमे हमारे असली मकसद या उद्देश्य से हमेशा दूर रखना चाहता है। हमारे और मालिक के बीच मे अगर कोई रुकावट है तो वह केवल हमारा मन है। मन हमें शराब-कबाब और विषयों-विकारो मे लगाए रखता है। हम सब दुनिया के जीव भूल और भ्रम मे उलझे हुए है। हमें इस मन के कहे लग कर मालिक की भक्ति नही करना चाहिये, बल्कि हमें मन को तो काबू करना है, मन की रुकावट को तो अपने रास्ते से दूर करना है। आज कौम कौम की दुश्मन हो रही है, मजहब मजहब का दुश्मन और मुल्क मुल्क का दुश्मन है, और एक दुश्मन दूसरे को मारने और गला काटने के उपाय सोचने मे दिन-रात लगा हुआ है। यह सब कुछ हमसे कौन करवाता है ? हमारा मन करवाता है। हम जब तक मन की रुकावट को अपने रास्ते से दूर नही करते, तब तक जितनी मरजी हो मालिक की भक्ति करने की कोशिश कर ले, हमारा कभी भी वापस जाकर उसके साथ मिलाप नही हो सकता। मन की क्या रुकावट है और वह हमारे रास्ते से किस प्रकार दूर हो सकती है, यह गुरु अमरदास साहिब आगे स्पष्ट बतलाते है।

सबदि मरै मनु निरमलु संतहु एह पूजा थाइ पाई ।।

आप फरमाते है कि हमारी रूह और मन की गाँठ बँधी हुई है। इसका मतलब यह है कि हम मन के तावे होकर जो बुरे और खोटे कर्म करते है, उनका नतीजा साथ-साथ हमारी रूह को भी भुगतना पड़ता है। जब तक हमारी

आत्मा इस मन का साथ नही छोड़ती, वह अपने असल में मिलने के काबिल नही हो सकती । यह मन का साथ कब छोडती है ? जब मन वापिस अपने ठिकाने पर पहुँच जाता है । मन का ठिकाना कौन-सा है ? मन ब्रह्म का अंश है, त्रिकुटी का रहनेवाला है लेकिन, शराब-कबाब और विषयों-विकारो मे फँस कर अपनी असलियत को बिलकुल खो बैठा है । जब तक यह वापस ब्रह्म के देश में नही पहुँचता, हमारी आत्मा मालिक के देश मे पहुँचने और मालिक से मिलने के काबिल कैसे हो सकती है ?

ये जो कुछ भी सत्संग वगैरह हम करते है, वाणी पढते है, घरबार छोडकर जंगलो-पहाड़ो मे छिपकर बैठते हैं, सब तरीके और साधन केवल मन को समझाने के लिये करते है । लेकिन, हमारा मन फिर भी काबू क्यो नही आता ? इसकी वजह महात्मा बतलाते है कि मन लज्जत या स्वाद का आशिक है । इसकी आदत है कि पहले एक चीज के साथ प्यार करता है, जब उससे कोई अच्छी, ऊँची और बढिया चीज नजर आती है तो पहली चीज को छोड़ देता है और दूसरी के पीछे दौडना शुरु कर देता है । हम आम तौर पर कहते है कि मन वेराइटी (विविधता) का आशिक है । एक ही चीज को खा-खाकर और देख-देख कर वह तग आ जाता है । वे शक्ले और वे पदार्थ जिनको पाने के लिये हम जिन्दगी का दाव तक लगाने को तैयार हो जाते है, कोई वक्त आता है जबकि हमारा मन उन्ही शक्लों और पदार्थो से नफ़रत करना शुरू कर देता है, उन्हे देखना भी गवारा नही करता ।

हमारे मन की आदत है कि दुनिया की कोई भी प्यार की वस्तु और लज्जत इसको हमेशा के लिये पकड़ कर नही रख सकती । जब हम छोटे होते है, तब माँ-बाप के साथ

कितना प्यार होता है। जरा बड़े होते है, वही प्यार आकर बहनों-भाइयों में फैल जाता है। स्कूलों-कालेजों में जाते है, यारों-दोस्तों के साथ प्यार हो जाता है। शादी होती है, बीवी और बाल-बच्चो के साथ प्यार हो जाता है। बुजुर्ग होते है, कौमों, मजहबों और मुल्को तक जाकर प्यार फैल जाता है। एक प्यार है, लेकिन कितनी शक्लें बदलता है, कितने रूप बदलता है। मगर कोई भी प्यार हमारे मन को काबू नही कर सकता। गुरु अमरदास साहिब समझाते है कि जब तक हमारे मन को दुनिया के प्यार से और दुनिया की लज्जत से कोई ऊँची और पवित्र लज्जत नही मिलती, इसका खयाल कभी भी शराबो-कबाबों और विषयों-विकारो से निकल नही सकता। यह किस चीज की लज्जत है ?—'सबद मरै मन निरमल सतहु'—जब हम शब्द की कमाई करके अपने आपको उसमे जज्ब कर देगे, लवलीन कर देगे, शब्द रूप हो जायेगे, तब कही जाकर हमारा मन निर्मल होगा, पाक और पवित्र होगा। तब वह हमेशा के लिये अपने ठिकाने पहुँच सकेगा। गुरु रामदासजी फ़रमाते है—

"नाम मिले मन तृपतिए, बिन नामे धृग जीवासु ॥"

जब हम नाम रूपी अमृत पी लेते है तब कही मन में तृप्ति और शान्ति आती है। गुरु नानक साहिब उपदेश करते है—

"राम नाम मन बेधिआ, अवरु के करि वीचारु ॥"

यह मन जो विषयों-विकारों मे फँस कर दिन-रात हिरन की तरह छलाग मारता रहता है, जब उस राम नाम के साथ जुड जाता है तब हमेशा के लिए बिध जाता है, काबू मे आ जाता है। राम नाम से आपका मतलब उस ताकत से है जिसने दुनिया की यह सब रचना रची है, जिस ताकत

के आधार पर सब खण्ड-ब्रह्माण्ड टिके हुए है। उसे हम राम नाम कह ले, आकाशवाणी कह लें, गुरुवाणी, धुर की वाणी, सच्ची वाणी कह ले, हुक्म या अमर कह लें, या चाहे उसका और कोई नाम रख ले। भिन्न-भिन्न महात्माओ ने भिन्न-भिन्न मुल्को और कौमो मे आकर उसका ही वर्णन करने की कोशिश की है।

हमारा मन जब भी वापस अपने ठिकाने पहुँचेगा, केवल शब्द या नाम की कमाई करके ही पहुँचेगा। हम मन को अनुशासन या जबरन रोक-टोक के जरिये वश मे करना चाहते है, हर चीज के लिए इसे इन्कार करना चाहते हैं। मन बन्दर है, यह एक जगह तो बैठने वाला नही। अगर मन को हर चीज से 'नही नही' करते रहेगे तो भी वह कुछ तो करेगा ही। हम दुनिया की ओर से तो मन को जरूर डिटेच करना या हटाना चाहते है, लेकिन हटाकर इसका रुख किस ओर करना चाहते है? महात्मा समझाते हैं कि जब यह शब्द और नाम के साथ अटेच हो जाता या जुड़ जाता है तो दुनिया की ओर से अपने आप हट जाता है। नाम की लज्जत इतनी ऊँची व गहरी है कि उसको पाकर इन्द्रियो के भोगो और विषयो-विकारो की सब लज्जते हमेशा के लिए फीकी हो जाती है। जिसको हीरे जवाहरात मिल जाते है, वह फिर कौड़ियो के पीछे दर-ब-दर ठोकरे नही खाता।

मन को हठ-पूर्वक या जबरदस्ती काबू करना इसी तरह बुरा है जिस तरह कि किसी सॉप को पकड़ कर टोकरी या पिटारी मे बन्द कर देना। जितनी देर वह पिटारी में बन्द है, उतनी देर के लिए हम उसके जहर से बचे हुए है। लेकिन, पिटारी मे बन्द करने से उसके अन्दर से न गुस्सा जाता है, न जहर। हमने अस्थायी या आरजी हिफाजत

हासिल कर रखी है। जब भी साँप को पिटारी में से निकलने का मौका मिलेगा, वह जरूर काटेगा। वह कभी अपनी आदत से बाज नहीं आ सकता। सो हमे अपने मन की ओर से आरजी या अस्थायी आराम ही हासिल नही करना है, बल्कि उसको पकड़ कर जहर की थैली को ही निकाल देना है। फिर चाहे साँप को गले मे लटकाये फिरे। वह हमेशा के लिये बेअसर हो जाता है। वह जहर की थैली अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार हमारे मन से कब निकलते है? जब उसको नाम रूपी अमृत पीने को मिल जाता है। उस अमृत को पीकर इसके अन्दर सत, सन्तोष, शील आदि गुण आ जाते है।

सो गुरु नानक साहिब प्यार के साथ समझाते है कि अगर आप मन को काबू करना चाहते है तो केवल एक ही तरीका है कि अपने खयाल को शब्द के साथ जोडें, नाम के साथ जोडे। आगे फरमाते है, "एह पूजा थाई पाई", यह जो सुरत-शब्द का अभ्यास है, नाम या शब्द की कमाई है, यही मालिक की भक्ति है। यही भक्ति हमे वापस ले जाकर अपने धाम मे पहुँचाती है, मालिक के साथ मिलाती है।

पवित पावन से जन साचे एक सबदि लिव लाई ॥

अब समझाते है कि जिनका केवल एक शब्द के साथ प्यार हो गया अर्थात उठते-बैठते, चलते-फिरते खयाल शब्द के साथ जुड़ गया, उनका खयाल दुनिया की ओर से हट जाता है। वे हमेशा के लिए पवित्र हो जाते है, उनकी रूह निर्मल, पाक और पवित्र हो जाती है। और ऐसे महात्मा हमसे भी शब्द और नाम की कमाई करवा कर हमे भी हमेशा के लिए पाक और पवित्र कर लेते है।

हमे अपने ख़याल को हमेशा शब्द और नाम के साथ जोडकर रखना चाहिये। दुनिया मे रहते हुए भी दुनिया

के मैलों में नही लिपटना चाहिये । हमे दुनिया मे किस तरह रहना चाहिये ? हुजूर (महाराज बाबा सावनसिहजी) मिसाल देकर समझाया करते थे कि जिस तरह व्याही हुई लड़की अपने माँ-बाप के घर रहती है, वह सखियों-सहेलियो के साथ हँसती खेलती भी है, चौके-चूल्हे का काम भी करती है, माता-पिता की सेवा भी करती है, लेकिन उसके मन मे हमेशा अपने पति का प्यार बना रहता है, उसका ख़याल हमेशा अपने पति के चरणों में लगा रहता है । हमारा पति कौन है ? वह कुल मालिक, वाहिगुरु, परमेश्वर । हमारी रूह उस मालिक का अंश है । हमे अपने दुनिया के काम-काज करते हुए, अपने फर्ज और कर्तव्य पूरे करते हुए अपने ख़याल को मालिक की भक्ति में, मालिक के प्यार मे लगाना है । जब हमारी यह हालत हो जायेगी कि हम सब ओर से अपने खयाल को हटाकर शब्द और नाम के साथ जोड़ देंगे, तब कही जाकर हमारी रूह मन और माया के दायरे से पार जा सकेगी, निर्मल हो सकेगी ।

हमारा और उस मालिक का आपस मे क्या सम्बन्ध है ? हमे उस मालिक की भक्ति क्यो करनी है ? क्यो उसके साथ प्यार करना है ? हमारे और मालिक के बीच में कौनसी-कौनसी रुकावटे है ? हमे किस राह पर चल कर उन्हें दूर करना है ? शब्द क्या चीज है ? वह कहाँ रहता है ? हमें अपने खयाल को शब्द या नाम के साथ किस तरह जोडना है ? गुरु साहिब सारे ही सन्त-मत के निचोड़ का एक ही तुक में वर्णन कर देते है ।

बिनु नावै होर पूज न होवी भरमि भुली लोकाई ।।

उस शब्द या नाम के बगैर मालिक की कोई भक्ति ही नही, कोई पूजा ही नही, दुनिया यो ही भ्रमो में फँस कर

भूली फिरती है। कोई किसी तरफ दौड़ा जाता है, कोई किसी तरफ़। मालिक ने हमारे अन्दर सब-कुछ रखा हुआ है, हमारे वास्ते रखा हुआ है। लेकिन हम अन्दर जाने की कोशिश नही करते, मालिक को अपना बनाने की कोशिश नही करते। हुजूर महराज जी फरमाया करते थे कि हमारी वह हालत है कि जिस तरह किसी के घर मे करोड़ो रुपयों के खजाने दबे हुए हो, मगर उसे उस दौलत का पता न हो; वह बाहर गलियों और सडको पर जाकर कौडियाँ माँगता फिरे, दर-ब-दर ठोकरें खाता फिरे। जब वह अपने घर के अन्दर तलाश करेगा, उस दौलत को निकालेगा तब जाकर उससे फायदा उठा सकेगा।

अगर मालिक को कोई भक्ति मंजूर है तो वह शब्द की कमाई है, नाम का प्यार है। इसका यह मतलब नही लेना चाहिए कि जप-तप और पूजा-पाठ करने का कोई फल नही मिलता। फल जरूर मिलता है। क्या मिलता है? हम सेठ-साहूकार होकर दुनिया में आ जाते है, राजा-महाराजा होकर आ जाते है, कौमों, मजहबों, मुल्को की हुकूमत लेकर आ जाते हैं। लोहे की बेडियाँ उतर जाती है, सोने की जजीरें चढ़ जाती है। जेल की 'सी' क्लास से छुटकारा हो जाता है, 'ए' क्लास मिल जाता है। झोपडियो से बिस्तरे उठ जाते है, महलों में जाकर बिछ जाते है। लेकिन रहते है कैदी के कैदी, चौरासी के जेलखाने मे ही फँसे हुए। आम कहावत मशहूर है—'तपों राज ते राजो नरक।' पहले तप किया, देह को गलाया; फिर राजपाट प्राप्त किया, दुनिया पर अत्याचार किया और नरको के भागी होकर बैठ गये। हमारा आम ख़याल है कि अगर यहाँ किसी को एक रुपया देगे तो अगले जन्म मे हमे दस गुना होकर मिलेगा। शायद इससे भी ज्यादा होकर मिलता हो,

लकिन वह दस गुना प्राप्त करने के लिये वापस देह की कैद में तो आना ही पडता है। अभी हम ऐसे कौनसे सुख और आराम मे बैठे है कि फिर से यहाँ जामा हासिल करके उसे लेना चाहते हैं !

'हाथी के पॉव मे सबका पाँव।' जो भी दान-पुण्य का फल होता है वह सब ही नाम की कमाई मे आ जाता है। जब रात-दिन हमारी जबान पर उस मालिक का नाम चढा हो तो इससे बढकर और कौनसा जप हो सकता है ? जब हम अपने आप को उस मालिक के हवाले कर देते है, मालिक के भाणे मे रहते है, तो इससे बडा और कौन-सा तप हो सकता है ? जब प्रेम-प्यार के साथ महात्मा के स्वरूप को दिन-रात साथ लिये फिरते है, तो इससे बडी और कौन-सी पूजा हो सकती है ? जब अन्तर मे जाकर उस अनहद शब्द, उस अनहद वाणी को सुनने लग जाते है, तो इससे बडा और कौन-सा पाठ हो सकता है ? और जब नाम रूपी अमृत को पीकर मन दुनिया से उचाट हो जाता है, मालिक के मिलाप का शौक पैदा हो जाता है, तो इससे बडा और कौन-सा वैराग्य हो सकता है ? सो हमे जो कुछ मिलेगा, नाम की कमाई से मिलेगा, शब्द की कमाई से मिलेगा। गुरु अर्जुन साहिब तो यहाँ तक फरमाते है—

"कुरुता बीज बीजे नहि जनमे सब लाहा मूल गंवाइंदा ॥"

अगर हम बेमौसम का बीज बोते है, तो जितनी मरजी हो मेहनत कर ले, मजदूर लगा दे, पर हमारा वह बीज फिजूल जाता है और उसकी फसल कभी हमारे घर नही आ सकती। हम किसान लोग जानते है कि गेहूँ को जब भी बोया जाता है, कार्तिक के महीने मे बोया जाता है। अगर कोई जेठ की गरमी, आषाढ़ की धूप और सावन की बारिश

में गेहूँ बोयेगा, वह जितनी मरजी हो खाद डाल ले, जितनी मरजी हो जमीन जोत ले, वह कभी भी फसल घर नही ला सकता। वह बीज कभी भी उगकर हमे फसल नही देता। बल्कि, बीज भी खराब हो जाता है, मेहनत भी बरबाद जाती है और हमारे हाथ कुछ नही पड़ता। गुरु अर्जुन साहिब फिर फ़रमाते है—

"कलजुग महि कीरतन परधाना।
गुरमुखि जपिए लाए धिआना॥"

कलियुग मे किस बात की महिमा है ? कीर्तन की। जो प्रेम-प्यार के साथ उस कीर्तन को सुनते है, वे गुरुमुख हो जाते है, उनका खयाल वापस जाकर उस मालिक के साथ जुड जाता है। वह कौन-सा कीर्तन है ? वह शब्द का कीर्तन है जो रात-दिन हमारे अन्दर गूँज रहा है। वह मीठी से मीठी, सुरीली से सुरीली आवाज है जो कि मालिक की दरगाह से आती है और जो हम सबके अन्दर गूँज रही है। हम इस बाहर के कीर्तन की भी कद्र करते है, क्योकि इसमे मालिक की महिमा गाई जाती है, सतगुरु की महिमा गाई जाती है, शब्द और नाम की कमाई की महिमा गाई जाती है। लेकिन, इस कीर्तन के सुनने का तो तभी फायदा है जबकि इसको सुनने के बाद हमारा खयाल अन्दर के कीर्तन के साथ जुड़ जाये। पर अगर इस राग को सुनकर केवल सिर ही हिला देना है, तो फिर इसका क्या फ़ायदा है ? हमे तो अपने ख़याल को अन्दर के कीर्तन के साथ जोड़ना है जो दिन-रात हमारे अन्दर हो रहा है। वह चोरो के अन्दर भी है, ठगों के अन्दर भी है, सन्तो और महात्माओं के अन्दर भी है। हम रात को सो जाते है, पर वह कीर्तन कभी भी बन्द नही होता। गुरु अमरदास साहिब समझाते है—

"इस जुग का धरम पढ़ो तुम भाई,
पूरे गुरु सब सोझी पाई,
एथे आगे हरि नाम सखाई ।।"

हरएक युग का अपना-अपना धर्म है। सतयुग मे हमारी उमर लम्बी थी, हमारी सेहत भी अच्छी थी, हमारा ख़याल दुनिया में ज्यादा फैला हुआ नही था और मामूली से तरीके से हमारा ख़याल मालिक की ओर लग जाता था। ज्यों-ज्यो समय बीतता गया, हालात वदलते गए। त्रेता युग आया, फिर द्वापर आ गया। हमारा ख़याल भी दुनिया में फैलता गया, सेहत भी कमजोर होती गई, उमर भी थोडी होती गई। अव कलियुग में आकर क्या देखते है? कोई नसीबवाला ही पचास-साठ साल की उमर भोग कर यहाँ से जाता है। तन्दुरुस्ती भी आप देखते ही है कि कैसी है। घण्टे आधे घण्टे भजन मे नही बैठते कि हड्डियों-घुटनो मे दर्द होना शुरू हो जाता है और मन दुनिया मे इतना फैल चुका है कि किसी को मालिक का पता ही नही, मालिक की भक्ति का ख़याल ही नही, वल्कि शरावो-कवावो और विषयो-विकारों से हमें फुरसत ही नही मिलती। इसलिए, जो साधन हमें सतयुग मे काम देते थे, वे साधन या तरीके कलियुग मे काम नही दे सकते। गुरु अमरदास साहिब समझाते है कि कलियुग का क्या धर्म है—

"एथे आगे हरि नाम सखाई ।।"

अगर दुनिया मे भी चार दिन सुख के काटने है और वापस जाकर मालिक की वख्शिश और दया मेहर प्राप्त करनी है, तो केवल एक ही तरीका है कि हम शब्द के साथ अपने खयाल को जोड़ लें, नाम के साथ जोड़ ले। अगर नाम की कमाई नही करते और वेमौसम का वीज वोते है, तो मेहनत

भी फिजूल जाती है और उसका फल भी हमें कुछ नही मिलता। स्वामीजी महाराज भी समझाते है—

"कलजुग कर्म धर्म नही कोई। नाम बिना उद्धार न होई।।"

अगर इस कलियुग में दुनिया से अपना उद्धार करना है तो एक ही कर्म है, एक ही धर्म है कि हम अपने ख़याल को शब्द के साथ जोड़ें, नाम के साथ जोड़े। गुरु नानक साहिब उपदेश करते है—

"नाम बिसार चले अन मारग अंत काल पछुताही।।"

नाम का तरीका छोडकर हम दूसरे जिस रास्ते पर भी चलने की कोशिश करते है, (उसके लिये) जब मौत आती है तब पछताना पड़ता है कि व्यर्थ ही ऐसे कीमती समय को फिजूल के कामों में जाया (नष्ट) कर दिया। गुरु अमरदास साहिब बार-बार हमें उसी नुक्ते पर लाते हैं कि जो कुछ मिलना है शब्द की कमाई से मिलना है, नाम की कमाई से मिलना है।

गुरमुखि आपु पछाणै संतहु राम नामि लिव लाई।।

जब तक हम अपने आपको नही पहचानते, उस मालिक को पहचानने के काबिल नही हो सकते। हम अपने आप को कब पहचान सकते है? जब मन और माया के दायरे से पार चले जाते है। सुकरात कहता है, 'अपने आपको पहचानो' और 'परमात्मा की पहचान से पहले अपने आपकी पहचान जरूरी है।' जब हमे अपने आपका ही पता नही लगता कि हम कौन है, कहाँ से आये है और कहाँ जा रहे है, तो हम मालिक को क्या पहचान सकते है? हमारी रूह पर कई गन्दे-गन्दे गिलाफ या आवरण चढे हुए है। जब तक यह निर्मल, पाक और पवित्र नही होती, यह अपने आपको पहचानने के काबिल नही हो सकती।

हम मन और माया के दायरे से पार कब जा सकते हैं ? आप फ़रमाते हैं—'राम नाम लिव लाई'—जब हम सारी दुनिया की ओर से अपने प्यार को हटाकर, केवल एक राम नाम के साथ अपने खयाल को जोड देंगे, जब उठते-बैठते, चलते-फिरते हमारा ख़याल शब्द और नाम के साथ जुड जायेगा, तब कही हम मन और माया के दायरे से पार होगे। जब हमारी आत्मा मन के पंजे से आजादी हासिल कर लेती है तब ही इसे अपने आपका पता लगता है, अपने घर का पता लगता है, अपने असल का पता लगता है और इसका प्रेम-प्यार, विरह और तडप इसे ले जाकर अपने असल (मूल) के साथ मिला देते हैं।

हमारी आत्मा तो निर्मल और पवित्र थी, लेकिन मन का साथ करने के कारण वह अति मैली और गन्दी हो चुकी है। हम देखते है कि एक बिजली का बल्ब कितनी ही तेज रोशनी वाला क्यो न हो, अगर हम पन्द्रह-बीस काले टाट उसके ऊपर लपेट दे तो अँधेरा ही अँधेरा नजर आवेगा। पर ज्यो-ज्यो उस पर से काले टाट उतारना शुरू कर देंगे, त्यो-त्यो रोशनी और प्रकाश नजर आना शुरू हो जावेगा। इसी तरह, जब हमारे मन से भी सब गन्दे-गन्दे गिलाफ उतर जायेगे तो हमारा मन निर्मल, पाक और पवित्र हो जायेगा। जब मन निर्मल होता है तब जाकर हमारी आत्मा निर्मल होती है। जब मन अपने ठिकाने पहुँच जायेगा, तब रूह भी अपने ठिकाने पहुँच सकेगी। गुरु साहिब प्रेम पूर्वक समझाते है कि जब हम राम के साथ प्यार जागृत कर लेंगे तो हम अपने आपको पहचानने के काबिल हो जायेगे। जब हम अपने आपको पहचानने के काबिल होगे तब जाकर गुरुमुख कहलाने के काबिल होगे। और जब तक हम गुरु-मुख नही बनते, हम मालिक से मिलने का फख्र या गौरव प्राप्त नही कर सकते।

आपे निरमलु पूज कराए गुर सबदी थाइ पाई ।।

अब महात्मा सब-कुछ समझा कर फ़रमाते हैं कि हमें जो कुछ भी मिलना है मालिक की दया, मालिक की मेहर और बख्शिश से मिलना है। जब वह मालिक हमें यहाँ से निकालना चाहेगा तो हमारे ख़याल को, किसी महात्मा के जरिये, शब्द और नाम के साथ हमेशा के लिये जोड़ देगा। वह मालिक हम पर किस तरह दया, मेहर और बख्शिश करता है ? वह हमे सन्तों और महत्माओं से मिला देता है। और सन्त-महात्मा हम पर क्या दया, मेहर और बख्शिश करते है ? वे नाम का भेद दे देते है। और फिर हम नाम की कमाई करके अपनी आत्मा पर उपकार करते है और इसे मन के पजे से आजाद करा लेते है। तब कही आत्मा अपने असल या मूल से मिलने के योग्य होती है। आप एक और स्थान पर भी समझाते है--

"आपे करता करे कराए, आपे सबदि गुर मनि वसाए ।।"

वह मालिक जो कुछ भी करता है खुद ही करता है, अपनी मौज से करता है और अपनी दया-मेहर और बख्शिश के जरीये करता है। जब वह बख्शिश करता है तो हमारे ख़याल को सन्तों-महात्माओं के जरीये शब्द और नाम के साथ जोड देता है। सो हमारा ख़याल जब भी मालिक की भक्ति की ओर जायेगा, हम शब्द और नाम की कमाई करेंगे, तो यह मालिक की दया-मेहर व बख्शिश के द्वारा ही हो सकेगा। इसका मतलब यह नही लेना चाहिए कि वह मालिक जब खुद चाहेगा हमसे अपनी भक्ति करवा लेगा, हम शराबों-कबाबों से अपने ख़याल को क्यो निकाले। हम देखते है कि जब कोई भिखारी हमारे दरवाजे पर आकर भीख माँगता है, सदा लगाता है, तो वह हमसे पहले यह

सवाल नही करता कि अगर आप मेरी झोली भरोगे तो मै अपना गला फाड़ूँ, नही तो अपने कीमती वक्त को क्यो खराब करूँ ? उसका काम है भीख माँगना। आगे देने वाले के हाथ मे है कि जब मरजी हो उसकी झोली भर दे और जो चाहे उसकी झोली मे डाल दे।

इसी तरह हम दुनिया के सब जीव उस मालिक के दर के भिखारी है। जो कुछ भी हम शब्द और नाम की कमाई करते है, मालिक की कृपा और दया-मेहर प्राप्त करने के लिये करते है। यह मालिक के वश मे है कि जब वह हमे इस काबिल समझे, अपने साथ मिला ले और जन्म-मरण के दु खो से हमारा छुटकारा करा दे।

इसलिए, हमे उस मालिक की भक्ति करना चाहिए, शब्द और नाम की कमाई करना चाहिए। वह मालिक कभी भी इतना बेरहम नही हो सकता कि हम उसकी भक्ति करें, उससे मिलने का शौक पैदा करे और वह हम पर दया-मेहर न करे। हुजूर महाराज जी फ़रमाया करते थे कि अगर हम मालिक की ओर एक कदम जाये तो वह हमारी ओर दस कदम आता है। लेकिन, हम अपना रुख मालिक की ओर करने की कोशिश ही नही करते। हमें शराबो-कबाबों, विषयों-विकारों और दुनिया के धन्धों से फ़ुरसत ही नही मिलती। अगर कही भूले-भटके मालिक की तरफ खयाल जाता भी है तो उससे मिलने के लिए कोई यत्न नही करते, कोई भक्ति नही करते। हम अपने सुख और आराम के लिए मालिक की भक्ति करते है, बाल-बच्चो के प्यार के ख़ातिर भक्ति करते है, कौमो-मजहबो की मान-बडाई के वास्ते, मुकदमो को जीतने के वास्ते भक्ति करते है, न कि मालिक से मिलने के वास्ते। घण्टे आधे घण्टे भजन मे नही बैठते कि पन्द्रह-बीस चीजो की माँग की लिस्ट (सूची) मालिक के

आगे पेश कर देते हैं। पर अगर हम सच्चे प्रेम और सच्चे विरह के साथ मालिक की भक्ति करेंगे तो कोई वजह नही कि वह सच्चा मालिक हम पर दया-मेहर न करे, बख्शिश न करे।

पूजा करहि परु बिधि नही जाणहि दूजै भाइ मलु लाई ॥

अब गुरु अमरदास साहिब फिर समझाते है कि मालिक की भक्ति करते भी हैं तो हम दुनिया के सभी जीव अपनी-अपनी अक्ल के अनुसार करने की कोशिश करते है, लेकिन जो भक्ति का असली तरीका है, उसका हमे पता नही, उसका भेद मालूम नही। हम असली तरीके को छोडकर अपने ख़याल को दूसरी ओर ले जाकर अपने पापो की गठरी को और भी भारी कर लेते है। हम देखते है कि कई लोग मालिक को खुश करने के लिये किस तरह जानवरो की कुर्बानी देते हैं। जानवरो के प्राणो की कुर्बानी देना तो बडा ही आसान है, लेकिन वह मालिक जानवरो की कुर्बानी नही माँगता। हमे अपने आप की कुर्बानी देनी पड़ेगी, अपने आपको मालिक के आगे पेश करना पड़ेगा, मालिक के हवाले करना पड़ेगा। पर हम मालिक की भक्ति करने के बजाय पापों का भार और बढा लेते है और फिर उन पापो का हिसाब-किताब चुकाने के लिए जन्म-मरण के दु खो मे आना पड़ता है, चौरासी मे आना पड़ता है। मालिक की भक्ति भी की, अपना वक्त जाया भी किया, लेकिन पल्ले कुछ न पड़ा। गुरु अमरदास साहिब समझाते है——

"शरीरों भालण को बाहर जाए,
नाम न लए बहुत विगार दुख पाए ॥"

जो लोग उस नाम रूपी दौलत को अपने शरीर और देह के बाहर ढूँढने की कोशिश करते है, उनकी हालत बेगा-

रियो के जैसी है, जिन्हे कि पुलिस सवेरे पकड़ कर ले जाती है, सारे दिन मुफ्त मेहनत करवाती है, और जव शाम होती है तो वे खाली हाथ वापस घर आ जाते हैं। टूट-टूट कर मरे भी, खून-पसीना भी एक किया, मेहनत भी की, लेकिन हाथ-पल्ले कुछ भी न पड़ा। इसी तरह जो सज्जन अन्दर जाकर उस नाम रूपी दौलत को प्राप्त करने की कोशिश नही करते, वे अपने कीमती वक्त को वेगारियो के समान जाया करने में लगे हुए है। वाहर न आज तक किसी को कुछ मिला है, न मिल सकता है। गुरु अमरदास साहिव फिर समझाते है—

"घर दर छोड़े आपना, पर घर झूठा जाई ॥
चोरे वागू पकड़िए, विन नामे चोटां खाई ॥"

हम अपने घर का दरवाजा खटखटाने की कोशिश नही करते। हमारा घर सचखण्ड है और उसका दरवाजा है आँखों के पीछे तीसरा तिल। हम अपने ख़याल को आँखों के पीछे इकट्ठा तो नही करते मगर—'पर घर झूठा जाई'—झूठे और पराये घरो मे दिन-रात दौड़ते फिरते है। इसका नतीजा क्या होता है ? 'चोरे वांगू पकडिये'—जिस तरह चोर अपना घर छोड़ कर पराए घर जाते हुए पकड़ा जाता है, उसे पुलिस के हाथो डण्डे खाने पड़ते है और साथ ही अदालत उसे सजा सुनाती है और जेल मे जाकर चक्कियाँ चलानी पड़ती है, इसी तरह—'बिन नावे चोटा खाई'—नाम के विना हमे ठोकरे खानी पड़ती है।

अगर हम अपने घर के दरवाजे पर ख़याल को इकट्ठा करते तो हमे वह नाम रूपी दौलत मिल जाती, हम उस दौलत को हासिल करके बादशाह हो जाते, जन्म-मरण के दु खो से छूटकारा हो जाता। लेकिन क्योकि झूठे घरों मे भागते फिरे, इसलिए वह दौलत न मिली और उल्टे चोटें खानी पड़ी, चौरासी के जेलखाने मे जाना पड़ा। हम जिस

जून में भी जाते हैं, दुःख ही दु.ख और मुसीबतें ही मुसीबतें उठानी पड़ती है। सो महात्मा के समझाने का मतलब यह है कि हमें जो कुछ भी मिलेगा, अपने अन्दर से ही मिलेगा। और जब तक हम अन्दर जाकर उस शब्द और नाम को ढूँढने की कोशिश नही करते तब तक हम यो ही बेगारियो की तरह अपने कीमती वक्त को जाया कर रहे है।

गुरमुखि होवै सो पूजा जाणै भाणा मंनि वसाई ॥
भाणे ते सभि सुख पावै संतहु अंते नामु सखाई ॥

फरमाते है कि मालिक की भक्ति का असली तरीका केवल गुरुमुखों को आता है। वे मालिक की भक्ति उससे मिलने के लिए करते है। उनके मन मे सच्चा प्यार है, सच्चा विरह है, सच्ची तड़प है। इसके विपरीत, हमारा हृदय तो दुनिया के पदार्थो के लिए तडपता रहता है, दुनिया की शक्लो के पीछे भटकता फिरता है, और मिलना मालिक से चाहते है ! कोई प्यारा मित्र बिछुड जाता है तो हम किस तरह रात को आहे भरते है, आँखो से टप-टप आँसू गिराते है। पर उस मालिक की याद मे भी कभी हमारी आँखो मे आँसू आये है ? कभी रात जागते काटी है ? जब हमारी यह हालत है तो हमारा मालिक के साथ मिलाप किस तरह हो सकता है ?

हुजूर महाराज जी फरमाया करते थे कि जिनके अन्दर मालिक से मिलने का सच्चा प्यार और शौक होता है, उनको महात्मा की संगति में लाना इस तरह है जिस तरह कि सूखे बारूद को आग के नजदीक ले जाना। हम दुनिया के बाकी सब जीव भीगे हुए बारूद की तरह है। लेकिन ज्यों-ज्यो हम सन्तो-महत्माओं की सगति करेगे, सत्संग में बैठेगे, मन ठोकर खायेगा, त्यो-त्यो वह पानी सूखता जायेगा।

तव जाकर कही वारूद आग को पकड़ेगा। सो आप प्यार के साथ समझाते है कि गुरुमुखो के दिल मे मालिक से मिलने का सच्चा इश्क और प्यार है, सच्चा शौक है, सच्चा विरह और सच्ची तडप है। जव हम उन गुरुमुखो की सोहवत करेंगे तो हमे भी उनसे समझ आ जायेगी, नाम की कमाई करने का तरीका मालूम हो जायेगा। वे वतलाते है कि भाई, आपको जो कुछ भी मिलना है, अपने कर्मों के अनुसार मिलना है। आपको दुनिया को देख-देख कर यो ही दु खी नही होना चाहिये, वल्कि मालिक के भाणे मे रहकर अपने खयाल को शव्द के साथ जोडने की कोशिश करना चाहिये, नाम के साथ जोडने की कोशिश करना चाहिये। जव हम मन का मत छोडकर गुरुमुखो के मत पर चलेगे, तव कही मालिक की भक्ति करने का तरीका मालूम होगा।

अपणा आपु न पछाणहि संतहु कूड़ि करहि वडिआई ।।

अव गुरु अमरदास साहिव गुरुमुखो की हालत और अवस्था का वर्णन करके मनमुखो की हालत वयान करते है कि वे अपने आपको पहचानने की कोशिश नही करते। हम अपने आपको कव पहचान सकते है? जव हम मन और माया के दायरे से पार चले जाते है। वह किस तरह हो सकता है? 'राम नाम लिव लाई'—जव हमारा खयाल शव्द और नाम के साथ जुड जाता है। पर हम शव्द और नाम की कमाई तो करते नही, वल्कि झूठे दावे करते है। अपना भार तो उठाया नही जाता, लेकिन लोगो के गधे वन कर वोझा ढोने मे लगे हुए हैं। हुजूर महाराज जी फरमाया करते थे कि अपने घर मे आग लगी हुई है अर्थात् अपना हृदय तो काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहकार से जल रहा है, लेकिन हम दुनिया की आग बुझाने में लगे हुए हैं, दुनिया के परोपकार कर

रहे है । इसका हमे क्या नतीजा भुगतना पड़ता है ? आप आगे बतलाते है—

पाखंडि कीनै जमु नहीं छोड़ै लै जासी पति गवाई ।।

फरमाते है कि हम अपने आप को शायद थोडा बहुत धोखा दे ले, दुनिया को शायद धोखा दे ले, लेकिन उस मालिक को किस तरह धोखा दे सकते है जो हम सबके अन्दर बैठा हुआ है, हमारे एक-एक काम को देख रहा है ? उसको न गवाहो की जरूरत पडती है, न नालिश की और न बचाव या प्रतिवाद की । बल्कि, हम दिन-रात जो-जो बुरी करतूतें करते है, वह हमारे अन्दर बैठा हुआ सब कुछ देख रहा है । उन सब कर्मो का फल हमे भुगतना पड़ेगा । क्या फल भुगतना पडेगा ?—

"जमु नही छोड़ै, लै जासी पति गंवाई ।।"

जब मौत का वक्त आता है, यमदूत आ जाते है और कान पकड कर धर्मराज के सामने पेश कर देते है । धर्मराज हमें अपने कर्मो के अनुसार , हमारी तृष्णा और इच्छाओं के हिसाब से जहाँ मुनासिब समझता है वहाँ भेज देता है, अर्थात् हमे वहाँ जाकर जन्म लेना पड़ता है । एक देह की कैद से अभी छुटकारा नही होता है कि दूसरी देह का ताबूत या ढाँचा हमारी रूह के लिये पहले ही घड़ा हुआ तैयार रहता है । उसमे जाते बाद मे है, मौत पहले ही आँखो के आगे नाचना शुरू कर देती है । जिस पर रोज ही वारण्ट निकलते हो, कुर्की या डिक्री ही जारी होती रहे, उसकी क्या इज्जत हो सकती है ? जब हमे हर बार धर्मराज के सामने जाना और आना पड़ता है तो हमारी दुनिया मे क्या इज्जत हो सकती है और मालिक के दर पर क्या इज्जत हो सकती है ? सो आप प्यार के साथ समझाते है कि अगर आप मन के तावे

होकर बुरे और खोटे कर्म करते रहेंगे तो हमेशा के लिये काल के जाल मे फँसे रहेंगे, चौरासी के बन्धनों मे फँसे रहेगे ।

जिन अंतरि सबदु आपु पछाणहि गति मिति तिन ही पाई ।।

अब फरमाते है कि जो सज्जन अपने अन्दर जाकर, अपने खयाल को नौ द्वारो मे से निकाल कर, आँखो के पीछे शब्द और नाम के साथ जोड़ देते है और मन-माया के दायरे को पार करके अपने आपको पहचान लेते है, उनको सच्ची इज्जत मिलती है, सच्ची शोभा प्राप्त होती है । आपके कहने का मतलब यह है कि जब हम गुरुमुख बनेगे तब जाकर मालिक से मिलने के अधिकारी बनेगे । और जब भी हम गुरुमुख बनेगे, शब्द और नाम की कमाई करते हुए मन और माया के दायरे से पार जाकर बनेगे ।

एहु मनूआ सुंन समाधि लगावै जोती जोति मिलाई ।।

उस शब्द और नाम की कमाई करने का क्या फायदा होता है? हमारा मन वापस अपने ठिकाने पर आ जाता है और रूह व मन की गाँठ खुल जाती है । जब रूह मन के पंजे से आजाद हो जाती है तो वापिस अपने ठिकाने पर आ जाती है, और 'जोती जोति मिलाई'—कतरा (बूंद) समुद्र मे जाकर समुद्र ही बन जाता है, आत्मा परमात्मा की भक्ति करके परमात्मा का रूप ही प्राप्त कर लेती है । हमारी आत्मा जो कि मालिक से बिछुड़ कर, मन के ताबे होकर, चौरासी के बन्धनो मे बँधी हुई थी, दु:ख और मुसीबते उठा रही थी, सन्तों-महात्माओ की संगति मे जाकर, शब्द और नाम की कमाई करके अपने आपको पहचानती हुई वापस अपने ठिकाने पहुँच गई, चौरासी के बन्धनों से छुटकारा हो गया ।

सुणि सुणि गुरमुखि नामु वखाणहि सत संगति मेलाई ।।

अब आप गुरुमुखों की महिमा करते है कि वे सज्जन खुद नाम की कमाई करते है और दुनिया मे शब्द और नाम का प्रचार करते हैं। गुरुमुख शब्द और नाम का प्रचार किस प्रकार करते हैं ? सत्संग के द्वारा। सत्संग करने का मतलब ही यह है कि हमारे मन में शब्द और नाम की कमाई करने का शौक पैदा हो, मालिक के मिलाप के लिए प्रेम, प्यार, विरह और तडप पैदा हो; हमें शब्द और नाम की कमाई का भेद पता चले, तरीका समझ आये। फिर महात्मा के सत्संग मे आकर हमारे हजारों प्रकार के भ्रम और सकल्प दूर हो जाते है। मन की आदत किसी न किसी भ्रम और सकल्प मे फँसा रहना है। सत्संग मे इसे ठोकर लगती है, अपने आप की याद आती है, अपने घर और असल की याद आती है। तब कही मन विषयो-विकारो और शराब-कबाब को छोडकर मालिक की भक्ति मे लगता है, नाम की कमाई मे लगता है। सत्संग एक ऐसा तीर्थ है जहाँ जाकर हम कई प्रकार के दुर्गुण और ऐब छोड देते है, चोर चोरी करना छोड देता है, दुराचारी दुराचर छोड़ देता है।

महात्मा सत्संग केवल उसी को कहते है जहाँ एक नाम का ही प्रचार होता हो। इसके बरखिलाफ जहाॅ एक मजहब दूसरे मजहब को गालियाॅ देता हो, एक-दूसरे की निन्दा होती हो, एक-दूसरे को मारने के उपाय सोचे जाते हो, उसका नाम कभी भी सत्संग नही हो सकता। सत्संग मे किसी की भी निन्दा या आलोचना नही होनी चाहिये। सत्संग मे तो फायदा ही फायदा है, क्योकि यहाॅ आकर हमारा ख़याल अपने आप शब्द और नाम की कमाई की ओर जाता है। हुज़ूर महाराज जी फरमाया करते थे कि सत्संग भजन की बाड़ है। जिनको भजन करने का शौक होता है, उनको

सन्तों-महात्माओं की संगति का भी शौक होता है। हमारा मन संगति का असर बहुत जल्दी लेता है। अगर बुरे पुरुषों के पास बैठेंगे, कामियों-क्रोधियों के पास बैठेंगे तो काम-क्रोध व अन्य बुरे-बुरे विचार हमारे मन में पैदा होंगे। अगर साधुओं, सन्तों और महात्माओं की संगति करेंगे, जो कि मालिक की भक्ति कर रहे हैं, तो हमारा ख़याल भी मालिक की भक्ति की ओर लग जायेगा।

सो आप प्यार के साथ समझाते हैं कि गुरमुख सज्जन दुनिया में आकर शब्द का होका देते हैं, शब्द का प्रचार करते हैं। मैंने शुरू में ही विनती की थी कि सन्त-महात्मा तो हमेशा दुनिया में नाम का होका देने के लिये आते हैं। यह तो हम दुनिया के जीव हैं जो उनके जाने के बाद उनकी वाणी को छोटे-छोटे दायरों में बन्द करके कौमी, मजहबी और मुल्की शक्ल दे देते हैं और सारी उमर लड़ने-भिड़ने में गुजार देते हैं। जो महात्मा की निजी शिक्षा और उपदेश है, उस पर चलने की कोशिश नहीं करते। महात्मा अपने जीवन में अगर हमें कुछ भ्रमों में से निकालते हैं, तो उनके जाने के बाद हम कई गुना अधिक और भ्रमों में फँस जाते हैं। जो उनकी निजी शिक्षा और उपदेश है, हमें उस पर अपने ख़याल को लाना चाहिये अर्थात् अपने ख़याल को केवल शब्द और नाम के साथ जोड़ना चाहिये। मगर हम उस रास्ते पर चलने की कोशिश ही नहीं करते। हम जितना-जितना भ्रमों में फँसे बैठे हैं, उतना ही भूले बैठे हैं। गुरु अमरदास साहिब इससे पहले भी स्पष्ट समझा चुके हैं कि जो लोग नाम को छोड़कर जो भी दूसरे तरीके या साधन अपनाने में लगे हुए हैं, वे सब भ्रमों में फँसे हुए हैं। हम जब तक इन भ्रमों से छुटकारा प्राप्त नहीं कर लेते, तब तक हमारा मालिक से मिलाप नहीं हो सकता। सन्त, महात्मा

और गुरुमुख हमे इन भ्रमों मे से निकालने के लिये आते है। वे किस प्रकार निकालते है ? शब्द और नाम का प्रचार करके, वाणी का प्रचार करके, सत्संग के द्वारा, अपनी सगति के द्वारा !

गुरमुखि गावै आप गवावै दरि साचै सोभा पाई ।।

अब गुरु साहिब बतौर सवाल फरमाते है कि हमारे और मालिक के बीच में रुकावट किस चीज की है ? दीवार किस चीज की है ? फिर आप ही बतलाते है कि अपने आप की रुकावट है, अपने आपका परदा या दीवार है । आप उपदेश करते है——

"आप वंजाए ता सभु किछु पाए ।।"

जब हम अपने अन्दर से अपने आपको निकाल देगे तब सब-कुछ प्राप्त कर लेंगे । यह 'अपना आप' क्या है ? हौमे है, खुदी है, सेल्फ़ है, अहंकार है । गुरु नानक साहिब उपदेश करते है——

"एका सगति इकतु ग्रह बसते मिल बात न करते भाई ।।"

रूह और मालिक इकट्ठे रहते है, एक ही घर मे निवास है, एक घर मे ही दोनो का वास है, लेकिन फिर भी आपस मे कभी मिलाप नही हुआ । न रूह ने मालिक के दर्शन किये और न सुहागिन हुई । क्यो सुहागिन न हुई ?

"अन्तर अलख न लखिआ जाई विच परदा हउमै पाई ।।"

वह मालिक हमारे अन्दर है, मगर हमें दिखाई नही देता, क्योकि हमारे और मालिक के बीच मे हौमै का बड़ा जबरदस्त परदा लगा हुआ है । जब तक हम अपने रास्ते से हौमै की रुकावट को दूर नही करते हमारा खयाल कभी भी जाकर उसके साथ नही जुड सकता, हालाँकि वह

मालिक हमारे अन्दर ही है। गुरु नानक साहिब उपदेश करते है——

"जीवन मुकत सो आखिए जिस विचो हउमै जाए ।।"

महात्मा उधार नही करते, मौत के बाद की मुक्ति का दिलासा नही देते। वे हमे जीते-जी मुक्ति प्राप्त करने का, जीते-जी अपने अन्दर से हौमै को निकालने का मार्ग बतलाते है। यह हौमै क्या है? मै-मेरी है, खुदी है, अहंभाव है, हम हर रोज कहते रहते है कि यह मेरा मित्र है, यह मेरी कौम है, यह मेरा मुल्क है। लेकिन जो कुछ भी नजर आ रहा है, सब कुछ उस मालिक का है। हम अपने आपको मालिक से अलग समझे बैठे है और इन पदार्थो को अपना बनाने की कोशिश कर रहे है। इसका नतीजा क्या होता है? ये तो आज तक न किसी के बने है, न बन सकते है। लेकिन इनके साथ प्यार करके हम इनके जैसे ही हुए बैठे है। 'जहाँ आसा तहाँ वासा' अर्थात्, जिन शक्लो और पदार्थो के साथ हमारा प्यार होता है, हम उनके समान ही हो जाते है। मन की आदत है कि यह किसी न किसी पदार्थ मे अटका रहता है, किसी न किसी शक्ल के प्यार मे उलझा रहता है। यह दुनिया मे से अपनी उँगली उठाता नही, इसका दुनिया का प्यार टूटता नही। जब तक यह दुनिया के प्यार को नही छोड़ता तब तक यह कभी भी मालिक से मिलने के काबिल नही हो सकता।

सो गुरु साहिब फरमाते है, 'गुरमुखि गावै आप गवावै'। गुरमुख क्या गाते है? वे शब्द और नाम की कमाई करते है। वे अपने अन्दर से क्या गँवाते है? क्या निकाल देते है? हौमै को गँवाते है, खुदी को निकाल बाहर करते है। फिर उन्हे इसका क्या फल मिलता है? 'दर सचे सोभा पाई', वे सच्ची दरगाह मे जाकर सच्ची इज्जत हासिल कर लेते है। आपके कहने का मतलब यह है कि जब भी हौमै की

बीमारी से हमारा छुटकारा होगा, केवल शब्द और नाम की कमाई के द्वारा ही होगा। जब तक हम हौमै नही छोड़ते, दुनिया का मोह और प्यार नही छोडते, तब तक कभी भी जाकर मालिक से नही मिल सकते। गुरुमुख सज्जन हमेशा नाम का प्रचार करके हमें इस बीमारी से छुड़ाने के लिये ही दुनिया में आते है।

साची बाणी सचु वखाणै सचि नामि लिव लाई ॥

अब गुरु अमरदास साहिब गुरुमुखों की हालत का वर्णन करते है कि जो अपने अन्दर से हौमै निकाल देते है, मै-मेरी को मार देते है, अपने अन्दर से अपने आपको निकाल देते है, उनका खयाल चलते-फिरते, उठते-बैठते शब्द और नाम के साथ हमेशा के लिए जुड जाता है। वे दुनिया मे रहते हुए भी दुनिया के मैलो मे नही लिपटते।

हमें दुनिया मे किस तरह रहना चाहिये ? फर्ज और ड्यूटी (कर्त्तव्य) समझ कर रहना चाहिये। गुरु नानक साहिब उपदेश करते है --

"जैसे जल मे कवल निरालम मुरगाइ नीसाने ॥
सुरति सबदि भउसागर तरीऐ नानक नाम बखाने ॥"

जिस प्रकार मुर्गाबी जल में रहती है, पर जब उड़ती है तो सूखे परो के द्वारा। जिस प्रकार कमल के फूल की जड़ें पानी में होती है, मगर वह खुद पानी से बाहर रहता है। इसी प्रकार, 'सुरति सबदि भउसागर तरीऐ'--हम भी अपनी सुरत को शब्द के साथ जोड़ कर इस भवसागर से पार हो सकते है। हुजूर महाराज जी समझाया करते थे कि जो मक्खी शहद के किनारे पर बैठती है वह शहद भी खा जाती है और सूखे परो से उड़ भी जाती है। लेकिन जो मक्खी शहद के बीच में जा बैठती है, उसके पंख भर जाते हैं, वह शहद भी

नही खा सकती और जान भी दे देती है। सो हमे उस मक्खी के समान, जो कि शहद के किनारे वैठती है, इस दुनिया में रहना चाहिये। हमे वेटे-बेटियों, कौमो, मजहवो और मुल्को की सेवा भी करनी है, उनके प्रति अपना फर्ज भी अदा करना है, लेकिन खुद को उनमे इतना जज्व और लीन नही करना है कि हम अपने आपको ही भूल जाये। हमे सब-कुछ करते हुए अपने खयाल को शव्द के साथ जोड कर रखना है।

सन्त-मत हमे कायर और वुजदिल नही बनाता। सन्त-महात्मा हमे समाज पर अपना वोझ डालने का उपदेश नही देते वल्कि साध-संगत की सेवा करते हुए मालिक की भक्ति तथा शव्द और नाम की कमाई करने का उपदेश देते है। घर-वार छोड़कर जगलो-पहाड़ों मे जाने से मालिक से मिलने का कोई खास शौक और वैराग्य नही पैदा हो जाता। पेट को रोटी की जरूरत होती है, शरीर को कपडो की जरूरत होती है, गरमी और सरदी से बचाव के लिए कोठरी की जरूरत होती है। अगर अपने घर का सुख और आराम छोड़ कर लोगों के आगे जाकर हाथ फैलाये, अर्थात् अपना घर छोडकर लोगो के घर जाकर माँगा तो उसमे मन को क्या सुख और शान्ति मिल सकती है? महात्मा समझाते है कि घरवार मे रहना है, अपना कर्त्तव्य और फर्ज समझकर दुनिया के काम-काज करते हुए अपने ख़याल को शव्द और नाम के साथ जोडना है।

भै भंजनु अति पाप निखंजनु मेरा प्रभु अंति सखाई ॥

जव हमारी यह अवस्था और हालत हो जायेगी, तो हमें इसका क्या फायदा प्राप्त होगा? हमारे पाप हमेशा के लिये नष्ट हो जायेगे, सव प्रकार के डर दूर हो जायेगे। अभी हमें क्या-क्या डर सताते है? पहला डर मौत का है, जो सवको

लगता है। पता नही किस वक्त मौत को आना है ? किसके हाथो आना है ? यमदूत हमे किस तरह घसीटेंगे, आगे जाकर कौन-कौन से दु:ख उठाने पडेंगे ? हमें कौन-सी चीज बार-बार देह की कैद मे ले आती है ? हमारे पाप, हमारे बुरे और खोटे कर्म । जब शब्द और नाम की कमाई के द्वारा उनका हिसाब-किताब ही खत्म हो जाता है तो हमारी रूह पाक व पवित्र हो जाती है और 'मेरा प्रभु अंते सखाई' वह मालिक आखिर मे हमारी सहायता करता है, मदद करता है, बख्शिश करता है। वह हम पर दया-मेहर करके हमे हमेशा के लिए अपने साथ मिला लेता है। सो आपके कहने का मतलब यह है कि शब्द और नाम की कमाई करने से न मौत का डर रहता है और न पापो का बोझ। बल्कि रूह पाक व पवित्र होकर वापस जाकर अपने असल मे मिल जाती है।

सभु किछु आपे आपि वरतै नानक नामि वडिआई ॥

अब गुरु साहिब सब-कुछ समझाकर मालिक की ओर आते है। आप बयान करते है कि हमे जो कुछ भी मिलना है, मालिक की दया और बख्शिश के जरीए मिलना है। वह मालिक कण-कण और पत्ते-पत्ते में व्याप्त है। जो कुछ हो रहा है, उसके हुक्म और उसकी मौज में हो रहा है। लेकिन 'नानक नाम वडिआई'—इस देह मे बैठकर बडाई उन्हें मिलती है जो दुनिया मे रहते हुए, दुनिया के काम-काज करते हुए अपने ख़याल को शब्द और नाम के साथ जोडकर रखते हैं। हम दुनिया मे जो कुछ भी इकट्ठा कर रहे है उसे हमारे साथ नही जाना है, वह हमारी सहायता और मदद करने वाला नही है। कौन-सी चीज हमारी सहायता और मदद करती है ? गुरु नानक साहिब उपदेश करते है—

"बिन नावै कोई संग न साथी ॥"

नाम के बगैर न किसी को साथ देना है और न किसी को मदद करना है। अगर मुक्ति प्राप्त करने का कोई साधन व तरीका है तो वह केवल नाम की कमाई है। इसलिए हमें भी चाहिये कि सन्तो-महात्माओं के तजुर्बे (अनुभव) से फायदा उठाकर अपने ख़याल को नाम के साथ जोड़ दे, शब्द के साथ जोड़ दे ताकि उस मालिक से मिलकर सच्ची वड़ाई प्राप्त कर ले।

वाणी तुलसी साहिब

दिल का हुजरा साफ़ कर जानाँ के आने के लिए ।
ध्यान गैरो का उठा उसके बिठाने के लिए ।।
चश्मे दिल से देख यहाँ जो जो तमाशे हो रहे ।
दिलसिताँ क्या क्या है तेरे दिल सताने के लिए ।।
एक दिल लाखों तमन्ना उस पे और ज्यादा हवस ।
फिर ठिकाना है कहाँ उसके टिकाने के लिए ।
नकली मदिर मस्जिदो मे जाये सद अफसोस है ।
कुदरती मस्जिद का साकिन दुख उठाने के लिए ।।
कुदरती काबे की महराब मे सुन गौर से ।
आ रही धुर से सदा तेरे बुलाने के लिए ।।
क्यों भटकता फिर रहा तू ऐ तलाशे-यार मे ।
रास्ता शाहरग मे है दिलबर पे जाने के लिए ।।
मुर्शिदे-कामिल से मिल सिदक और सबूरी से तकी ।
जो तुझे देगा फहम शाहरग के पाने के लिए ।।
गोशे-बातिन हो कुशादा जो करे कुछ दिन अमल ।
ला इलाह अल्लाहु अकवर पे जाने के लिए ।।
यह सदा तुलसी की है आमिल अमल कर ध्यान दे ।
कुन कुराँ मे है लिखा अल्लाहु अकबर के लिए ।।

सत्संग के वचन

दिल का हुजरा साफ़ कर, जानाँ के आने के लिये ।
ध्यान ग़ैरों का उठा, उसके बिठाने के लिये ।।

यह तुलसी साहिब की वाणी है । तुलसी साहिव उत्तर प्रदेश मे एक वड़े प्रसिद्ध महात्मा हुए है । आपने जो कुछ कहा है वडी दिलेरी और निडरता के साथ कहा है । आपका सम्वन्ध पूना और सतारा के राज-परिवार के साथ था । छोटी उमर से ही मालिक की भक्ति की ओर आपका वहुत झुकाव था । आपके पिता भी मालिक के भक्त थे । उनका विचार था कि पुत्र को राज्य का काम सौप कर कही एकान्त मे वैठकर मालिक की भक्ति की जाये । लेकिन जव आपको (तुलसी साहिव को) पता चला तो आप छोटी उमर मे ही पिता से छिप कर घर से निकल भागे और उत्तर प्रदेश मे आ गये । यहाँ पर आपने हाथरस को अपना निवास-स्थान वनाया और 'दक्कनी बाबा' के नाम से प्रसिद्ध हुए । श्री हुजूर स्वामीजी महाराज को भी आपकी सगति करने का अवसर मिला था ।

यह शव्द आपने शेख तकी को समझाने के लिए फरमाया है । शेख़ तक़ी एक मुसलमान फकीर था जो कावे का हज करके वापस आ रहा था । उसका सौभाग्य कि उसने आपके निवास-स्थान के सामने ही अपना खेमा लगा लिया । अतएव, आपने वहुत से शव्द शेख तकी को समझाने के लिये फरमाये ।

तुलसी साहिब फरमाते है कि ऐ शेख़ तक़ी ! हम सब दुनिया के जीव चाहते है कि वह परमात्मा हमारे हृदय में आकर बैठे । परन्तु हम कभी यह विचार करने की कोशिश नही करते कि जिस जगह हम परमात्मा को बिठाना चाहते है, वह जगह उसके बैठने के योग्य है भी ? हमारा मन दुनिया की शक्लो, पदार्थो और मलिनताओं के लिए तड़पता रहता है और मिलना हम परमात्मा से चाहते है ! ये दोनो बाते किस प्रकार हो सकती है ? अगर हमें उस परमात्मा से मिलना है तो हमे अपने अन्दर उससे मिलने का सच्चा इश्क, सच्चा प्रेम पैदा करना चाहिये । हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है । हम उस सतनाम रूपी समुद्र की बूँद है, परन्तु मालिक से बिछुड़कर इस माया के जाल मे फॅसे हुए है और अपने कर्मो के अनुसार दु:ख भोग रहे है ।

हम इस चौरासी के जेलखाने मे फॅसे हुए है । जब तक हमारी आत्मा वापस जाकर उस परमात्मा से नही मिलती, इसका देह के बन्धनों से, चौरासी लाख जूनो से कभी भी, किसी हालत मे भी छुटकारा नही हो सकता । हमारी आत्मा का उस परमात्मा के साथ इश्क का रिश्ता है, प्रेम और प्यार का रिश्ता है, विरह और तड़प का रिश्ता है । जब तक हमारे अन्दर मालिक से मिलने का सच्चा इश्क, सच्चा प्रेम और प्यार नही है, तब तक हम उसकी भक्ति किस प्रकार कर सकते है, उसके साथ मिलाप किस प्रकार कर सकते है ? जब तक हमारा मन किसी चीज की कमी महसूस नही करता, तब तक उसे प्राप्त करने के लिए वह कुर्बानियाँ देने के लिये कैसे तैयार हो सकता है ? हमारा हृदय तो दुनिया की शक्लो और पदार्थो के लिए तडपता और भटकता है और मिलना चाहते है हम मालिक से ! ये दोनों बातें कैसे हो सकती है ? इसलिए ऐ शेख तकी ! अगर तू परमात्मा से मिलना चाहता है तो सबसे पहले अपना हृदय शुद्ध कर, अपना अन्त करण

निर्मल कर और अपने अन्दर मालिक से मिलने का सच्चा इश्क पैदा कर, सच्चा प्रेम और प्यार पैदा कर। तुलसी साहिब फरमाते है—

"ध्यान गैरों का उठा, उसके बिठाने के लिए।"

हमारा मन दुनिया की शक्लों और दुनिया के पदार्थो के पीछे दिन-रात भटकता फिरता है और इन्ही के ध्यान मे, इन्ही के मोह और प्यार मे उलझा हुआ है। हमारा मन कभी भी निश्चल नही बैठता, किसी न किसी चीज के सोच-विचार या ध्यान मे फँसा ही रहता है। यहाँ सत्सग मे बैठे हुए भी कभी बाल-बच्चो का, कभी घर के कारोबार का, तो कभी कौमो, मजहबो और मुल्को के झगडो का खयाल आता है। जिन-जिन चीजो का हम दिन-रात सुमिरन करते रहते है, उनकी शक्ले भी हमारी आँखो के सामने फिरना शुरू कर देती है। इन शक्लो और पदार्थो के साथ हमारे मन का इतना गहरा सम्बन्ध और लगाव हो जाता है कि मृत्यु के समय ये शक्ले हमारी आँखो के आगे सिनेमा के दृश्यों की तरह घूमने लगती है। फिर 'जहाँ आसा तहाँ वासा', जहाँ हमारा आखिरी वक्त खयाल होता है हम दुनिया के जीव उसी रौ मे बह जाते है।

अतएव, यह सासारिक पदार्थो का सुमिरन है, उनका ध्यान और उनका मोह, प्रेम तथा लगाव है जो हम सबको बार-बार इस चौरासी के जेलखाने मे खीच लाता है। जब तक हमारे अन्दर से दुनिया का मोह और प्यार नही निकलता, मालिक से मिलने का इश्क पैदा नही होता, प्रेम और प्यार पैदा नही होता, तब तक हमारी आत्मा वापस जाकर उस परमात्मा से किस तरह मिल सकती है।

दुनिया की नाशवान और फ़नाह चीजो का सुमिरन करके, इनका ध्यान करके हम दुनिया की शक्लो और पदार्थो

के प्यार और मोह मे उलझे बैठे हैं। महात्मा समझाते हैं, "पानी की मारी हुई खेती, पानी से ही हरी होती है।" सुमिरन को सुमिरन काटता है, ध्यान को ध्यान काटता है। हमें किसका सुमिरन और किसका ध्यान करना है ? उसका जो कभी नष्ट नही होगा, कभी फनाह नही होगा। वह कौन है ? वह सिर्फ एक परमात्मा है, परमेश्वर है, अकाल पुरुष है, वाहिगुरु है, जिसके हजारों अनेकों नाम हमने अपने-अपने प्यार मे आकर रखे हुए है। उस परमात्मा के नाम का सुमिरन करके, उसका ध्यान करके हमे अपने फैले हुए खयाल को दुनिया से निकालना है तथा उसे परमात्मा की भक्ति में लगाना है, उसके प्यार मे रखना है।

इसलिए तुलसी साहिब समझाते है कि जब तक हमारे अन्दर से दुनिया का मोह और प्यार नही निकलेगा, हमारे मन से गन्दी-गन्दी वासनाएँ दूर नही होगी, उस परमात्मा के बेशक हमारे अन्दर होते हुए भी हम उसकी भक्ति कैसे कर सकेगे, उसकी भक्ति की ओर हमारा ख़याल किस तरह जा सकेगा ? गुरु अमरदास साहिब फरमाते है—

"हरि की पूजा दुलंभ है सन्तहु, कहना कछू न जाई ॥"

मालिक की भक्ति की महिमा का तो कभी वर्णन हो ही नही सकता। भक्ति करने की, पूजा करने की, ध्यान करने की आदत तो हम सबको पडी हुई है। कोई बाल-बच्चों के प्यार मे फॅसा हुआ है, कोई कौमो, मजहबो और मुल्कों की भक्ति करता है, कोई धन-दौलत की पूजा करता है। आप समझाते है कि ये शक्ले, ये पदार्थ हमारी भक्ति के योग्य नही है, हमारे प्यार या ध्यान के योग्य नही है, क्योकि इनकी भक्ति और इनका प्यार हमे बार-बार इस चौरासी के जेलखाने मे खीच कर ले आता है। किसकी भक्ति और किसका प्यार हमें वापस ले जाकर उस परमात्मा से मिलायेगा ? केवल

उस परमात्मा की भक्ति और केवल उसी का प्यार। गुरु साहिब समझाते है—

"निहचलु एकु आपि अबिनासी,
सो निहचलु जो तिसहि धिआइंदा ॥"

वह परमात्मा निश्चल है, वह कभी जन्म-मरण के दु खो मे नही आता। जो भाग्यशाली लोग उस परमात्मा का ध्यान करते है, उसकी भक्ति करते है, उसके साथ प्यार करते है, वे भी निश्चल हो जाते है, उनका भी जन्म-मरण के दु.खो से छुटकारा हो जाता है। हमे उस परमात्मा से क्यो मिलाप करना है ? क्योकि हमारी आत्मा उस परमात्मा का अश है और जब तक वह वापस जाकर परमात्मा से मिलाप नही करती, उसका इस काल और माया के जाल से, देह के बन्धनो तथा चौरासी लाख जूनों के दु खो से कभी किसी हालत मे भी छुटकारा नही हो सकता। परमात्मा से बिछुड कर इस चौरासी के जेलखाने मे फँस कर हम दिन-रात दु ख और तकलीफे उठा रहे है। उस मालिक की भक्ति करके, उससे मिलाप करके हम इस देह के बन्धनो तथा चौरासी के दु·खो से सदा के लिए छुटकारा प्राप्त कर सकते है। गुरु अमरदास साहिब फरमाते है—

"पिर सचे ते सदा सुहागणि"

हमारी आत्मा स्त्री है, वह परमात्मा इसका पति है। जब आत्मा परमात्मा की भक्ति मे लीन हो जाती है तो यह परमात्मा से मिल कर सदा के लिए सुहागिन हो जाती है, इसका जन्म-मरण के दु:खो से हमेशा के लिए छुटकारा हो जाता है। गुरु अमरदास साहिब का कथन है—

"जिन्ही घरु जाता आपणा से सुखीए भाई ॥"

जो मनुष्य वापस अपने घर पहुँच जाता है वह हमेशा के लिए सुखी हो जाता है, शान्ति प्राप्त कर लेता है। यह

हमारा मन है जो दुनिया के ध्यान मे उलझा हुआ है, दुनिया की शक्लों और पदार्थो से मोह किये बैठा है। गुरु नानक साहिब कहते है, "नानक मन जीते जगु जीत ।" अगर हम इस मन को जीत लेंगे तो इस सम्पूर्ण जगत के बनानेवाले को जीत लेगे। हमारे और परमात्मा के बीच में अगर कोई रुकावट या परदा है तो वह मन है। हमे उसे इस दुनिया की ओर से हटाकर परमात्मा की भक्ति मे लगाना चाहिये। तुलसी साहिब इसलिए हमें समझाते है--

"दिल का हुजरा साफ़ कर जानाँ के आने के लिए।"

कि जिस हृदय मे परमात्मा को बिठाना चाहते हो वह तो दुनिया की मलिनताओं से भरा हुआ है। इस हृदय को शुद्ध करो, निर्मल करो। और हृदय शुद्ध व निर्मल तब हो सकेगा जब इसके अन्दर से ससार का मोह और प्यार निकल जायेगा तथा परमात्मा का सच्चा प्रेम और इश्क बस जायेगा। तभी हमारी आत्मा वापस जाकर परमात्मा से मिल सकेगी।

चश्मे दिल से देख यहाँ जो जो तमाशे हो रहे,
दिलसिताँ क्या क्या है तेरे दिल सताने के लिये ।।

समझाते है कि अच्छी तरह सोच-विचार कर देख लो कि ये जितने भी दुनिया के भोग-विलास, सैर, रग और तमाशे है, ये हमारे मन को कोई सुख देने के लिये नही बल्कि उसे और अधिक दु खी करने के लिये है। हमारा मन दुनिया के रूप, रंग और पदार्थो में सुख और शान्ति ढूँढने की कोशिश करता है। परन्तु हम इन पदार्थो मे सुख और शान्ति ढूँढने की जितनी कोशिश करते है, उतने ही दिन-रात और दुःखी होते चले जाते है, उतना ही हमारा मन इनमे फँस कर खिन्न और निराश होता जाता है।

तुलसी साहिब समझाते है कि इनमें न कभी किसी को सुख मिला है, न कभी मिल सकता है। जब विवाह होता है तो मन मे कितनी उमंग होती है, परन्तु उसी पत्नी से अनबन हो जाये तो घर नरक बन जाता है। सन्तान होती है, कितनी खुशी मनाते है, मित्रो-सम्बन्धियो को इकट्ठा करते है, दावते देते है। परन्तु अगर वह अयोग्य निकल जाती है, कहने मे नही रहती या मालिक की मौज, वह उसे वापस बुला लेता है, तो वही सन्तान हमारे लिये दु ख का कारण बन जाती है। इसी प्रकार खाने-पीने और भोग-विलास के पदार्थो की ओर हमारा खयाल जाता है, लेकिन जब उनका हिसाब देना पड़ता है और देह पर बीमारियाँ आती है तब पता चलता है कि वे सुख के साधन है या दु.ख के। इसी तरह हम सोचते है कि वे लोग बड़े सुख और शान्तिपूर्ण अवस्था मे होगे जिनके हाथो मे हुकूमत की बागडोर है, जिनको हम दिन-रात सिर-आँखो पर लिये जुलूस निकालते है। लेकिन यदि इतिहास पढकर देखे तो पता चलता है कि रातों-रात हुकूमत के तख़्ते उलट जाते है और जिनका दुनिया जुलूस निकालती थी उन्हे जेलखानो मे डाल दिया जाता है, फाँसी के तख़्तों पर लटका दिया जाता है, गोलियो का शिकार बना दिया जाता है। जिस मान-बड़ाई को हम सुख का कारण समझे बैठे थे, वही मान-बडाई हमारे लिये दु ख का कारण बन जाती है। फिर विचार आता है कि शायद धन-दौलत मे सुख और शान्ति मिलती होगी। परन्तु अच्छी तरह विचार करके देखे, उसे कमाने के लिए हमे कितने कष्ट उठाने पड़ते हैं, कितने कीमती उसूलो को कुर्बान करना पडता है और किस प्रकार स्वास्थ्य का नाश करना पडता है। और फिर उसके सँभालने मे कौन-सा सुख मिलता है? आय-कर या बिक्री-कर की चिन्ता लगी रहती है, चोरो-डाकुओ का डर लगा रहता है या किसी के मुकर जाने की फिक्र है कि कही वे

रुपया लेकर रख न लें । और जब वह दौलत जाती है, अच्छी तरह मुसीबतों में फँसाकर जाती है । या तो मुकदमो के खर्चों में होकर निकल जाती है या डाक्टरो की फीसों मे । उसे कमाने मे इतनी मुसीबते भी उठाईं और जाती भी रही और उसके जाने पर दु ख और मुसीबते अलग भुगतना पडी ।

इसलिए तुलसी साहिब हमें समझाते है कि इस दुनिया की सैर, रंग व तमाशों को देखकर न भूलो । इनमे कभी किसी को सुख नही मिला । इनमें कभी किसी ने शान्ति प्राप्त नही की । अगर कही सुख है, शान्ति है तो वह सिर्फ परमात्मा की भक्ति मे है, उसके प्यार में है । मैंने कई बार उदाहरण दिया है कि एक बच्चा अपने पिता की अंगुली पकड कर प्रदर्शनी मे जाता है । उसे प्रदर्शनी की हरएक वस्तु अच्छी और सुन्दर मालूम देती है, कही खिलौनों की दुकाने है तो कही मिठा-इयो की और कही बिजलियाँ, झालरे आदि सजी हुई है । बच्चा समझता है कि उसे खुशी प्रदर्शनी की इन चीजो से मिल रही है । परन्तु अगर गलती से वह पिता की अगुली छोड देता है तो सारी प्रदर्शनी का सामान वहाँ होते हुए भी वह रोना और चिल्लाना शुरू कर देता है । तब उसे पता चलता है कि यह खुशी उसे तब तक ही मिल रही थी जब तक कि उसने अपने पिता की अगुली पकडी हुई थी । हमारा पिता कौन है ? वह परमात्मा है, अकाल पुरुष है, वाहिगुरु है । जब तक हमारा ख़याल, हमारी लिव उसकी भक्ति और प्यार मे है, हमें मित्रो, सम्बन्धियों तथा संसार के पदार्थों मे चार दिन सुख और शान्ति के मिलते है । परन्तु जब हम परमात्मा को बिसार देते है, उसे भूल जाते है, तो ये सब भी हमारे लिये यम के समान हो जाते है और इनसे भी हमे दु.ख और मुसीबते मिलने लगती है । इसीलिए तुलसी साहिब हमें

चेतावनी देते है कि संसार और इसके पदार्थों में आज तक न किसी को सुख-शान्ति मिली है और न मिल सकती है। सच्चा सुख और सच्ची शान्ति केवल परमात्मा की भक्ति और प्यार मे है। गुरु नानक साहिब फरमाते है—

"सवद सुरति सुख ऊपजै, प्रभ रातउ सुख सारु ।।"

कि जब हम सुरत-शव्द का अभ्यास करेगे तो मालिक की भक्ति और प्रेम मे रग जायेगे, लीन हो जायेगे। तव कही जाकर हमे सुख की साँस आयेगी। जव तक हम सुरत शव्द के अभ्यास के द्वारा परमात्मा के प्रेम मे रंग नही जाते, तव तक दुनिया की शक्लों और पदार्थों मे सुख और शाति प्राप्त करने का सवाल ही पैदा नही होता। गुरु नानक साहिव फरमाते है—

"न सुख विच गृहस्थ दे, न सुख छड गयाँ।
सुख है विच विचार दे, सताँ सरन पयाँ ।।"

न किसी को कभी वाल-वच्चो मे सुख मिला है और न इनसे घवरा कर जंगलो-पहाड़ो मे जाकर सुख मिला है। सुख तो गुरुमुखो की शरण मे जाकर नाम की कमाई करने में है, शव्द का अभ्यास करने मे है। सो जव तक हम शरीर में वैठकर शव्द या नाम की खोज नही करते, तव तक हम सुख और शान्ति कैसे प्राप्त कर सकते है। आँखो से नीचे-नीचे केवल इन्द्रियो के भोग है, विषय-विकार है, शराव-कवाव आदि के स्वाद है। जव तक हमारा मन आँखो से उतर कर इन्द्रियों के भोगो मे फँसा हुआ है, यह कभी भी सुख-शान्ति प्राप्त नही कर सकता। जव सुमिरन और ध्यान के द्वारा यह इन्द्रियो के भोगों की ओर से हट कर तथा एकाग्र होकर अन्तर मे शव्द के स्वाद में लीन हो जाता है, नाम का रस लेने लग जाता है, तब यह सुख और शान्ति प्राप्त कर सकता है।

एक दिल लाखों तमन्ना उस पे और ज्यादा हवस,
फिर ठिकाना है कहाँ उस के टिकाने के लिये ।।

आप समझाते है कि दिल तो एक है और तमन्नाएँ, इच्छाएँ तथा तृष्णाएँ लाखों है । वे पूरी होती नही परन्तु मन दिन-रात और अधिक इच्छाएँ और तृष्णाएँ उत्पन्न किये जा रहा है । जो भी बात मन की इच्छा के अनुसार नही होती, वही उसके लिये दु.ख का कारण बन जाती है । तुलसी साहिब फरमाते हैं कि जो मन इस प्रकार इच्छाओं और तृष्णाओ में उलझ कर भटकता फिरता है, वह हमारे अन्तर मे स्थिर होकर मालिक की भक्ति किस प्रकार कर सकता है, उसका खयाल परमात्मा की ओर कैसे जा सकता है । हम जो जो तृष्णाएँ और इच्छाएँ करते है उन्हें पूरा करने के लिये हमें बार-बार जन्म लेना पडता है । गुरु नानक साहिब का कथन है, "देदा दे लैदे थक पाहि ।" परमात्मा देते देते नहीं थकता, हम दुनिया के जीव लेते लेते थक जाते है । जो कुछ भी हम दिन-रात परमात्मा से प्रार्थना करके माँग रहे है, जो तृष्णाएँ और इच्छाएँ उसके आगे रख रहे है, उन्हे वह जरूर पूरा करेगा । उन्हे पूरा करने के लिये वह हमे फिर से जन्म दे देगा और उस जगह जन्म देगा जहाँ जाकर हम उन इच्छाओं और तृष्णाओं को पूरा कर सकते है । परन्तु अगर हम परमात्मा से केवल परमात्मा को ही माँगेगे, अगर हमारे अन्दर सिर्फ मालिक से मिलने की ही इच्छा और कामना होगी, तो वह मालिक भी हम पर दया और बख्शिश करके हमें अपने साथ मिला लेगा । परन्तु हमारा क्या हाल है—

"आसाँ परबत जिन्नीआँ, मौत तनावाँ हेठ ।।"

हमारी आशाएँ और तृष्णाएँ तो हिमालय पर्वत से भी बडी है, परन्तु हम भूले बैठे है कि मौत हमारे पैरो के नीचे खडी है । हमे परमात्मा ने कर्मो का हिसाब चुकाने के लिये

थोड़े दिनो की यह जिन्दगी वख्शी है और हम है कि सारी दुनिया की इच्छाओ और तृष्णाओं का बोझ सिर पर उठाये हुए है। इसीलिए महात्मा समझाते है कि हमे मालिक के भाणे, उसके हुक्म, उसकी रजा में रहना चाहिये। जिस हालत मे भी परमात्मा हमे रखता है उसी मे राजी रहते हुए उसकी भक्ति करना चाहिये। गुरु नानक साहिव फरमाते है--

"जे राज कराहि ता तेरी उपमा
जे भीख मँगावहि त कि घट जाई ।।"

हे परमात्मा! अगर तू सारी दुनिया का राज दे दे तो भी मुझे सिर्फ तेरी ही भक्ति करना है, और अगर दर-दर ठोकरे खानी पडे तो भी मुझे कौनसा तेरा दरवाजा छोड़ देना है, मुझे तो फिर भी तेरी ही भक्ति और तुझसे ही प्यार करना है।

तुलसी साहिव समझाते है कि जव तक हम इच्छाओ और तृष्णाओं को छोड़कर भक्ति नही करते, तव तक हम अपने इश्क और प्रेम मे सफल नही हो सकते।

ये इच्छाएँ और तृष्णाएँ कौन पैदा करता है? हमारा मन। हम इन्हे पूरा किससे करवाना चाहते है? परमात्मा से। हम मन को समझाते नही कि तू उस परमात्मा की इच्छा मे रहने की कोशिश कर, परमात्मा को समझाने लगे है कि तू हमारे मन के अनुसार चलने की कोशिश कर। भक्ति हम परमात्मा की कर रहे है या मन की?

गुरु साहिवान ने अपने जीवन में खुद मिसाल वन कर दिखाया है कि किस प्रकार मालिक के भाणे में, उसकी मौज मे रहना है। गुरु अर्जुन साहिव ने फरमाया है, "तेरा भाणा मीठा लागे।" कि हे परमात्मा! जिस हालत मे भी तू मुझे रखता है, मुझे वही अच्छी लगती है, वही मीठी

लगती है। पाँचवी पातशाही गुरु अर्जुन देव के जीवन का आपको पता ही है। जिस समय उन्हे तपते हुए तवों पर बिठाया गया तो मियाँ मीर ने, जो उनका मित्र था, हाथ जोड़ कर अर्ज की कि गुरुदेव ! मुझसे आपका यह कष्ट नही देखा जाता। अगर आप मुझे इजाजत दें तो मै लाहौर की ईट से ईंट बजा दूँ। परन्तु गुरु साहिब फरमाते है कि मिया मीर, यह तो शायद मै भी कर सकता हूँ, परन्तु मुझे उस परमात्मा का भाणा मीठा लगता है, उसका हुक्म अच्छा लगता है। सन्त-महात्मा हमारे लिए स्वयं जिन्दगी की मिसाल बन कर दिखा गये है कि किस प्रकार उस मालिक के हुक्म मे रहते हुए परत्मात्मा की भक्ति करना चाहिए। सो तुलसी साहिब फरमाते है कि अगर हमारे मन की यह हालत है कि दिन-रात दुनिया की कामनाओं और वासनाओं मे भटकता फिरता है तो अन्तर मे स्थिर होकर परमात्मा की खोज कौन करेगा ? परमात्मा की भक्ति, परमात्मा के साथ प्यार कौन करेगा ?

नकली मंदिर मस्जिदों में जाये सद अफ़सोस है,
कुदरती मस्जिद का साकिन दुख उठाने के लिये ।।

आप फरमाते है कि अव्वल तो हम दुनिया के जीव परमात्मा की भक्ति नही करते, उसकी खोज नही करते, उसे ढूंढने की कोशिश ही नही करते और अगर हमारा खयाल परमात्मा की भक्ति की ओर जाता भी है, उसकी खोज करना भी चाहते है तो जहाँ परमात्मा रहता है वहाँ उसे ढूँढने की कोशिश नही करते। बाहरमुखी हो जाते है, कर्म-काण्ड मे उलझ जाते है। जिस जगह परमात्मा बसता है वह हमारा शरीर है, हमारी देह और वजूद है। यह वह प्रयोगशाला है जिसमें जाकर हम परमात्मा से मिलने की खोज कर सकते है। गुरु नानक साहिब फरमाते है—

"गुरमुखि होवै सो काया खोजै, होर सभ भरमि भुलाई ।।"

जो गुरुमुख हैं, मालिक के भक्त और उसके प्रेमी हैं, वे देह या शरीर के अन्दर जाकर उसकी खोज मे लगे हुए है । बाकी सब दुनिया के जीव भ्रमो मे फँस कर यहीं भूले फिर रहे है । आप समझाते है—

"इस गुफा महि अखुट भंडारा ।।
तिस विच वसे हरि अलख अपारा ।।"

हमारा यह शरीर केवल हाड, चाम और मांस का बना हुआ ही नही है, पाँच-छ फुट लम्बा मिट्टी का पुतला ही नही है । वह परमात्मा जिसने सम्पूर्ण जग को जीवन दिया है, जो अलख, अगम और अनन्त है, वह भी इस शरीर के अन्दर वसता है, इस देह में रहता है । गुरु रामदास साहिव फरमाते है—

"सदा हजूरि दूरि न जाणहु ।।
गुर सबदी हरि अंतरि पछाणहु ।।"

वह परमात्मा कोई जगलो-पहाड़ो में छिपा नही वैठा है, वह कही मन्दिरो-मस्जिदो मे लुका नहीं वैठा है । वह हमारे शरीर के अन्दर वैठा हुआ है । हमे सन्तो से नाम प्राप्त करके उसकी कमाई करके उस परमपिता परमात्मा को अपने शरीर के अन्दर ढूंढना है, शरीर के अन्दर जाकर ही उसे प्राप्त करना है । यही कवीर साहिव फरमाते है—

"ज्यो तिल महि तेल है, ज्यों चकमक मे आग ।
तेरा प्रीतम तुझ मे, जाग सके तो जाग ।।"

जिस प्रकार तिलो मे तेल और पत्थर में अग्नि होती है, उसी प्रकार जिस परमात्मा की हमे खोज है वह भी हमारे शरीर के अन्दर है । हमें उसे अपने शरीर के अन्दर ही

ढूँढना है, अपने अन्तर मे ही उसकी खोज करना है। पलटू साहिब फरमाते है—

"साहिब साहिब क्या करे, साहिब तेरे पास ॥"

जिस साहिब की खोज मे दिन-रात भटक रहे हो वह साहिव तो चौबीसो घण्टे तुम्हारे साथ है। इसी प्रकार ईसा मसीह ने बाइबिल मे कहा है, "परमात्मा का राज्य तुम्हारे अन्दर है," अर्थात् उस मालिक का निवास-स्थान हमारा शरीर है। अगर कोई सच्चे से सच्चा गुरुद्वारा है, सच्चा मन्दिर या सच्ची मस्जिद है, अगर परमात्मा के रहने का कोई स्थान है, तो तुलसी साहिब फरमाते है, वह केवल हमारा शरीर है, हमारी देह और हमारा वजूद है। ऋषियो-मुनियों ने हमारे शरीर को नर-नारायणी देह कहकर समझाने की कोशिश की है। वह देह जिसे उस नारायण ने पैदा किया है, जिसके अन्दर नारायण बैठा हुआ है और जिसके अन्दर जाकर ही हमारी आत्मा उस परमात्मा, उस नारायण की भक्ति करके उसका रूप बन सकती है। गुरु साहिब फरमाते है—

"हरि मंदरु एहु सरीरु है, गिआनि रतनि परगटु होइ ॥"

हम हरि-मन्दिर किसे कहते है ? जहाँ हरि बसता हो, परमात्मा बसता हो। सो आप समझाते है कि मालिक के रहने का जो असली मन्दिर है, वह हमारा शरीर है, क्योंकि शरीर के अन्दर जाकर ही हम उस परमात्मा से मिलने का ज्ञान प्राप्त कर सकते है। ईसा मसीह ने शरीर को "जिन्दा परमात्मा का मन्दिर" कहा है, वह मन्दिर जिसमें साक्षात् परमात्मा का निवास है। इसीलिए तुलसी साहिब फरमाते है—

"नकली मंदिर मस्जिदो में जाय सद अफसोस है।"

कितने दुःख और अफसोस की वात है कि हमने अपने हाथो से ईंटो-पत्थरो से मालिक के रहने के जो स्थान वनाये हैं, उन्ही मे जाकर दिन-रात परमात्मा की खोज मे लगे हुए है, वनिस्बत उस जगह के जो परमात्मा ने खुद अपने रहने के लिये बनाई है। हम इस कुदरती मस्जिद, कुदरती मन्दिर को दुःखो और मुसीबतो मे फँसाये वैठे है। जो स्थान हम उस मालिक के रहने के लिये वनाते है, उन्हे कितना साफ रखते है, कितनी धूप जलाते है। उनमे जाकर कोई वुरा या खोटा कर्म नही करते, ऊँचे स्वर मे बोलते तक नही है; क्योकि मालिक के रहने के ये स्थान हमने वनाये है। परन्तु परमात्मा ने जो जगह अपने रहने के लिए खुद वनायी है उसमे गन्दगी ही गन्दगी भरे जा रहे है। उस मन्दिर में वैठकर वुरे से वुरे कर्म किये जा रहे है। अपनी वनाई हुई चीज की कदर करते है, परमात्मा की वनाई हुई चीज की कदर नही करते। तुलसी साहिव हमारी आँखे खोलते है कि ये जो वाहर के मन्दिर है, ये नकली है। असली मन्दिर हमारा शरीर है। हमें उस परमात्मा की खोज अपने शरीर मे जाकर करना है। इस शरीर के मन्दिर या मस्जिद के अन्दर जाकर परमात्मा को किस तरह ढूंढना है, इसका सकेत आगे करते है।

कुदरती काबे की महराब में सुन गौर से,
आ रही धुर से सदा तेरे बुलाने के लिये ।।

आप समझाते है कि ऐ शेख़ तकी ! कावे जाकर हज करने से तू मुक्ति प्राप्त नही कर सकता। यह शरीर ही तेरा कावा है, इसके अन्दर जाकर मालिक से मिलने का हज कर, तव कही तू मुक्ति प्राप्त कर सकेगा।

हमारी रूहानी यात्रा पैरो के तलो से लेकर सिर की चोटी तक है। इस यात्रा की दो मंजिले है, एक आँखों तक

और दूसरी आँखों से ऊपर है। आँखों से नीचे इन्द्रियों के भोग है, विषय-विकार है, शराब-कबाब आदि के स्वाद है। जब तक हमारा खयाल आँखों से नीचे है, हम कभी मुक्ति प्राप्त नही कर सकते। आम तौर पर मुसलमान मस्जिद की मेहराब मे खड़े होकर ऊँचे स्वर में बाँग देते है या कलमा पढ़ते है। तुलसी साहिब समझाते है कि हमारा माथा या ललाट इस कुदरती काबे की मेहराब है। इस मेहराब में अर्थात् आँखों के पीछे मस्तक में परमात्मा की दरगाह से एक अत्यन्त मीठी और सुरीली आवाज आ रही है। वह सदा, वह आवाज हम सबको अपनी ओर खीच रही है, अपनी ओर बुला रही है। अगर हम नौ द्वारों से अपने ख़याल को निकाल कर, सुमिरन और ध्यान के द्वारा आँखों के पीछे इकट्ठा कर लेंगे और उस सदा अथवा शब्द की आवाज को पकड लेगे तो हम भी शब्द या नाम को पकड़ कर वही पहुँच जायेंगे जहाँ से कि वह शब्द या नाम उठ रहा है। वह सचखण्ड से उठ रहा है, जहाँ कि हमारा प्रीतम—वह परमात्मा—रहता है।

तुलसी साहिब समझा रहे है कि हम अन्दर उस शब्द के साथ ख़याल को जोडकर मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं, जन्म-मरण के दु:खो से हमेशा के लिये छुटकारा प्राप्त कर सकते है। जब तक हम अन्तर में जाकर खोज नही करते, उस कुदरती काबे के अन्दर जाकर उस मेहराब मे ख़याल इकट्ठा करके शब्द की धुन को नही सुनते, हमारे मुक्ति प्राप्त करने का सवाल ही पैदा नही होता। यही गुरु नानक साहिब फरमाते है—

"नउ दर ठाके धावतु रहाये ।। दसवै निज घरि वासा पाए ।।
ओथै अनहद सबद बजहि दिनु राती, गुरमती सबदु
सुनावणिआ ।।"

जब आप नौ द्वारों से खयाल को निकालकर आँखो के पीछे इकट्ठा कर लेगे तो आप अपने घर के दरवाजे पर पहुँच जायेगे। अपने घर के दरवाजे की यह पहचान है कि 'ओथै अनहद सबद बजहि दिन-राती'—उस केन्द्र पर दिन-रात अनहद शब्द गूँज रहा है। वह मीठी से मीठी सुरीली आवाज मालिक के धाम से उठ रही है, वह चोरो-ठगो के अन्दर भी है और साधु-सन्तो, महात्माओ के अन्दर भी है। यहाँ किसी कौम, किसी मजहब और किसी मुल्क का सवाल पैदा नही होता। जो खुश-किस्मत या भाग्यशाली इन्सान अपने खयाल को आँखो के पीछे इकट्ठा करता है, वह अपने घर के रास्ते पर चलना शुरु कर देता है। इस रास्ते पर चल कर वह वापस अपने घर पहुँच जाता है।

तुलसी साहिब आँखो के ऊपर के भाग की तुलना कावे की मेहराब से करते है। इसी को पलटू साहिब 'उलटा कुआ' कह कर समझाते है :—

"उलटा कूआ गगन मे तिसमे जरै चिराग।"

आप समझाते है कि जब हम अपने खयाल को नौ द्वारों में से निकाल कर इस उलटे कुए मे एकाग्र करेगे तो हमे अपने अन्दर एक ज्योति जलती दिखाई देगी, एक चिराग जलता नजर आयेगा। आगे फरमाते है—

"छ रितु बारह मास रहत जरतै दिन राती।"

वह ज्योति जो हमारे अन्दर जल रही है, न उसे बत्ती की जरूरत पडती है, न तेल की। दिन-रात, साल की छहो ऋतुओ, बारहों महीने, अर्थात् हमेशा के लिये वह ज्योति हरएक के अन्तर में निरन्तर जल रही है। पलटू साहिब और समझाते है—

"निकसै एक आवाज चिराग की जोतिहि माही।"

जब हम उस ज्योति के दर्शन करना शुरू कर देंगे तो हमे पता लगेगा कि उस ज्योति के अन्दर से एक अत्यन्त मीठी और सुरीली आवाज आ रही है। अगर हम उस आवाज को सुनना शुरू कर दें, उस ज्योति के दर्शन करने लगें तो हमारा जन्म-मरण के दुःखों से छुटकारा हो सकता है, हमारी आत्मा और मन की गाँठ खुल सकती है और हम वापस जाकर परमात्मा से मिलने के योग्य बन सकते है। बाहर के मन्दिरों, मस्जिदो, गुरुद्वारों मे मुक्ति नहीं है। बाहर के काबे का हज करने से मुक्ति नही मिल सकती। हमें इस शरीर के अन्दर जाना है, देह और वजूद के अन्दर जाना है। गुरु साहिब फरमाते है—

"काया अंदरि जग जीवन दाता वसै, सभना करै प्रतिपाला ।।"

वह परमात्मा जिसने सारे जग को जीवन दिया है, जो सबका दाता है, सबका बादशाह है, जो सबका पालन और सबकी सँभाल कर रहा है, वह तो इस काया के अन्दर बसता है, इस देह के अन्दर रहता है। इसलिए अगर हम उस परमात्मा से मिलना चाहते है, तो हमे इस शरीर के अन्दर ही उसकी खोज करना होगी। जब तक हम अपने शरीर के अन्दर जाकर उसे नही ढूँढते, हम उसे कैसे प्राप्त कर सकते हैं। गुरु साहिब कहते है—

"मनमुख मुगध बूझै नाही, बाहरि भालण जाही ।।"

हम मनमुख हैं, मूर्ख है। जहाँ परमात्मा रहता है वहाँ उसकी खोज नहीं करते; उसे बाहर ढूँढ रहे है, बाहरमुखी हुए बैठे है, कर्मकाण्ड में उलझे हुए है। आप समझाते है—

"घरै अंदरि सभु वथु है, बाहरि किछु नाही ।।"

जिस वस्तु को हम दिन-रात ढूंढ रहे है, वह हमारे शरीर के अन्दर है। बाहर आज तक न किसी को परमात्मा मिला

है, न मिल सकता है । हरएक महात्मा, हर एक धर्म और हर एक धर्म-ग्रन्थ हमे यही समझाता है कि वह परमात्मा हमारे शरीर के अन्दर है । अगर इसी एक बात को समझकर सब अपने अपने शरीर मे परमात्मा की खोज शुरू कर दे तो इस संसार में सब विवाद आज ही समाप्त हो जाये । हमारे झगडे उस समय शुरू होते है जब उस परमात्मा की खोज कोई गुरुद्वारो में जाकर करता है, तो कोई मन्दिरो मे । कोई मस्जिद को मालिक के रहने की जगह वनाये बैठा है तो कोई गिरजे को । उस परमात्मा के जुलूस हम बाहर गलियो-बाजारो मे निकालना शुरू कर देते है । हमारे आपस मे झगड़े शुरू हो जाते है ।

अगर सब दुनिया के जीव अपने-अपने घर में बैठकर देह के अन्दर ही परमात्मा की खोज करने लगे तो किसी का किसी के साथ झगड़ा ही क्या हो सकता है , मतभेद और विवाद कैसे हो सकता है । जव परमात्मा एक है, परमात्मा ने हरएक को हाथ, पैर, नाक, मुँह, कान वगैरह एक जैसे ही दिये है और वह परमात्मा स्वयं सबके अन्दर वैठा हुआ है, तो हम किस तरह सोच सकते है कि उसने हिन्दुओ के लिये अपने मिलने का कोई और तरीका रखा है तथा सिक्खो, ईसाइयों या मुसलमानों के लिये कोई और तरीका रखा है । हमारी समझ मे ही फरक हो सकता है, परन्तु वह परमात्मा एक ही है और उससे मिलने का रास्ता भी हमारे शरीर के अन्दर एक ही है । इसलिए तुलसी साहिब समझाते है कि जब हम अपने खयाल को आँखो के पीछे इकट्ठा करेगे, तभी हम उस कलमे को सुन सकेंगे, उस बाँगे-आसमानी को पकड सकेंगे, जिसे पकड कर और जिसके पीछे-पीछे जाकर ही हम वापस अपने घर पहुँच सकते है ।

क्यों भटकता फिर रहा तू ऐ तलाशे यार मे,
रास्ता शाहरग में है दिलबर पे जाने के लिये ।।

तुलसी साहिब समझाते है कि ऐ शेख तकी ! उस परमात्मा की खोज में क्यों तू जंगलों-पहाडों में भटकता फिर रहा है ? क्यों बाहर दु:खों में उलझा बैठा है ? वह परमात्मा तेरे शरीर के अन्दर है, और उससे मिलने का मार्ग भी हम सबके शरीर में एक ही है। हमें शाहरग मे से होकर वापस अपने घर जाना है। इसे ऋषियों-मुनियो ने सुषुम्ना नाडी कहा है। जो कुछ प्राप्त करना है हमें अपने शरीर से ही प्राप्त करना है। गुरु साहिब फरमाते है—

"सरीरहु भालणि को बाहरि जाए।
नामु न लहै बहुत वेगारि दुख पाए ॥"

जो लोग उस नाम रूपी पदार्थ या परमात्मा को अपने शरीर से बाहर ढूंढने में लगे हुए है, वे अपने अमूल्य समय को बेगारों के समान नष्ट कर रहे है। इसलिए हमें अपने शरीर के अन्दर ही परमात्मा की खोज करना है। लेकिन वह कौन है जो हमें अन्दर जाकर उस परमात्मा की खोज नही करने देता ? गुरु नानक साहिब बतलाते है—

"घरि रतन लाल बहु माणक लादे,
मनु भ्रमिआ लहि न सकाईऐ ॥"

हमारे शरीर रूपी घर मे परमात्मा ने नाम के अनेक खजाने रखे है। परन्तु हमारा मन बाहर के भ्रमों मे फँसा हुआ है। जब तक वह शरीर के अन्दर जाकर खोज नही करता, हम उस दौलत को कैसे प्राप्त कर सकते है। कौन से भ्रमो मे फँसे हुए है ? कोई सरोवरों में स्नान को मुक्ति का साधन समझे बैठा है तो कोई तीर्थों की यात्रा को और कोई जप-तप को। इसी प्रकार कोई दान-पुण्य आदि को मुक्ति का उपाय समझे बैठा है। हम दुनिया के जीव दिनोदिन बाहरमुखी होते चले जा रहे है। तीसरी पातशाही गुरु अमरदासजी की वाणी है—

"पूजा करै सभु लोक सतहु मनमुखि थाइ न पाई ।"

उस परमात्मा की भक्ति तो दुनिया के सब जीव अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार करते है, परन्तु वे मन के अधीन होकर भक्ति करते है । और जो भक्ति हम मन के अधीन होकर करते है, वह भक्ति हमे अपने ध्येय तक नही पहुँचने देती, क्योंकि मन हमे बाहरमुखी करके कर्म-काण्ड में उलझा देता है । कौन-सी भक्ति हमें अपनी मंजिल तक पहुँचायेगी ?

"सबदि मरै मनु निरमलु संतहु एह पूजा थाइ पाई ।"

शब्द के अभ्यास के द्वारा, नाम की कमाई के द्वारा मन को निर्मल और पवित्र करना ही परमात्मा की असली भक्ति है और यही भक्ति हम सबको वापस अपने धाम पहुँचायेगी । इसी प्रकार गुरु नानक साहिब फ़रमाते है—

"पूजा करहि पर विधि नही जानहि दूजै भाई मलु लाई ।"

लोग भक्ति तो करते है, पर भक्ति करने का असली तरीका नही जानते, जिसके फलस्वरूप असली रास्ते को छोड़कर अन्य मार्ग पर चल पड़ते है और अपने पापों के बोझ को और भी अधिक बढा लेते है । इसीलिये तुलसी साहिब समझाते है कि क्यों जंगलों-पहाड़ों में मारे-मारे फिर रहे हो, क्यों मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों में ढूँढ रहे हो । वह परमात्मा तो शरीर के अन्दर है । हमे अपने शरीर के अन्दर जाना चाहिए, अपनी देह और वजूद मे जाकर उस परमात्मा की खोज करना चाहिये ।

मुर्शिदे कामिल से मिल सिदक और सबूरी से तकी,
जो तुझे देगा फ़हम शाहरग के पाने के लिये ।।

आप समझाते है कि यह तो ठीक है कि परमात्मा हमारे हरएक के शरीर मे हैं, परन्तु हम अपनी अक्ल के द्वारा शरीर

के अन्दर जाकर उसकी खोज नही कर सकते, अपनी बुद्धि के आसरे कभी उस परमात्मा को नही ढूँढ सकते । तुलसी साहिब फरमाते है कि शरीर के अन्दर परमात्मा की खोज करने का जो तरीका और साधन है उसका पता किसी कामिल मुर्शिद या पूर्ण गुरु से ही लगेगा । जब हम ऐसे कामिल मुर्शिद को ढूँढकर, सिदक और सबूरी अर्थात् सच्चाई और धैर्य के साथ उस पर भरोसा और विश्वास रखकर, अपने शरीर के अन्दर जाकर खोज करना शुरू करेंगे, तब हम अपनी खोज या तलाश में सफल हो सकेंगे । जब तक हमें पूर्ण गुरु नही मिलता, हमें मालिक की भक्ति करने के तरीके का ही पता नही लग सकता । गुरु साहिब फरमाते है:—

"संतहु गुरुमुख पूरा पाई, नामो पूज कराई ।।"

अगर कोई पूरा गुरुमुख मिल जाय, पूर्ण गुरु मिल जाय, वह हमे नाम के अभ्यास का तरीका बता दे और हम उस मार्ग पर चलना शुरू कर दे, तो हम वापस जाकर परमात्मा से मिल सकते हैं । आप फरमाते है—

"सचै सबदि सची पति होई ।। बिनु नावै मुकति न पावै कोई ।।
बिनु सतिगुर कोई नाम न पाए, प्रभि ऐसी बणत बणाई हे ।।"

सच्चे शब्द की कमाई करके ही हम सच्ची इज्जत प्राप्त कर सकेंगे । उस सच्चे शब्द और सच्चे नाम के अभ्यास के सिवाय मालिक की भक्ति का और कोई तरीका ही नही है और गुरुमुख अथवा कामिल मुर्शिद के बिना सच्चे नाम और सच्चे शब्द की समझ ही नही आती । गुरुमुख की संगति इसलिये आवश्यक है कि परमात्मा ने अपने मिलने के लिये यही कुदरती कानून बनाया है । जब तक हम इस मार्ग पर नही चलते, हम अपने उद्देश्य की प्राप्ति मे किस प्रकार सफल हो सकते हैं !

जितने भी हमारे मजहब हैं, इनके रीति-रिवाज अलग-

अलग है, लेकिन जो रूहानियत है, असलियत है, हकीकत है, सत्य का मूल रूप है, आध्यात्मिकता की बुनियाद है, वह हरएक मजहब की तह मे एक ही चीज है । अगर हम निष्पक्ष होकर किसी भी महात्मा की वाणी की खोज या गूढ अध्ययन करे तो हम देखेगे कि हरएक महात्मा हमे उसी नुक्ते या मूल बात पर ले जाता है कि परमात्मा एक है, वह हमारे सबके अन्दर है और गुरुमुख के बिना हमे अपने अन्दर के बारे मे कुछ भी समझ नही आती, कुछ भी पता नहीं लगता । उनके बताये हुए उपदेश पर चल कर ही हम अपने अन्तर मे उस सच्चे शब्द के साथ खयाल को जोड सकते है । परन्तु गुरुमुख किसे कहते है ? गुरु नानक साहिब फरमाते है—

"गुरमुखि आपु पछाणै सतहु राम नामि लिव लाई ।।"

गुरुमुख वे सज्जन है जो राम नाम के साथ प्यार करके अपने आपको पहचानने के योग्य बन जाते है । गुरु नानक साहिब ने अपनी वाणी मे समझाया है कि राम नाम से उनका मतलब उस ताकत से है जिसने सारे ससार की रचना की है, जिसके आधार पर सब खण्ड-ब्रह्माण्ड स्थिर है, जो ताकत हम सबके अन्दर रमी हुई है । जब हम अपने आपको उस ताकत मे लीन कर देते है, तब हम मन और माया के दायरे से बाहर चले जाते है, आत्मा और मन की गाँठ खुल जाती है और फिर हमे अपने आप का, अपने सच्चे स्वरूप का पता लग जाता है । सो महात्मा गुरुमुख या सतगुरु उनको कहते हैं जो साधना करके उस नाम रूपी दौलत को अपने अन्तर में प्रकट कर चुके है । अतएव हमे ऐसे ही कामिल मुर्शिद या पूर्ण गुरु की खोज करना है, और उन पर भरोसा करना है, विश्वास करना है । स्वामीजी महाराज फरमाते हैं—

"प्रीत प्रतीत गुरु की करना । नाम रसायन घट मे जरना ।।"

गुरुमुखों की संगति में जाकर उनके साथ प्रीति करना

है। इस प्रीति के द्वारा हमारे मन में प्रतीति आ जाती है। जब तक हमे किसी के साथ प्यार नही है तब तक हमें उस पर कभी भरोसा नही आ सकता। आप देखें, जिस मित्र के साथ हमारा प्यार होता है उसके साथ हम हजारो-लाखों रुपयो का व्यापार, उसके प्यार मे बँधे हुए, उस पर भरोसा करके कर लेते है। और जिस पर हमें पूरा विश्वास व भरोसा होता है, हम दु:ख और मुसीबत के समय उसकी सलाह भी लेते हैं। हम मानते है कि जो कुछ भी वह कहेगा, हमारे फायदे के लिये कहेगा। हमे उस पर इतना विश्वास होता है कि हम उसकी सलाह पर अमल भी करना शुरू कर देते है। यही सिद्धान्त सन्त-मत मे भी है। अगर हमारा गुरुमुखो से प्यार है तो हमारा उन पर भरोसा भी होगा, विश्वास भी होगा। अगर उन पर भरोसा और विश्वास है तो हम उनके कहने के अनुसार अन्तर में जाकर मालिक की खोज भी करेगे, उसे ढूँढने की कोशिश भी करेगे।

गोशे-बातिन हो कुशादा जो करे कुछ दिन अमल,
ला-इलाह अल्लाहु अकबर पे जाने के लिये॥

आप फरमाते है कि अगर हम किसी ऐसे कामिल मुर्शिद की सगति और सोहबत मे जाकर, उस पर भरोसा और विश्वास करके, उसके आदेश के अनुसार भजन और सुमिरन अर्थात् नाम का अभ्यास करना शुरू कर दे तो हमारे अन्दर के कान खुल जायेगे जो उस आन्तरिक कीर्तन को सुनना शुरू कर देगे। वह शब्द या नाम हमारे सबके अन्दर धुनकारे दे रहा है। उसका सम्बन्ध इन बाहरी कानों से नहों है। परन्तु हमे इन कानो के जरिये सुनने की आदत पड़ी हुई है, इसलिये शुरू शुरू मे ऐसा प्रतीत होता है कि वह शब्द इन कानो में गूँज रहा है। पर जब सुमिरन और ध्यान के द्वारा हमारा ख़याल आँखों के पीछे टिकने लगता है तो हमें

अपने आप पता लग जाता है कि शब्द मस्तक के बीच मे दिन-रात धुनकारे दे रहा है और उसका इन कानो के साथ कोई सम्बन्ध नही है ।

तुलसी साहिब फरमाते है कि अगर हम गुरुमुखो के आदेश के अनुसार अभ्यास करना शुरू कर देगे तो हमारे अन्दर के कान खुल जायेगे और वे उस अन्दर के शब्द, कलमे या बाँगे-आसमानी को सुनना शुरू कर देगे और उस शब्द या नाम को पकड कर हम अल्लाहो-अकबर अर्थात् पहली मंजिल सहस्र-दल कमल तक पहुँच जायेगे । महात्मा समझाते है कि हमारे अन्दर पाँच मजिले है और पाँच ही धुने, नौवते या शब्द हमारे अन्दर दिन-रात गूँज रहे हैं । हमें मंजिल-दर-मजिल शब्द-दर-शब्द वापस अपने आखिरी मुकाम या धुर धाम पर पहुँचना है, जहाँ कि वह परमात्मा रहता है ।

यह सदा तुलसी की है आमिल अमल कर ध्यान दे,
कुन क़ुराँ में है लिखा अल्लाहु अकबर के लिये ।।

आप प्यार के साथ समझाते है कि ऐ शेख तकी, जो कुछ भी मैने तुझे समझाने की कोशिश की है, उसमे मैने तुझे अपनी ओर से कोई नई या अनोखी बात नही बताई है । तू चाहे किसी भी महात्मा की वाणी पढ़कर देख ले, हरएक महात्मा का एक ही अनुभव है, एक ही सन्देश है, एक ही उप-देश है ।

मैने पहले भी अर्ज की थी कि महात्मा कभी भी दुनिया मे कौम या मजहब बनाने के लिये नही आते, न वे हमारे हाथो मे डण्डे या तलवारे देने के लिये आते हैं । वे तो केवल हमसे उस परमात्मा की भक्ति करवा कर हमे वापस ले जाकर परमात्मा से मिलाने के लिये आते है ।

तुलसी साहिब शेख तकी से फरमाते है कि ध्यान देकर सुन, जो कुछ भी मैने तुझे समझाने की कोशिश की है, अगर

तू उस पर अमल करना शुरू कर देगा तो जो कुछ कुरान शरीफ में लिखा है उसकी समझ आ जायेगी, कि जिस कुन ने सारी दुनिया की रचना की है वह कुन क्या चीज है ? वह कुन कहाँ पर है ? और किस तरह वापस जाकर उस कुन मे अपने आपको समा लेना है, अपने आपको जज्ब और लवलीन कर देना है ।

तुलसी साहिब ने इस शब्द मे गुरुमत को अथवा अपनी शिक्षा और फिलासाफी को बड़ी अच्छी तरह स्पष्ट रूप में समझाने की कोशिश की है, कि हमारी आत्मा उस परमात्मा से मिलकर ही सुहागिन हो सकती है। उस मालिक की भक्ति में ही खुशी और शान्ति है। हम मालिक के भाणे मे रहकर ही उसकी भक्ति कर सकते है और शरीर के अन्दर जाकर ही उस परमात्मा की खोज कर सकते है। किसी कामिल मुर्शिद या पूरे गुरु से मिलने पर ही शरीर के अन्दर जाकर मालिक की खोज करने के तरीके का पता लगता है और तभी हमारे अन्दर के वे कान खुलते है जो उस शब्द या नाम को सुनते है। उस शब्द या नाम को पकड़ कर ही हम उस स्थान पर पहुँच सकते है जहाँ से उठकर वह शब्द या नाम सबके अन्दर धुनकारे दे रहा है। अतएव हमे भी चाहिये कि आपके समझाने के अनुसार शब्द की कमाई करे, नाम की कमाई करे।

वाणी पलटू साहिब

साहिब के दरबार मे केवल भक्ति प्यार ।
केवल भक्ति प्यार साहिब भक्ती मे राजी ।
तजा सकल पकवान लिया दासी-सुत भाजी ।।
जप-तप नेम अचार करे बहुतेरा कोई ।
खाये सिबरी के बेर मुए सब रिसि मुनि रोई ।।
किया युधिष्ठर यज्ञ बटोरा सकल समाजा ।
मरदा सबका मान सुपच बिन घंट न बाजा ।।
पलटू ऊची जात का जिन कोई करे हंकार ।
साहिब के दरबार मे केवल भक्ति प्यार ।।

सत्संग के वचन

साहिब के दरबार मे केवल भक्ति प्यार ।।

हरएक महात्मा का एक ही सन्देश है, एक ही उपदेश है। अगर हम पक्षपात रहित होकर किसी भी महात्मा की वाणी की खोज करे तो हमे पता लगेगा कि हरएक महात्मा ने एक ही उपदेश दिया है। ये जितने भी धर्म दिखाई दे रहे है उन सबके अपने-अपने रीति-रिवाज है। परन्तु इन सब धर्मो की तह मे जो रूहानियत है, हकीकत और आध्यात्मिकता का सार है, वह एक ही है। सन्त-महात्मा हमे रीति रिवाजो में फँसाने के लिये नही आते। वे तो सिर्फ रूहानियत का प्रचार करने के लिये आते है। आप किसी भी महात्मा की वाणी पढ़ कर देख ले, सबने अपने एक ही अनुभव का वर्णन किया है।

यह पलटू साहिब की वाणी है। पलटू साहिब उत्तर प्रदेश मे अयोध्या नगरी में एक प्रसिद्ध महात्मा हुए है। जो कुछ भी आपने कहा है, बडे साहस और निडरता के साथ कहा है। आप उपदेश करते है कि हम सबको उस परमात्मा की तलाश है, हम सब दुनिया के जीव वापस जाकर उस परमात्मा से मिलना चाहते है। हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है, हम उस सतनाम रूपी समुद्र के कतरे है। हम उस मालिक से बिछुड़ कर इस माया के जाल में फँसे हुए है। यहाँ आकर हमारी आत्मा ने मन का साथ ले लिया है और मन इन्द्रियो के भोग, विषय-विकार, शराब-कबाब और दुनिया के धन्धो का आशिक है। हम मन के अधीन होकर जो-जो अच्छे या बुरे कर्म करते है उनका

नतीजा साथ-साथ हमारी आत्मा को भी भुगतना पड़ता है। महात्मा समझाते है कि जो कुछ भी हम आँखों से देख रहे है यह कर्म-भूमि है। यह ससार कर्म रूपी खेत है। यहाँ आकर हम जैसा भी बीज बोयेगे, वैसी ही फसल को काटने आना पड़ेगा। अगर कोई मिर्च बोता है तो वह मिर्च की फसल काटता है, कोई आम का पौधा लगाता है तो वह आम का फल खाता है। यहाँ आकर हम जैसे कर्म करेगे वैसे ही फल पायेगे। अगर अच्छे कर्म करेगे तो अच्छा नतीजा भोगने के लिये आ जायेगे, बुरे कर्म करेगे तो बुरा नतीजा भुगतने के लिए आ जायेगे। न अच्छे कर्मो के द्वारा हम इस देह के बन्धनों से मुक्त हो सकते है और न बुरे कर्मो के जरिये। अगर हम नेक कर्म भी करते है तो क्या फल होता है ? सेठ-साहूकार या राजा-महाराजा बन कर आ जाते है, कौमों, मजहबो, मुल्कों की हुकूमत प्राप्त करके आ जाते है, हाथ से झाड़ू निकल जाता है और हुकूमत की बाग-डोर मिल जाती है, झोंपड़ी से बिस्तर उठा कर महलों में बिछा लेते है; लोहे की जजीरे उतर जाती है, सोने की बेड़ियां पड़ जाती है, 'सी' श्रेणी से निकल कर जेल की 'ए' श्रेणी में चले जाते है, ज्यादा से ज्यादा स्वर्गो और बैकुण्ठों में पहुँच जाते है, परन्तु वे भी भोग-योनियाँ है, एक निश्चित अवधि के लिये मिलती हैं, उसे भोग कर फिर हमें इसी चौरासी के जेलखाने मे आना पडता है। अगर बुरे कर्म करते है, फिर तो हमारे लिये नरक और चौरासी तैयार ही रहते है। क्या राजा क्या प्रजा, क्या अमीर क्या गरीब, क्या औरत क्या आदमी, हम सब दुनिया के जीव यहाँ आकर अपने-अपने कर्मो का हिसाब दे रहे है। इस ससार को महात्मा दु.खों और सुखों की नगरी इसीलिये कहते है कि अपने कर्मो के अनुसार हमें यहाँ थोड़े-वहुत सुख भी मिल जाते है और दु खो का सामना भी करना पड़ता है। गुरु नानक साहिब फरमाते है——

"हरख सोग का नगरु एहु कीआ ।

से उबरे जो सतिगुर सरणीआ ।।"

यह संसार हर्ष और शोक की नगरी है। यहाँ कोई जीव ऐसा नही मिलेगा जिसे केवल दु:ख ही दु:ख भुगतने पड़ते हो, कभी सुख का साँस न आया हो। न कोई ऐसा व्यक्ति मिलेगा जिसे सुख ही सुख मिलते हों, कभी दु:खों का सामना ही न करना पड़ा हो। यहाँ अगर दस दिन दु:ख के बीतते है तो थोड़ा बहुत सुख का साँस भी आ जाता है। जब तक हम देह में बैठे है दु:ख-सुख तो आते ही रहेगे, क्योकि हम सभी इस जामे में या इस दुनिया मे पुण्यों और पापों की वजह से आते है। अगर हमारे सिर्फ पुण्य होते तो हम स्वर्गो में बैठे होते और अगर केवल पाप होते तो हम नरको में जलते होते। कुछ पुण्य मिले है और कुछ पाप तभी हम इस दुनिया में आकर सुख-दु:ख का हिसाब दे रहे है। किसी के पुण्य ज्यादा है और पाप थोडे है, इसलिये वह ज्यादा सुखी और थोडा दु:खी है। किसी के ज्यादा पाप है और थोडे पुण्य, अतएव वह दु:खी अधिक है और सुखी कम। परन्तु जब तक देह में बैठे है हम सबको दु:ख और मुसीबतें भुगतना पडती है। महात्मा समझाते है कि अगर हम हमेशा के लिए सुख और शाति प्राप्त करना चाहते है तो अपने घर पहुँच कर ही प्राप्त कर सकते है, वापस जाकर परमात्मा से मिलकर ही प्राप्त कर सकते है।

अपने कर्मो के अनुसार जिस जगह भी जाकर, जिस जामे मे भी हमें जन्म लेना पडता है उसमें दु:ख और मुसीबतो का सामना करना पड़ता है। आप अच्छी तरह विचार करके देखें कि क्या यहाँ ऐसा कोई भी जामा है जिसमें हमें सुख और शान्ति प्राप्त हो सकती है। किस तरह हमारी खुराक के लिये हर रोज हजारों तरह के जानवरों की हत्या

की जाती है, किस तरह हम उन रोते-बिलखते, चीखते-चिल्लाते जानवरों के गलो पर दिन-रात छुरियाँ चला रहे है । हम अपने मन में कभी यह सोच-विचार नही करते कि अगर कभी अपने कर्मो के कारण हमें भी उस जगह जाकर जन्म लेना पड जाय और उनके हाथो में छुरियाँ और कुल्हाडियाँ हो तो हमारी क्या दुर्दशा होगी, क्या हालत होगी । डाक्टर जब पतली सी सुई हमें टीका लगाने के लिये गर्म करता है तो हमारी इतनी बड़ी देह थर-थर काँपना शुरू कर देती है । लेकिन उन गरीब जानवरों के गलों पर अपने पेट के खातिर हम किस प्रकार दिन-रात छुरियाँ चला रहे है !

नीचे के जामो का हाल तो क्या कहे, आप जरा मनुष्य के जामे के बारे मे ही अच्छी तरह विचार करके देखे, जिसे महात्मा नर-नारायणी देह कहते है, जिसे मुसलमान फकीरो ने अशरफुल-मख्लूकात कह कर पुकारा है और जिसे हम सृष्टि का सिरमौर समझते है । इस जामे में आकर भी किसी को सुख नही मिलता, शान्ति नही मिलती । कोई बीमारी के हाथो तंग आया बैठा है तो कोई बेकारी के हाथो, कोई सन्तान से दु खी हो रहा है तो कोई निस्सन्तान होने की वजह से दु खी है । किसी को पैसे लेने का फिक्र लगा हुआ है तो किसी को कर्ज अदा करने की चिन्ता सता रही है । सड़कों पर कगालो की हालत देखे, जेलखानों में अपराधियों की कहानिया सुन कर देखें, अस्पतालो मे बीमारों की चीखे सुनें, ससार में चारों ओर दु ख और मुसीबते ही नजर आती है । हमे ऐसा कोई भाग्यशाली जीव नही मिलता जिसे यहाँ आकर सुख ही सुख प्राप्त हुआ हो । रेडियो सुनकर देख लें, अखबार पढकर देख ले, किस तरह कौमो, मजहबो और मुल्को के झगडे चलते रहते है । कितने गरीबो का खून होता है, कितनी स्त्रियाँ विधवा होती है और कितने बच्चे अनाथ होते है । जिस नगरी मे यह मालूम नही कि मौत किस

वक्त आ जाय, कहाँ आ जाय और किसके हाथों आ जाय, वहाँ हम सुख कैसे प्राप्त कर सकते है, शान्ति किस तरह पा सकते है । इसलिये सब महात्मा यही उपदेश देते है कि जब तक हमारी आत्मा वापस जाकर उस परमात्मा से नही मिलती इसका दु खों और मुसीबतो से किसी हालत में भी छुटकारा नही हो सकता ।

इसीलिये हम सबको उस परमात्मा की खोज है । हम दुनिया के सब जीव अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार हजारों युक्तियों और तरीकों से उस परमात्मा को ढूँढने की कोशिश करते है, जप-तप करते है, पूजा-पाठ करते है, दान-पुण्य करते है, घरबार छोड़कर जंगलों-पहाड़ो में छिप जाते है, मन्दिरो, मस्जिदों, गुरुद्वारों मे जाते है, सत्संग सुनते है, ग्रन्थों-पोथियो और वेदों-शास्त्रो का पाठ करते है । ये सब उपाय और साधन हम परमात्मा को पाने के लिये करते है, उससे मिलने के लिये करते है । परन्तु पलटू साहिब अपना अनुभव बतलाते है कि उस परमात्मा को तो केवल अपनी भक्ति प्यारी है, अपना प्यार पसन्द है, अर्थात भक्ति और प्यार के द्वारा ही हम वापस जाकर परमात्मा से मिल सकते है । इसी प्रकार तुलसी साहिब समझाते है--

"दिल का हुजरा साफ कर जानाँ के आने के लिये,
ध्यान गैरों का उठा उसके बिठाने के लिये ।"

अगर हम वापस जाकर परमात्मा से मिलना चाहते हैं तो हमें अपने अन्तर मे उस मालिक से मिलने का सच्चा शौक पैदा करना चाहिये । महात्मा हमारी आत्मा और परमात्मा के रिश्ते को पत्नी और पति का रिश्ता कह कर याद करते है, क्योंकि पत्नी और पति का रिश्ता प्रेम का रिश्ता होता है, प्यार और भक्ति का रिश्ता होता है । राम-कृष्ण मिशन वाले इसे मां और बेटे का सम्बन्ध कहते है ।

मा और बेटे के रिश्ते मे जो समान वस्तु या कडी है वह केवल भक्ति और प्यार की कडी है। इसी प्रकार हजरत ईसा ने इसे बाप और बेटे का रिश्ता कह कर समझाया है। बाप और बेटे का सम्बन्ध भी प्रेम और भक्ति का सम्बन्ध है। सो हरएक महात्मा हमें यही उपदेश देता है कि हमारी आत्मा और परमात्मा का सम्बंध केवल प्रेम और प्यार का सम्बन्ध है। इसीलिये हम कई बार कहते है कि 'प्रेम परमात्मा है और परमात्मा प्रेम है'। अर्थात परमात्मा से प्यार करके ही हम वापस जाकर उससे मिल सकते हैं।

अब मन में विचार आता है कि परमात्मा को तो कभी किसी ने देखा नही, फिर परमात्मा से प्यार किस तरह करे, उसकी भक्ति किस प्रकार करे ? जिस चीज को हमने कभी आँखो से देखा नही, उससे हम प्यार कैसे कर सकते है ? उसकी भक्ति कैसे कर सकते है ? हमे विचार करके देखना चाहिये कि किसकी भक्ति, किसका प्यार, किसकी संगति हमारे खयाल को उस परमात्मा की भक्ति और प्यार की तरफ ले जा सकती है ? हम जिसकी भी भक्ति करेगे, जिससे भी प्यार करेगे, मरने के बाद हमें उसी की शक्ल अपनाना पड़ेगी। 'जहां आसा तहां वासा', जिन शक्लो और पदार्थो के साथ हमारा सारी उम्र का लगाव होता है, मृत्यु के समय वे ही हमारी आँखों के सामने सिनेमा के चलचित्रो की तरह आकर फिरना शुरू हो जाते है, और आखिरी वक्त जिस ओर भी हमारा ध्यान या ख़याल होता है हम दुनिया के जीव उसी धारा में बहना शुरू कर देते है। इसीलिये हमें अच्छी तरह विचार करके देखना चाहिये कि कौन-सी वस्तु हमारी भक्ति और हमारे प्यार के योग्य है। किसकी भक्ति किसका प्यार हमारे ख़याल को परमात्मा की भक्ति और प्यार में लगा सकता है ? इसे समझने के लिये हमें सारी सृष्टि को अपनी आँखो के सामनें रखकर छान-बीन करना चाहिये।

इस ससार मे हमें जितने भी जीव नजर आ रहे है वे सब पाँच तत्वों के मिलाप से बने है। ये पाँच तत्व है पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। केवल मनुष्य में ही ये पाँचो तत्व मौजूद है। इसीलिये महात्मा इसे अशरफुल-मख़्लूकात और सृष्टि का सिरमौर कहते है।

इस संसार में पहली श्रेणी उन जीवो की है जिनमे केवल एक तत्व प्रधान होता है, जैसे सब्जी, घास-फूस, पेड-पौधे आदि जिनमें पानी का तत्व प्रधान है। अगर हम पाँच तत्व के पुतले होकर इन पेड़ों-पौधों की भक्ति करना शुरू कर देगे तो आप ही सोचें कि हम उन्नति करेगे या नीचे गिरेगे। क्योंकि हम जिसकी भी भक्ति करेगे मौत के बाद उसी जामें में जाना पड़ेगा, उसीका रूप अपनाना पड़ेगा। अतएव, यह जितना भी वनस्पति जगत है, पेड़-पौधे आदि है, ये हमारी भक्ति के योग्य नही है।

दूसरी श्रेणी में बिच्छू, साँप, कीड़े-मकौड़े आदि आते है जिनमे केवल दो तत्व–पृथ्वी और पानी प्रधान है। अगर हम पाँच तत्वों वाले मनुष्य इन दो तत्वो वाले साँप, बिच्छू आदि की भक्ति करेगे तो भी उन्नति नही कर सकेंगे, नीचे ही गिरेंगे। तीसरी श्रेणी पक्षियों की है जिनमे तीन तत्व है। हमारे अन्दर पाँचों तत्व मौजूद है। अगर हम गरुड़, कबूतर, चिड़ियों आदि की भक्ति करना शुरू कर देंगे तो भी हम उन्नति नही कर सकते, हमें निचले जामों में आना पड़ेगा। चौथी श्रेणी है चौपायों जानवरों की। इनमें बुद्धि और विवेक नही है, आकाश का तत्व नही है, बाकी सब तत्व मौजूद है। अगर हम गाय, भैस, घोड़ों आदि की भक्ति करते है तो भी हम तरक्की नही कर सकते, क्योंकि तब भी हमारा ख़याल नीचे ही गिरता है।

पाँचवीं श्रेणी खुद मनुष्य की है, और ये पाँचों तत्व हम

सबके अन्दर मौजूद है। अब सवाल उठता है कि मनुष्य मनुष्य की भक्ति करे तो क्यों करे, खासकर आज के जमाने मे जबकि हम सबके समान अधिकार है। अब मनुष्य मनुष्य की भक्ति नही करता, गाय-भैसो की बोली समझ मे नही आती और देवी-देवता कभी किसी ने देखे नही। यहाँ आकर हम बडी उलझन मे फँस जाते है कि हमे किसकी भक्ति करना है? किसके साथ प्यार करना है? किसकी भक्ति और प्यार हमारे ख़याल को परमात्मा की भक्ति और प्यार की ओर ले जा सकता है?

हुज़ूर महाराजजी (बाबा सावनसिहजी महाराज) हमें बड़ा सुन्दर उदाहरण देकर समझाया करते थे कि अगर हम एक कमरे मे बहुत से रेडियो रख दें जो किसी भी बेट्री या बिजली से जुड़े हुए न हो तो हम किसी भी देश की ख़बरें नही सुन सकते। अगर उन्हे बिजली या बेट्री से जोड़ दिया जाय तो हम जिस देश की चाहे खबरे सुन सकते है। हमें मालिक के ऐसे भक्तो और प्यारो की खोज करना है जिनकी लिव उस परमात्मा के साथ लगी हुई है और उनकी संगति करना है। हमे उनकी सगति इसलिये करना है कि उनकी सगति मे जाकर हमारा भी खयाल उस परमात्मा की भक्ति की ओर लग जाये और हमे भी परमात्मा की भक्ति करने के तरीके और साधन का पता लग जाये। हमारा-मन हमेशा संगति और सोहबत का असर लेता है। अगर हम बुरे लोगो के पास बैठेंगे, चोरों, ठगो और शराबियो की सगति करेगे तो धीरे धीरे हमें भी चोरी, ठगी और शराब की आदत पड जायेगी। परन्तु यदि हम मालिक के भक्तो और प्यारो की सगति करते है, जो निरन्तर मालिक की भक्ति व प्यार में डूबे हुए है तो उन्हे देख कर हमारा ख़याल भी परमात्मा की भक्ति की ओर जाता है। इसीलिये गुरु नानक साहिब फरमाते है—

"साकत सूत बहु गुरझी भरिग्रा, किउं करि तानु तनीजै ।।
तंतु सूतु किछु निकसै नाही, साकत संगु न कीजै ।।"

साकत पुरुषो अर्थात मनमुखों का सूत (ख़याल) बहुत ही उलझा हुग्रा होता है। जो लोग कपड़ा बुनते है उन्हें पता है कि ग्रगर सूत गुत्थियो से भरा ग्रथवा उलझा हुग्रा हो तो उससे कपडा नही बुना जा सकता। गुरु नानक साहिब फरमाते है कि इसी तरह जिनका ख़याल सारी दुनिया में फैला हुग्रा है, विषय-विकार, शराब-कबाब ग्रादि में उलझा हुग्रा है ऐसे मनमुखो की सगति में जाकर हमारा ख़याल परमात्मा की भक्ति की ग्रोर कैसे जा सकता है। ग्राप समझाते है—

"साकत नर प्रानी सद भूखे, नित भूखन भूख करीजै ।।"

जो मनमुख है वे हमेशा ही भूखे है, उन्हें परमात्मा जो भी वे चाहे प्रदान कर दे, पर उनके मन मे कभी सन्तोष ग्रौर सब्र नही ग्राता। परमात्मा उन्हे जितनी मरजी सम्पत्ति दे दे, सांसारिक मान-बडाई, तन्दुरुस्ती, धन-दौलत ग्रादि भी दे दे, परन्तु उन्होने ग्राज तक कभी परमात्मा से परमात्मा को नही माँगा। एक तो वे परमात्मा की भक्ति करते ही नही ग्रौर ग्रगर करते भी है तो दुनिया की शक्लो ग्रौर पदार्थो के लिये करते है। क्या ऐसे पुरुषो की सगति या सोहबत करनी चाहिये ? गुरु नानक साहिब फरमाते है—

'धावतु धाइ धावहि प्रीति माया लख कोसन कउ विथि दीजै।'

कि जो लोग हमेशा दुनिया की शक्लो ग्रौर पदार्थो में भटकते फिरते है, सासारिक पदार्थो के लिये तडपते रहते है, उनसे कम से कम लाख कोस दूर रहना चाहिये। फिर किनकी संगति करनी चाहिये ?—

"गोविन्दजीग्रो सति संगति मेलि हरि धिग्राइऐ ।।"

हे परमात्मा ! हमे साधू, सन्तो, महात्माग्रों की सगति

बख़्श ताकि तेरी याद आये, तेरी भक्ति की ओर हमारा ख़याल जाये। यही कबीर साहिब फरमाते है—

"कबीर सगत साध की, जौ की भूसी खाए।
खीर खाड भोजन मिले, साकत सग न जाए।।"

अगर मालिक के भक्तो और प्यारों की संगति मे जाकर सूखे टुकड़े भी चबाने पडें तो मनमुखो की संगति मे मिलने वाले खीर, मिठाई, हलवा आदि से वे लाख गुना अच्छे है। इसीलिये कहते है—

"एक घड़ी आधी घड़ी आधी से पुनि आध।
कबीर संगत साध की, कटे कोट अपराध।।"

एक घड़ी बल्कि आधी से आधी घड़ी भी जो हम मालिक के भक्तो और प्यारों की संगति मे निकालते है उससे हमारे मन से हजारों प्रकार के भ्रम दूर हो जाते है, हजारों तरह के कर्मो का हिसाब-किताब खत्म हो जाता है। इसीलिये महात्मा हमे मालिक के भक्तों और प्यारों की संगति करने का उपदेश देते है। मौलाना रूम फरमाते है—

"हम नशीनी साअते बा औलिया,
बहतर अज सद-साला ताअत वेरिया।"

मालिक के औलिया अथवा भक्तो और प्रेमियो की एक घड़ी की संगति मन-बुद्धि से की गयी सौ साल की भक्ति से कही अच्छी है। अगर भक्ति करने का तरीका मालूम नही है, रास्ता पूरब की ओर है और हम दौड़ते पश्चिम की ओर है, तो जितना दौड़ते है उतना ही अपनी मंजिले-मक्सूद से दूर होते जा रहे है। महात्मा हमेशा सत्संग के माध्यम से हमारे ख़याल को बाहर के भ्रमों और संस्कारों से निकालते है, हमारे अन्दर मालिक से मिलने का शौक और प्यार पैदा करते है, हमें मालिक की भक्ति करने का तरीका और साधन बताते है और हमसे मालिक की भक्ति

करवा कर हमे वापस ले जाकर परमात्मा से मिला देते है। परन्तु महात्मा सत्संग किसे कहते है ? वे सत्संग उसे नही कहते जिसमे एक कौम दूसरी कौम को गालियाँ निकालती है या एक कौम दूसरी कौम के गले काटने के उपाय सोचती हो या जहाँ पिछले गुजरे हुए राजा-महाराजाओं की कथा-कहानियाँ सुनाई जाति हो। महात्मा सत्संग सिर्फ उसे कहते है जिसमे किसी की निन्दा और आलोचना नही की जाती, बल्कि केवल हमारे अन्दर मालिक से मिलने का शौक और प्यार पैदा किया जाता है। गुरु नानक साहिब समझाते है--

'संत संगति कैसी जाणीऐ ।। जिथे एको नाम वखाणीऐ ।।"

सत्सग वह स्थान है जहाँ केवल नाम या शब्द का होका दिया जाता है, जहाँ सिर्फ नाम या शब्द का प्रचार किया जाता है। हमे कैसे महात्मा की संगति और सोहबत ढूँढनी चाहिये ? स्वामीजी महाराज फरमाते है कि शब्द-स्वरूपी और शब्द अभ्यासी महात्मा की खोज करना चाहिये जो खुद भी शब्द या नाम की कमाई करते हों और हमारे खयाल को भी शब्द या नाम के साथ जोडते हों। पलटू साहिब फरमाते है:--

"धुन आनै जो गगन की, सो मेरा गुरुदेव ।।"

हम सब के अन्दर आँखों के पीछे दिन-रात शब्द की धुन गूँज रही है। जो हमारे ख़याल को अन्तर में शब्द या नाम के साथ जोड़ दे वही हमारा गुरु है, वही हमारा मार्ग दर्शक है। यही गुरु नानक साहिब फरमाते है:--

"घर महि घरु दिखाइ देइ, सो सतिगुरु पुरखु सुजानु ।।
पंच सबद धुनिकार धुनि तहँ बाजै सबदु नीसानु ।।"

जो हमारे (शरीर रूपी) घर के अन्दर से ही हमें अपने असली घर पहुँचने का रास्ता बताते है वे ही हमारे गुरु

है । वे हमें पाँच शब्दों या धुनों का भेद देकर शब्द-दर-शब्द, मंजिल-दर-मंजिल वापस अपने घर पहुँचा देते हैं। स्वामीजी महाराज फरमाते हैः–

"घर में घर गुरु दिखलावे । धुन शब्द पाच बतलावे ।।"

सतगुरु हमें इस शरीर के अन्दर ही अपने निज-घर पहुँचने का रास्ता और तरीका बताते है । वे हमारे ख़याल को शब्द के साथ जोड़ कर हमे वापस अपने घर पहुँचाते है । हमें ऐसे शब्द-स्वरूपी तथा शब्द के अभ्यासी महात्मा की तलाश करना है । गुरु नानक साहिब का कथन हैः

"गुरमुखि आप पछाणहि सतहु राम नाम लिव लाइ ।।"

गुरुमुख वे व्यक्ति है जो राम नाम के साथ प्यार करके अपने आप को पहचानने के योग्य बन जाते है । राम नाम क्या चीज है ? यह नाम है, वह ताकत है जिसने सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की है, जिसके आधार पर सब खण्ड-ब्रह्माण्ड खण्ड़े है, जो हम सबके अन्दर रमी हुई है, व्याप्त है । जब हम अपने आपको उससे जोड़ देते है, खुद को उसमे लीन कर देते है तो हम भी अपने आपको पहचानने के योग्य बन जाते है, तब हमारी आत्मा और मन की गाँठ खुल जाती है और हम भी गुरु नानक साहिब के कथन के अनुसार गुरुमुख बन जाते है । जब तक हमे अपने आपका पता नही लगता, हमे उस परमात्मा की किस तरह समझ और सूझ आ सकती है । अपने आप का पता तभी चलता है जब हम अपने मन को वश मे कर लेते है, जब आत्मा और मन की गाँठ खुल जाती है । गुरु साहिब फरमाते है–

"गुरमुखि साचा सबदि सलाहै मनि साचा तिसु रोगु गया।।"

गुरुमुख सच्चे और पवित्र होते है । वे किस प्रकार सच्चे और पवित्र होते है ? नाम की कमाई करके । नाम की कमाई से उनके अन्दर से हौमै या अहंकार रूपी बिमारी

निकल जाती है, और वे वापस जाकर परमात्मा से मिलने के योग्य बन जाते है। ऐसे गुरुमुखों की संगति में जाने से लाभ ही लाभ है, कभी कोई हानि नहीं होती। लेकिन ऐसे जो भी मालिक के भक्त और प्यारे हैं वे कभी भी समाज पर अपना बोझ नही डालते। वे हक-हलाल की, अपने परिश्रम की कमाई पर गुजारा करते हुए साथ संगत की सेवा करते है। आप किसी भी महात्मा का जीवन-चरित्र पढ़कर देख लें। गुरु नानक साहिब ने करतारपुर ग्राम में जाकर खुद अपने हाथों से खेती की, अपनी परवरिश की, अपने बाल-बच्चों का पालन-पोषण किया और हमारे लिये अपनी वाणी मे उपदेश दे गये हैं–

"गुरु पीर सदाए मगण जाइ ।। ताके मूल न लागो पाइ ।।
घालि खाइ किछु हथहु देइ ।। नानक राह पछाणहि सेइ ।।"

अगर कोई गुरु और पीर होकर शिष्यों और सेवकों से माँगता फिरता है तो उसके पैरों में मत्था ही नही टेकना चाहिये। कैसे महात्मा की खोज करनी चाहिये? "घाल खाए कुछ हत्थो दे" जो खुद हक-हलाल की कमाई करता हो और साध-संगत की सेवा करता हो। इसी प्रकार कबीर साहिब की जीवनी पढ़ कर देखलें। आप सारी उमर कपड़े बुनकर गुजारा करते रहे, हालाँकि बलख-बुखारे के शाह जैसे लोग आपके सेवक थे जो आपको अच्छे-अच्छे महलो मे भी रख सकते थे। आप भी फरमाते है:—

"शिश को ऐसा चाहिये, गुरु को सरबस देय।
गुरु को ऐसा चाहिये, सिख का कछू न लेय ।।"

सेवक या शिष्य का धर्म है कि जो कुछ है उसे गुरु-मुखों का समझकर बरते। परन्तु गुरुमुखों का भी उसूल है कि सेवक की सुई तक न ले। अगर लेते है तो वे गुरुमुख नही है। कबीर साहिब फिर फरमाते है —

"मर जाऊँ मांगूँ नही अपने तन के काज ।
परमारथ के कारनै, मोहि न आवै लाज ।।"

सन्त-महात्मा हमसे औरों के लाभ के लिये या परमार्थ के लिये खर्च अवश्य करवा देगे, परन्तु अपने खुद के लिये कुछ भी नही लेगे । महात्मा रविदास के जीवन का वृत्तान्त आप जानते है कि किस प्रकार आप आजीवन जूतियाँ गाँठ-गाँठ कर अपना निर्वाह करते रहे, हालाँकि आपके शिष्यों में राजा पीपा और मीरावाई जैसे बडे-बड़े लोग थे । मीरा-वाई मेवाड़ की रानी थी । उसे बिरादरी के लोगों ने ताना मारा कि तू खुद तो महलों में रानी वनी वैठी है और तेरा गुरु जूतियाँ गाँठ कर गुजारा कर रहा है । यह स्वाभाविक है कि सेवक अपने गुरु के वारे में ताना सहन नही कर सकता । वह एक वड़ा किमती हीरा लेकर महात्मा रवि-दास जी की कुटिया में गयी और हाथ जोड़ कर विनती की कि गुरुदेव ! मुझे लोक-लाज सताती है, दुनिया ताने सुनाती है । आप इस हीरे को बेच कर अपने लिये एक अच्छा सुन्दर मकान वना कर सुख की जिन्दगी वसर करे । इस पर रवि-दासजी ने फरमाया कि बेटी ! मुझे तो जो कुछ भी प्राप्त हुआ है इस कुण्ड के पानी से हुआ है, जूतियाँ गाँठने से ही मिला है । अगर तुझे लोक-लाज का डर है तो घर बैठकर भजन कर लिया कर ।

इस प्रकार महात्मा स्वयं अपने जीवन मे एक मिसाल वन कर हमें बताते है कि किस प्रकार हमे अपने हक-हलाल की कमाई करते हुए साध-सगत की सेवा करना है । अतएव महात्मा समझाते है कि हमे ऐसे गुरुमुख की सगति करना चाहिये ।

हमारा असली गुरु शब्द या नाम है जो हमारे अन्दर दोनों आँखों के पीछे तीसरे तिल में निरन्तर गूँज रहा है ।

हम बाहर गुरुमुखों से इसलिये प्यार करते है कि वे शब्द और नाम में से ही आते है, दुनिया में आकर शब्द या नाम का ही प्रचार करते है और वापस जाकर शब्द या नाम में ही समा जाते हैं। गुरु नानक साहिब बड़ी सुन्दर मिसाल देकर समझाते है—

'हरि का सेवकु सो हरि जेहा, भेदु न जाणहु माणस देहा।'

जो मालिक के भक्त और प्यारे होते है वे परमात्मा की भक्ति करके परमात्मा का रूप ही हो जाते है, उनमें और परमात्मा में कोई भेद या अन्तर नही होता। उनका परमात्मा से क्या सम्बन्ध होता है ?

"जिउं जल तरंग उठहि बहु भांती,
फिरि सललै सलल समाइंदा ॥"

समुद्र में दो-चार मिनिट के लिये लहर उठती है और फिर वापस समुद्र में ही समा जाती है। एक लहर का समुद्र से जो सम्बन्ध होता है वही सम्बन्ध मालिक के भक्तों और प्यारों का परमात्मा के साथ है। वे सतनाम रूपी समुद्र की लहरें बन कर आते है, दुनिया में शब्द या नाम का प्रचार करते हैं और वापस जाकर उसी शब्द या नाम के समुद्र में समा जाते हैं। गुरु नानक साहिब का कथन है—

'एको अमर एका पतिसाही, जुग जुग सरकार बनाई हे।'

वह परमात्मा एक है, वह सबका दाता है, सबका बादशाह है। सन्त महात्मा उसकी भेजी हुई सरकारे अथवा शासक है। वे उसके हुक्म से आते है, उस परमात्मा के हुक्म में रहते है, उसके हुक्म का प्रचार करते है और वापस जाकर उसी हुक्म **में** समा जाते है। इसीलिये गुरु साहिब फरमाते हैं, 'बाणी **गुरु गुरु** है बाणी, विच बाणी अमृत सारे।' अर्थात वह जो **वाणी** (शब्द या नाम) है वह हमारा गुरु है और सतगुरु का असली स्वरूप भी वह वाणी अथवा शब्द है।

जैसा कि पहले अर्ज किया जा चुका है, मनुष्य का शिक्षक या गुरु केवल मनुष्य ही हो सकता है। गाय-भैंस की बोली समझ में नही आती, देवी-देवता किसी ने देखे नही। जब तक कोई मनुष्य बन कर हमें न समझाये हम इस अज्ञानता के अँधेरे से कभी भी निकल नही सकते। सतगुरु सतनाम रूपी समुद्र से, शब्द मे से आते है और शब्द का ही भेद प्रदान करते है। परन्तु कौन-सी वाणी हमारा गुरु है? गुरु साहिब फरमाते है——

"वाणी वज्जी चहुँ जुगी सच्चों सच सुनाए ॥"

वह वाणी चारो युगों से चली आ रही है; वह वाणी सतयुग में भी थी, त्रेता और द्वापर में भी थी, अभी भी है और आगे भी रहेगी। यह नही कि वह वाणी पहले कुछ और थी या आगे जाकर कुछ और हो जायेगी। न तो उस वाणी के इतिहास का पता लगाया जा सकता है, न उसका कोई समय मालूम किया जा सकता है और न ही उसकी कोई मियाद या अवधि निश्चित की जा सकती है। सबसे पहले वह वाणी थी, सब कुछ उस वाणी ने पैदा किया है और जो कुछ हम आँखो से देख रहे है यह सब नष्ट और फ़नाह हो जायेगा, परन्तु इसे पैदा करने वाली वाणी कभी नष्ट नही होती। वह वाणी न पजाबी मे लिखी जा सकती है, न हिन्दी मे और न किसी और भाषा मे। हम दुनिया के जीव व्यर्थ ही अलग अलग भाषाओं के विवाद मे फँसे हुए है। वह तो अलिखित कानून और अन-बोली वाणी है और दिन-रात हमारे अन्तर में गूँज रही है। वह वाणी हम सबका गुरु है। वह वाणी कहाँ है? गुरु साहिब खुद ही फरमाते है——

"अंतर जोत निरतर वाणी, सच्चे साहिब सिउँ लिव लाई।"

हम सबके अन्दर, आँखों के पीछे तीसरे तिल मे, एक ज्योति जल रही है। उस ज्योति में से एक मीठी और सुरीली

आवाज उठ रही है। जो मनुष्य अन्तर में उस ज्योति के दर्शन करते है और उसमें से निकलने वाली आवाज को सुनते है, उनका दुनिया से मोह और प्यार निकल जाता है और परमात्मा से मोह और प्यार पैदा हो जाता है।

हम गुरमुख या सतगुरु के साथ इसलिये प्यार पैदा करते हैं कि उन्हें वापस जाकर उस वाणी या शब्द या नाम में ही समा जाना है और हम भी उनकी प्रीति और भक्ति में बँधे हुए उसी शब्द या नाम में हमेशा के लिये मिल जायेगे। इसीलिये पलटू साहिब फरमाते है कि ऐसे मालिक के भक्तों और प्यारों की संगति में हमारा खयाल मालिक की भक्ति, मालिक के प्यार की ओर जाता है, हमारे अन्दर मालिक की भक्ति का शौक, उसका प्यार और विरह तथा उससे मिलने की तड़प पैदा होती है। ऐसे महात्माओ की संगति से हम किस प्रकार फायदा उठा सकते है ? पलटू साहिब समझाते है कि नम्रता और दीनता के द्वारा ही हम असली फायदा उठा सकते हैं। ऐसे महात्मा दुनिया में न तो कोई कौम बनाने के लिये आते है, न कोई फ़ौज भरती करने के लिये आते है और न वे दुनिया पर हुकूमत करने के लिये आते है और न उन्हें हमसे कुछ लेना है। हमे गरज है कि हम देह के बन्धनों से छुटकारा पाकर मालिक से मिल जायें। जितनी हमारे मन मे नम्रता होगी, प्रेम-प्यार और विरह होगा, उतना ही हम उन मालिक के भक्तो और प्यारों की संगति से लाभ उठा सकेगे।

नम्रता और दीनता भी हम महात्माओ से ही सीख सकते है। गुरु नानक साहिब की वाणी पढ़ कर देखे। उन्होने कई जगह अपने आपको 'लाला गोला' (दास व गुलाम) कह कर पुकारा है, कई बार स्वयं को दासों का दास कहा है, 'नीच करम्मा' कहा है।—

"कहु नानक हम नीच करम्मा, सरन पए की राखो सरमा ।।

आप फरमाते है कि हे परमात्मा ! मै नीच हूँ, लेकिन तेरी शरण मे आ गया हूँ, तू मुझ शरण मे आये हुए की लाज रख ले। अगर ऐसे उच्च कोटि के महात्मा अपने लिये इतनी नम्रता और दीनता-पूर्ण शब्दो का प्रयोग करते हैं तो हमे अपने अन्दर कितनी दीनता और नम्रता पैदा करनी चाहिये ! हमे जरा सोच-विचार कर देखना चाहिये कि हम देह मे बैठ कर अहकार किस चीज का करते है, गरूर किस चीज का करते है ! अगर हमे अपने स्वास्थ्य का अहकार है तो क्या हमने अस्पतालो मे जाकर कभी बीमारो की हालत नही देखी ? दो दिन बुखार चढ जाये तो मेंढक का सा मुँह निकल आता है। अपनी जवानी का अहंकार करते है, तो क्या हमें कभी किसी का बुढापा नजर नही आया ? क्या हमें कभी उस उम्र में नही पहुँचना है ? हम धन-दौलत का मान करते है, क्या हमने बड़े-बडे राजा-महाराजाओ को, सेठों-साहूकारों को सड़को पर कंगालो की तरह ठोकरे खाते नही देखा ? या हम हुकूमत का, सत्ता का अहंकार करते है ? क्या हमने बड़े-बड़े नेताओ को फाँसी के तख्तो पर चढ़ते या गोलियो का शिकार बनते नही देखा ? तो आखिर हम अहंकार किस चीज का करते है ? गरूर किस चीज का करते है ? महात्मा उपदेश देते है कि हमे अपने मन में नम्रता और दीनता रखनी चाहिये, आजिजी के साथ अपने कर्मो का हिसाब देना चाहिये, न कि मन मे अभिमान और अहकार रख कर परमात्मा को ही भूल जाना चाहिये। हमें तो दीनता के साथ उस परमात्मा की खोज करने की कोशिश करना चाहिये ।

पलटू साहिब इतिहास मे से बडी सुन्दर मिसाले देकर समझाते है कि मालिक के प्यारो और भक्तो की संगति से

लोग किस तरह फायदा उठाते रहे हैं।

केवल भक्ति प्यार, साहिब भक्ती में राजी।
तजा सकल पकवान, लिया दासी-सुत भाजी।।

आप फरमाते हैं कि कृष्ण जी महाराज दुर्योधन की नगरी में जाते है। दुर्योधन को इस बात का अभिमान और अहंकार था कि मै राजा हूँ, कृष्णजी मेरे महलो में आकर ठहरेंगे और मेरे यहाँ के अच्छे स्वादिष्ट पकवान खायेंगे। परन्तु कृष्णजी सीधे विदुर के घर गये, उसके घर की सूखी शाक और रोटी खाई, क्योंकि विदुर के अन्तर में सच्चा प्रेम था, सच्चा प्यार था। आपको अभिमानी पुरुष से क्या लेना था! मालिक के भक्त और प्यारे तो हमेशा नम्रता, प्रेम और प्यार के बँधे होते है।

जप तप नेम अचार करे बहुतेरा कोई।
खाये शिबरी के बेर, मुए सब रिषि-मुनि रोई।।

अब श्री रामचन्द्र जी महाराज का उदाहरण देते हैं। जब आप वनवास में थे तब बहुत से तपस्वियों, ऋषियों, मुनियों को इस बात का अहकार था कि भगवान हमारी कुटी मे पधारेंगे। उनको देख कर गरीब शिबरी के मन मे भी चाह और प्यार पैदा हुआ कि रामचन्द्रजी उसकी कुटिया में पधारें। अब वह सोचती है कि अगर भगवान मेरी कुटिया में आ भी गये तो उन्हे खाने के लिये क्या भेट करूँगी। गरीब जाति की थी। उसे पेड़ों पर से फल कौन तोडने देता। वह जगल में जाती है, जो भी बेर उसे नीचे गिरे हुए मिलते हैं, उन्हे इकट्ठा करके घर ले आती है। फिर खयाल आता है कि अगर ये बेर खट्टे हुए तो भगवान को देने के योग्य नहीं होगे। इसलिये वह एक-एक बेर को चखती है, जो खट्टे हैं उन्हे फेक देती है, जो मीठे है उन्हे सँभाल कर रखती जाती है। परन्तु रामचन्द्रजी के प्रेम में इतनी लीन हुई बैठी है कि

भूल जाती है कि चखने से वेर जूठे हो गये है । पलटू साहिब कहते हैं कि रामचन्द्रजी महाराज सीधे उस गरीव भीलनी शिवरी की झोपड़ी में गये और उसके जूठे वेर खाये, क्योंकि उसके मन में सच्चा प्रेम था, सच्चा प्यार था ।

किया युधिष्ठर यज्ञ बटोरा सकल समाजा
मरदा सबका मान सुपच बिन घंट न बाजा ।।

अव पलटू साहिव फरमाते है कि जव महाभारत का युद्ध खत्म हुआ तो पाण्डवों ने अश्वमेध यज्ञ रचाया । कृष्णजी महाराज ने फरमाया कि तुम्हारा यज्ञ तब सम्पूर्ण होगा जव कि आकाश मे घन्टा वजेगा । राजा-महाराजा थे, धन-दौलत की कोई कमी न थी । सव साधु-महात्माओं को वुला कर खाना खिलाया, परन्तु फिर भी आकाश में घण्टा न वजा । तव पाण्डवो ने कृष्ण जी से विनती की कि गुरुदेव, आप भोजन करके देखे, शायद आपके भोजन करने से ही हमारा यज्ञ पूर्ण हो सके । कृष्णजी महाराज ने भी भोजन किया । लेकिन आकाश मे घन्टा फिर भी न बजा । सव बहुत निराश हुए । फिर हाथ जोड कर अर्ज की कि भगवान, आप अन्तर्ध्यान होकर देखे कि वह कौन-सा ऐसा गुरुमुख है, कौन-सा मालिक का भक्त और प्यारा है जिसके भोजन करने से ही हमारा यज्ञ सम्पूर्ण हो सकता है । कृष्ण जी ने फरमाया कि यहाँ से थोड़ी दूर सुपच नाम का एक मालिक का भक्त और प्यारा है, वह नीची जाति का है परन्तु परमात्मा की भक्ति मे लीन बैठा है । जव तक वह तुम्हारे घर आकर भोजन न कर ले, तुम्हारा यज्ञ सम्पूर्ण नही हो सकता । अभी तक मन मे राजा होने का अंहकार था । उन्होने अहलकारों के हाथ सन्देश भेज दिया और सोचा कि जव महात्मा को पता चलेगा कि यहाँ सव साधुओ को मुफ्त खाना दिया जा रहा है तो आप ही आकर खा लेगे, क्योंकि गुड़ पर मक्खियाँ तो आप ही घिर आती है ।

परन्तु महात्मा को क्या आना था ! तब पाँचों भाईयों ने जाकर महात्मा से भोजन के लिये पधारने की विनती की। महात्मा सुपच को पता था कि इनका हृदय शुद्ध नही है, निर्मल और साफ नही है। अतएव उन्होंने शर्त रख दी कि जब तक आप मुझे सौ अश्वमेध यज्ञ का फल नही देते, मैं आपके घर आकर भोजन नही कर सकता। निराश होकर वापस घर आ गये कि हमारा तो एक अश्वमेध यज्ञ पूर्ण नही हो रहा है, हम महात्मा को सौ अश्वमेध यज्ञो का फल कैसे दे सकते है। उनको निराश देखकर द्रौपदी ने सुबह उठ कर स्नान करके अपने हाथों से खाना बनाया और नगे पैरो चल कर महात्मा की कुटिया में हाजिर हुई। द्रौपदी ने हाथ जोड़ कर बड़ी नम्रता पूर्वक विनती की कि भगवान ! आप हमारे घर पधार कर भोजन करे। महात्मा ने द्रौपदी के सामने वही शर्त रखी। इस पर द्रौपदी ने फिर नम्रता पूर्वक प्रार्थना की कि गुरुदेव ! मैंने आपके जैसे मालिक के भक्तों और प्यारों की सगति में सुना है कि अगर पूर्ण महात्मा के दर्शनों के लिये जाये तो कदम कदम पर अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है। आप उसमें सौ कदम का फल ले ले। यह सुन महात्मा ने तनिक भी आपत्ति न की, उन्हें पता था कि द्रौपदी का हृदय साफ है, उठ कर उसके साथ चले आये। सो पलटू साहिब के समझाने का केवल यही भाव है कि मालिक के भक्तो और प्यारों से हम सिर्फ नम्रता, प्रेम और प्यार के द्वारा ही लाभ उठा सकते है।

पलटू ऊँची जात का जिन कोई करे हंकार ।
साहिब के दरबार मे केवल भक्ति प्यार ।।

सब कुछ समझाकर अब पलटू साहिब वहुत सुन्दर उपदेश देते है कि परमात्मा के घर पहुँचने के लिये सिर्फ भक्ति और प्यार की जरूरत होती है। शायद किसी के मन

में ख़याल हो कि जाति के बदलने से हम परमात्मा से मिलने के अधिकारी बन सकेंगे; हिन्दू से सिक्ख बन कर परमात्मा से मिल सकेंगे या सिक्ख से ईसाई बन कर ही परमात्मा को पा सकेंगे। पलटू साहिब फरमाते है कि इस परमात्मा के धाम पहुँचने के लिये जात-पाँत की कोई जरूरत नही, कोई महत्व नही। केवल भक्ति, प्रेम और प्यार की जरूरत है। कबीर साहिब का भी यही उपदेश है––

"जात-पात पूछे ना कोय, हरि को भजे सो हरि का होय"

अर्थात परमात्मा के घर पहुँचने के लिये जात-पाँत का कोई महत्व नही है, जो परमात्मा की भक्ति करता है वह परमात्मा का रूप बन जाता है। गुरु नानक साहिब फरमाते है––

"जित्थे लेखा मगीऐ, तिथे देह जात न जाए ।।"

जिस जगह हमारे कर्मों का हिसाब-किताब किया जाता है, वहाँ न तो हमारा यह शरीर पहुँचता है और न हमारी जाति। ये जितनी भी जातियाँ है इनका सम्बन्ध या तअल्लुक इस शरीर के साथ है। इस शरीर को या तो अग्नि के सुपुर्द हो जाना है या मिट्टी के नीचे दब कर यही छूट जाना है। हमारी सबकी जात-पाँत यही पडी रह जाती है। न उस परमात्मा की कोई जाति है और न हमारी आत्मा की कोई जाति है। आप देखे कभी किसी ने आज तक यह नही कहा कि वह परमात्मा हिन्दू है या वह सिक्ख है, ईसाई है या मुसलमान है। मुसलमान फकीर भी उसे 'रब्बुल आलमीन' कह कर पुकारते है। अर्थात वह रब या परमात्मा जो सारे आलम (संसार) का एक ही है। हरएक महात्मा यही समझाते है कि परमात्मा एक है, वह न हिन्दू है, न सिक्ख है, न ईसाई। हमेशा से वह एक ही परमात्मा चला आ रहा है। उसकी कोई कौम नही है। उसका कोई मजहब नही है,

कोई मुल्क नही है। गुरु साहिब कहते हैं, 'वरन जात चिह्न नही कोई'—उस परमात्मा की कोई शक्ल नहीं है, कोई रंग नहीं है, कोई रूप नही है। न ही उसकी कोई जाति है।

गुरु नानक साहिब फरमाते हैं, 'आतम महिं राम, राम महिं आतम' अर्थात आत्मा के अन्दर परमात्मा है और परमात्मा के अन्दर हमारी आत्मा है। अगर समुद्र की कोई जात-पॉत नही है तो एक बूंद की क्या जात-पॉत हो सकती है! अगर सूरज की कोई जाति नही है तो किरण की क्या जाति हो सकती है! हम सब दुनिया के जीव व्यर्थ ही इन जात-पॉत, कौमो-मजहबों के झगड़ों में फॅसे हुए हैं। हम अपने अन्दर भक्ति-भाव पैदा नही करते, उस मालिक से मिलने का इश्क पैदा नही करते, प्रेम और प्यार पैदा नहीं करते। हम सबको अपनी जात-पॉत यही छोडकर चले जाना है। न आज तक ये जातियॉ किसी के साथ गयी हैं और न कभी जा सकती हैं। वहॉ पर कोई यह सवाल नहीं पूछेगा कि आप हिन्दू थे या सिक्ख या ईसाई? या आप हिन्दुस्तान से आये हैं या अमेरिका से या अफ़्रीका से? वहॉ हमारे कर्म देखे जायेंगे। हमारे अमल देखे जायेंगे, हमारा भक्ति-भाव देखा जायेगा। प्रसिद्ध मुसलमान फ़कीर बुल्लेशाह भी यही कहते है—

"अमला उत्ते होन निबेड़े, खड़ी रहनगियॉ जाताँ।।"

जो अपने अमलों और कर्मो की ओर ध्यान देते हैं उन्हीं का निबेडा होता है, उन्ही का हिसाब-किताब खत्म किया जाता है। जिन्हें अपनी जात-पॉत का अहंकार है, उन्हें वहॉ कोई भी नही पूछता। इसीलिये पलटू साहिब फरमाते हैं—

"पलटू ऊँची जात का जन कोई करे हंकार
साहिब के दरबार में केवल भक्ति प्यार।।"

कही किसी के मन में यह ख़याल न हो कि मैंने ऊँची जाति में जन्म लिया है इसलिये मै ही परमात्मा से मिलने का हक रखता हूँ या मै नीची जाति में जन्म ले बैठा हूँ, मै कभी परमात्मा की भक्ति ही नही कर सकता। पलटू साहिब समझाते है कि यह ऊँच-नीच का विचार ही आप अपने मन से निकाल दे, परमात्मा के घर पहुँचने के लिये तो सिर्फ भक्ति की आवश्यकता है, केवल प्यार की आवश्यकता है। गुरु नानक साहिब ने तो जात-पॉत का यहाँ तक खडन किया है——

"बिन नामे सब नीच जात है, विष्टा के कीड़े होएँ ।।"

कि जो शब्द और नाम की कमाई नही करते उनसे ज्यादा नीची जाति वाला कौन हो सकता है, क्योकि वे मौत के बाद जाकर गन्दगी के कीड़े बनते है। किनकी जाति ऊँची है ?

'जिन नाम हिरदे सो ऊँचो ऊँचा सच्चे आप समावणिआ ।"

जिनके अन्तर में वह नाम बस जाता है, जो उठते-बैठते चलते-फिरते शब्द और नाम की कमाई मे लगे रहते है, वे ऊँचे है। उन्हे वापस जाकर उस परमात्मा मे समा जाना है। इसी प्रकार कबीर साहिब फरमाते है——

कामी क्रोधी लालची, इनसे भगती न होय।
भगति करे कोइ सूरमा, जात बरन कुल खोय ।।

वेही लोग सूरमा या बहादुर है जो जात-पॉत के भेद-भाव से अपने खयाल को निकाल कर परमात्मा की भक्ति करते है और जिनके अन्तर में परमात्मा से मिलने का सच्चा इश्क और सच्चा प्यार पैदा हो गया है।

आप देखें, परमात्मा एक है, उसी ने हम सबको पैदा किया है। अच्छी तरह एक-दूसरे को गौर से देखें, हरएक मनुष्य के नाक, मुँह, कान वगैरह हैं। मौसम की गरमी-सरदी

के कारण हमारे रंग-रूप में जरूर कुछ परिवर्तन हो जाता है। वह परमात्मा खुद भी हरएक मनुष्य के शरीर मे बैठा हुआ है और हरएक को अपने अन्दर ही परमात्मा की खोज करना है। अगर फिर भी कोई किसी से नफ़रत करता है तो वह परमात्मा से नफ़रत करता है। अगर फिर किसी एक कौम या मजहब के लोग दूसरी कौम और मजहब से घृणा करते है तो इसका अर्थ यही हुआ कि अभी तक उस कौम और मजहब में मालिक से मिलने का शौक और प्यार पैदा ही नही हुआ। जिनका परमात्मा के साथ प्यार होता है वे परमात्मा की ख़ल्कत या उसके पैदा किये प्राणियों के साथ भी प्यार करते है। इन मजहबो का उद्देश्य हमारे अन्दर भक्ति-भाव उत्पन्न करना है, मालिक से मिलने का इश्क और प्यार पैदा करना है। इनका काम एक-दूसरे के प्रति नफरत पैदा करना नही है। यह नही कि एक मजहब के लोग दूसरे को देख भी न सके और एक दूसरे के गले काटने की योजना बनायें। यह कोई भक्ति करने का तरीका नही है। अगर हम किसी को मारते है तो इसका अर्थ हुआ कि हम परमात्मा को मारते है। हरएक के अन्दर वह परमात्मा बैठा है, हम बुरा किसे कह सकते है।

इसलिये सब महात्मा हमें यही उपदेश देते है कि व्यर्थ ही छोटे-छोटे दायरों में न फँसो, जात-पात के व्यर्थ के भेद-भाव मे न उलझो। अपने अन्दर मालिक की भक्ति का सच्चा इश्क पैदा करो, सच्चा प्रेम और प्यार उत्पन्न करो। ये जातियाँ हमें परमात्मा से नही मिलायेगी, बल्कि उसकी भक्ति और प्यार, उसका सच्चा इश्क और प्रेम ही हमें वापस ले जाकर परमात्मा से मिलायेगा।

वाणी पलटू साहिब

उलटा कूआ गगन में तिसमें जरै चिराग ।
तिसमे जरै चिराग बिना रोगन बिन बाती ।
छह रितु बारह मास रहत जरतैं दिन राती ।।
सतगुरु मिला जो होय ताहि की नजर में आवै ।
बिन सतगुरु कोउ होय नही वाको दरसावै ।।
निकसै एक आवाज चिराग की जोतिहि माही ।
ज्ञान समाधी सुनै और कोउ सुनता नाही ।।
पलटू जो कोई सुनै ताके पूरे भाग ।
उलटा कूआ गगन में तिसमें जरै चिराग ।।

सत्संग के वचन

उलटा कूआ गगन मे तिसमे जरै चिराग।

इस शब्द मे पलटू साहिब हमें मालिक की भक्ति करने का तरीका और साधन बताते है। आप फरमाते है कि जिस परमात्मा की सबको तलाश है वह कही बाहर नही है, वह हमारे शरीर के अन्दर है। तुलसी साहिब भी इस बारे में फरमाते है कि शरीर से बाहर जहाँ भी हम परमातमा की भक्ति करते है, वे नकली मन्दिर, नकली मस्जिद नकली गुरुद्वारे है। असली मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारा, असली गिरजा हमारा अपना शरीर ही है। जो कुछ महात्मा समझाते है वह बिलकुल सच है।

हमारा रूहानी सफर पैरों के तलवों से शुरू होकर सिर की चोटी तक है। इस सफ़र की दो मंज़िले है। एक आँखो तक और दूसरी आँखों से ऊपर। हमारे शरीर के अन्दर आत्मा और मन की बैठक आँखों के पीछे है, जिसे कोई तिसरा तिल कहते है, कोई शिव-नेत्र कहते है, कोई इसे 'घर दर' अर्थात अपने निज-घर जाने का दरवाजा कहते है तो कोई मुक्ति का द्वार। ईसा मसीह ने भी इशारा किया है, "खटखटाओ, वह खुलेगा; तलाश करो, उसे पाओगे"। अर्थात इस घर के दरवाजे को खटखटाओ, वह खुल जायेगा। जब वह दरवाजा खुल जायेगा तो तुम उस स्थान पर तलाश करो, तुम्हे मालिक से मिलने का रास्ता दिखाई देगा। वह स्थान हमारे सबके अन्दर आँखों के पीछे है। इसी को महात्माओ ने तीसरा तिल और शिव नेत्र कहा है। गुरु नानक साहिब फरमाते हैं—

"मन खिन खिन भरमि भरमि बहु धावै,
तिल घरि नही वासा पाइये ।।"

हमारा मन आँखो के पीछे से उतर कर क्षण-क्षण, पल-पल इन नौ द्वारो के जरिये सारे संसार मे दौडने की कोशिश करता है, पल-भर के लिये भी आँखो के पीछे नही ठहरता। ये नौ द्वार कौन-से है ? दो आँखे है, दो कानो के छिद्र है, दो नाक के छिद्र है, मुँह है तथा नीचे दो इन्द्रियों के छिद्र है। जितना भी हमारा खयाल दुनिया मे फैलता है, इन्ही नौ द्वारों के जरिये फैलता है। यहाँ सत्सग मे बैठे हुए किसी को बाल-बच्चो का खयाल आता है, कोई अपनी जाति और धर्म के बारे में सोचता है, तो कोई अपनी दुकान के ग्राहकों के बारे मे सोचता है। मन कभी स्थिर या निश्चल होकर नही बैठता। किसी न किसी सोच-विचार मे लगा ही रहता है।

सारे दिन मन जो दुनिया की दलीले करता रहता है, सोच-विचार करता रहता है, इसे महात्मा सुमिरन कहते है। जिसका सुमिरन करने की हमे आदत पड जाती है उसकी शक्ल भी हमारी आँखो के आगे आ जाती है। आप बच्चों के बारे मे सोचेगे तो बच्चो की शक्ल आपकी आँखो के सामने आ जायेगी। इसे महात्मा ध्यान करना कहते हैं। सुमिरन और ध्यान करने की हरएक को स्वाभाविक आदत पड चुकी है और जिनका हम सुमिरन व ध्यान करते है उन्ही शक्लो और पदार्थो के साथ हमारा मोह और प्यार पैदा होना शुरू हो जाता है। उन शक्लो और पदार्थो के साथ हमारे मन का इतना लगाव और गहरा सम्बन्ध हो जाता है कि हमे रात को सपने भी उन्ही के आते है और मौत के समय उन्ही की शक्ले आँखों के सामने फिरना शुरू कर देती है। 'जहाँ आसा, तहाँ बासा'—जिस वस्तु की ओर आखिरी

वक्त हमारा ख़याल होता है उसी का मोह हमे बार-बार खींच कर देह के बन्धनो में ले आता है। दुनिया का मोह और प्यार ही हमे देह के बन्धनों में फँसाता है। दुनिया की शक्लों और पदार्थो से मोह और प्यार करके, उन्ही का सुमिरन और ध्यान करके हम उनके साथ लगाव पैदा कर लेते है। परन्तु ये सब पदार्थ नाशवान हैं, हम उनका सुमिरन कर रहे है जो नश्वर और फ़नाह है।

अब महात्मा देखते है कि हम सब को सुमिरन और ध्यान की कुदरती आदत पैदा हो चुकी है। वे हमारी इस आदत से फायदा उठा कर हमें सुमिरन और ध्यान के द्वारा ही दुनिया के मोह और प्यार से छुडाकर परमात्मा के साथ मिलाना चाहते है। वे समझाते है कि आप उस चीज का सुमिरन और ध्यान करें, जो कभी नष्ट नही होगी, फनाह नहीं होगी। वह कौन-सी चीज है ? वह सिर्फ एक परमात्मा है, परमेश्वर है, कुल मालिक है, जिसके हजारों नाम लोगों ने अपने-अपने प्यार और भावनाओं के अनुसार रखे है।

सन्तों के समझाने के अनुसार सुमिरन के द्वारा हमें इन नौ द्वारो से अपने ख़याल को निकाल कर आँखों के पीछे लाना है। खयाल यहाँ आकर भी इस स्थान पर ठहर नहीं पाता है, बार-बार नीचे की ओर गिरता है। तब हमें अपने गुरुमुख अथवा सतगुरु के स्वरूप के ध्यान के द्वारा अपने ख़याल को यहाॅ ठहराने की आदत डालना चाहिये। गुरुमुखो के स्वरूप का ही ध्यान क्यो करना है ? जैसा कि शुरू मे अर्ज किया जा चुका है, यह संपूर्ण ससार नाशवान है, फ़नाह है। अगर हम इस नाशवान संसार तथा इसके पदार्थो का ध्यान करेगे तो इनके लिये हमारा मोह और प्यार पैदा होगा जो हमें खीचकर बार-बार देह के बन्धनों में ले आयेगा। परन्तु सतगुरु का असली स्वरूप शब्द या नाम है

और वे वापस जाकर शब्द और नाम में ही लीन हो जाते हैं। अगर हम उनके स्वरूप का ध्यान करेंगे तो हमारा उनके साथ मोह और प्यार पैदा हो जायेगा और हम भी उनके साथ उसी नाम और शब्द मे समा जायेंगे। इसलिये हमें उन गुरुमुखो के स्वरूप का ध्यान करके अपने ख़याल को आँखो के बीच मे ठहराने की आदत डालना है। आँखों के नीचे नीचे मुक्ति नही है, मुक्ति का दरवाजा आँखो के पीछे है। अगर हम किसी किले के अन्दर जाना चाहें तो जब तक किले का दरवाजा नही मिलता हम किले के अन्दर कैसे जा सकते हैं? परमात्मा का धाम ही हमारा असली घर है और उसका दरवाजा आँखों के पीछे तीसरा तिल है। हमें अपने ख़याल को नौ द्वारों से निकाल कर इस केन्द्र (तीसरे तिल) में एकत्रित करना है। आँखों से ऊपर के हिस्से, मस्तक और सिर को पलटू साहिब उलटा कुआँ कहते हैं। कुए का तल नीचे की ओर होता है, हमारे सिर का तल ऊपर की ओर है। इसलिये पलटू साहिब फरमाते हैं—

"उलटा कुआ गगन मे, तिसमें जरै चिराग।"

जब आप नौ द्वारों से ख़याल को निकाल कर आँखों के पीछे इकट्ठा करेंगे तो आपको वहाँ अपने अन्दर एक ज्योति जलती हुई दिखाई देगी। वह ज्योति जो हमारे अन्दर जल रही है किस प्रकार की ज्योति है, इसके बारे मे फरमाते हैं—

"तिसमें जरै चिराग बिना रोगन बिन बाती।"

इस संसार मे जितने भी चिराग या दिये जलाये जाते हैं उनमे तेल और वत्ती की जरूरत होती हैं। परन्तु जिस चिराग और ज्योति का वर्णन पलटू साहिब कर रहे हे, जो ज्योति हम सबके अन्दर है, जो चोरों-ठगों के अन्दर भी जल रही है और सन्तों-महात्माओं के अन्दर भी, उस ज्योति को जलने के लिये न तो तेल की जरूरत पड़ती है

और न बत्ती की। और वह ज्योति कब तक हमारे अन्तर में जलती रहती है ? पलटू साहिब फरमाते है—

"छह रितु बारह मास रहत जरतै दिन राती ।।"

साल में छः ऋतुएँ होती है, बारह महीने होते है और दिन तथा रात होते हैं। वह ज्योति दिन-रात, चौबीसों घण्टे, बारहों महीने निरन्तर जलती रहती है। वह ज्योति तो हमारे सबके अन्दर लगातार जल रही है, परन्तु कौन-से भाग्यशाली मनुष्य अन्दर जाकर उस ज्योति के दर्शन करते हैं ? पलटू साहिब आगे बतलाते है–

"सतगुरु मिला जो होय ताहि की नजर में आवै ।"

जो व्यक्ति गुरुमुखों की संगति करते है, जो उनके समझाने के अनुसार सुमिरन और ध्यान के द्वारा नौ द्वारो मे से अपने ख़याल को निकालकर आँखों के पीछे एकाग्र करते है, वे ही अपने अन्तर में उस ज्योति के दर्शन कर पाते है।

क्या हम मन और बुद्धि की मदद से, ग्रन्थ-पोथियाँ, वेद-शास्त्र आदि पढ़कर या सुन कर उस ज्योति के दर्शन कर सकेंगे ? पलटू साहिब फरमाते है–

बिन सतगुरु कोउ होय नहीं वाको दरसावै ।।

जो गुरुमुख या सतगुरु की संगति नही करते, जो मन-बुद्धि के सहारे उस ज्योति को ढूंढने की कोशिश करते है, उनको उस ज्योति के कभी भी दर्शन नही होते ।

"निकसै एक आवाज चिराग की जोतिहि माहीं"

उस ज्योति के अन्दर से एक मीठी से मीठी और सुरीली से सुरीली आवाज उठ रही है। इस आवाज को कोई महात्मा वाणी कहते है, कोई कलमा कहते है कोई शब्द, कोई नाम, तो कोई आकाश-वाणी, निर्मल नाद, दिव्य धुन आदि कहकर समझाते है। हजरत ईसा ने इसी आवाज को 'लोगास' और 'वर्ड' कहा है। वह आवाज कही बाहर नही है, वह

हमारे अन्तर में है और इस केन्द्र पर दिन-रात गूँज रही है। गुरु नानक साहिव भी इसी आवाज का जिक्र करते है–

"नौ दरवाजे दसवे मुकता अनहद सवद वजावणिआँ ।।"

आँखो के नीचे-नीचे मुक्ति का दरवाजा नही है। मुक्ति का दरवाजा आँखो के पीछे है, जहाँ कि हम सवके अन्दर अनहद शब्द धुनकारे दे रहा है। तुलसी साहिव समझाते है–

"कुदरती कावे की मेहराव में सुन गौर से,
आ रही धुर से सदा तेरे वुलाने के लिये ।"

हमारा शरीर कुदरती कावा है। इसके अन्दर जाकर ही हमे परमात्मा से मिलने का हज करना है। और इस कावे अर्थात शरीर में जो हमारा मस्तक या ललाट है वह मेहराव है। आपने मस्जिद मे मेहराव देखी होगी, जिसमें खड़े होकर मुल्ला ऊँची आवाज से वाँग देता है, कलमा पढता है। तुलसी साहिव फरमाते है कि यह शरीर कुदरती कावा है। इस कावे की मेहराव हमारी पेशानी या ललाट है। इसके अन्दर खयाल को इकट्ठा करो, आपको वह असली कलमा, असली बॉगे-आसमानी सुनाई देने लगेगी। वह अत्यन्त मीठी और सुरीली आवाज मालिक की दरगाह से उठती है और वह हम सबके अन्दर आँखों के पीछे दिन-रात धुनकारे दे रही है। सो पलटू साहिव कहते है कि उस ज्योति मे से एक मीठी आवाज आ रही है। जव हम तीसरे तिल मे खयाल रखकर उस ज्योति के दर्शन करना शुरू कर देते हैं तो उसके साथ ही हमे घण्टे और शंख की आवाज भी सुनाई देने लगती है। आप आगे फरमाते है–

"ज्ञान समाधी सुनै और कोउ सुनता नाहीं ।।"

यह ज्ञान-समाधि कौन-सी है ? जो समाधि हमारे अज्ञानता के अन्धकार को दूर करती है। हम जो मन और वुद्धि के सहारे समाधियाँ लगाते है, ये हमे अज्ञानता के

अन्धकार की ओर ले जाती है। सतगुरु हमें जिस समाधि का तरीका बताते है (कि सुमिरन और ध्यान के द्वारा अपनी आत्मा और मन को आँखों के पीछे ले आओ) उस समाधि से हम अपने अन्दर ही उस शब्द को सुनना शुरू कर देते है और उस ज्योति के दर्शन करने लगते है। इस ज्योति का जिक्र सिर्फ पलटू साहिब ही नही करते है, बल्कि हरएक महात्मा ने उस ज्योति का जिक्र किया है। कबीर साहिब कहते है, 'दीवा बले अगम का बिन बाती बिन तेल'–कि वह अगम की ज्योति बिना बत्ती और बिना तेल के हमारे अन्दर जल रही है। यही स्वामीजी महाराज फरमाते है–

"बसो तुम आय नैनन में, सिमट कर एक यहाँ होना।
दुई यहाँ दूर हो जाए, दृष्टि जोत में धरना।।"

जब तक हम इन दो आँखों से देखते है, हम द्वैत मे फँसे हुए है। जब दो आँखों से ख़याल को निकाल कर तीसरी आँख खोल लेंगे, हम एकता में आ जायेगे। यहाँ स्वामीजी महाराज भी उसी ज्योति का जिक्र कर रहे है। हजरत ईसा ने भी इसी ज्योति की ओर इशारा किया है, "अगर तू एक आँख वाला बन जायेगा तो तेरा सारा शरीर नूर या प्रकाश से भर जायेगा।"

इस प्रकार हरएक महात्मा उस ज्योति का जिक्र करता है। हमे उस ज्योति के दर्शन आँखो के पीछे अपने खयाल को एकाग्र करके करना है और उस शब्द को अथवा घण्टे और शंख की आवाज को सुनना है। उस ज्योति के दर्शन करने मे मुक्ति है, उस घण्टे और शंख की आवाज को सुनने में मुक्ति है। जब तक हम आँखों के नीचे-नीचे बैठे है, तब तक हम जितना चाहे मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों में भटक कर देख लें, ग्रन्थ-पोथियाँ, वेद-शास्त्र पढ़ कर, सत्संग सुन कर देख ले, हमें कुछ भी प्राप्त नही होगा। असली गुरुद्वारा,

असली मन्दिर, असली मस्जिद, जिसके अन्दर जाकर हमें परमात्मा की खोज करना है, जहाँ जाकर हमें ज्योति के दर्शन तथा घण्टे और शंख की आवाज को सुनना है, वह हमारी आँखों के पीछे है।

आप अच्छी तरह गौर के साथ विचार करने की कोशिश करे, ये जितने भी मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे, गिरजे है उन सब के प्रतीको या निशानों तथा रीति-रिवाजो में आपको बहुत कुछ समानता दिखाई देगी। किसी मन्दिर मे चले जायें, सबसे पहले उसके मेहराब या तोरण में घण्टा लगा हुआ मिलेगा, द्वार पर उस घण्टे को बजा कर हम मन्दिर के अन्दर जाते हैं। लगभग हरएक मन्दिर के अन्दर ज्योति अथवा दीपक भी जलाया जाता है। किसी गुरुद्वारे मे जाये वहाँ भी घण्टे और शंख बजाये जाते हैं, ज्योति जलाई जाती है। इसी प्रकार मुसलमानों की मजार पर जाये तो देखेगे कि रात को लोग वहाँ चिराग जलाते है और मौलवी नक्कारा बजाते है या बाँग देते है या कलमा पढ़ते है। गिरजे में भी सबसे ऊपर घण्टा लगा होता है, जिसका तात्पर्य हमे यही समझाना है कि घण्टे की वह आवाज ऊँचे से ऊँचे स्थान से आ रही है। गिरजे में नीचे मोमबत्तियाँ जलाई जाती है। इसी प्रकार बौद्ध-मन्दिरो मे भी घण्टे और शख जोर-जोर से बजाये जाते हैं और अन्दर ज्योति जलाई जाती है जिसे अखण्ड ज्योति कहते है और जिसे चौबीसो घण्टे जलाये रखते है। अखण्ड ज्योति तो वही है जो हमेशा जलती रहे। यह अखण्ड ज्योति कैसे हो सकती है जो जरा आँधी आयी और बुझ गयी या तेल खत्म हो गया तो बुझ गयी। ये बाहर की ज्योतियाँ उस अन्दर की ज्योति की प्रतीक है, उस की ओर इशारा करती है। हम तो इस बाहर की ज्योति को ही अपना ध्येय और लक्ष्य समझे बैठे

है। परन्तु हमें अपने शरीर रूपी असली मन्दिर में खोज करना है, अपने ख़याल को अन्तर मे एकाग्र करना है तथा उस ज्योति के अपने अन्दर ही दर्शन करने है। सब-कुछ समझाकर पलटू साहिब फरमाते है—

पलटू जो कोई सुनै ताके पूरे भाग ।

आप समझाते है कि पूरे भाग्य से जिन पर परमात्मा की दया और बख्शिश हो जाती है, उनका ही ख़याल बाहर के भ्रमो से निकलकर शरीर के अन्दर जाता है, वे ही भाग्यशाली लोग सतगुरु की सगति से फायदा उठाकर, सुमिरन और ध्यान के द्वारा अपने ख़याल को आँखो के पीछे इकट्ठा करके उस ज्योति के दर्शन करते है तथा उस घण्टे और शंख की आवाज को सुन सकते है। इसीलिये गुरु साहिब लिखते है, "साचे भावे सा पूजा होवे"। कि अगर उस परमात्मा को भायेगा, उसे मन्जूर होगा तभी उसकी भक्ति कर सकेगे। बिना उस परमात्मा की दया-मेहर के इस दुर्लभ पदार्थ को पा सकना सभव नही।

हम दुनिया के जीव अन्धे है, वह परमात्मा आँखोवाला है। अन्धे की कभी ताकत नही हो सकती कि वह आँखों वाले को पकड़ ले, जब तक कि आँखोवाला आवाज देकर उसे अपने पास न बुला ले या उसके हाथ मे अपनी उँगली थमा कर उसे अपने नजदीक न ले आवे। सो हम दुनिया के जीव इस अज्ञानता के अँधेरे तथा माया के जाल में फँस कर बिलकुल अन्धे हो चुके है। वह परमात्मा हम पर दया, मेहर और बख्शिश करे तो ही हमारा ख़याल उसकी भक्ति की ओर जा सकता है। इसीलिये गुरु नानक साहिब लिखते है—

'जीवन मरना सभु तुधों ताई, जिस बखसे तिस दे वडिआई।'

हे परमात्मा ! हम सबका जन्म-मरण तेरे हाथ में है।

जिन-जिन पर तू बख्शिश करता है उनको ही तेरे साथ मिलने की बड़ाई मिलती है । बारहमाहा के शुरू मे आप पढते ही है कि गुरु साहब प्रार्थना करते हैं—

"किरत करम के वीछुड़े, करि किरपा मेलहु राम ।।"

कि हे परमात्मा ! हम अपने कर्मों की वजह से तुझसे विछुड कर भटक रहे है । चाहे अच्छे कर्म है चाहे बुरे, परन्तु ये हमारे कर्म ही है जो हमे तुझसे दूर रखे हुए है । तू हम पर कृपा कर, हम पर दया-मेहर, वख्शिश कर और हमे अपने साथ मिला ले । तू हमे अपने से मिलाए तो ही हम वापस जाकर तुझसे मिल सकते है । आगे जाकर गुरु नानक साहिव फिर फरमाते है—

"आपन लीए जे मिलै, विछड़ किओ रोवन्न ।"

हे परमात्मा ! अगर जीव के हाथ मे हो, उसके वस में हो कि वह वापस जाकर तुझसे मिल सके तो किसका दिल करता है कि तुझसे विछड़ कर विलखता और रोता फिरे । हम जीवों के वस की वात नही कि अपने आप तुझ तक पहुँच सके । यही कवीर साहिव का उपदेश है—

"साहव से सव होत है, वदे से कछू नाहीं ।
राई से परवत करै, परवत राई माही ।।"

जो कुछ भी होना है साहिव या परमात्मा की दया-मेहर और वख्शिश के द्वारा ही होना है । जीव के कुछ वस मे ही नही है । जव वह परमात्मा दया-मेहर और वख्शिश करता है, हम राई से पर्वत वन जाते है अथवा आत्मा से परमात्मा वन जाते हे । फिर पता लगता है कि जिस परमात्मा की हम खोज कर रहे थे वह तो हमारी आत्मा के अन्दर ही है । परमात्मा हम पर किस प्रकार दया-मेहर और वख्शिश करता है ? गुरु साहिव फरमाते है—

'करम हौवै सतिगुरु मिलाए, सेवा सुरत-सवद चित लाए ।'

यहाँ करम से मतलब कृपा और बख्शिश है। मालिक की बख्शिश हुई तो हमारा सतगुरु से मिलाप हो गया और सतगुरु ने बख्शिश की तो हमे अपनी सुरत या आतमा को शब्द के साथ जोड़ने का भेद मिल गया। जब हम सुरत-शब्द का अभ्यास करते है, हमारे अन्दर से दुनिया का मोह और प्यार निकल जाता है, परमात्मा के साथ हमारा मोह और प्यार पैदा हो जाता है। गुरु नानक साहिब तो परमात्मा के लिये यहाँ तक कहते है——

"खोटे खरे तुधु आपि उपाए, तुध आपे परखे लोक सबाए।
खरे परख खजाने पाए, खोटे भरमि भुलावणिआँ॥"

हे परमात्मा! सब दुनिया के जीवों को तूने खुद पैदा किया है; खोटे भी तूने ही पैदा किये हैं और खरे भी तूने ही। तू खुद ही उन्हे परखने बैठ गया है कि खोटे कौन से है और खरे कौन-से। जिनको तू खरे बना लेता है, जिनको तू परख के योग्य बना लेता है, वे वापस जाकर तुझसे मिल जाते है। जिनको तू परख के योग्य नही बनाता, वे खोटे यही रह जाते है। इसीलिये पलटू साहिब फरमाते है——

पलटू जो कोई सुनै ताके पूरे भाग।
उलटा कूआ गगन मे तिसमे जरै चिराग॥

वे बड़े खुश-किस्मत लोग है, बड़े भाग्यशाली जीव हैं जो परमात्मा की दया-मेहर, बख्शिश के द्वारा अपने अन्तर में उस ज्योति के दर्शन करते है, उस घण्टे और शंख की आवाज को सुनते है। इस शब्द मे पलटू साहिब ने बडी अच्छी तरह समझाया है कि हमें क्यों परमात्मा की भक्ति करना है और इस देह या शरीर के अन्दर जाकर किस प्रकार परमात्मा को प्राप्त करना है।

महाराज चरनसिंहजी द्वारा सत्संगियों व जिज्ञासुओं को लिखे पत्रों में से उद्धरण

(१९५२ से १९५८)

१.—सन्त-मत को अच्छी तरह से समझने की कोशिश करे। सन्त-मत का जो भी साहित्य मिल सके उसके अध्ययन और सतसगियों की संगति के द्वारा इस वारे में जितनी भी हो सके खोज करे। जब आप सन्त-मत के सिद्धान्तो और सच्चे अर्थ को अच्छी तरह समझ ले और आलोचना का बुरा न माने, तव अपनी पत्नी को समझाने की ओर प्रेम-पूर्वक उन्हे अपने विचारों की ओर लाने की कोशिश करे। प्रेम के द्वारा वड़े-वड़े कार्य सिद्ध हो सकते है। पत्नी के विश्वासो की नुक्ताचीनी किये वगैर उन्हे सन्त-मत की अच्छाइयाँ वतलायें। परमात्मा की भक्ति का यह मतलव नही कि घरवार से सम्बन्ध तोड़ दिये जाये, वल्कि इसके द्वारा पारिवारिक जीवन को वेहतर और सुखी वनाना चाहिये।

२.—आत्मिक अभ्यास और अनुशासन के द्वारा अपनी चेतन धारा या सुरत को दोनो आंखो के पीछे इकट्ठा करके, अपने अन्दर जाकर परमात्मा को प्राप्त करना हमारा उद्देश्य है। पर रोजमर्रा के कर्तव्यो मे रुकावट डाले वगैर हमें यह अभ्यास करना है। हमें संसार मे रहना है, पर वगैर उसमे लिप्त हुए। शव्द या आकाश-वाणी मनुष्य और परमात्मा के वीच की कड़ी है। गुरु सिर्फ़ शव्द के अभ्यास का तरीका वताता है और आपको उसके साथ जोड़ देता है।

३—सन्त उस धाम से आते हैं, जो कि माया से ऊपर

है। वे प्रेम के मूर्त रूप हैं, देहधारी शब्द हैं। सिर्फ प्रेम और इसरार (आग्रह) के द्वारा वे जैसे भी हो आन्तरिक रूहानी लौ को चेता कर परमार्थ की प्यासी आत्मा को उस शब्द के सम्पर्क में लाते है जोकि हमारे अन्तर मे सदा गूँजने वाला दिव्य संगीत है, जो सीधा सबसे ऊँचे मण्डल, परमात्मा के धाम से आ रहा है।

जैसे जैसे शिष्य, सतगुरु के बताये हुए ढंग से भजन और जीवन-यापन करता है, वह अपने कर्मों के कर्ज को चुकाता जाता है, अपने रूहानी सफ़र में स्थिरतापूर्वक तरक्की करता है और परम आत्मिक आनन्द का अनुभव करता है। इस परम आनन्द का अनुभव करीब-करीब सभी आत्मिक केन्द्रों पर हो सकता है और होता है, क्योंकि इस परमानन्द में मनुष्य अपने अहं को त्याग देता है या किसी ऊँची सत्ता में समा जाता है। ये आनन्द के अनुभव, अलग अलग चक्रो पर भी हो सकते है। इन अनुभवों का असर और इनसे होने वाला आत्मिक आनन्द, अलग-अलग चक्रों पर अलग-अलग होता है।

आत्म-ज्ञान बहुत बड़ी चीज है। आत्म-ज्ञान, परमात्मा के ज्ञान के लिये—जो कि बाद में आता है—एक जरूरी पौड़ी है। जब हम तीनों गुणो को अलग करने मे सफल हो जाते है या उनसे ऊपर उठ जाते है, तभी हमें आत्म-ज्ञान हो सकता है अर्थात तभी हम अपने आपको पहचान सकते है। यह आत्मज्ञान निरा सैद्धान्तिक या ख़यालो ज्ञान नही होता है, बल्कि इसमें हम यह जान लेते है कि हमारा मूल स्रोत परमात्मा है और हम उसी के अंश है।

शब्द, मालिक का जहूर है। सन्त या सतगुरु अपने शिष्य को शब्द के सम्पर्क में लाकर, उसके परमात्मा से टूटे हुए तार को फिर से जोड़ देते हैं। वे उसके अभ्यास की देखरेख करते हैं। आपको मालूम ही है कि हमारा

मुख्य आधार सुरत-शब्द-योग है और भक्ति वह मार्ग है जिस पर हम चलते है—यह भक्ति है शब्द की या उन सन्तो की जो कि शब्द के भेदी है। सन्त बीच के मार्ग का अनुसरण करते है। वे कठोर तप व साधना के पक्ष में नही है। शब्द या नाम और सतगुरु की भक्ति के फल-स्वरूप वैराग्य अपने आप आ जाता है।

४—सन्त-मत, आत्म-ज्ञान की प्राप्ति का व्यावहारिक या अमली रास्ता है और शब्द इस रास्ते का सबसे आवश्यक अग है। वह हमें बाहरी संसार से विरक्त या उपराम करके हमारे ध्यान को अन्तर्मुख कर देता है और इस प्रकार मन को सासारिक सम्बन्धों और सुखों की ओर से हटा देता है।

सासारिक सुखो और भोगों के पीछे भागना और उन्हें इधर-उधर ढूँढते फिरना हमारे मन का स्वभाव है। पर, जब वह शब्द के सम्पर्क मे आता है तब वह उस स्थायी परम आनन्द को पाता है जो उसे मोहित करके हमेशा के लिये अपनी ओर खींच लेता है। फिर वह सांसारिक लज्जतो के पीछे नही भागता।

शब्द, सन्त-मत का सार या निचोड़ है। इस शब्द के साथ हमे जोड़ने का काम सतगुरु करते हैं। सतगुरु खुद परमात्मा को पा चुके है और शब्द के अभ्यास के पूर्ण जानकार है। शिष्यो को कुछ नियमों का पालन करना पड़ता है, जिनमे से मुख्य है पूर्ण शाकाहारी भोजन करना, जिसमें मांस, अंडे, मछली आदि का प्रयोग न हो और शराब तथा शराब से बनी चीजो का इस्तेमाल न करना।

५—आखिर हरएक को अपनी समस्याओं का हल खुद ही करना पड़ता है। दूसरे तो केवल मदद और मार्ग-दर्शन ही कर सकते है।

आपकी सन्त-मत मे रुचि और नाम पाने की इच्छा के

सम्बन्ध मे मुझे खेद के साथ कहना पड़ता है कि शाकाहारी भोजन की शर्त को ढीला नही किया जा सकता और इसे अपनाये बिना नामदान सम्भव नही। मांस, मछली, अण्डे और साथ ही शराब तथा इनसे बनी हुई चीजो का नाम-प्राप्ति से पहले ही त्याग, एक जरूरी शर्त है। जहाँ तक हमारा अनुभव है, शाकाहारी भोजन, पूर्व और पश्चिम दोनों ओर के रहने वाले सत्संगियो के लिये अनुकूल और फायदे-मन्द साबित हुआ है। वास्तव में, यह मन और शरीर को शुद्ध करता है। जहाँ तक आपका सवाल है, अगर किसी भी तरह का शाकाहारी भोजन (जिसमें फल, सब्जियाँ, सूखे मेवे, शहद, पनीर आदि दूध से बनी सब वस्तुओ को कई तरह से अपनी-अपनी सुविधा और पसन्द के अनुसार मिलाया जा सकता है) आपके स्वास्थ्य को माफिक नही आता हो, तो आप किसी दूसरी मानसिक साधना के मार्ग को अपना कर उससे फायदा उठा सकते है। परन्तु, जब तक आप बताये गये भोजन पर नही रह सकते, तब तक आपको शब्द के मार्ग मे शिष्य के रूप में स्वीकार नही किया जा सकता।

६——...और आपके इकलौते बेटे की मृत्यु पर आपके गहरे दुःख के बारे में मालूम हुआ। शरीर का धर्म ही मौत है। हम किसी निश्चित योजना के साथ इस संसार में आते है, अपने कर्मो को भुगतते है और फिर अपने अपने प्रारब्ध के अनुसार, कोई किसी प्रकार से और कोई किसी अन्य प्रकार से, इस कर्म-भूमि को छोड़कर चले जाते है। अपने कर्मो के फल-स्वरूप या तो हम किसी स्थान (जो कि अधिकतर अर्ध-सूक्ष्म होता है) में कुछ समय के लिये ठहरते है या इस संसार में बार-बार जन्म लेते रहते है, जब तक कि हमारी भेंट किसी ऐसे सन्त-सतगुरु से नही हो जाती जो कि हमें कर्मो के इस बन्धन से मुक्त होने का तथा वापस सचखण्ड पहुँच कर

अपने परम-पिता में समाकर शान्ति प्राप्त करने का रास्ता न बता दे। ये सब बाते आपने 'दि पाथ आफ दि मास्टर्स' (सन्तों का मार्ग) मे पढ़ी ही होंगी।

हाँ, गुजरी हुई आत्मा का पता लगाया जा सकना सम्भव है, ख़ासकर अगर उसने अभी दूसरा जन्म न ले लिया हो। किन्तु, ऐसा करना सिर्फ अपनी शक्ति को वर्वाद करना होगा और इससे उसके दुःखी रिश्तेदारो को भी कोई लाभ न होगा। यह सिर्फ मोह को वढाने में सहायक होता है, जो कि जिन्दगी के दु.खो का कारण है और जो हमें वार-बार जन्म-मरण में लाता है। जहाँ भी वह जीव हो, आप प्रार्थना और ध्यान तथा भजन-सुमिरन के द्वारा उसकी सहायता कर सकते हैं। उसके साथ आपके निकट सम्वन्ध और प्रेम के कारण आपकी प्रार्थना और भजन से उसको भी लाभ पहुँचता है। मै तो यही सलाह दूँगा कि भाग्य के अनुसार जो भी होता है उसे स्वीकार करे और भजन-सुमिरन करते रहे, ताकि आप दोनों को इससे लाभ मिले। इस ओर आपकी सहायता करने मे मुझे प्रसन्नता होगी और आप जो भी सवाल पूछना चाहे, खुशी से पूछ सकते है।

७—नाम-दान प्राप्त करने का सवसे पक्का और अच्छा तरीका है सन्त-मत की पुस्तको का अध्ययन, पूर्ण शाकाहारी भोजन और शराव से परहेज। शाकाहारी भोजन में मांस, अण्डे, मछली, मुर्गी और इनसे मिली हुई या वनी हुई वस्तुओं का त्याग होना चाहिये। दूध और पनीर लिये जा सकते है।

जहाँ तक चार जन्मों में मुक्ति की गारण्टी करने या जिम्मा लेने का सवाल है, यह आशा की जाती है कि लगन और उत्साह के साथ मेहनत करने वाला शिष्य, सतगुरु के द्वारा दिये गये आदेशों के अनुसार, अपना समय सन्त-मत के अध्ययन तथा अभ्यास मे बिताएगा और इसलिये उसका

अगला जन्म अवश्य ही इस जन्म से बेहतर और उन्नत होगा। चौथे जन्म तक उसके कर्मों की समाप्ति हो जायेगी और वह उस परम शान्ति के लोक तक पहुँचने के योग्य हो जायेगा, जहाँ से फिर कोई वापसी नही है। इसका यह मतलब नही कि भजन-सुमिरन छोड़ दिया जाय या इस परम आनन्द के धाम तक पहुँचने के लिये चार जन्म लेने ही पड़ेंगे। हमारी कोशिश तो यही होनी चाहिये कि जहाँ तक हो सके, जल्दी से जल्दी हम अपने कर्मों के कर्ज से, जो कि हमे यहाँ जकड़े रखते है, छुटकारा पा लें और अपने उस असली घर पहुँच जायें, जहाँ से कि हम आये है।

आपके प्रश्न के बारे मे मै आपको इतना ही बता सकता हूँ कि गुरु का होना बहुत ही जरूरी है, पर अपनी पसन्द का गुरु चुनने के लिये आप स्वतन्त्र है। मुँह से कहे गये कुछ लफ्ज नाम-दान नही है। नामदान तो एक ऐसा आत्मिक-स्पर्श है जोकि सतगुरु की आत्मा से शिष्य की आत्मा तक पहुँचता है।

८—सतगुरु अपने शिष्य का मार्ग-दर्शन केवल इस स्थूल संसार मे ही नही करते, बल्कि जब शिष्य अन्दर जाने लगता है तब वे आन्तरिक मण्डलो मे भी उसे सलाह देते है तथा उसकी सहायता और उसका पथ-प्रदर्शन करते है।

हम अपने अन्तर मे परमात्मा अथवा हकीकत को प्राप्त कर सकते है और यही हमारा ध्येय होना चाहिये। पर सब से पहले हमे वह साधन या तरीका मालूम होना चाहिये जिससे हम यह जान सकें कि अन्तर में कैसे और कहाँ जाना है। जिज्ञासु को ये हिदायते खुद सतगुरु के द्वारा या उनके किसी प्रतिनिधि के जरीये दी जाती है।

जिस सच्ची आत्मिक-जागृति की आप तलाश में है, वह ख़याल को नाभि-चक्र मे जमाने से नही मिलती, वह तो

ध्यान को दोनों आँखों के बीच में एकाग्र करने से प्राप्त होती है। यह ध्यान आँखो के द्वारा नही, बल्कि मन की तवज्जह के द्वारा किया जाता है। इस केन्द्र (दोनो आँखों के बीच के स्थान) से ही हमारी असली आत्मिक-यात्रा शुरू होती है। अभी हमारी आत्मा और हमारे मन की धारायें सारे शरीर मे फैली हुई है। हमें उन्हे ऊपर समेट कर दोनों आँखों के बीच मे इकट्ठा करना है। इससे हमारे जीवन के सामान्य काम-काज में कोई बाधा नही आती है और न ही यह आवश्यक या उचित है कि अपने कारोबार या घरबार को छोड़ दिया जाय। हमे आत्मिक अभ्यास करते हुए अपने सांसारिक कर्तव्यों और अपनी जिम्मेदारियो को भी पूरा करना है। परन्तु हमे शाकाहारी भोजन करने की तथा शराब व नशीली चीजो का त्याग करने की प्रतिज्ञा करनी होगी। निर्धारित शाकाहारी भोजन मे सभी प्रकार की सब्जियाँ, फल, पनीर और दूध शामिल है।

मन और माया से ऊपर उठने पर ही आप अपने असली स्वरूप को पहचान सकेंगे। हमारी आत्मा तीन प्रकार के शरीर—स्थूल, सूक्ष्म और कारण—मे बन्द है और जब हम अपने आप को इन तीनो शरीरो से अलग करने में सफल हो जाते है, तभी अपने असली स्वरूप का अनुभव कर सकते हैं। इसके लिये केवल इतना ही चाहिये कि बताई गई रीति से हम रोज कम से कम ढाई घण्टे आत्मिक अभ्यास करते रहे। अगर आप विश्वास और प्रेम के साथ, दृढतापूर्वक यह अभ्यास करते रहेगे तो कुछ ही महीनों मे, बल्कि कुछ हफ्तों मे ही अनुभव करेगे कि आप उन्नति कर रहे है। पर असली मजिल तक पहुँचने के लिये काफी लम्बा समय चाहिये; यह समय अभ्यासियो के पिछले सस्कारो पर और जितनी वे कोशिश और मेहनत करते है उस पर निर्भर करता

है । सतगुरु की दया-मेहर जो कि बहुत ही जरूरी है, निसन्देह हरदम साथ रहती है ।

आपको यह जानकर खुशी होगी कि इस विज्ञान में आपको फिलासफी (दर्शन शास्त्र) के अध्ययन या और किसी प्रकार के पढ़ने-लिखने की जरूरत नही है; लेकिन अगर इससे आपके मन को सन्तोष मिलता है तो बात दूसरी है । जरूरत है जितना अधिक से अधिक कर सकें उतने अभ्यास की । इतना मै और कह दूं कि नाम-प्राप्ति का पहला कदम है पूर्ण शाकाहारी आहार को अपनाना । कुछ महीनों के लिये शाकाहारी भोजन करके देखे कि आप आसानी से इसे अपना सकते है कि नहीं । मैं आपको यह सलाह भी दूंगा कि नाम-दान की माँग करने से पहले, आप सन्त-मत के साहित्य का खूब अच्छी तरह अध्ययन करें, ताकि आप अपने मन में पक्का निर्णय कर सकें कि आप इसी मार्ग को अपनाना चाहते है और आप अपने सब सन्देहों को भी दूर कर सकें । आप जब भी चाहे मुझे पत्र लिख सकते हैं ।

९--राधास्वामी मार्ग की रहनी और साधना का एक-मात्र उद्देश्य है संसार के धन्धे और मोह-जाल से आत्मा को धीरे-धीरे हटा कर उसे इसी जीवन में परमात्मा से मिला देना । इसी जन्म मे उस ध्येय को पाना शायद सम्भव न हो सके, लेकिन अगर हम इस मार्ग पर दृढ हे तो हमे पता चलेगा कि हकीकत को पाने के लिये यह कितना सरल रास्ता है ।

भक्ति और अभ्यास एक परिवर्तन लाते है । शिष्य जल्दी ही महसूस करने लगता है कि वह पहले से कितना बदल गया है और वह हकीकत की झलक पाने लगता है । अभ्यास का तरीका, शिष्य को नाम देने के समय बताया जाता है, जिसे पाने के लिये कुछ शर्तें है। आप इस बारे में. . . .से

पूछ-ताछ कर सकते है, जिन्होंने आपको किताबे दी थी। नाम माँगने से पहले जिज्ञासु को चाहिये कि वह इस बारे में पूरी छान-बीन करके अपने आपको इस विषय मे सन्तुष्ट कर ले कि जो वह वास्तव मे चाहता है, वह यह है या नही। मै यह भी कहूँगा कि नाम माँगने से पहले, छः महीने शाका-हारी भोजन करना और शराब व नशीले पदार्थों से परहेज करना अच्छा होगा।

१०—सन्त-मत, असल मे अमली रूहानियत या क्रियात्मक अध्यात्मवाद का एक स्कूल है और उसका ध्येय है अपने अन्तर मे ही आत्म-ज्ञान और परमात्मा की प्राप्ति करना। वह सांसारिक कर्तव्यो को निभाते हुए आत्मिक अभ्यास पर जोर देता है। सन्त-मत मे कोई रीति-रिवाज, कर्म-काण्ड और पुरोहित नही है। आन्तरिक रूहानी तरक्की ऐसे सतगुरु की सहायता से होती है, जो कि अन्तर मे शब्द के द्वारा अपने शिष्य से सम्पर्क बनाये रखते है।

११—धर्म के बारे मे आपके विचारों से मै पूरी तरह सहमत हूँ कि मनुष्य को स्वतन्त्र और खुले दिल से, बिना पक्षपात या तरफदारी के, इसे समझने और सीखने की कोशिश करना चाहिये। अगर हम इन धर्मो का गहराई के साथ अध्ययन करेगे, तो हम उन सब मे एक ही सार-तत्व पायेगे। सिर्फ कुछ धर्म, दूसरो के मुकाबले मे कर्मकाण्ड, रूढियो, रीति-रिवाजो और गलत व्याख्याओं मे अधिक दब गये है। फिर भी मुझे विश्वास है कि हरएक धर्म के प्रवर्तक अथवा उसे शुरू करने वाले की नजर एक ही ध्येय व आदर्श पर थी, क्योकि सत्य, चाहे आप उसे कही भी पाये, सदा समान ही रहेगा।

राधास्वामी मत, जिसे सन्त-मत भी कहते है, पूरी तरह से उस सत्य पर आधारित है जो सब धर्मो का सार है।

इसलिये यह बगैर किसी जाति-पाँति या पन्थ के लिहाज के, हर मनुष्य को, उसके धर्म मे सिखाई गई बातो को ज्यादा अच्छी तरह समझने और अमल मे लाने के लायक बनाता है। दूसरे शब्दों मे, सन्त-मत कोई नया धर्म नही है और न ही यह किसी धर्म में बाधा डालता है, बल्कि यह अनुयायी को इस योग्य बनाता है कि जिस धर्म पर वह चल रहा हो या चलना चाहता हो, उस धर्म को चलाने वाले महात्मा की शिक्षा को अपने जीवन मे उतार सके। यह सही माने में आत्मा का विज्ञान है। जिस प्रकार कुल मालिक परमात्मा एक है, उसी प्रकार उसके सन्तों के उपदेश भी—पूर्व में हों चाहे पश्चिम में—एक ही है, क्योंकि वे सभी परमात्मा की प्राप्ति का मार्ग बतलाते है।

१२—अपनी माता की अचानक मृत्यु से अवश्य ही आपको काफी चोट पहुँची होगी। आत्माएँ आती है और चली जाती है। यह संसार एक नदी के समान है और हम सब उसमें बहती हुई लकड़ियो के समान है। नदी की एक लहर आकर हमे इकट्ठा कर देती है (कुछ को अधिक समय तक साथ रहने के लिये और कुछ को सिर्फ जरा-सी मुलाकात के लिये ही) और दूसरी लहर आकर हमें अलग-अलग कर देती है। सम्बन्ध जितना घनिष्ठ या नजदीकी होगा, बिछुड़ने का दु ख भी उतना ही अधिक होगा। पर जो भी हो, यह केवल एक सांसारिक सम्बन्ध ही तो है। आत्मा कभी नही मरती। कृपया अपने शोक मे मेरी सहानुभूति स्वीकार करे। आशा है कि परमात्मा आपको इसे सहन करने और यह समझ लेने की शक्ति देगा कि यह संसार असार और नाशवान है। हम यहाँ अनुभव प्राप्त करने और किसी निश्चित उद्देश्य को पूरा करने के लिये आते है और जब वह समाप्त हो जाता है, हम चले जाते है।

आपकी यात्राएँ और आपके अनुभव आपको धर्मों का सीधा तुलनात्मक अध्ययन करने का अच्छा मौका देते है। मेरे विचार से, सब धर्म एक ही सत्य की ओर इशारा करते हैं कि सब-कुछ अन्दर है और हमें अपने अन्तर मे ही खोज करनी चाहिये। हरएक धर्म यही सिखाता है कि परमात्मा है, हमारे अन्दर आत्मा है और आत्मा, परमात्मा का अंश है। 'रिलीजन' (धर्म) शब्द का अर्थ ही 'आत्मा का परमात्मा के साथ सम्बन्ध' है। हमे यह मनुष्य-जन्म इसलिये मिला है कि हम परमात्मा को जाने, उससे प्रेम और उसकी सेवा करे। हम जानते है कि परमात्मा सर्वव्यापी है, फिर भी हम उसे केवल अपने अन्तर में ही पा सकते है। यह कार्य हरएक इन्सान को खुद ही करना है——लेकिन, बेशक एक ऐसी हस्ती के मार्ग-दर्शन में, जो कि स्वयं परमात्मा मे लीन हो चुकी हो।

१३——आपकी इस मार्ग पर चलने की इच्छा प्रशंसनीय है। परन्तु, गुरु के उपदेश व मार्ग-दर्शन के बिना, केवल पुस्तके पढ़कर ध्यान करने की कोशिश न तो काफी है और न ही वह किसी को ज्यादा दूर ले जा सकती है। आन्तरिक शब्द का अभ्यास वैराग्य और अनासक्ति को पाने का एक अमली या क्रियात्मक तरीका है और साथ ही साथ इससे विवेक भी जाग्रत होता है। आन्तरिक शब्द के प्रेम मे और सभी प्रेम आ जाते है और धीरे-धीरे यह आपको इस दृश्यमान बाहरी जगत से ऊपर उठाकर सत्य के नजदीक ले आता है।

अपने पूर्व-जन्मो के बारे मे जान सकना सम्भव है, लेकिन यह वांछनीय या उचित नही है। यह आपके दु:ख को और भी बढा सकता है और परमार्थ के मार्ग मे आपके लिये मुश्किलें पैदा कर सकता है।

१४——शुरू से आपके धार्मिक-जीवन और धर्म-ग्रन्थ

आदि के पढते रहने का आपको यह फल मिला है कि आपमें असली आध्यात्मिक मार्ग को खोजने की तीव्र इच्छा जाग उठी है।

जो कुछ आपने पुस्तकों में पढ़ा है वह सब ठीक है, पर पुस्तकें सिर्फ रुचि पैदा करती है और जिज्ञासा बढ़ाती हैं। रास्ता तो खुद आपके अन्दर ही है। इस मार्ग की कुंजी देह-धारी सतगुरु से ही मिल सकती है और आपका यह विचार सही है कि सिर्फ देह-धारी सतगुरु से नाम लेने पर या उनके द्वारा शिष्य के रूप मे अंगीकार किये जाने पर ही यह आन्तरिक यात्रा तय की जा सकती है।

१५---मुझे प्रसन्नता है कि आपको जो नाम मिला है उसकी आप कद्र करते है। नाम की कद्र करने का सही तरीका है भजन-सुमिरन में जितना भी हो सके समय देना। इसमें डरने की कोई भी बात नहीं है। यह वही चीज है जिसकी आपको तलाश थी, और अब, जब कि आपने उसे पा लिया है, आपको चाहिये कि उसका पूरा फायदा उठायें। अन्दर जाना एक बड़ा आनन्ददायक अनुभव है और इसमें डरने की कोई बात ही नही है। इसके सिवाय, यह केवल धीरे-धीरे और क्रमशः होता है, एकदम नहीं। मै आशा करता हूँ कि इस समय तक आपने डर की भावना पर विजय पा ली होगी। जो भी हो ध्यान को तीसरे तिल पर जमा कर, प्रेम और विश्वास के साथ पाँच पवित्र नामों का सुमिरन करना चाहिये। वहाँ ऐसी कोई भी बात नहीं है जो डर या घबराहट पैदा करे।

१६---जो आप कहते है, वह सही है। यह ससार दुःख, स्वार्थ, निर्दयता और लालच से भरा हुआ है। आपके सतगुरु कहा करते थे--और अन्य सब सन्त भी यही कहते है-- कि अगर आप इस संसार में या दोनो आँखो के नीचे

कही भी सुख व शान्ति ढूँढना चाहेगे तो आपको सफलता नही मिलेगी। इसी प्रकार, आँखो के केन्द्र (तीसरे तिल) से ऊपर दुःख और निर्दयता को पाना भी उतना ही असम्भव है।

यह सच है कि इसमे कर्मो का बहुत बडा हाथ है और यह सारा नाटक हमारे कर्मो के द्वारा ही खेला जा रहा है। इससे निकलने और शान्ति प्राप्त करने का एक-मात्र रास्ता है तीसरे तिल मे ध्यान को एकाग्र करके अपने शरीर को खाली करना, पाँच पवित्र नामो का प्रेम और विश्वास के साथ सुमिरन करना और शब्द में समाकर आश्रय और शान्ति प्राप्त कर लेना।

हमदर्दी का होना अच्छा है, पर जब तक हम ठोस या वास्तविक सहायता कर सकने की अवस्था में न हो, हमारी हमदर्दी कोई खास कारगर या सार्थक नही हो सकती। मानसिक या किसी और प्रकार से पशुओ के दुःख मे भाग लेने की कोशिश से कोई लाभ नही, क्योकि ऐसा करने से आप अपने ऊपर एक ऐसा भार उठा लेगे, जिसे आप ढो नही पायेगे। आप सतगुरु से उन्हे सहायता देने के लिये प्रार्थना अवश्य कर सकते है। इस प्रार्थना के फल-स्वरूप, आपको भी निर्मलता और पवित्रता प्राप्त होगी, क्योकि यह करुणा, दया और सहानुभूति के दिव्य गुणों को प्रबल रूप से जाग्रत करती है।

इन सबके बीच मे भी, कृपया अपना भजन-सुमिरन बराबर करते रहे। जब भी आप इन बातो के लिये बहुत दुःखी हो तथा जब ये आपके मन पर छा जाये, तो बड़ी लगन के साथ नाम का सुमिरन और अन्तर में जाने का प्रयत्न करें।

१७—कर्मो का कानून बड़ा ही जटिल है, यह उतना ही विविध है जितनी कि प्रकृति। इसकी छान-बीन मे लगे

रहना कोई खास लाभप्रद कार्य नहीं होगा और अन्त में हम इसी नतीजे पर पहुँचेंगे कि "जैसा बोओगे, वैसा काटोगे"। ज्यादा जरूरी सवाल तो यह है कि इस कर्मों के कानून को किस प्रकार समाप्त किया जाय या कैसे इसके चंगुल से बचा जाय ? इसका जवाब है—अपने आपको भजन-सुमिरन में लगाना। जब आप ऊपर जायेंगे और शब्द में समा जायेंगे तब ऐसा लगेगा मानों आप मैदानों की तेज गरमी से बचकर पहाड़ों में पहुँच गये हैं।

सरदार बहादुरजी ने आपको जो लिखा था, वह सही है, हालाँकि हो सकता है कि इन बातों को आप (अभी) पूरी तरह से न समझ सके। इस जिज्ञासा को स्थगित या मुल्तवी करके भजन-सुमिरन में लग जाना बेहतर होगा, ताकि आप अन्दर जायें और इन बातों को खुद ही जान लें।

हाँ, आध्यात्मिक चिकित्सा या रूहानी इलाज का आज-कल काफी चलन है और शायद लोगों को इससे लाभ भी होता होगा। मैं आपको इस तरह के इलाज का सहारा लेने की सलाह नहीं दूँगा, पर अगर आपको कोई शारीरिक रोग है तो किसी डाक्टर से सलाह लें और खुद को भजन-सुमिरन में लगायें। अगर सुमिरन के द्वारा आप अपनी चेतनता को ऊपर ले जायेंगे तो फिर दर्द का अनुभव नहीं होगा या वह काफी कम हो जायेगा। यह शरीर ही है जो कि दर्द महसूस करता है और हमारी चेतनता जब आँखों के पीछे आ जाती है तब हम दर्द का अनुभव नहीं करते। जब हमारा ध्यान नीचे चला जाता है, केवल तभी हम दर्द महसूस करते हैं।

१८—मुझे प्रसन्नता है कि आप भजन-सुमिरन को पूरा समय दे रहे हैं। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि भजन को पूरा समय देने से हमारे रोज के काम-काज में जरा-सी भी बाधा नहीं आती है। बल्कि, यह हमारे रोज के कार्यों में सहायक होता है।

आप कहते हैं कि आपको यह विश्वास दिलाया गया था कि भजन से मन को शान्ति मिलती है और आपका अनुभव है कि ऐसा कभी-कभी ही होता है। यह बात बिलकुल सही है। सब से पहले, जब तक मन में किसी प्रकार का भी सांसारिक मोह है, तब तक शान्ति नही आ सकती, क्योंकि संसार की सब वस्तुएँ नाशवान हैं। वास्तविक स्थायी शान्ति तब मिलती है जब हम शरीर के नौ द्वारो को खाली करके अन्तर मे शब्द के साथ सम्बन्ध जोड़ लेते है। इन्द्रियो के घाट से ऊपर उठने मे तथा ध्यान को दोनो आँखों के बीच में एकाग्र करने मे हम जिस हद तक सफल होते हैं, उसी के अनुसार हमे थोड़े या अधिक समय के लिये शान्ति मिलती है।

कृपया किसी भी समय लिखने मे संकोच न करें, मुझे आपकी सहायता करने में सदैव प्रसन्नता होगी।

१६—आपकी आत्म-ज्ञान पाने की हार्दिक इच्छा आप को सत्संग मे लाई और उसी के कारण आपको नाम मिला। पर यह सिर्फ रास्ता बताना या दूसरे शब्दो मे, आपके पथ-प्रदर्शन के लिये एक नक्शा बनाना है। अब आपको इस यात्रा के लिये तैयारी करना और इस पर सीधे चल पड़ना है। जैसा कि आप जानते है, हमारी आध्यात्मिक-यात्रा पैरों के तलो से शुरू होती है और सिर की चोटी पर जाकर समाप्त होती है, क्योकि मनुष्य ब्रह्माण्ड का छोटा रूप है और जो कुछ भी बाहर दिखता है, वह सब उसके अन्तर मे है।

सबसे पहली बात है अपनी सुरत को समेट कर आँखों के बीच मे लाना। सन्त-मत में यह कार्य तीसरे तिल में ख़याल को रख कर पाँच पवित्र नामो के सुमिरन के द्वारा किया जाता है, जो कि नियमपूर्वक, कम से कम रोज दो घण्टे करना चाहिये। इसमे आँखों पर दबाव या जोर नही

देना चाहिये, क्योंकि यह सुमिरन, तीसरे तिल में, मन की तवज्जह के द्वारा किया जाता है। अन्य लम्बे और जोखिम भरे साधनों की तुलना में यह मार्ग बहुत सरल है। जब मन तीसरे तिल पर एकाग्र हो जाता है, तब हम उस शब्द को सुनने लगते है जो कि अन्त में हमें अन्दर खीच कर ऊपर ले जाता है।

मन को एकाग्र करना इस अभ्यास का पहला भाग है, जो कि सबसे कठिन है और जिसमे काफ़ी समय और परिश्रम की जरूरत है; क्योकि मन को एकाग्र करने का अर्थ है जब चाहें तब उसे अपने अन्तर की ओर मोड़ सकना। इसीलिये, भजन में नियमितता का होना बहुत आवश्यक है। ज्यों-ज्यों आप अभ्यास करेंगे, आप कुछ सनसनी व दर्द का अनुभव करेंगे---पहले शरीर के निचले भाग मे और फिर कुछ ऊपर ---जो कि स्वाभाविक है व थोड़ी देर के लिये ही होता है; इनसे आपको घबराना नही चाहिये। भजन-सुमिरन में तरक्की के मूल आधार है धैर्य व लगनपूर्वक अभ्यास तथा सतगुरु के प्रति श्रद्धा, प्रेम और विश्वास।

अभ्यास के विषय मे आपके प्रश्नो का उत्तर देने में मुझे हमेशा खुशी होगी।

२०---आध्यात्मिक मार्ग में उन्नति, जैसा कि आपको पता ही है, कई बातों पर निर्भर है, जिनमे पिछले कर्मो का लेन-देन कुछ कम नही। यह हमारे भक्ति और अभ्यास के अनुसार भी समय-समय पर कम या ज्यादा होती है। सत-गुरु इन सब पर पूरी निगरानी रखते है। शिष्य का कर्तव्य तो बताये गये तरीके से भजन-सुमिरन करना और बाकी सब-कुछ सतगुरु पर छोड़ देना है। उस उद्देश्य के लिये यहाँ आना ज़रूरी नही, क्योंकि भजन-सुमिरन तो कही भी किया जा सकता है।

२१—सुमिरन और भजन से हम एक ऊँची हस्ती मे विश्वास करना सीखते हैं। इससे हमारा बोझ बँट जाता है और हम एक हल्कापन महसूस करने लगते हैं। इसके सिवाय, नियमित भजन-सुमिरन आपको रोजमर्रा की उलझनों से ऊपर उठने और बे-तअल्लुक या अनासक्त होने में मदद करता है। जिन्दगी उतार-चढाव से पूर्ण है और हम भी बदलते रहते हैं, चाहे हमें इसका पता न भी हो।

२२—चर्च या गिरजे मे उपासना और दूसरे रस्म-रिवाज कुछ हद तक भले ही भक्ति-भाव उत्पन्न करने में मदद दे, किन्तु आम तौर पर, कुछ समय बाद वे बेअसर हो जाते है। जरूरी बात तो आन्तरिक गिरजे या हरि-मन्दिर मे पूजा करने के योग्य बनना है। "(द्वार) खटखटाओ और वह तुम्हारे लिये खोल दिया जायेगा।" सुमिरन उस द्वार को खोलने की चाबी है, यह वह खटखटाने की क्रिया है जिससे कि द्वार खुलता है।

२३—आपकी चेतन और सजग होने की इच्छा की मै प्रशंसा करता हूँ, पर जैसा कि आपने कहा है, यह यात्रा लम्बी है और अक्सर प्रतीक्षा भी लम्बी ही होती है। इस बात से किसी प्रकार निराश होने के बदले, हमारी लगन व कोशिश मे और अधिक तेजी आनी चाहिये। सफलता की कुंजी सुमिरन है, जो कि दोनों आँखो के बीच मे ध्यान को टिका कर करना चाहिये, ताकि सुरत की धारा को सिमटने मे आसानी हो। आप इस केन्द्र के जितने नजदीक आयेंगे और शब्द के साथ जितना अधिक सम्पर्क जोड़ेंगे, उतना ही अधिक आपको आत्मिक आनन्द और उल्लास का अनुभव होगा। कृपया प्रेम और विश्वास के साथ आगे बढ़ते रहें और अगर आपको किसी प्रकार की कठिनाई मालूम हो तो लिखने में सकोच न करे।

अनासक्त होने के लिये आपको अपना ध्यान दोनो आँखो के बीच में जमाना चाहिये, न कि हृदय पर। वैसे, सुमिरन करने का भी यही सही तरीका है।

२४—डर का कारण है अज्ञान, विश्वास की कमी और अपने आपको न पहचानना। आत्म-साक्षात्कार या अपने आपको पहचानने मे समय जरूर लगता है, पर सतगुरु में और हर प्रकार से रक्षा और सँभाल करने की उनकी शक्ति में विश्वास होना भी काफी है। यह विश्वास तथा प्रेम, भजन और आन्तरिक अनुभव से उत्पन्न होता है। नियम-पूर्वक प्रेम के साथ पाँच पवित्र नामो के सुमिरन से भी यह विश्वास पैदा होता है। ये नाम बहुत शक्ति वाले और आध्यात्मिक महत्व के है, और सब कठिनाइयो और बाधाओं से आपकी रक्षा करेगे।

बेचैनी अथवा 'वह अकारण कोई बात' का अनुभव, हमारे अपने ही दबे हुए या अर्ध-चेतन सस्कारो का नतीजा है जो हमे कभी-कभी कुछ शिथिल या सुस्त सा बना देते है। पर पाँच नामों के सुमिरन के द्वारा उनका सफलता-पूर्वक मुकाबला किया जा सकता है।

२५—जहाँ तक आपके प्रश्न का सम्बन्ध है, आन्तरिक दृष्टि के खुलने और अन्तर मे सतगुरु के नूरी स्वरूप के दर्शन होने का यह मतलब जरूरी नही कि आगे कोई कर्म ही बाकी नही है। आप सतगुरु के नूरी स्वरूप के दर्शन तो पहले स्थान पर कर सकते है, परन्तु उसके बाद जो होता है, वह अधिक महत्वपूर्ण है।

आपने पूछा है कि क्या सत्संगी अपने सभी कर्मो को समाप्त करके त्रिकुटी को पार करने के लायक हो जाता है या कुछ कर्मो का हिसाब चुकाना बाकी रह जाता है ? सो, सतगुरु अपनी दया से यह प्रबन्ध कर सकते है कि शिष्य

अपने बचे हुए कर्मो को किसी आन्तरिक मण्डल में वैठकर भक्ति के द्वारा समाप्त कर दे और उसे फिर से इस स्थूल ससार मे जन्म लेने की जरूरत न पडे। पर यह तब होता है जब कि उसके अन्दर कोई प्रबल इच्छा या आसक्ति न हो। आम तौर पर, सत्संगी को यदि इस ससार मे फिर से जन्म लेना भी पड़े, तो वह जन्म पहले से अधिक अच्छी परिस्थितियो मे होता है और उसमे भजन-सुमिरन के लिये अधिक सुविधाये होती है।

अन्तर में सतगुरु के नूरी या ज्योतिर्मय स्वरूप का दर्शन एक अपूर्व और निराला अनुभव है।

२६——रोज नियम पूर्वक भजन-सुमिरन करना बहुत ही जरूरी है। वक्त की पाबन्दी या रोज एक ही समय अभ्यास मे बैठने का भी असर होता है। हो सकता है कि आज के जमाने में वक्त की पाबन्दी हमेशा न निभ सके, पर रोज अभ्यास करने के नियम का पालन अवश्य करना चाहिये। प्रतिदिन चार घण्टे बैठना, एक अच्छा लक्ष्य है। जब आप इस समय को और बढ़ाना चाहे तो आपका यह यत्न होना चाहिये कि कई बार थोड़ी-थोडी देर बैठने के बजाय, एक ही बैठक मे धीरे-धीरे अधिक समय लगाये।

शब्द हमेशा आपके अन्दर है, हमेशा से ही रहा है और जव तक आप जीवित है, कभी बन्द नही होगा। यह आपको जिन्दा रखता है। सो इस बारे में आप कोई चिन्ता न करे। जब लोग कहते है कि शब्द बन्द हो गया है या चला गया है, तब शब्द नही जाता बल्कि एकाग्रता चली जाती है और ध्यान फैल जाता है। कभी-कभी, कुछ ख़ास कर्मो के कारण या मन के चिन्ता व गम में उलझे रहने के कारण शब्द हट जाता है (किन्तु ऐसा बहुत कम होता है), पर वह गुम नहीं होता। लेकिन यह हालत थोड़े समय के लिये होती है और

सुमिरन करते रहने से वापस ठीक हो जाती है।

शब्द ही सतगुरु का वास्तविक व मूल रूप है और अपने इसी वास्तविक रूप मे सतगुरु सब जगह मौजूद है और अपने शिष्यों की देख-भाल करते है। सतगुरु के पत्र और सत्सग की पुस्तकें वे कड़ियाँ है जो शिष्य को सतगुरु के साथ जोड़ती है और उसे उनकी याद दिलाती रहती है।

जब आप शब्द को सुन रहे हों तब (सिवाय उस वक्त के जब आपको कोई शक हो या डर लग रहा हो) आपको नाम का सुमिरन नही करना चाहिये और अपना पूरा ध्यान शब्द को सुनने मे लगाना चाहिये, ताकि समय आने पर यह आपको ऊपर खीच सके। आपका घण्टी की आवाज सुनना अच्छी बात है। कुछ समय बाद आप घण्टे की धुन सुनने लगेगे, जो आत्मा को ऊपर खीचती है। पर किसी शब्द या धुन की आशा या इन्तिजार में न रहें, क्योंकि इससे मन की एकाग्रता में बाधा पड़ती है।

इसी प्रकार, रोशनियों की तलाश मे भी न रहे, बल्कि जो कुछ भी आपके सामने आता है उसे देखे और अगर वे दिखाई न दें तो दु:खी न हो। अपने ध्यान को एकाग्र रखें और पूरा ध्यान शब्द मे लगा दे।

जहाँ तक दर्शन का सवाल है, जब आप सुमिरन और शब्द के द्वारा ठीक केन्द्र पर पहुँच जायेगे, तो स्वरूप अपने आप ही आपके सामने आ जायेगा। जो कुछ भी आप देखें या सुनें उसके बारे में और लोगों से बात न करें। पूरी लगन के साथ इस मार्ग पर बढने की कोशिश करने वाले श्रद्धालु सत्संगियो के पत्रों का मैं हमेशा स्वागत करता हूँ।

२७—मुझे प्रसन्नता है कि आपकी पत्नी यह महसूस करती है कि यही सही रास्ता है और उन्होंने अपनी खुशी से नाम माँगा है। पति और पत्नी, पारिवारिक जीवन रूपी

रथ के दो पहिये है और जब ये दोनो आपस मे सहयोग करते हुए, एक ही दिशा मे चलते है तो इससे न केवल पारिवारिक जीवन ही सुखी होता है, बल्कि आध्यात्मिक उन्नति में भी मदद मिलती है। अति से बचना व मर्यादा मे रहना एक अच्छा नियम है। सन्त-मत मध्यम मार्ग है, यह अति का समर्थन नही करता। हमारे कर्मो का सब कर्ज, सतगुरु और शब्द रूपी बैंक के जरीये चुका दिया जाता है।

२८—मुझे खुशी है कि आपको हिदायतों से मदद मिली है, और आपको शब्द पहले से अधिक स्पष्ट और जोर से सुनाई देता है और आप अपना ध्यान पहले से ज्यादा देर तक उसमें जमाए रख पाते है। यह बड़े उत्साह की बात है कि आपने अपनी मुख्य बैठक को दो घण्टे से बढा कर तीन घण्टे कर लिया है, समय आने पर इसके अच्छे परिणाम निकलने चाहियें। साधारण तौर पर, मन की शुरू-शुरू की चंचलता पर विजय पाने और ध्यान को शब्द मे लगाने मे काफी समय लग जाता है। इसीलिये अभ्यास के पहले भाग का समय बढाना वांछनीय या उचित है। यही कारण है कि हम जितना अधिक समय देते है, यह काम उतना ही आसान होता जाता है। यह कोरी कल्पना ही नही है।

भजन में आपके हाथ-पैर जल्दी ही सुन्न होने लगते है, यह अच्छी निशानी है और इससे पता चलता है कि चेतनता या सुरत की धार शीघ्र तथा आसानी के साथ सिमट रही है। जितने अधिक आप शब्द में स्थिर होने लगेंगे, सुरत की धार भी उतनी ही अधिक अन्दर की ओर जाने की आदी हो जायेगी और आप महसूस करने लगेंगे कि न सिर्फ सोते-उठते ही, बल्कि हर समय सतगुरु का शब्द-रूप आपके ऊपर या चारों ओर मँडरा रहा है। सब कुछ उचित समय पर होगा।

प्रेम, विश्वास और नियमितता के साथ धैर्यपूर्वक अभ्यास में लगे रहे और बाकी सब कुछ सतगुरु पर छोड़ दें।

२९––आपका प्रसन्न होना बिलकुल उचित है। जब पति और पत्नी दोनो एक ही मार्ग पर चलते है, तब गृहस्थी की गाडी ज्यादा अच्छी तरह से चलती है और पारिवारिक सुख और आत्मिक-आनन्द प्राप्त होता है। अब आप दोनो के सासारिक और आध्यात्मिक स्वार्थ समान है और यह बात आपको अपने भजन मे मदद देगी।

हाथ-पैर, चेतना के सिमटाव के कारण सुन्न होते हैं और यह प्रगति की निशानी है। यह सुन्न होना अस्थाई है और इसके कारण घबराना नही चाहिये।

३०––मै आपके इस मार्ग को अपनाने और एक अच्छी शिष्या बनने के इरादे का स्वागत करता हूँ। आपके पति पहले से ही सत्सगी है, इससे दोनों की रूहानी तरक्की में आसानी होगी, क्योकि अब दोनों का झुकाव एक ही ओर होगा। कृपया याद रखे कि सुमिरन सबसे जरूरी है। यह हमारे ध्यान को एकाग्र करके दोनो आँखों के बीच में ठहराता है, जिसके बाद ही हमारा रूहानी सफर शुरू होता है।

३१––इधर-उधर भागना, शक और मुश्किलें पैदा करना और बाद मे कभी-कभी उन्हे सुलझाने के लिये बैठ जाना, मन का स्वभाव है और इस तरह यह आपको बहुत कुछ व्यर्थ के कामो मे उलझाये रखता है। सही तरीका तो है कि मन को एकाग्र किया जाय और जब तक हो सके तब तक उसे तीसरे तिल में ठहराया जाय। शान्ति सिर्फ़ यहीं है। इससे नीचे केवल झगड़े और फसाद हैं।

हम दूसरों के दोष देखने के आदी है। लेकिन, परमार्थ की चाह रखनेवालों का यह तरीका नही है। एक सत्सगी या रूहानी तरक्की चाहने वाले हर इन्सान को चाहिये कि

दूसरों के दोष ढूंढने के वजाय अपने ही दोष ढूंढे और एक-एक करके उन्हे छोड़ने की कोशिश करे। यह सिर्फ अपने आपको दूसरों से अच्छा व ऊँचा समझने का भाव ही है जो कि हममे दूसरो के दोप ढूंढने की यह आदत पैदा करता है; और यह नम्रता के आदर्श के विलकुल खिलाफ है।

स्वतन्त्र इच्छा का सवाल एक पुराना विवाद है। सव से अच्छा और सन्तोपप्रद हल (जिस पर विश्वास भी किया जा सकता है) तव मिलता है, जव कि कोई अन्दर जाता है और कर्मो के कारोवार को खुद देख लेता है। हमे ऐसा लगता है कि हममे स्वतन्त्र इच्छा है; पर वह कई वातो और परिस्थितियो से इतनी दवी हुई है कि असल मे स्वतन्त्र इच्छा नाम की चीज वहुत कम ही रह गई है। यह कहना कोई ज्यादती नही होगी कि जव तक हम सतगुरु और नाम के सम्पर्क मे नही आते, तव तक हम उस ताकत के हाथो मे, जो ससार को चला रही है, कठपुतलियो के समान है। यह भी याद रखना चाहिये कि जिसे हम भाग्य या होनहार कहते है, वह कोई ऐसी चीज नही जो हमारी मरजी के खिलाफ, किसी वाहरी शक्ति द्वारा, हम पर लाद दी गई हो, वल्कि वह तो जो कुछ हम पीछे कर आये है उसका स्वाभाविक परिणाम है। जैसा हमने वोया है, वैसा ही काटना होगा।

जैसे-जैसे एकाग्रता वढेगी और सुरत का पूरा सिमटाव होने लगेगा, घण्टियों की आवाज अधिक स्पष्ट होती जायेगी। सुस्ती व आलस से हर हालत मे वचना चाहिये, क्योकि यह अभ्यास की जड पर ही चोट करता है।

३२—अहंकार, जैसा कि आप जानते ही है, काफ़ी लम्वे समय तक पीछा नही छोड़ता और कभी छिपकर तथा कभी खुले रूप मे, हम पर वार करता ही रहता है। सुमिरन, ध्यान और भजन के द्वारा हमें धीरे-धीरे अहंकार के प्रभुत्व या

अधिकार को हटा कर उससे ऊपर उठना चाहिये, ताकि यह एक आज्ञाकारी सेवक बन जाये, न कि स्वामी। आत्मिक अभ्यास के द्वारा हमे इन परिस्थितियों का सामना करने की ताकत मिलती है।... क्योकि सतगुरु और शब्द दोनों एक ही है।

३३—हमारे महान सतगुरु (महाराज सावनसिहजी) हमेशा अपने शिष्यों के साथ है, वे निरन्तर उनकी सहायता और उनकी प्रगति की निगरानी कर रहे है। आप पूरा यकीन रखे कि प्रेमपूर्वक किया गया कोई भी यत्न खाली नही जाता। एक दिन आप सतगुरु के नूरी स्वरूप को देखेगे। पर कृपया यह याद रखे कि इस संसार मे आते समय हम अपने प्रारब्ध कर्मो को भी साथ लाये है और उन्हें अवश्य ही बेबाक या भुगत कर समाप्त करना होगा। प्रेमी और वफ़ादार शिष्य, अपने अहंकार को एक तरफ रखते हुए, इन्हें सतगुरु की मौज मानकर भुगत लेता है। हमें याद रखना चाहिये कि जब भी सतगुरु ठीक और उचित समझेगे, हमें अपने धाम बुला लेगे।

३४—किसी न किसी प्रकार की थोड़ी-बहुत आलोचना तो होगी ही। पर सच्चे खोजी और जिज्ञासु के द्वारा की गई आलोचना का स्वागत करना चाहिये। संत-मत के उसूलो को अच्छी तरह से समझने के बाद होनेवाला विश्वास, कोरे अंध-विश्वास से कही ज्यादा कीमती है।

३५—मुझे यह जानकर अफसोस हुआ कि आप अभी तक अपने सुमिरन की समस्या में उलझे हुए है। वास्तव में, सुमिरन का साँस के साथ कोई सम्बन्ध ही नही है। साँस की गति के साथ सुमिरन करना एक गलत आदत है तथा और सब गलत आदतों की तरह (जिन्हे कि बदलने की जरूरत है), यह भी धीरे-धीरे ठीक हो जायेगी। आप इसके बारे में

चिन्ता न करें, बल्कि सही तरीके से—जैसा कि आपको बताया गया है—सुमरिन करे। अगर सयोग से, कभी तवज्जह नीचे गिरती है या साँस की ओर जाती है तो उसकी ओर ध्यान न दे और सही अभ्यास को फिर से शुरू कर दे।

जो कुछ भी भजन या सुमिरन के समय शरीर की अस्थिरता को कम करने मे मदद दे, वह अच्छा व अपनाने योग्य है; और यह आपके लपटे हुए कम्बल के इस्तेमाल पर भी लागू होता है। अभ्यास मे बैठने के बारे मे आपने जो पूछा उसका उत्तर है कि चाहे आपको कुछ याद रहे या न रहे, या भजन मे रस मिले या न मिले, आपका कर्तव्य है कि बिना नागा रोज ढाई घण्टे बैठे। बाकी सब-कुछ सतगुरु आप सँभाल लेगे। यह विश्वास रखे कि जो भी उनका द्वार खटखटा रहे है, उनकी ओर से वे बेखबर नही है। 'मै' या 'अह' का खयाल, जिसने आपको परेशान कर रखा है, बड़ी आसानी से हटाया जा सकता है। आख़िर, अपने ही फायदे के लिये, शिष्य को अपने आपको सतगुरु की शरण मे अर्पण करना ही होगा। फिर 'मै' का ख़याल ही क्यो आना चाहिये? कृपया इसके विषय मे चिन्ता न करे।

हममे से हरएक मे अपनी-अपनी कमियाँ या ख़ामियाँ है। अगर हम पूर्ण होते, तो यहाँ न होते। अपनी कमियो और दोषों की जानकारी भी एक वरदान या बख्शिश है। उसके बाद, ठीक तो यह है कि उनका दुखड़ा रोने के बजाय उन्हें दूर करने की कोशिश की जाय। दर्शन की प्यास मनुष्य को निर्मल और पवित्र करती है और जब यह बहुत ही तीव्र हो जाती है, तब किसी न किसी रूप मे इसकी तृप्ति होती है। प्रेम के साथ किया गया भजन-सुमिरन हमारी लियाकत बढाकर हमे दर्शन के अधिक योग्य बनाता है।

शादी, बरात, आदि सामाजिक कार्यो से दूर भागना

मुनासिब नही। असामाजिक होकर हम स्थिति को सुधार नहीं सकते। हमे इनमें जाना चाहिये, परन्तु जहाँ तक हो सके हमे अपना खयाल को अभ्यास की ओर, खास कर सुमिरन में, रखना चाहिये। जब व्यक्ति दूसरों के साथ हो और बात-चीत मे न लगा हो, तब भी वह बड़ी आसानी से सुमिरन कर सकता है।

कृपया, बहुत बाते पूछने के बारे में या बहुत दोष होने के बारे मे चिन्ता न करें। अपनी ओर से पूरी कोशिश करते रहे। मै आपके प्रयत्नों से खुश हूँ।

३६—यह अच्छा है कि आप अपनी गलती समझते है। पर एक बार उसे समझ लेने के बाद उसी बात को फिर से दोहराना नही चाहिये, जब कि आप जानते हैं कि वह अनुचित या बेजा है। यह तभी सम्भव हो सकता है जब आप हर रोज नियमित रूप से भजन-सुमिरन में बैठें।

अगर शिष्य सतगुरु की ओर मुख करता है, तो वे सदा उसकी सहायता के लिये मौजूद है। सतगुरु की ओर मुख करने का सबसे अच्छा तरीका है बिना नाग़ा प्रति-दिन ढाई घण्टे भजन मे बैठना, जैसा कि आपने नाम-दान के समय वचन दिया था। हम मुश्किलों के होते हुए भी दुनिया के लोगों को दिये हुए अपने वचन निभाते है। तो ऐसा ही हमे अपने सतगुरु के साथ क्यों नही करना चाहिये? परमात्मा उन्ही की मदद करता है, जो खुद अपनी मदद करते है, और अपनी मदद करने का सबसे अच्छा तरीका है सतगुरु के हुक्म या आदेशो का पालन।

३७—आप जिन परेशानियों मे से गुज़र रहे है, उनके बारे में आपके समाचार पढ़े। पर उनसे जरा भी घबराने की जरूरत नही। हमें अपने मन से लड़ना है और उसे परास्त करना है। भजन-सुमिरन को छोड़ देना, एक जानी

दुश्मन के सामने हथियार डाल देने के समान है। एक अच्छा सिपाही आखिर तक मुकाबला ज़ारी रखता है।

पलटू साहिब, सार-वचन और सन्त-मत के अन्य साहित्य को पढे। वे सब यही कहते हैं कि यह मन के साथ जिन्दगी भर का मुकावला है और तब तक चलता है, जब तक कि हम जीत नही जाते। सतगुरु का ध्यान करे, उनसे प्रेरणा और वल ले और लड़ाई ज़ारी रखे। परमात्मा सिर्फ उन्ही की मदद करता है, जो खुद अपनी मदद करते है।

अगर आप व्यास आने में असमर्थ है, तो कोई हरज नही। सतगुरु आपके अन्तर मे है और आप जहाँ भी चाहे अपना भजन-सुमिरन कर सकते है। जरूरत तो है इस लड़ाई को जारी रखने के पक्के निश्चय की, और अगर आप सत-गुरु की कृपा का सहारा लेकर आगे वढेगे तो सफल हो सकेंगे।

कृपया सुमिरन पर जोर दें। अगर अभ्यास के समय मन वाहर भटकने लगे तो उठ जाये और सुमिरन करते हुए टहले और जब तक पूरा समय न हो जाय तव तक न रुके। अगर आप रोज इस तरह अपनी कोशिश मे डटे रहेगे तो इस लडाई को अवश्य जीत लेगे।

३८——मै आपकी कठिनाई को समझता हूँ, लेकिन आपके लिये, जहाँ तक सम्भव हो, अपने समाज के लोगो के साथ निभाये रखना अच्छा होगा। अगर जो कुछ वह खुद कर रहा है ठीक है, तो और लोग क्या कहते है इसका एक सत्सगी को वुरा नही मानना चाहिये। सत्सग तथा सन्त-मत के सिद्धान्तो और उपदेशो के अनुसार शुद्ध मति और ईमानदारी के साथ काम करने की कोशिश करे। अपना भजन-सुमिरन नियत रूप से करते रहे और अन्तर मे सत-गुरु से प्रार्थना करे।

३९—आपने जो समस्या सामने रखी है, उसके बारे में मै यही कहूँगा कि अपने उन मित्रो के साथ जो कि सत्संगी नही है, मेल-जोल रखने और खाना खाने पर कोई रोक नही है; हालाँकि सन्त-मत के सिद्धान्तो के अनुसार हमें ज्यादा-तर सत्सगियों के साथ मेल-जोल रखने की कोशिश करना चाहिये। यह तो करीब-करीब असम्भव ही है कि गैर-सत्संगी मित्रों के साथ भोजन करना व मेल-मुलाकात रखना बिलकुल ही बन्द कर दिया जाय। लेकिन फिर भी हमें अपने उसूलों में ढील नही करना चाहिये। इससे शायद कभी-कभी कुछ कठिनाइयाँ उत्पन्न हो, पर अन्त मे वे हमारे दृष्टिकोण और विचारों की इज्जत करेगे।

परमार्थ में तरक्की, हमारे मन की अवस्था पर निर्भर करती है। सो, अगर हमारे मन पर सन्त-मत के उसूलो के खिलाफ़ कोई असर नही होता है, तो ऐसे मेल-जोल मे कोई हरज नही। पर इसका एक और पहलू भी है और वह है आपके पति का दृष्टिकोण। पति-पत्नी के बीच पारिवारिक सुख और सहमति का वना रहना, मित्रों के मेल-जोल से ज्यादा जरूरी है। इसके सिवाय, अगर घर में शान्ति नही है, तो इसका भजन और रूहानी तरक्की पर भी बुरा असर पडता है। इसलिये, मैं आपसे यही कहूँगा कि प्रेम के साथ इस विषय पर अपने पति से चर्चा करें और अगर हो सके तो उन्हे मनाने का प्रयत्न करे, नही तो उनकी राय पर चले। कृपया किसी ऐसी बात को लेकर, जिसे आपके पति बहुत महत्व देते हों, कोई कठिनाई पैदा करने की कोशिश न करें।

४०—मै आपकी कठिनाइयों को समझता हूँ और मुझे खुशी है कि आप फिर भी मेरी राय पर चलते हुए, अपने पति के विचारों के अनुसार व्यवहार करने का प्रयत्न कर रही है। आपकी मानसिक पीड़ा खास कर इसीलिये है कि

आप इस स्थिति को कुछ सकोच या झिझक के साथ स्वीकार कर रही है। भले ही आप सही भी हों, परन्तु और सबके तथा खासकर आपके हित को देखते हुए यही उचित होगा कि आप अपने पति के साथ एकता बनाये रखे और उन्हे ऐसा न लगने दे कि आपके विचार उनसे अलग है। शुरू-शुरू में यह आपके लिये कुछ कठिन हो सकता है, पर अन्त मे इससे आपको अपने सांसारिक तथा आध्यात्मिक जीवन, दोनो में ही सहायता मिलेगी।

आपको नाराजी-भरी रजामन्दी से नही, बल्कि प्रेम तथा नरमी के साथ अपने पति को मना कर वापस उनकी खुशी प्राप्त करना है। इससे अवश्य ही उनके रुख और व्यवहार मे परिवर्तन आयेगा और तब सब-कुछ बिलकुल ठीक हो जायेगा। जब-जब भी आप किसी परिस्थिति को स्वीकार करने मे असमर्थ हो या परेशानी या गुस्से का अनुभव करें, तब अगर हो सके तो कम से कम कुछ मिनिटो के लिये ही समय निकालकर एकान्त मे बैठ जाये और सुमिरन व भजन करे। इससे आपको बड़ी शान्ति मिलेगी।

मुझे खुशी है कि आप कभी-कभी घण्टियों की धुन सुनती है और वह भी नाम लेने के बाद इतनी जल्दी ही। अगर आप अपने ध्यान को दोनो आँखो के बीच मे जमाकर काफी सुमरिन और भजन करेगी तो आप घण्टियो की धुन और अधिक बार तथा अच्छी तरह से सुन सकेगी। फिर कुछ समय बाद आपको दर्शन भी होगे।

कृपया मन की जिद और चालाकियों से हताश न हो। मन का तो यह स्वभाव ही है। पर इसके स्वभाव को जानते हुए हमे इसे वश मे करना और बदलना है। विश्वास व प्रेम के साथ हमेशा याद रखे कि सतगुरु सदा अंग-संग है और सघर्ष मे लगे हुए अपने शिष्यों की सहायता करते है।

४१——मुझे खुशी है कि आप प्रतिदिन ढाई घण्टे अभ्यास कर रही है। यह मन एक अड़ियल घोडे के समान है, जो युगो से इन्द्रियों के चलाये चल रहा है। इन्द्रियो के बजाय आत्मा की सवारी मे रहने की इसकी आदत डालने के लिये काफी समय तक इसे सिखाने और फेरने की जरूरत है। अगर हम सतगुरु के आदेशों का ईमानदारी के साथ पालन करते रहे, तो सब-कुछ हो जायेगा।

घण्टे की धुन बहुत अच्छी है, पर क्योकि मन बाहर सांसारिक बातो से परेशानी और झुँझलाहट का अनुभव करता है, इसलिये यह ऊपर खिच नही पाता। जब धीरे-धीरे आप बाहर की बातो की परवाह न करना या उन्हे कम महत्व देना सीख जायेंगी, तब शब्द आपको ऊपर खीच लेगा और बहुत आनद प्रदान करेगा। हाँ, प्रकाश भी कभी-कभी दिखाई देता है, पर यह विभिन्न लोगों को विभिन्न तरह से दिखता है। कुछ लोग पहले प्रकाश देखते है और शब्द को काफी देर के बाद सुनते है, कुछ लोग पहले शब्द सुनते है और प्रकाश आदि बहुत बाद मे देखते है। पर इससे आपको किसी तरह की भी चिन्ता नही होनी चाहिये। दोनो आँखो के बीच में अपने ध्यान को स्थिर कर के अपनी निरत को बलवान बनायें और साथ ही मन की तवज्जह से पाँच पवित्र नामो का सुमिरन करती रहे। वास्तव में सुमिरन करने का यही ठीक तरीका है। आपको ध्यान और एकाग्रता के द्वारा भी शब्द को और अच्छी तरह सुनने मे मदद मिलेगी। जब भी आप देखे कि बाहर की बाते आपकी इच्छा के अनुकूल या मन-पसन्द नही है तो कुछ मिनिटों के लिये मन मे नाम के सुमिरन की कोशिश करे, तब झुँझलाहट और निराशा का भाव या तो बिलकुल चला जायेगा या बहुत कम हो जायेगा।

हँसने और खुश होने मे कोई हरज नही है। बल्कि,

प्रसन्न-चित्त रहना, हर हालत में अपने सतगुरु का ख़याल बनाये रखना तथा अपने भाग्य पर सन्तुष्ट रहना, बहुत अच्छे गुण है। हमारे लिये जिस समय जो भी उचित है, उसी के अनुसार, गुरु ही हमें सुख भेजते है, वे ही हमे दुःख भेजते है। फिर भी मै आपको बता दूँ कि जब आप शब्द के साथ काफी देर तक सम्पर्क में रहने लगेगी तो आप कभी भी अकेलापन महसूस नही करेगी, बल्कि आप अकेले रहना अधिक पसन्द करेगी ताकि आप उस शब्द की आनन्ददायी संगति में रह सके, जो कि सतगुरु का असली स्वरूप है। जब आप बीमार हो या बिस्तर मे पड़ी हों और अकेलापन महसूस करे तो अपने मन को या तो सुमिरन में या कुछ अच्छी पुस्तको के पढने मे लगाये। अगर आप अपने बच्चों को कुछ समय दे सके और उनमे सक्रिय रुचि ले सकें तो आप व्यस्त रह सकेगी और आपको अपने अकेलेपन को हटाने में सहायता मिलेगी। इसका अर्थ यह नही कि आप उनके साथ भाग-दौड़ करे, आप उनके कार्यो से उसी सीमा तक आनन्द ले और उनकी देखरेख करे, जहाँ तक कि इसका आपके स्वास्थ्य पर कोई विपरीत असर न पड़े।

४२—एकाग्रता केवल धीरे-धीरे ही आती है, पर इस ओर की गई कोशिश कभी खाली नही जाती। अनेक वर्षो से, बल्कि शताब्दियो या युगो से मन बाहर फैल रहा है, इसलिये इसे एकाग्र करने और समेट कर ऊपर लाने मे भी कुछ समय लगेगा। आपको कभी निराश नही होना चाहिये और न यह सोचना चाहिये कि कुछ भी बन नहीं रहा है। अगर आप बहुत थक जाये तो कुछ मिनिटो के लिये आराम करके फिर से बैठ जायें।

जैसे एकाग्रता बढ़ती है, शब्द भी अधिक साफ सुनाई देने लगता है। ज्यों-ज्यो आप सुरत को आँखो के बीच में

एकाग्र करना शुरू करेंगे, त्यों-त्यों निराशा और मायूसी के भाव धीरे-धीरे कम होते जायेंगे, क्योकि तब विचारों की धारा बाहर के बजाय अन्दर की ओर अधिक हो जायेगी। संसार के दु.खों व झंझटो से बचने का केवल यही एक निश्चित उपाय है।

४३---इस बात की चिन्ता न करे कि आप डेरे से इतनी दूर रहते है। वास्तविक सतगुरु तो शब्द है और जब सुरत शब्द में लीन होती है, तब हम न सिर्फ सतगुरु से भेट करते है, बल्कि उनमे समा कर एक हो जाते है।

४४---जब कभी एकान्त न मिल सके, तब बेहतर यही है कि बिस्तर में जाकर लेटे-लेटे सुमिरन किया जाय; और कभी कभी, अगर आप कर सके तो, दाहिने कान को ढक कर शब्द को सुने। "पैदल चलना, चुपचाप बैठे रहने से कही बेहतर है।" आपकी हरएक कोशिश से कुछ न कुछ फासला तो तय होता ही है।

४५---जहाँ तक भजन-सुमिरन का सवाल है, हमें अपना कर्तव्य करते रहना चाहिये और बाकी सतगुरु पर छोड़ देना चाहिये। हमारे अन्दर की वह शक्ति अचूक और न्यायपूर्ण है; वह सबको अपनी-अपनी मेहनत का हमेशा उचित पुरस्कार देती है। जितना समय आप भजन में बैठते हैं और मन के साथ जो संघर्ष करते है, सब-कुछ लेखे मे लिया जाता है। आपको तो सिर्फ़ इतना ही करना है कि आप प्रेम के साथ और बिना किसी तनाव के भजन-सुमिरन को पूरा समय देते रहे, जैसा कि आप अभी कर रहे है। भजन में बैठने से पहले "सार-बचन" में से एक शब्द या सन्त-मत की अन्य पुस्तको में से कुछ पृष्ठ पढ़ना, मन को एकाग्र करने में बहुत सहायक होता है। उस समय अगर किसी तरह के विचार आपको परेशान करें, तो अपने मन से कहें कि आप

उन पर भजन के बाद ही ध्यान देगे । और फिर जब तक भजन का समय न बीत जाये, उनकी परवाह न करे । कृपया घबराये नही, बल्कि जैसा कि सन्त-मत का नियम है, अपने आप को सतगुरु की शरण मे छोड़ दे । उचित समय पर सब-कुछ हो जायेगा ।

४६——दया और मेहर अन्दर से आती है । जितना अधिक आप अपने ध्यान को अन्दर की ओर मोड़ेगी और शब्द को सुनेगी, उतनी ही अधिक दया-मेहर बरसेगी ।

आप पूछती है कि जब सुरत या आत्मा शब्द के सम्पर्क मे आने लगती है तब दर्शन क्यों नही होते ? दर्शन तभी होते है जब सुरत शब्द मे समा कर एक हो जाती है, सिर्फ़ तब ही स्वरूप आता और ठहरता है । अब, जब कि आपको नीद मे और कभी-कभी भजन मे भी दर्शन हो रहे है, तो आपको प्रसन्न होना चाहिये । जहाँ तक भजन मे लगातार हर रोज दर्शन होते रहने का सवाल है, आप प्रेम, विरह और अभ्यास के उन्ही साधनो से दर्शन पाने की कोशिश करे, जिनसे कि आपको ये दर्शन मिले है ।

जब सुरत अन्तर मे जाना शुरू करती है और शब्द के साथ सम्पर्क जोडती है, तब काल और मन भी सक्रिय और होशियार हो जाते है और कई तरीको से ध्यान को ऊपर जाने से रोकने की कोशिश करते है । वास्तव में यह सिलसिला, कम या अधिक मात्रा मे, उस समय तक चलता रहता है जब तक कि हम मन की सीमा को लाँघ नहीं जाते । स्वामीजी महाराज चेतावनी देते है कि हमे भजन करते समय होशियार रहना चाहिये और मन तथा उसके एजेण्टो की चालाकियों से बचते रहना चाहिये । लगातार सुमिरन, गुरु का ध्यान और शब्द का अभ्यास हमारे सबसे बडे रक्षक है ।

४७--आपकी कठिनाई के बारे में सुनकर मुझे दु.ख हुआ। असल मे मुझे आप और आपके पति में कोई मत-भेद दिखाई नही देता। यह केवल किसी स्थिति को देखने का एक ढंग मात्र है। जैसा कि आप जानती है, विवाह का अर्थ है सहनशील होना और एक-दूसरे को समझना। हमें छोटी-सी बातो को लेकर बड़ी समस्या बनाने की कोशिश नही करनी चाहिये और न ही उनमें डूबे रहना चाहिये। हरएक बात को एक व्यावहारिक दृष्टि से देखे। जब तक आपस में पूरा मन का मेल और एक दूसरे को समझने के भाव न हों, निभाना कठिन होता है।........आप जानती है कि हमें सन्त-मत के उसूलों के अनुसार किस प्रकार अपना जीवन बिताना है। आपको (घर मे) अपना फर्ज अदा करना है और प्रेम तथा नम्रता के साथ रहना है। परन्तु ऐसा करते हुए जहाँ तक हो सके अपने खयाल को शब्द में लगाये रखे। पत्नी होने के नाते आपके जो कर्तव्य है उन्हे पूरा करने मे इससे आपको सहायता मिलेगी, बल्कि यह आपको एक आदर्श पत्नी बना देगा।

४८--अगर मनुष्य सच मे ही सब-कुछ मालिक की मौज पर छोड़ दे तो बहुत अच्छा है। पर वह केवल बाहर से ही ऐसा करता है, उसके मन मे समय-समय पर कई विचार उठते रहते है। सब-कुछ उसकी मौज पर छोड़ देने का अर्थ है मालिक की रजा मे राजी रहना और जो कुछ भी आये उसे स्वीकार करना।

४९--सत्सगी को दिन के बाकी समय में भी, बल्कि किसी भी समय जब कि वह किसी कार्य में व्यस्त न हो, सुमिरन करने की आदत डालना चाहिये। यह कुछ समय के बाद आन्तरिक सुमिरन मे बदल जायेगा जिसे स्वचालित या अपने आप चलते रहने वाला सुमिरन कहते है। ऐसे सुमिरन

के समय आपको आँखे बन्द करने की या किसी आसन में बैठने की जरूरत नही। लेकिन अपने रोज के अभ्यास के समय पवित्र नामो को दोहराते हुए दोनो आँखो के बीच अपनी तवज्जह को ठहराने की पूरी कोशिश करना चाहिये। इसी प्रकार, जब कभी इस ससार मे किसी अप्रिय या दु:ख-पूर्ण परिस्थिति का सामना करना पड़े या किसी कठिनाई को पार करना हो, उस समय हमे पवित्र नामो का सुमिरन और सतगुरु का ध्यान करना चाहिये। अगर ठीक तरह से किया जाय तो इससे सात्वना व तसल्ली मिलेगी।

५०——ध्यान को एकाग्र करने का यह अभ्यास आध्यात्मिक और शारीरिक, दोनो तरह से लाभदायक है। पर हम इस अभ्यास को किसी रोग या बीमारी के इलाज के लिये नही अपनाते है। और न कभी यह कहा गया है कि राधास्वामी मार्ग के ध्यान व अभ्यास को अपनाने से कोई शारीरिक दोष दूर होगे। यह मार्ग रूहानी उन्नति के लिये तथा आत्मा की धारा को (जो अभी सारे शरीर मे फैली हुई है) ऊपर उठा कर मस्तक में अपने उस केन्द्र पर लाने के लिये है, जहाँ से कि वह दिव्य शब्द को ग्रहण करती है।

५१——मन की चचलता के बारे मे आपने जो कुछ कहा है, ठीक है और यह परेशानी अक्सर कई सत्संगियों को होती है, लेकिन अभ्यास के द्वारा मन को वश में किया जा सकता है। यह चंचलता, हमारी बाहरी संसार मे दिलचस्पी और हमारे सम्बन्धो तथा राग-द्वेष के भावों से पैदा होती है और जिस समय हम मन को स्थिर करना चाहते है, ये सब चुपके से ऊपर आ जाते है और हमारे मन रूपी समुद्र में लहरें उठाते है। प्रेम और लगन के साथ अपनी तवज्जह को तीसरे तिल पर जमाते हुए सुमिरन करने से बहुत मदद मिलती है। आपको निराश नही होना चाहिये, बल्कि बार-

बार कोशिश करते रहना चाहिये । फिर भी, अगर भजन के समय विचार और गुनावन आपको परेशान करना जारी रखे तो आप उन्हें दृढ़ता-पूर्वक हटा दीजिये और मन से कहिये कि जब तक आपका भजन का समय पूरा न हो, तब तक चुप बैठे । मन गिरफ्तार होना या बँधकर चलना पसन्द नही करता । यह एक जंगली घोड़े को साधने या ट्रेन करने के समान है, मगर उसे जरूर साधा जा सकता है ।

५२—सत्संगियों को जिगर के सत (लिवर एक्स्ट्रेक्ट) का प्रयोग नही करना चाहिये, लेकिन एक दवा बेचने वाले (केमिस्ट) के पास सभी तरह के लोग आते है । जब तक सत्सगी केमिस्ट ऐसी दवाइयों का खुद इस्तेमाल नहीं करता, उन्हे केवल बेचता ही है, तब तक कोई आपत्ति नही हो सकती । यह मोटे तौर पर एक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाना है ।

आर्थिक समस्याओं का सामना साधारण ढंग से करना चाहिये और उन्हे उसी प्रकार सुलझाना चाहिये जिस प्रकार और लोग सुलझाते है तथा उन्हे भजन-सुमिरन के साथ कभी भी जोडना या मिलाना नही चाहिये । भजन-सुमिरन का तो यह प्रभाव होना चाहिये कि शिष्य इन बदलती हुई परिस्थितियों से ऊपर उठ जाये । आप बड़े भाग्यशाली है कि आपको सरदार बहादुर जी से नाम-दान मिला है । और जैसा कि आप कहते हैं, जब आप अन्दर सहस्त्र-दल कमल तक जायेंगे तब आप उनसे सहायता और राय ले सकेंगे ।

इन सब कठिनाइयो से छुटकारा पाने का यही अचूक उपाय है कि जहाँ तक हो सके भजन-सुमिरन में अधिक से अधिक समय दिया जाय और शरीर को खाली किया जाय ।

५३—जो कुछ हुजूर महाराज जी ने आपको नाम-दान के समय बतलाया था, उसकी याद दिलाने से अच्छा सन्देश

मैं नही दे सकता:—इन्सान की जिन्दगी कीमती है और हजारो वर्षो के बाद ही हमारी मनुष्य-जन्म पाने की वारी आई है। इस अवसर को खोना नही चाहिये और उस प्रत्येक मिनिट को जो कि आप अपने काम-काज निपटाने के वाद बचा सके, भजन-सुमिरन मे लगा देना चाहिये ताकि आप जल्द ही अन्दर जायें और इस प्रकार अपने जन्म-मरण के चक्कर को समाप्त कर ले।

५४—आपने ऊँचे अफसरों के सामने मामले की असली बातों को पेश करके तथा अपने प्रतिनिधित्व या नुमाइन्दगी के बारे मे इन्तिजाम करने के लिये अर्ज करके अच्छा किया है। अगर कोई भी गलत-फहमी पैदा हो गई हो तो आपको उसे दूर करने की कोशिश करनी चाहिये और अपने मामले को बगैर पैरवी के नही जाने देना चाहिये। परेशान होने या चिन्ता करने से कभी किसी को कोई मदद नही मिली है। अपनी स्थिति को स्पष्ट करने या सुधारने के लिये आपको उचित कदम उठाने चाहिये और अन्तर में सतगुरु से प्रार्थना करनी चाहिये।

५५—वह (सतगुरु) जानता है कि हमारे लिये सवसे अच्छा क्या है। जो बात हमारी रूहानी तरक्की के लिये बहुत अच्छी है, हो सकता है कि वह भौतिक या दुनियावी दृष्टि से अच्छी लगने वाली न हो। फिर भी, हमे अपने कर्तव्यों को निभाने की कोशिश मे कोई कसर नही छोड़ना चाहिये और नतीजा–चाहे वह सफलता हो या असफलता–पूरी तरह से सतगुरु के हाथों मे छोड देना चाहिये।

५६—अपने सतगुरु के भण्डारे के पुण्य अवसर पर मौजूद होने की आपकी इच्छा को मै अच्छी तरह समझता हूँ। लेकिन, संसार में हमे ऐसे कई जरूरी कामो को भी निभाना है जिन्हे कि टाला नही जा सकता। सतगुरु हमारी

भावनाओ को समझते और हमारे विचारों को जानते हैं, पर संसार के लोग तो नही जानते। इसलिये, हमें उनके प्रति अपने कर्तव्यों को निभाने और जिम्मेदारियो को पूरा करने का अधिक ख़याल रखना चाहिये। आपने जो उस दिन के बारे मे इतनी प्रबलता के साथ सोचा और यहाँ उपस्थित होने की तीव्र लालसा की, वही अपने आप में काफी है क्योंकि मन से आप यही थे।

जैसा कि आपके सतगुरु ने आपको बताया ही होगा और आपने सत्संगों मे सुना और पुस्तको मे पढा होगा, सत्संगी के लिये सबसे महत्वपूर्ण बात है नियम-पूर्वक भजन सुमिरन के द्वारा आत्मिक-शान्ति, संसार से अनासक्ति और शब्द में आसक्ति प्राप्त करना। सुमिरन या पांच पवित्र नामो का जाप इस सम्पूर्ण साधना का आधार है। और यह किसी भी मनुष्य के द्वारा किसी भी अवस्था मे किया जा सकता है——चाहे वह चल-फिर रहा हो, चाहे बिस्तर मे लेटा हो। जरूरत सिर्फ ध्यान को बाहर की ओर से मोड़कर अन्तर की ओर लगाने की है। धीरे-धीरे यह एक आदत बन जाती है। तब आप देखेगे कि अपने ध्यान को अन्तर की ओर मोड़ना, वहाँ ठहरना और शब्द-धुन को (जो कि आपको पार ले जायेगी) पकडना पहले से कही आसान है। जितनी अधिक कोशिश आप अपने ध्यान को दोनो आँखो के बीच में एकाग्र करने की करेंगे, आपकी आन्तरिक दृष्टि भी उतनी ही अधिक बढती जायेगी।

स्वामीजी ने भी कहा है कि अगर किसी के लिये सत्सग मे शरीक होना सम्भव नही है, तो उसे वह समय पुस्तकों के पढने, भजन-सुमिरन करने और ध्यान को एकाग्र करने मे देना चाहिये। जब कभी अवसर मिले आप यहाँ आ सकते है। परन्तु, अगर आप किसी ख़ास दिन पर नही

आ सकते तो कृपया इसकी चिन्ता न करें।

५७—हमे इस संसार मे इसीलिये भेजा गया है कि यहाँ आकर अपने अन्तर मे परमात्मा को प्राप्त करे। हम खुद को जिन परिस्थितियों में भी पाते है, वे हमारे पिछले कर्मो की वजह से है; और जब तक हम मालिक की मौज मे चलने की कोशिश करते है, चाहे उसके प्रिय या अप्रिय कैसे भी नतीजे हो, तब तक हमें अपनी रूहानी तरक्की में मदद मिलती है। वापस अपने परमपिता के घर जाना ही हमारे मनुष्य-जन्म का मुख्य उद्देश्य है। और सब काम तो हम सिर्फ ससार में अपने गुजारे के लिये करते है। पर ऐसा करते हुए हमें अपने उस परमपिता को नही भूलना चाहिये जिसने हमें ये सब वस्तुएँ दी है।

आप बड़े खुशनसीब हैं कि आपको अपने ही अन्तर में सतगुरु को प्राप्त करने का भेद बता दिया गया है। इसलिये आपसे जितना भी हो सके उतना समय भजन और सुमिरन में दे, क्योंकि अपने को निर्मल व साफ करने और मुक्ति को पाने का यही एक रास्ता है। हम इस ओर जितनी अधिक कोशिश करेगे, अपने अन्तर मे उतनी ही अधिक सतगुरु की दया, मेहर व बख्शिश प्राप्त करेगे।

सतगुरु हमारे अन्तर मे है, बहुत ही पास है, किन्तु बीच मे मन का पर्दा पडा हुआ है। अगर हम अपने मन-मन्दिर को साफ करके खाली कर दे और प्रेम तथा आशा के साथ उनकी बाट देखे, तो अवश्य ही वे हमे दर्शन देना मंजूर करेंगे। मन को निर्मल करने का सबसे अच्छा तरीका है प्रेम और भक्ति के साथ पाँच पवित्र नामो के सुमिरन के द्वारा शरीर के नौ द्वारो को खाली करना। विश्वास और निराशा आपस में दो विरोधी बाते हैं। सच्चा सुख तो अपने आप को अन्तर में सतगुरु के हवाले कर देने और उनकी शरण लेने मे ही

है। इसलिये कृपा करके और अधिक विश्वास तथा प्रेम के साथ अपने आध्यात्मिक अभ्यास को जारी रखें। अन्तर में मौजूद सतगुरु बाकी हर बात का ख़याल रखेंगे। नतीजा उनके हाथो मे है तथा जो कुछ भी होगा, आपके आत्मिक लाभ के लिये ही होगा।

५८—सारा जीवन ही धूप-छाँह का खेल है। तूफ़ान जरूर आते है और चले जाते है, पर उनसे हमें डोलना नही चाहिये। अगर हम अपना प्रतिदिन का कर्तव्य पूरा करते है, अर्थात भजन को पूरा समय देते है (जैसा कि हमने नाम लेने के समय वचन दिया था), तो हम में बल और भरोसा आयेगा और सतगुरु में विश्वास होने के कारण हमारा मन शान्त और अडोल रहेगा। सतगुरु सदैव हमारी सहायता करते है, हमें सहारा देते है। अगर हम नियमित रूप से भजन-सुमिरन करते है तो जो कुछ भी सतगुरु हमारे लिये कर रहे है उसे हम देख सकते है, महसूस कर सकते है। मुझे खुशी है कि आपने पूरी लगन के साथ अभ्यास शुरू कर दिया है और कोई वजह नही कि आप तरक्की न करे।

५९—आप ठीक कहते है, जीवन न केवल नीरस ही है, बल्कि सचमुच जीवन में मनुष्य अकेला भी है। वह यह महसूस करने की कोशिश करता है कि उसके कोई साथी है, पर ऐसा भी वक्त आता है जब वह अनुभव करता है कि संसार मे वह अकेला आया था, अकेला ही है और उसे यहाँ से अकेले ही जाना पड़ेगा। वास्तव में इस संसार में ऐसा कोई भी सुख या लुत्फ नही है जो कि आखिर, किसी न किसी रूप मे, अपने साथ दुःख को न लाता हो। अगर यहाँ कोई मन की शान्ति है तो वह सांसारिक सफलताओं मे या सासारिक मोह में नही है। वह केवल नाम में है। आप बड़े भाग्यशाली है कि आपको महाराज जी (बाबा सावनसिह

जी महाराज) से नाम मिला है और आपको इसका ज्यादा से ज्यादा फायदा उठाने की कोशिश करना चाहिये ।

६०—मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आपको हुजूर महाराज जी (बाबा सावनसिंह जी महाराज) से नाम मिला हुआ है । आपको यह नही भूलना चाहिये कि यह एक दुर्लभ बख्शिश है और आपको जहाँ तक हो सके ज्यादा से ज्यादा समय भजन-सुमिरन में देने की कोशिश करना चाहिये । अगर आप गुमराह हो गये है या अपने पथ से भटक गये है तब तो और भी जरूरी है कि आप भजन मे पहले से अधिक समय दे । वे (महाराज जी) आपके अन्दर है और बेहतर होगा कि आप उनसे क्षमा की याचना करे ।

सांसारिक बातो में—यहाँ तक कि अच्छी से अच्छी परिस्थितियो में भी—कोई सुख व लुत्फ नही है । फिर भी अपने परिवार की और अपनी देख-भाल के लिये आपको पूरी मेहनत करना चाहिये और भजन-सुमिरन को काफी समय देना चाहिये ।

६१—जब तक आप पूरी तरह से स्वतन्त्र न हो, तब तक अपनी नौकरी बदलने या डेरे मे आकर बसने के बारे में जल्दबाजी करने की कोशिश न करे । यह एक बहुत अच्छी कामना हो सकती है, पर सतगुरु मे हर वक्त पूर्ण विश्वास रखते हुए तथा प्रेम के साथ अपने भजन-सुमिरन को नियम-पूर्वक निश्चित समय पर करते हुए, जो कुछ हो रहा है उस पर सन्तोष रखें ।

आपने जिस बात का वर्णन किया है, वह अच्छी है, पर आप लगन-पूर्वक जुटे रहे और किसी भी तरह के विचारों को भजन के समय बाधा न डालने दें । यह अच्छा है कि आपको प्रकाश के श्वेत खण्ड दिखाई देते है, पर आपको इनके बारे मे सोचना नही चाहिये; आप केवल स्थिरता के साथ

देखते रहें और जो सामने नजर आये उसे द... ...या-मेहर पर पर शब्द और प्रकाश दोनों स्पष्ट हो जायेंगे। अ... ...ी कई पर लोग घण्टे की धुन को पकड़ने से पहले दूसरी मामू... आवाजे सुनते हैं। इसलिये, आपको इससे चिन्तित नही होना चाहिये। दाहिने कान से जो भी आवाज आती हो उसे सुने और अगर आपको एक से अधिक आवाजे सुनाई देती हो तो नीचे की मामूली आवाज को छोड़कर स्पष्ट और आकर्षक आवाज़ को पकडे, तब आप घण्टे की धुन तक पहुँचेगे।

६२––सतगुरु कभी नही मरते। उनकी शक्ति वही है जो पहले थी और जिन शिष्यो को उन्होंने नाम-दान दिया है, उनकी वे अब भी सँभाल करते है। अगर हम इसे नहीं समझते, तो दोष हम मे ही है, क्योकि हम अपना कर्तव्य पूरा करने की कोशिश नही करते और अन्दर नही जाते। इस हालत में न तो हम सतगुरु से सम्बन्ध जोड़ पाते है और न यह देख पाते है कि वे हमारे लिये क्या कर रहे है।

सतगुरु की शक्ति उनके स्थूल शरीर के छोडने के साथ ही चली गई है या नही, इस बारे मे अन्दाज लगाने के बदले यह बेहतर होगा कि आप पूरे विश्वास और प्रेम के साथ प्रतिदिन, कम से कम ढाई घण्टे, बिना नागा भजन-सुमिरन करके अपना कर्तव्य पूरा करते रहे। और इस प्रकार, उन कर्मो को, जो आपका रास्ता रोके हुए है, समाप्त करने का प्रयत्न करे और अन्दर जाये। सहायता और मार्ग-दर्शन आपको अन्दर से मिलेगे, सतगुरु हरदम वहाँ मौजूद है और आपकी बाट देख रहे है कि कब आप चेतंन होकर उनसे मिलेगे।

एक अच्छा सत्सगी, प्रसन्नता के साथ अपने प्रारब्ध या होनहार को स्वीकार करते हुए और यह जानते हुए कि

जी महारा ... जिम्मेवार वह खुद है, अपना विश्वास
से ... ुरु में रखता है और न केवल रोज के
... अपना सारा खाली वक्त भजन-सुमिरन में
...ा उद्देश्य परमात्मा की प्राप्ति है, सासा-
...प्राप्ति नही; किन्तु अगर कोई प्रेम के साथ
... पूरा करता है तो उसे दोनो ही प्राप्त हो
जात...

६३—आम तौर पर हम ऐसी दवाइयों के इस्तेमाल के पक्ष मे नही है जिनमें कि ज्यादा मात्रा में अलकोहल या शराब हो। होम्योपैथिक दवाइयाँ, जिनकी केवल कुछ बूँदे ही ली जाती है, इसमें शरीक नही है। उस टानिक के बारे मे जिसका आप इस्तेमाल कर रहे है, अगर हो सके तो उसकी जगह दूसरी दवा ढूँढने की कोशिश करे। पर अगर उसकी एवज़ में कोई ऐसी दवा न मिले जिसमें अलकोहल की मात्रा और जिसकी खुराक कम हो, तो आप उसे तब तक ले सकते है जब तक कि वह बिलकुल ही जरूरी हो। कृपया यह भी याद रखे कि टानिको का प्रयोग केवल तब किया जा सकता है जब कि शरीर दुर्बल हो और आप अपने कर्तव्यो को ठीक तरह से पूरा न कर सकते हों। ऐसी हालत में आपका मुख्य उद्देश्य यही होना चाहिये कि आप इस संसार मे अपने कर्तव्य करने के लायक हो जायें और नियमित रूप से अपना भजन-सुमिरन भी कर सकें। आशा है, इसमे आपके प्रश्न का उत्तर आ गया है।

६४—मै आपकी कठिनाइयों और उन परिस्थितियो को जिनमें से आप गुजर रहे है, अच्छी तरह समझता हूँ। पर आप जानते ही है, हम अपने कर्मो के फल को टाल नही सकते, चाहे वे इस जन्म के कर्मो के फल हों चाहे पूर्व-जन्मों के। सत्संगियों को धैर्य और प्रसन्नता के साथ अपने सतगुरु

के आदेशो का पालन करते हुए और उनकी दया-मेहर पर भरोसा रखते हुए उन्हे भुगत लेना चाहिये। वे हमारी कई तकलीफो को कम से कम कर देते है। जो हम भुगत रहे है वह तो हमे दिखाई देता है लेकिन जिनसे हमे बचा दिया गया है, उन्हे नही देख पाते। आपको सतगुरु की दया-मेहर पर भरोसा रखते हुए नौकरी पाने की कोशिश करते रहना चाहिये। जब समय आयेगा, आपको अपने प्रयत्नों का फल मिलेगा। चाहे ऐसा करना मुश्किल लगे तो भी इन सब कठिनाइयों मे कभी भी सतगुरु को न भुलायें और न ही अपने प्रतिदिन के भजन-सुमिरन को छोडे।

६५—आप चाहे किसी के भी सत्संग में जा सकते है। एक गैर-सत्संगी के लिये सत्संग सुनने का उद्देश्य होता है सन्त-मत के बारे में, अपने बारे में और अन्य विषयों के बारे में ज्ञान प्राप्त करना। पर सत्संगी के लिये उसका उद्देश्य है मन को एकाग्र करना और जहाँ तक बन सके अधिक से अधिक समय भजन-सुमिरन में देना।

महाराज जी (बाबा सावनसिंह जी महाराज) ने बडी दया करके आपको नाम बख़्शा हुआ है और अब आपके लिये सत्संग का उद्देश्य है भजन-सुमिरन में अधिक से अधिक समय देने की इच्छा को उत्पन्न करना। सत्संग मन को एकाग्र करने में हमारी मदद करता है, हमे महाराज जी की याद दिलाता है और हमें अपनी कमियों व दोषो का अहसास कराता है। जिस सत्संग के द्वारा ये सब बातें नही होती, वह सत्संग किसी काम का नही।

सारे परिवार का सत्संग के लिये इकट्ठे होना बहुत अच्छा है, पर उसके बाद करीब एक घण्टे के लिये भजन मे बैठना हरदम लाभदायक होगा। अगर इस प्रकार के पारिवारिक सत्संग से आपका मन सन्तुष्ट नही है तो आप जिस सत्संग में चाहे जा सकते है।

६६—'काम' बहुत बड़ी ताकत है और इससे बचने का सबसे अच्छा तरीका है कि इसे दवाया न जाय, बल्कि इसकी ताकत को ऊपर की ओर मोड़ा जाय। हुजूर महाराज जी (वावा सावनसिंह जी महाराज), कवीर साहिव के 'काम' पर लिखे दोहों को धीमे स्वर मे पढ़ने की हिदायत दिया करते थे।

अच्छी संगति रखना और अच्छी नैतिक तथा आध्यात्मिक पुस्तकों का पढना भी वहुत लाभदायक है, पर सुमिरन सबसे कारगर तरीका है। देर तक और स्थिरता के साथ किया गया सुमिरन मन को अन्तर-मुखी कर देगा और उसे शब्द के सम्पर्क में ले आयेगा। शब्द ही सार वस्तु है। जव आप इस दिव्य धुन का आनन्द लेने लगेंगे, तो अपने आप मन और इन्द्रियों के स्वादो को भूल जायेंगे।

अगर सुमिरन के समय वासना-पूर्ण विचार आपको परेशान करे, तो अपनी आँखे खोल दें और धीमी आवाज में तव तक सुमिरन करें जव तक कि आपको फिर से आँखें वन्द करना जरूरी न लगे। (धीमी आवाज में यह सुमिरन इस तरह करना चाहिये कि और लोग उसे सुन न सकें)। भजन मे बैठने से पहले महाराज जी से प्रार्थना करें।

६७—अगर आपके कुछ किरायेदार शाकाहारी नही हैं तो इससे आपको परेशान होने की जरूरत नही। आप मकान को किराये पर देने के वाद किरायेदारों पर बन्दिश नही लगा सकते।

६८—मुझे दु.ख है कि आपको जिन्दगी में इन सव कठिनाइयों का सामना करना पड रहा है। संसार से सम्वन्धित किसी भी चीज मे स्थायी शान्ति नही है। अगर हम इनमें शान्ति पा भी लेते है तो वह वहुत कम समय की होती है। एकमात्र सच्ची और स्थायी शान्ति हम तभी पा सकते

है जब कि हम अपने ध्यान को इतना एकाग्र कर लें कि नौ द्वारो को खाली करके शब्द को पकड सके। आपको नाम-दान के समय पूरी हिदायते मिल गई है। अब आपको सिर्फ इतना ही करना है कि जो कुछ आपने सीखा है उस पर अमल करे और उस शान्ति को प्राप्त करने की कोशिश करे।

आपको इतनी लम्बी यात्रा करने की कोई जरूरत नही। आप जहॉ भी है वही अपना समय भजन-सुमिरन मे दे, क्योकि मनुष्य-जन्म पाने का असली उद्देश्य यही है कि हमें शब्द मे लीन होने का मौका मिल सके। अगर आपको इसमें कोई भी कठिनाई हो, तो मै हरदम आपकी सेवा में मौजूद हूँ और आपकी सहायता करने मे मुझे खुशी होगी।

६९——मै आपकी स्थिति को अच्छी तरह समझता हूँ। जो सलाह हमारे महान सतगुरु सत्सगियों को दिया करते थे, मै आपसे वही दोहराऊँगा·——

खुद अच्छे और ईमानदार होना ही काफ़ी नही है। परमात्मा और सतगुरु के सामने ये गुण सहायक होते है, पर दुनिया और दुनिया की परिस्थितियों का मुकाबला करते समय थोड़ी व्यवहार-कुशलता या होशियारी की भी जरूरत है। अपने नियमों का पूरी तरह से पालन करते हुए, हमें अपने मातहतों और अफ़सरो के साथ अच्छे सम्बन्ध बनाये रखना चाहिये और अपने अफसरों को नाराज होने का कोई मौका नही देना चाहिये। यह न केवल एक अच्छी नीति ही है, बल्कि यह आपके भजन-सुमिरन मे भी काफी सहायक होगी, क्योंकि तब आपके ध्यान को बँटाने के लिये कोई चिन्ताएँ न होगी।

७०——वह सत्संगी कितना खुशनसीब है जो अन्तर में सतगुरु के दर्शन और उनकी सहायता का अनुभव करता है। उसे और चाहिये ही क्या ? पर बेशक, घमण्ड बुरी

वात है । अपनी सब कठिनाइयो में और प्रलोभनों के सामने सत्सगी को सतगुरु का ध्यान करना चाहिये और उनकी मदद व सँभाल का आसरा रखना चाहिये । तब कोई घमण्ड, कोई अहंकार नही रहेगा ।

संसार प्रलोभनों से भरा हुआ है और ऊँचे मार्ग पर चलने वाले यात्री को ख़याल रखना चाहिये कि ये प्रलोभन उसके मार्ग मे आयेंगे और उसे परखेंगे । सत्संगियों को इसके बारे मे सावधान रहने की हिदायत दी जाती है । परमार्थ का मार्ग इस दुनिया मे ही नही बल्कि अन्दर भी प्रलोभनो से भरा हुआ है । महाराजजी फरमाया करते थे कि जो मनुष्य इस ससार में प्रलोभनो के सामने झुक जाता है, वह आन्तरिक मण्डलों मे भी उनका मुकाबला न कर सकेगा । प्रलोभन कसौटियाँ है जो हमें यह बताती है कि वास्तव मे हम कहाँ या किस स्तर पर है । फिर भी, अगर मनुष्य एक वार असफल होता है तो उसे फिर कोशिश करना चाहिये, क्योंकि हम गिरते है, पर फिर से उठने के लिये । गिरने के अनुभव से सबक लेकर, और भी अधिक विश्वास और भक्ति के साथ उसको दुगनी लगन और सावधानी से अभ्यास में जुट जाना चाहिये और मन के मोह-जाल से होशियार रहना चाहिये । अगर आप सतगुरु की ओर मुख करेंगे तो वे संकट या खतरे के समय आपको बचा लेंगे, वे आपकी सहायता तथा आपका पथ-प्रदर्शन करेंगे ।

शब्द आपके अन्तर में है । लगनपूर्वक निरंतर सुमिरन और ध्यान करके आप उसके सम्पर्क मे आ सकते है । अगर आप घुड़-सवारी करते या पैदल लम्बी सैर करते समय या ऐसे और मौको पर मन से नामों को दोहराने का अभ्यास करेंगे तो आपको धीरे-धीरे सुरत को तीसरे तिल में ठहराने की आदत हो जायेगी और शब्द भी अधिक आसानी से सुनाई देने लगेगा ।

७१—मैं आपको यह सलाह दूँगा कि आप डेरे आने के बारे में बहुत अधिक चिन्ता न करें, बल्कि जहाँ भी आप है अपना भजन-सुमिरन करते रहें। यों भी मन की भावना ही अधिक महत्वपूर्ण होती है।

नीद आने के बारे में दो बातें हैं—

(१) आपको शारीरिक दृष्टि से उचित आराम करना चाहिये, और

(२) अपने ध्यान को दोनो भौहो के बीच में रखने की कोशिश करें। जब तक आपका ध्यान वहाँ रहेगा, आप नीद से बचे रहेंगे। अगर आप सो जाते है तो इसकी वजह यही है कि आपका ध्यान केन्द्र से गिर जाता है। अभ्यास से सब कुछ आसान हो जाता है।

७२—मुझे खुशी है कि आप नाम की बख्शिश की कद्र करते है। सब-कुछ हमारे अन्तर में है और इसलिये, इस प्रणाली या तरीके का सबसे बड़ा फायदा यही है कि आपको बाहर कही पर भी जाने की जरूरत नही पड़ती। आपको बस इतना ही करना है कि धीरे-धीरे अपने खयाल को समेट कर तीसरे तिल में एकाग्र करने का अभ्यास करे और तब सजग और सचेत रहते हुए उस शब्द को पकड़े जो कि हर जगह व्याप्त है। वह शब्द आपको अपने सच्चे घर ले जायेगा। सतगुरु को ढूँढने और उनसे अन्तर में मिलने का यही असली तरीका है। यह हमारे प्रतिदिन के कर्तव्यों को पूरा करने में कोई बाधा नही डालता। मनुष्य अपनी सुविधा के अनुसार इस अभ्यास मे समय दे सकता है और साथ ही समाज के प्रति अपने कर्तव्यों को भी निभा सकता है।

मुझे उम्मीद है कि जहाँ तक हो सके आप अपने आध्यात्मिक अभ्यास को ज्यादा से ज्यादा वक्त देंगे।

७३—हमे अपनी सुरत को सुमिरन के द्वारा समेट कर तीसरे तिल में लाना है; यह वह स्थान है जहाँ पर साधारण तौर पर मन और आत्मा इकट्ठे रहते है। संसार के कारोबार करने के लिये सुरत यहाँ से उतर कर सारे शरीर में फैल जाती है। यह एक कुदरती इन्तिजाम है।

गहरे चिन्तन, भावो के आवेश और किसी आघात के अवसरो की छोड़कर, साधारण लोगो में यह सुरत की धार कभी बिरले ही ऊपर जाती है। पर सत्सगियो को इस सुरत की धारा को धीरे-धीरे शरीर से समेट कर रोज केन्द्र पर लाने का अभ्यास सिखाया जाता है। जव यह पूर्ण हो जाता है—अर्थात जब पूरी चेतनता को ऊपर समेट कर शरीर को खाली कर दिया जाता है—तव उतनी देर के लिये शरीर मुर्दे के समान हो जाता है। पर जव भजन की उस बैठक का निश्चित समय पूरा हो जाता है, तव सुरत या चेतनता फिर से लौट आती है। इससे शरीर को या बौद्धिक शक्तियों को कोई नुक्सान नही पहुँचता, वल्कि वे अधिक मजबूत और तेज हो जाती है।

जव सुरत पूरी तरह से सिमट जाती है तभी हम शव्द को सच्चे माने मे पकड़ते है। एक वार इस अवस्था में पहुँचने पर फिर शव्द से सम्पर्क नही टूटता। नही तो, इससे पहले यह सम्पर्क वीच-बीच मे टूटता रहता है, क्योकि अभी शव्द से सम्वन्ध गहरा और पूरा नही है।

जव-जव आप भजन मे बैठें और ध्यान को एकाग्र करना कठिन पाये तो "सार बचन" या किसी अन्य सन्त-मत के साहित्य से एक शव्द पढे और फिर भजन में बैठे। आप इसे बहुत उपयोगी पायेगे। सतगुरु सदैव वहाँ—अन्तर में—है, पर हमारी सुरत फैली हुई है इसलिये हम उनसे मिलाप नही कर पाते।

७४––भूत-प्रेतों आदि के बारे मे लोगों ने आपसे जो कुछ भी कहा हो, उस पर ज्यादा ध्यान न दे । चाहे कुछ भी बात हो, अगर आप प्रेम और विश्वास के साथ अपने ध्यान को सुमिरन में रखेगे, तो कोई भी बाहरी शक्ति आपको परेशान नही कर सकेगी और न कोई नुक्सान ही पहुँचा सकेगी । सतगुरु अपने शिष्यों की रक्षा और उनके मार्ग-दर्शन के लिये हमेशा मौजूद है ।

हाँ, भजन में सत्संगी सतगुरु को बिलकुल आमने-सामने देख सकते है, पर केवल तभी जब कि वे तीसरे तिल तक पहुँच जाये या जब सतगुरु अपनी कृपा व दया-मेहर से उन्हें कभी-कभी तल्लीनता की अवस्था मे या स्वप्न में दर्शन दे दे । आम तौर पर, एक सत्संगी को अपने भजन-सुमिरन में हर रोज ढाई घण्टे का वक्त देना चाहिये, जैसा कि नाम-दान के समय हमेशा जोर देकर समझाया जाता है । जब आप सिर्फ चालीस मिनिटो के लिये ही बैठते है तो आपको दर्शन की उम्मीद नही करना चाहियें, क्योकि इतना समय तो मन को स्थिर करने मात्र के लिये भी काफी नही होता । सतगुरु हमारे अन्तर में है, पर उनके दर्शन करने के लिये हमें सुमिरन के द्वारा अपने मन को बाहरी वस्तुओं से तथा अपने शरीर से वापस समेटना है । अगर आप नियमित रूप से जमकर अभ्यास करते रहेगे, तो एक दिन आपको उनके दर्शन होगे । अगर आपके मन के आगे बुरे-बुरे दृश्य आते है, तो उन्हे हटा दें । अगर यह न हो सके, तो कुछ समय के लिये अपनी आँखें खोल दें और धीमे स्वर में नामों को तब तक दोहराये जब तक कि बुरे विचार गायब न हो जाये । तब फिर से आँखे बन्द करके और अपने ध्यान को दोनों भौहों के बीच में टिकाकर नामो का मन सें सुमिरन करें ।

आप ठीक कहते हैं । शान्ति और सान्त्वना या तसल्ली

अन्दर से आती है। सतगुरु हमारे अन्तर मे है, हमारी देख-भाल कर रहे है और सदैव हमारी सहायता के लिये तैयार है। हमे ध्यान को केवल अन्तर्मुख करने की जरूरत है, ताकि हम उस दया की ओर सजग हो सकें जो कि वे हम पर बरसा रहे है और उनके सन्देशों को ग्रहण कर सके। वे भली प्रकार जानते है कि हमारे लिये सबसे अच्छा क्या है। हम सांसारिक धन्धो और लालसाओ मे लीन रहने के कारण अन्तर में उनसे सम्बन्ध नही जोड़ पाते। जब तक हम अदर उनसे मिलाप नही कर लेते, तब तक, जो कुछ वे हमारे लिये कर रहे है उसकी कीमत और कद्र हम नही समझ सकते।

७५—सच्ची स्वतन्त्रता और सच्ची मुक्ति तब मिलती है जब हम काल और माया की सीमाओ को पार कर लेते है। आपको पहले ही मार्ग पर लगाया जा चुका है और आपके प्रेम और लगातार प्रयत्नो से आपको लक्ष्य की प्राप्ति बहुत कठिन नही लगना चाहिये। मै आपके प्रेम-पूर्ण भावों की बहुत कद्र करता हूँ; पर आपसे चाहूँगा कि आप अपने सभी भावों और विचारो को अन्तर की ओर मोड़े, ऊपर जाने के लिये ये एक मजबूत आधार बनेंगे।

आपने जो प्रश्न पूछा है उसका सच्चा और सही उत्तर आपको तब मिलेगा जब आप अन्दर जायेंगे। असल मे वहाँ पूछे बगैर ही अपने आप प्रश्न का उत्तर मिल जाता है। बाहरी दृष्टि से, थोडा बहुत अन्तर हो सकता है। बहुत कुछ इस बात पर निर्भर है कि आपका 'आत्म' से तथा इस जिन्दगी के बाद के अस्तित्व से क्या तात्पर्य है। आत्म-साक्षात्कार या आत्मा का ज्ञान, जैसा कि आपने इस समय तक निस्सन्देह जान लिया है, केवल तब ही होता है जब कि हम काल और माया की सीमाओं को पार कर लेते है, अर्थात तीसरे स्थान पर। सन्त-मत के अनुसार, आत्मा तभी सत्पुरुष

की सच्ची भक्ति करने के योग्य होती है । सन्तो के अनुसार "लीन होना" यह नही है कि कुछ भी न रहे, बल्कि वह एक अधिक पूर्ण, गहरा और ऊँचा जीवन है ।

७६—भजन मे आपकी सफलता पर मै बधाई देता हूँ । जब प्रेम और सच्ची मेहनत दोनों ही हों, तो कोई वजह नही कि सफलता न मिले । प्रेम वास्तव मे सन्त-मत का सार है । परमात्मा प्रेम ही है । सन्त भी, जो कि सत्पुरुष के ही स्वरूप है, प्रेम के मूर्त-रूप है और प्रेम-पूर्ण भक्ति के द्वारा अन्तर मे आसानी से उनसे मिलाप हो सकता है । पर प्रेम एक-निष्ठ या एक-चित्त और लगातार बढ़नेवाला होना चाहिये ।

७७—मेरी सलाह है कि आप सच्चाई और ईमानदारी के साथ अपने काम को जारी रखे, साथ ही रोज नियमित रूप से भजन-सुमिरन में बैठें और अन्तर मे महाराज जी (बाबा सावनसिंह जी महाराज) से प्रार्थना करे । चाहे हमें इस बात का पता न हो, पर सतगुरु अन्तर मे है और हमारे सभी कार्यो को देखते है । हमे इस प्रकार रहना और कार्य करना चाहिये जिससे कि हमे उनके सामने शर्मिन्दा न होना पड़े । पक्का यकीन रखे कि हम जितनी दया, मेहर और बख्शिश के लायक है, उससे कही अधिक वे प्रदान करते है ।

इन साधारण सासारिक बातो की चिन्ता न करें जो कि आती है और चली जाती है और जिनसे एक सत्संगी के मन को प्रभावित नही होना चाहिये । एक नवयुवक जब अच्छी शिक्षा पाने के बाद भी कोई अच्छी नौकरी नही पाता है तो स्वाभाविक रूप से निराश हो जाता है । लेकिन इससे उसे मायूस और हताश नही होना चाहिये । उसे कड़ी मेहनत करते हुए परमात्मा में विश्वास रखना चाहिये और उचित अवसर की राह देखना चाहिये । सतगुरु सदा सहायता करते

हैं। हमें अपनी रहनी ऐसी बनानी चाहिये कि हम वास्तव में उस सहायता को पाने के लायक बन सकें।

७८—आपके मन की परेशानी के बारे मे जानकर मुझे अफसोस हुआ, पर वास्तव मे आपको अपनी भावनाओ को अपने ऊपर हुकूमत नही करने देना चाहिये। सतगुरु आपके अन्दर है और दूरी से कोई फर्क नही पडता। अगर आप प्रसन्न-चित्त रहते हुए भजन करते रहेगे और अपने ध्यान को अन्दर रखेंगे, तो आपकी बहुत-सी तकलीफ़े दूर हो जायेगी। जब हम यह सोचते है कि हम तकलीफों मे है और जब हम उन्ही के खयाल में डूबे रहते है, तब वे और बढती है। पर अगर हम ये सब बाते सतगुरु पर छोड दे और खुद को उनकी मौज मे रखने की कोशिश करे, तो इससे मन और शरीर दोनों को ही लाभ होगा।

७९—सतगुरु जब शिष्य को नाम देते हैं, तब नाम-दान के वक्त से ही उसकी जिम्मेदारी ले लेते है और उसकी देख-भाल करते है। पर शिष्य को इस बात का केवल तभी पता चलता है जब वह ऊपर जाकर अन्तर में सतगुरु के नूरी स्वरूप के दर्शन करता है। इसके सिवाय, जब शिष्य का ध्यान सतगुरु की ओर रहता है, जो कि गुरुमुखता की शुरुआत है, तब सतगुरु की निगरानी और मदद अधिक असर-कारक होती है।

मुझे खुशी है कि आप प्रकाश और शब्द को पाने के लिये उत्सुक है, पर आप जानते है कि इनको पाने का तरीका है, अपनी चेतनता को आँखो के केन्द्र या तीसरे तिल पर ले जाना। वह ताकत जो अन्तर मे देखती और सुनती है, इस समय दिन-रात बाहर सासारिक धन्धो मे उलझी हुई है। हमारा तो केवल इतना ही काम है कि अभ्यास द्वारा अपने शरीर को खाली करने की कोशिश करे, अर्थात अपने ध्यान

को शरीर तथा अन्य सब वस्तुओं की ओर से हटा कर तीसरे तिल मे लाये। तवज्जह की दोनो आँखो के बीच एकाग्रता, सुमिरन के द्वारा प्राप्त की जाती है। उसके बाद तवज्जह शब्द के द्वारा अपने आप ही अन्दर और ऊपर खीच ली जाती है।

कठिन श्रम और अधिक मेहनत के कार्य भजन-सुमिरन के रास्ते मे रुकावट नही बनते। बल्कि, वे हम मे एकाग्रता और मेहनत की आदत डालते है, जो कि वास्तव मे हमारे भजन मे सहायक होती है। जब हम थके हुए होते है, तब हमारे ध्यान का झुकाव, बाहर जाने और लोगों तथा बाहरी चीजो के बारे में सोचने के बदले, स्वाभाविक रूप से अन्तर की ओर होने लगता है। इसी प्रकार, अपने कर्तव्यो को मेहनत के साथ करने से होने वाली थकान भी सहायक साबित होती है। आप देखेंगे कि जैसे आप अच्छी एकाग्रता प्राप्त करने लगेंगे और नियमित रूप से अपना अभ्यास करते रहेंगे, वैसे ही आप अपने बाहरी कर्तव्यो को भी बेहतर तरीके और कुशलता के साथ पूरा कर सकेंगे।

सुमिरन के लिये जो नाम आपको दिये गये है, उनके शाब्दिक अर्थ के बारे मे कृपया चिन्ता न करें। उनका लफ़्ज़ी या शाब्दिक मतलब जरूरी नही। उनका असली महत्व आप बाद में समझेंगे।

शुरू शुरू में और कभी-कभी काफ़ी समय बाद भी शिष्यों के साथ ऐसा होता है। सुमिरन छूट जाता है, क्योंकि तवज्जह नीचे को गिर जाती है और एक तरह से मन अपने रास्ते से हट जाता है। आपको अपने ध्यान को वापस इकट्ठा करते हुए फिर से सुमिरन शुरू कर देना चाहिये। अगर सुमिरन के समय आप नामो को तवज्जह के साथ दोहराते है और ध्यान को तीसरे तिल में जमाये रखते है, तो आपको न तो

नीद आयेगी और न मन नीचे गिरेगा। लगातार अभ्यास के बाद ही यह अवस्था प्राप्त होगी।

हाँ, आसन में न बैठे होने पर भी और घर मे चलते-फिरते तथा दूसरे काम करते हुए भी अगर सत्संगी का ख़याल अन्तर की ओर लगा है, तो वह गूँजती हुई धुन और यहाँ तक कि घण्टे की स्पष्ट आवाज भी सुन सकता है। आपको सदैव इसे केवल दाहिने कान से ही सुनना चाहिये, बाये कान से कभी भी नही। अगर कभी यह आवाज बाये कान से ही लगातार आती रहे, तो आपको उस समय सुनना बन्द करके, थोडी देर बाद फिर से शुरू करना चाहिये। शब्द तो हमेशा वही है, पर हमारा ध्यान वहाँ नही है। सुमिरन के द्वारा हम उस केन्द्र के नजदीक आ जाते है जहाँ पर कि शब्द साफ सुनाई देता है। अभ्यास का ठीक तरीका यही है कि सुमिरन के समय पूरी तवज्जह को नामो के दोहराने में लगा दिया जाय और उस समय अगर शब्द सुनाई भी दे रहा हो तो भी उसकी ओर ध्यान न दिया जाय। इससे आप जब शब्द मे बैठेगे तो वह अधिक स्पष्ट सुनाई देगा।

हाँ, एक पहुँचा हुआ सत्सगी आसन पर बैठे बिना ही, पर कुछ धीमे रूप से, शब्द को लगातार सुन सकता है। अगर शब्द बहुत ही तीव्र होता तो उसके लिये सांसारिक कार्यो को करना लगभग असम्भव हो जाता।

८०—भजन-सुमिरन के समय नीद आने के कई कारण हो सकते है। अगर बहुत सवेरे का समय आपको माफिक नही है तो बेशक आप भजन का समय बदल दें। अपने बुरे या विपरीत सस्कारों के बारे में न सोचे, बल्कि इस प्रकार काम करें कि वे बेअसर हो जाये। भारी या अनुपयुक्त खाना खाने से भी नीद आ सकती है। इस कारण को आसानी से दूर किया जा सकता है। अगर आप बहुत ही

अधिक नींद महसूस करे तो उठ जायें, अपने मुँह पर ठण्डा पानी छिड़कें और तब फिर से बैठ जायें, दृढ़ निश्चय और लगन के द्वारा इस पर विजय पाई जा सकती है।

जहाँ तक हो सके भजन-सुमिरन बराबर करते रहने की कोशिश करे; अगर सुबह के समय नही, तो दिन में किसी भी समय या जब भी आप चाहें। अपनी असफलता के विचार को लेकर अपने मन को मायूस व निराश न होने दें, बल्कि सतगुरु में अपना विश्वास रखें। सच्ची लगन के साथ उनसे प्रार्थना करे और इस विचार तथा विश्वास में प्रसन्न रहे कि अगर आप सतगुरु की ओर मुख करेंगे तो वे आपकी सहायता करेंगे।

सन्त-मत का मार्ग बहुत ही स्पष्ट है, पर दुर्भाग्य से, 'बाधा डालने वाला' आपका ही मन है। जब आप सत्संग में जाना जारी रखेंगे और जितनी बन सके कोशिश करते रहेंगे तो धीरे-धीरे आपके कर्म कम होते चले जायेंगे, आपका अधिकार (योग्यता) बढ़ता जायेगा और आप अपने सिर पर सतगुरु की दया का हाथ महसूस करने लगेंगे। अगर विद्यार्थी क्लास में से भागता नही है तो वह फायदा उठायेगा और एक दिन अपने उद्देश्य को प्राप्त कर लेगा। वह एकाध बार असफल हो सकता है, पर आखिर वह जरूर सफल होगा। इसके विपरीत, अगर वह पढ़ाई छोड़ देता है और लड़कों के साथ खेलने के लिये भाग जाता है, तो फिर क्या उम्मीद की जा सकती है ? सन्त जबरदस्ती नही करते। वे केवल समझाने और मनाने के मार्ग को अपनाते है। सतगुरु अपने शिष्यो की देखभाल अवश्य करते है, पर शिष्य यह केवल तभी देख सकता है जब कि वह तीसरे तिल से कुछ ऊपर या कम से कम तीसरे तिल तक भी आ सके।

८१—जिन्दगी में आनेवाली मुसीबतों और आजमा-

इशो को अगर सही माने में लिया जाये, जैसा कि एक सत्संगी को लेना चाहिये, तो वे चरित्र-वल को वढायेगी और मनुष्य को अपने आपको पूरी तरह से सतगुरु के चरणो में अर्पित करना सिखायेंगी । दूसरी ओर, वे हमे हताश और दु:खी भी कर सकती है, जिससे हमे अपनी ही कमजोरी का पता चलता है ।

मुझे अफ़सोस है कि मै आपकी जीवन से ऊव जाने और उसमे कोई दिलचस्पी न रहने की प्रवृत्ति की सराहना नही कर सकता । जीवन हमे एक निश्चित उद्देश्य के लिये दिया गया था, जो कि एक सत्संगी होने के नाते आपको अच्छी तरह मालूम है । यह हमें इसलिये दिया गया था कि सतगुरु की पूरी शरण लेकर तथा रोज भजन करके हम शव्द से जुड जाये और इस दु:खो की नगरी से ऊपर उठ जाये । यह एक वख्शिश है जिसे कोई भी आप से ले नही सकता जव तक कि आप खुद ही निराशा और झुँझलाहट के दौर मे इसे छोड न दें या इसे काम मे लेना वन्द न कर दे । किसी भी सत्सगी का जीवन वेकार नही है । पर अगर हम अपनी ओर से पूरी कोशिश करते है तो हमारे लिये मार्ग अधिक आसान हो जाता है ।

आपको अपने सासारिक कर्तव्यों का ध्यान रखना है, जहाँ तक हो सके भजन और सुमिरन मे अधिक से अधिक समय् देना है और वाकी सव वाते सतगुरु पर छोड़ देनी हैं । जव किसी ने खुद को इस प्रकार सतगुरु की मौज पर छोड़ दिया है, तव उसे चिन्ता क्यो करना चाहिये ? क्यो कि उनकी (सतगुरु की) सलाह मानने से वे वुरे कर्म भी जो कि हमारे मार्ग मे रुकावट वने हुए है, काफी हद तक हलके हो जाते है और उनका जोर कम हो जाता है ।

८२—केवल दाहिनी ओर के शव्द को ही सुनना

चाहिये । जब आपको बायें कान से शब्द सुनाई देने लगे तो अँगूठे को बायें कान से हटा दें और सिर्फ़ दाहिना कान ही बन्द रखे । बायें कान से शब्द आने का कारण है सुमिरन की कमी । पाँच पवित्र नामों के सुमिरन पर अधिक समय दीजिये । आप शब्द को सुनना बिलकुल छोड़ सकते है, जब तक कि वह अपनी मधुर धुन मे दाहिनी ओर से या केन्द्र से सुनाई न देने लगे ।

सुमिरन करते समय कृपया अपने ध्यान को दोनो आँखों के बीच के स्थान पर जमाये रखिये । प्रतिदिन बिना चूके कम से कम दो घण्टे सुमिरन को दीजिये । भजन-सुमिरन में नियमितता बहुत ही जरूरी है । यह एक बहुत महत्वपूर्ण बात है । साथ ही, अपने रोज के काम-काज (खाना-पीना, चलना-फिरना आदि) करते हुए भी अपने मन को पाँच पवित्र नामों के सुमिरन में लगाये रखिये । सुमिरन को एक पल के लिये भी न भूलिये । इस प्रकार, थोडे दिनो में ही आप बहुत परिवर्तन पायेगे ।

आपने "मृत्यु के रहस्य" के बारे में पूछा है, सो सत्संगी को मृत्यु के बारे में कोई भी डर या तकलीफ नही होती है । बल्कि, वह प्रेम व खुशी के साथ उसकी बाट देखता है । जिन लोगों ने अच्छी तरह से अपना भजन-सुमिरन किया है, उन्हें शरीर छोड़ने के बाद फौरन ऊपर के मण्डलों में ले जाया जाता है । उनकी मृत्यु के समय सतगुरु स्वयं आते है और उन्हे अपने साथ ले जाते है ।

पर जिन सत्सगियों का अभी तक सासारिक इच्छाओं की ओर बहुत अधिक झुकाव है, उन्हें फिर से संसार मे जन्म दिया जाता है, पर यह जन्म (आध्यात्मिक अभ्यास के लिये) पहले से अधिक अच्छी स्थिति मे होता है । जिनकी कोई सांसारिक इच्छाएँ नही है पर जो ठीक तरह

से भजन-सुमिरन नही कर पाये है, सतगुरु द्वारा उन्हे किसी ऊपर के स्थान पर रखा जाता है और धीरे-धीरे वही से सचखण्ड ले जाया जाता है।

जहाँ तक गैर-सत्संगियों का सवाल है, क्योंकि उनके मन मजबूती के साथ संसार और उसके पदार्थों के मोह मे उलझे हुए है, मृत्यु के समय वे उन पदार्थों से बिछुड़ने में बहुत तकलीफ़ महसूस करते है और बाद में स्वाभाविक रूप से उनकी ही ओर खिचे जाते है। यह उनके बार-बार संसार के उन्ही पदार्थों के बीच जन्म लेने का निमित्त या कारण बनता है। अपने कर्मो के अनुसार वे अलग-अलग प्रकार के चोले धारण करते है, जिन्हें (जैसे ही वे अपने पहले के शरीर को छोड़ते है) प्रकृति अपने-आप उनके लिये तैयार रखती है। यह सब क्रिया खुद-ब-खुद होती रहती है।

८३—इसका अर्थ है नीचे की ओर झुकाव रखनेवाले मन को वश में करना। पर आप जानते है कि वह शरारते करना कभी नही छोड़ता। अगर वह बगावत के आसार दिखाता है तो हमें हमेशा उसे वश मे करने और दबाने के लिये तैयार रहना चाहिये। सन्त-मत का सार है मन को वश मे करके उसे सतगुरु के आदेश मे रखना। आत्मा परमात्मा का अंश है और इसे सुधारने या सँवारने की कोई जरूरत नही है। मन के साथ जुड़ जाने के कारण ही इसे दुःख सहने पड़ते है और यह अपने निज-घर से दूर रह जाती है।

आत्मा का स्वाभाविक झुकाव अपने परम-पिता के साथ मिलाप पाने की ओर है, पर मन जो कि फैला हुआ है और सांसारिक पदार्थों और विषय-वासनाओं का शौकीन है, आत्मा को नीचे की ओर खीचे रखता है। सही रीति से ध्यान और आत्मिक अभ्यास के द्वारा मन को वश मे करके

अन्तर की ओर मोड़ा जाता है और फिर उसे ऊपर की ओर अपने उस केन्द्र तक ले जाया जाता है, जहाँ से आत्मा और मन अलग-अलग हो जाते है और आत्मा ऊपर जाने के लिये आजाद हो जाती है। जैसा कि आप सोच सकते है, यह एक बहुत बड़ा काम है। असल मे यह एक जिन्दगी भर के काम से भी अधिक है। सबसे पहले हमें अपने ध्यान को इकट्ठा करके तीसरे तिल पर ठहराना है। मै आपसे कहूँगा कि अपना भजन जारी रखे और जितनी देर तक हो सके, कम से कम प्रतिदिन एक नियमित समय के लिये, तवज्जह को आँखो के केन्द्र पर टिकाये रखने की कोशिश करे। कुछ और महीनो के लिये पूर्ण शाकाहारी भोजन का अभ्यास करें, तब आपको नाम दिया जायेगा।

८४—यह बड़े सन्तोष की बात है कि आप नाम-दान के सच्चे महत्व को समझते है। शब्द-धुन हमारे और मालिक के बीच सम्बन्ध बनाये रखनेवाली एक श्रृंखला या कडी है। अगर हम इसके साथ सम्बन्ध बनाये रखे और उसे बढ़ाते जाये तो एक दिन हम अपने घर पहुँच जायेगे। जब तक हम शब्द-धुन मे है, हम मानों एक प्रकार से एक किले मे है और शत्रु के आक्रमण से सुरक्षित है। पर हमें अपना कारोबार या व्यवसाय त्यागना नही है, न ही हमे अपने कर्तव्यों की ओर से लापरवाही बरतनी है, क्योंकि ये वे जिम्मेदारियाँ है जो हमे निभाना है। और जब तक हम अपनी जिम्मेदारियों या उत्तरदायित्वों को नहीं निभाते, तब तक हम शब्द-धुन को थोड़े समय तक सुन तो सकते है, पर उसमे पूर्ण रूप से लीन नही हो सकते। इसलिये, हमें संसार में रहना है, पर संसार के होकर नही रहना है।

मुझे खुशी है कि आपको अपना भजन पहले से आसान मालूम दे रहा है और भजन की यह भावना या लगन

आपका मार्ग अधिक सरल कर देगी। कृपया यह भी याद रखें कि सुमिरन अभ्यास की नींव है और इसे तवज्जह को तीसरे तिल पर लगा कर करना चाहिये। कुछ समय के बाद सुमिरन अपने आप अन्तर मे चलने लगना चाहिये।

८५—मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आप परिस्थिति का सामना बहादुरी के साथ कर रहे है। यह शरीर ही है जो कि सुख-दुख महसूस करता और कष्ट पाता है। हमारे दु ख और कष्ट शरीर के साथ हमारे लगाव व मोह की वजह से है। जितना अधिक हम अपने ध्यान को ऊपर शब्द या सुमिरन मे रखते हुए अपने शरीर से अलग होते है, हमें अपनी देह व इन्द्रियो के जरीये उतना ही कम सुख-दुःख महसूस होता है।

सुमिरन (पाँच पवित्र नामों का जाप) बिस्तर मे लेटे हुए भी किया जा सकता है। मुझसे कहा गया है कि आप "स्पिरिचुअल पाथ" और इसी प्रकार की अन्य (सन्त-मत की) पुस्तके पढ़ते है, सो पढने के बाद सुमिरन शुरू करना आसान और लाभदायक होगा। कृपया किसी भी बात की चिन्ता न करे, वल्कि अपना विश्वास और भरोसा सतगुरु और शब्द मे रखें तथा खुद को उनकी शरण मे छोड़ दे। सतगुरु से अन्तर मे मिलाप करने की तीव्र लालसा जगाने की कोशिश करे।

८६—मै आपके आन्तरिक अनुभवों के बारे मे सुनकर प्रसन्न हुआ हूँ। यह वास्तव मे बडी प्रशंसा की बात है कि आपने इतने थोडे समय मे इतना हासिल कर लिया है। विश्वास रखे कि आप निश्चित रूप से सही रास्ते पर हैं और मै खुश हूँ कि आप अपने मार्ग पर बढ रहे है। आखिर यही हमारे जीवन का असली उद्देश्य है जिसकी पूर्ति के लिये हमें मनुष्य-जन्म दिया गया है। बाकी सब-कुछ यही छोड़ दिया

जायेगा, क्योंकि यह सब आरजी या अस्थायी है और इस संसार में बरतने के सिवाय हमारे और किसी काम का नही है। केवल हमारे आन्तरिक अनुभव ही हमारा साथ देगे। जब हम चेतन होकर सतगुरु के साथ अन्तर मे यात्रा प्रारम्भ करेगे तब सच्ची खुशी प्राप्त करना शुरू करेगे। उस समय तक, अपनी आन्तरिक उन्नति और गति के अनुसार, हम आनन्द और शान्ति की ऐसी झलके पाते है, जैसा कि आपने वर्णन किया है। आत्मा जितनी ऊपर जाती है, उतने ही अधिक और लम्बे समय तक यह अनुभव होता रहता है और अन्त मे यह अनन्त आनन्द का रूप ले लेता है। जितनी जल्दी हम यह समझ ले और इस दूरी को तय कर ले उतना ही अच्छा है, क्योकि तब तक सासारिक लगावो के कारण हमेशा पीछे मुडने की प्रवृत्तियाँ रहती है जिनका सम्बन्ध न केवल इस ससार की वस्तुओं से है बल्कि परिवार, मित्रों आदि से भी है। इसका यह अर्थ नही कि हमे औरो से प्रेम नही करना चाहिये, परन्तु हमारा प्रेम अधिकार या हक की भावना से रहित होना चाहिये।

आपके अनुभव यह सिद्ध करते है कि सतगुरु आपके प्रयत्नो से बहुत खुश है, आप सच्ची लगन के साथ कोशिश कर रहे है और वास्तव मे ठीक दिशा की ओर बढ रहे है। यह याद रखे कि एकाग्रता का स्थान हमेशा दोनो भौहो के बीच मे होना चाहिये। आपको चाहे कुछ भी दिखाई दे पाँच पवित्र नामो का सुमिरन करते रहे। सुमिरन के सामने जो भी ठहरे और आपसे बातें करे उस पर भरोसा किया जा सकता है, क्योंकि जब तक आप सुमिरन करते रहेगे कोई भी काल की शक्ति दखल नही दे सकती।

८७—हम इस ससार मे सब इष्ट-मित्रो और शान-शौकत के बीच मे रहते हुए भी अकेले है, लेकिन हम यह मह-

सूस नही करते। जब हमे असफलताओं और निराशाओ का सामना करना पड़ता है, तब हमें अपने अकेलेपन का अनुभव होता है। मेरे विचार से, जितनी जल्दी हम अपने अकेलेपन का अनुभव कर ले उतना ही अच्छा है, क्योकि तब हम कोई दूसरा और अधिक अच्छा सहारा ढूँढेगे। सांसारिक सम्बन्धी और मित्र अनित्य है, वे हमे दुःखी और बिलखता छोड़ जाते है। परन्तु अगर हम अन्तर की ओर रुख करे और अन्तर मे सान्त्वना, चैन और आसरा खोजे तो हमे पता चलेगा कि हम वास्तव मे सुखी हो सकते है। अन्तर मे सतगुरु और शब्द निर्विवाद रूप से सत्य है। वे यहाँ इस जीवन में और मृत्यु के बाद भी आपका पथ-प्रदर्शन और आपकी रक्षा करते है, और तब तक आपकी रहनुमाई करते है जब तक कि आप अपने असली घर न पहुँच जायें।

दुःख अपूर्ण इच्छाओं का परिणाम है। जब कोई बात हमारी इच्छा के अनुसार नही होती तो हम दुःख महसूस करते है। दुःख और इच्छाओ का सबसे अच्छा इलाज शब्द का अभ्यास है। नियमित और लगातार सुमिरन, शब्द को सुनने और उसे पकडे रखने में बहुत मदद देगा।

इसका अर्थ यह नही है कि मनुष्य सन्यासी या वैरागी बन जाये। बल्कि इस ससार मे रहते हुए, अपनी सामाजिक तथा अन्य जिम्मेदारियों को निभाते हुए हमे नियमित रूप से भजन-सुमिरन को समय देना चाहिये और बाकी सब-कुछ मालिक पर छोड़ देना चाहिये। अपने भाग्य को धैर्य के साथ स्वीकार करने और संसार के दुःख-सुख के उतार-चढाव मे प्रसन्न रहने का यही उपाय है। लेकिन सतगुरु मे दृढ़ विश्वास का होना बहुत जरूरी है। तब कठिनाई और निराशा के क्षणों में हम अनायास सतगुरु की ओर मुड़ेगे।

८८—सतगुरु के चोला छोड़ने का दुःख स्वाभाविक है

और खास कर जब कि वे इतने महान और सदा साथ निभाने वाले सच्चे मित्र थे। लेकिन एक अचूक सत्ता हमारे भाग्य पर नियन्त्रण रखती है और जानती है कि हम सबके लिये क्या अच्छा है। उसकी मौज ही सर्वोपरि है। आपके सतगुरु कही दूर नही है। वे आपके अन्दर है। अगर आप अन्दर जायें तो उनसे मिल सकेंगे और उनकी ओर से जो दया-मेहर की धारा आ रही है, उसे बराबर ग्रहण कर सकेंगे। दुःख और निराश में डूबकर हम ऐसी प्रतिकूल हालत पैदा कर लेते है जो हमारे दया-मेहर प्राप्त करने के मार्ग में बाधक होती है। कृपया हताश न हों और निराशा तथा दुःख को स्थान न दें, बल्कि प्रेम और विश्वास के साथ अपने भजन-सुमिरन के अभ्यास को जारी रखें। सतगुरु के प्रति आपके प्रेम और विश्वास से आपको अन्दर जाने और एक बार फिर अपने सतगुरु को प्रत्यक्ष देखने के लिये प्रेरणा मिलनी चाहिये। एक ऐसी अर्ध-चेतन भावना बनाने की कोशिश करें जिसमें सतगुरु की प्रेम-पूर्ण याद हमेशा बनी रहे।

हाँ, शरीर को खाली करना चाहिये और सारी चेतनता को आँखों के बीच में एकाग्र करना चाहिये, पर यह एक दिन का काम नही है। मन को लगातार और स्थिरतापूर्वक सुमिरन में लगाने से कुछ समय बाद इस ध्येय को प्राप्त करना सम्भव हो जाता है—जो एक मामूली बात नही है, क्योंकि इसका अर्थ है गुरु-भक्ति का पूर्ण होना। लेकिन जब हम नाभि तक या उससे कुछ नीचे तक भी सुरत की धारा को समेट लेने मे सफल हो जाते है, तब हम ज्योति की झलके देख सकते हैं और बहुत शान्ति का अनुभव कर सकते है। अगर हम अपनी इच्छा के अनुसार शरीर को खाली करने मे समर्थ है, तो यह एक बहुत बड़ी बात है, क्योंकि तब हमारी पहुँच सतगुरु के सूक्ष्म स्वरूप तक हो

जाती है। परन्तु, सतगुरु इतना दयालु है कि कभी कभी वह संघर्ष मे लगे हुए शिष्य के साथ इससे पहले भी सम्पर्क स्थापित करता है—खास कर जब कि वह एक प्रेमी शिष्य हो।

हाँ, आपके सतगुरु आपको मृत्यु के समय लेने आयेगे। पर क्यो न आप अपने जीवन-काल मे ही उनके दर्शन करके अपने सब सन्देहो को दूर कर ले ?

एक सत्सगी को न तो मृत्यु की कामना करनी चाहिये और न ही उसके आने पर डरना चाहिये। उसे तो अपने आप को पूरी तरह सतगुरु की मौज पर छोड़ देना चाहिये। मृत्यु, जीवन के कष्टो की दवा नही है और न ही उनसे बचने का उपाय है। जो जीना जानता है, मरना भी केवल वही जान सकता है। सत्संगी की जिन्दगी और मौत उसके सतगुरु के हाथो मे है।

अपने प्यारे सतगुरु पर भरोसा और अपने आप पर विश्वास रखते हुए, दृढ सकल्प के साथ अभ्यास मे जुट जाइये और ढाई घटे का नियत समय दीजिये (चाहे दो बैठको मे ही सही, यदि एक ही बैठक मे इतने समय तक लगातार बैठने मे आपका दुर्बल स्वास्थ्य बाधक है), तब जो कुछ आपने खो दिया है उसे फिर से पा लेगे। सतगुरु आपके अन्तर मे है और जब आप प्रेम तथा विश्वास के साथ उनका आसरा लेगे तो आपकी प्रार्थनाओ का उत्तर मिलेगा। यह हमारा मन ही है जो भटकता और चिन्तित हो जाता है और इस प्रकार अपनी एकाग्रता को खो देता है। सतगुरु हमे कभी नही भूलता और अन्दर हमारा स्वागत करने तथा हमे वापस ले चलने के लिये हमेशा तैयार है।

८९—अपने पिछले कर्मो के कारण हम सबको ही दुख-दर्द की इस नगरी मे बीमारी और मृत्यु के कड़ुए फल चखने पड़ते है। पर जो लोग सतगुरु के शब्द-स्वरूप के

संरक्षण और मार्ग-दर्शन मे है, उन्हे किसी प्रकार के डर या चिन्ता की जरूरत नही। शरीर से निकल कर शब्द में लीन होना ही इस दु:ख-दर्द से बचने का एक-मात्र उपाय है। शब्द के चेतन मण्डल मे मृत्यु, पीड़ा और बीमारी के लिये कोई स्थान नही है। हुजूर महाराज जी भी हमे निरन्तर यही प्रेरणा देते थे कि शरीर को खाली करो, जीते-जी मरो ताकि बार-बार यहाँ आकर जन्म लेना और मरना न पड़े।

कर्मों के हिसाब-किताब को बराबर करने, हमे निर्मल करने और सुधारने के लिये कभी-कभी यह दु.ख आवश्यक होता है। सबसे उत्तम तो यह है कि बाहर तो हम दवा आदि इलाज करें और अन्दर अपनी चेतना को समेट कर शब्द मे लगा दें या कम से कम शब्द-धुन को सुनने की कोशिश करें। बीमारी के समय बिस्तर मे लेटे हुए भी जितना हो सके सुमिरन करते रहें, क्योकि यह आपको शब्द की ओर ले जायेगा। शब्द को ध्यान से सुने और अन्तर मे सतगुरु से प्रार्थना करे जो सदा आपके साथ है और जिन्हे आपकी पूरी फ़िक्र है।

९०—हमे अपने भाग्य या कर्मो को उसी प्रकार पूरा करना है जैसा कि पहले से तय है। आपका दूसरे स्थान पर जाना उसी योजना का एक अंग है। जरूरी तो यह है कि इन परिवर्तनों से परेशान न होकर हम परिस्थितियों से ऊपर उठे।

हमारा उद्देश्य आत्मिक विकास है, जिसमे हमें शरीर के जाल में उलझी हुई अपनी आत्मा को समेट कर उसके केन्द्र (दोनों आँखों के बीच) में लाना है। जितना अधिक हम इस मंजिल के नजदीक आते है, उतना ही अधिक हम इन बाहरी परिस्थितियों की ओर से उदासीन होने लगते है।

क़ई लोग समझते है कि प्रेत-विद्या या परलोक-विद्या

का आध्यात्मिक विकास से सम्बन्ध है। किन्तु वास्तविक आत्मिक-विकास का इससे कोई सम्बन्ध नही है। जो साधक सन्त-मत के आदेशो के अनुसार आत्मिक विकास का अभ्यास करते है उनका इस मार्ग में आज तक कोई नुकसान नही हुआ है। वास्तव मे जब हम अपना रूहानी अभ्यास नियम-पूर्वक रोज करते हैं, तो इससे ये खतरे स्वयं ही दूर हो जाते है।

आपको अपने परिवार की हर तरह से उचित देख-भाल करनी चाहिये और उनके पालन-पोषण तथा उनकी शिक्षा के लिये प्रबन्ध करना चाहिये, क्योकि यह आपका कर्तव्य है। विश्वास रखिये कि आप जहाँ पर भी हो वही अपना भजन-सुमिरन केवल कर ही नही सकते बल्कि करना भी चाहिये।

आपकी बधाई के लिये धन्यवाद, लेकिन यह एक बड़ी सख्त जिम्मेदारी है। मैं इसे निभा रहा हूँ क्योंकि मुझे हुजूर महाराज जी ने—जिनका अभाव आप सब की तरह मैं भी महसूस कर रहा हूँ—यह आदेश दिया है।

९१—औरो की सहायता और भलाई करने की आपकी भावना का मैं आदर करता हूँ। लेकिन दूसरो की सहायता करने से पहले मनुष्य को खुद ऐसी स्थिति मे होना चाहिये कि वह दूसरो की सच्ची सहायता और भलाई कर सके। जितना अधिक हम इन्द्रियों से ऊपर उठने और खयाल को आत्मिक केन्द्र पर रखने मे समर्थ होगे, उतनी ही अधिक हम अपनी तथा औरो की सहायता कर सकेगे।

९२—मुझे अफसोस है कि आपके पत्र का उत्तर देर से दे रहा हूँ। परन्तु मै आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि सच्ची जिज्ञासा का यहाँ हमेशा स्वागत किया जाता है और उस पर पूरा ध्यान दिया जाता है।

परमात्मा के कानून, जैसा कि आप कहते है, अटल है। लेकिन हममें से अधिकांश लोग इन कानूनो को पूरी तरह से नही समझते है। एक समय था जब लोग पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति के नियम के विरुद्ध, मशीन के द्वारा आकाश में उड़ने के ख़याल की हँसी उडाते थे, लेकिन उसी नियम को ठीक तरह समझने से आकाश में उडना सम्भव हो गया; हालाँकि पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति आज भी उतनी ही है जितनी कि तब थी। यह केवल एक उदाहरण मात्र है।

हाँ, जो कुछ हमने बोया है वही काटना है और अपने कर्मो को पूरा करना है। गुरु हमें कर्मो के ऋण को आसानी से चुकाने के योग्य बनाता है, और वह भी इस ढंग से कि हमें चार जन्मो से अधिक जन्म नही लेने पड़ते। इतना ही नही बल्कि अगर शिष्य अपनी पूरी सामर्थ्य के साथ गुरु के आदेशो का पालन करता है और कोई सांसारिक मोह या लगाव नही रखता (ताकि मृत्यु के समय उसके मन में संसार का कोई भी मोह न रहे जो उसे वापस इस धरती पर ला सके) तो उसके लिये दूसरी बार भी यहाँ आने की जरूरत नही है; क्योकि तब सतगुरु उसे किसी बीच के मण्डल मे रखता है जहाँ की अधिक अनुकूल परिस्थितियो मे उसके बाकी कर्म समाप्त किये जा सके।

इस दृष्टि से कर्मो को तीन वर्गो मे बाँटा जा सकता है; (१) क्रियमान——वे कर्म जो हम इस जीवन मे यहाँ कर रहे हैं; (२) प्रारब्ध——वे कर्म जो हमारे पिछले जन्मों मे किये गये कार्यो की वजह से है, जिन्होने हमारे वर्तमान को निश्चित किया है और जिनको हमें इस जन्म में भोगना है, (३) संचित——वे जमा किये गये कर्म जो जन्म-जन्मान्तरों से इकट्ठे होते आ रहे हैं और जिनका हिसाब हमें आने वाले जन्मों में चुकाना है।

कर्मों का कानून यही है कि जब हम अपने पिछले कर्मों के फल को भुगत रहे हैं—चाहे वे कर्म अच्छे रहे हों या बुरे—हम नये कर्म भी करते जाते हैं और इस प्रकार जन्म-मरण का अन्तहीन सिलसिला चलता ही रहता है, जब तक कि हमारा किसी ऐसे सन्त से मिलाप नही होता जो अपने मार्गदर्शन के द्वारा हमे इस भूल-भुलैया से निकाल ले।

सन्त हमें रूहानी अभ्यास का एक खास तरीका और जीवन का एक निश्चित मार्ग बताते है, और ये दोनों मिलकर काफी हद तक नये कर्मों के अकुर को पैदा होने से पहले ही काट देते है। हमे कुछ निश्चित नियमों पर चलते हुए जिन्दगी बसर करना है—जीव-हत्या नही करना और किसी को चोट या नुकसान पहुँचाने से दूर रहना है—और अगर हम सच्चाई और दृढ़ता के साथ इन नियमों का पालन करे तथा बताया गया आध्यात्मिक अभ्यास करे, तो हम चार जन्मो से पहले ही कर्मों को समाप्त कर सकते है। यह इस प्रकार है:—

जो कुछ थोड़े-बहुत कर्म हम यहाँ इकट्ठे करते है उनको काटने की व्यवस्था सतगुरु के द्वारा बताये गये अभ्यास को रोज करते रहने से हो जाती है। प्रारब्ध कर्मों को तो हर हालत में भुगतना ही पडता है। सतगुरु संचित कर्मों को शब्द-अभ्यास के द्वारा नष्ट करने मे शिष्य की सहायता करता है। जब शिष्य त्रिकुटी या कारण-मण्डल मे पहुँचता है जहाँ इन सचित कर्मो का भण्डार है, जहाँ सचित कर्म बीज रूप मे रखे हुए है, तब सतगुरु की सहायता और काफी समय तक शब्द के अभ्यास के द्वारा इन बीजों की उपजने की क्षमता नष्ट हो जाती है। यह केवल एक रूपक या उदाहरण मात्र ही नहीं है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह सब एक ही जन्म में भी किया जा सकता है; पर इसमें चार जन्मों से अधिक

कभी नही लगेगे। सतगुरु यह जिम्मेदारी खुद लेता है, अर्थात कर्मो का लेखा रखनेवाली सत्ता को अपनी निजी जमानत या गारण्टी देता है कि शिष्य के कर्मो का कर्ज पूरा-पूरा चुकाया जायेगा। यह किस प्रकार किया जावेगा और इसका कितना भाग सतगुरु अपने ऊपर लेगा और किस ढंग से लेगा, इसका निर्णय स्वय सतगुरु ही करेगा। लेकिन इस भुगतान के लिये किसी भी शिष्य के लिये चार जन्म काफी है। चाहे वह इस जन्म मे एक अच्छा सत्संगी न हो, तो भी उसका दूसरा जन्म आध्यात्मिक दृष्टि से बेहतर होगा, और उसके अन्दर ऊँची आध्यात्मिक प्रवृतियो का बीज पहले से ही डाल दिया जायेगा। वह आध्यात्मिक उन्नति के लिये अधिक अच्छे अवसर पायेगा, उसकी सतगुरु से भेंट होगी जो उसकी सहायता और पथ-प्रदर्शन करेगे और इस दिशा मे उसे बहुत कुछ प्राप्त होगा। इन सब बातो का बड़ा गहरा प्रभाव होता है। इस मार्ग पर लगाये जाने से पहले जिज्ञासु केवल कभी-कभी ही ऊँची आध्यात्मिक बातो के बारे मे सोचता था, लेकिन अब उसका रुख निश्चित रूप से इस दिशा मे-है और सिर्फ कभी-कभी ही वह भूल और गलती करता है। आशा है इसमे आपकी बात का पूरा जवाब आ गया है।

सन्तो के लिये पहले से यह जान लेना कठिन नही है कि कौन-सी आत्माएँ उनके पास आने वाली है, पर इसकी कोई खास आवश्यकता नही होती। सस्कारी आत्माएँ, अर्थात वे आत्माएँ जो पहले ही किसी पिछले जन्म मे इस प्रकार के सम्पर्क में आ चुकी है, आसानी से पहचान ली जाती है। हमारे महान सतगुरु बाबा सावनसिह जी महाराज के जीवनकाल में हमे ऐसे अनेक उदाहरण देखने को मिल चुके है। एक ही समय में वे हम सबके साथ सम्पर्क रखते और हम मे से अनेको के अन्तर मे प्रकट होते तथा बात-चीत करते रहे है। नामदान प्राप्त करने वाले हरएक

मनुष्य को सन्त-मत की शिक्षा का प्रचार और प्रसार करने की जरूरत नही, बल्कि उन शिक्षाओं पर अमल करने और उनके अनुसार अपना जीवन ढालने की जरूरत है। यही बात अधिक महत्वपूर्ण है।

मेरा खयाल है कि आपको प्रयत्न जारी रखने चाहियें और जैसे-जैसे आप शिक्षाओं को ध्यान से सुनेंगे या उनके बारे में पढेंगे और अच्छे सत्संगियों के सम्पर्क मे आयेगे, वैसे वैसे आप अधिक दृढ हो सकेंगे। यह केवल हमारा मन ही है जो अपनी इच्छाओं और कामनाओं को लेकर हमारे और हमारी रूहानी मंजिल के बीच में खड़ा है। परन्तु एक बार जब मन को अभ्यास में स्वाद आने लगता है तब आगे बढना आसान हो जाता है। बेशक यह सरल नहीं है, क्योंकि जब तक हमारा मन इन्द्रियों का गुलाम है तब तक यह हमारा सबसे बड़ा दुश्मन है।

६३——आप पूछते हैं कि अच्छा सत्संगी कौन है ? उत्तर बहुत सीधा है: वह जो अपने सम्पूर्ण प्रेम और ध्यान को शब्द मे रखता है और अपने सासारिक कर्तव्यों को दैनिक नित्यकर्मो की तरह करता रहता है, वह जीवन मे आनेवाली किसी भी अच्छी या बुरी बात से प्रभावित नही होता, क्योंकि उसने अपने आपको पूरी तरह से उस सतगुरु के सुपुर्द कर दिया है जो 'देहधारी शब्द है'। बेशक यह एक ऊँचा आदर्श है और बहुत कम लोग इस तक पहुँचते है। 'कई बुलाये जाते है, पर बहुत कम चुने जाते है'। फिर भी इसकी प्राप्ति हरएक सत्संगी का उद्देश्य है। उसे केवल अण्डे, मांसाहारी भोजन और नशीली चीजो के उपयोग से ही नही, बल्कि किसी भी जीव को दुःख या हानि पहुँचाने से भी दूर रहना चाहिये।

सन्त-मत पत्नी को पति से या पति को पत्नी से अलग

नही करता, जैसा कि शायद आप सोचते रहे है, बल्कि सन्तों के मार्ग के सह-यात्री बन जाने से उनका प्रेम अधिक सच्चा और गहरा हो जाता है और एक-दूसरे की ओर झुकाव बढ़ जाता है। पति और पत्नी दोनों के सन्त-मत में आने पर हुज़ूर महाराज जी हमेशा बहुत खुश होते थे, क्योकि इस मार्ग मे अगर वे एक दूसरे के साथ सहयोग करें तथा एक-दूसरे के लिये सहायता का स्रोत बनें, तो इससे यह यात्रा अधिक आसान हो जाती है।

हाँ, मन दुर्बल है और निरन्तर गलतियाँ करता रहता है, लेकिन सतगुरु भी सहायता और मार्ग-दर्शन के लिये हमेशा मौजूद है। अगर एक सत्संगी नामदान के समय बताया गया रूहानी अभ्यास बराबर करता है और इस प्रकार अन्तर में अपने सतगुरु के साथ सम्पर्क बना लेता है तो चाहे वह कही भी हो, हर वक्त सतगुरु की सहायता और मार्ग-दर्शन प्राप्त करता रहता है। हम सतगुरु के ही अंश है, परन्तु इस बात का हमें अनुभव करना है। और जब तक मनुष्य अपनी जिन्दगी में ही इस बात का अनुभव नही कर लेता, तब तक उसका कुछ काम नही बनता। जिस प्रकार बिजली हरएक वस्तु में मौजूद है, पर वह तब तक हमारे कमरों में रोशनी या गरमी नही दे सकती जब तक कि पहले उसे ठीक तरह से एकत्रित करके तार से न जोड़ दिया जाय।

आपकी इस स्पष्ट स्वीकृति का मै आदर करता हूँ और अच्छी तरह समझता हूँ कि आप एक ऐसे सतगुरु से प्रेम नही कर सकते जिसे आपने कभी देखा नही है और जिसके बारे में आप इतना कम जानते है। परन्तु जब मनुष्य नाम प्राप्त करने के बाद अभ्यास शुरू करता है और अन्तर में शब्द को सुनता है तो गुरु से सम्पर्क स्थापित हो जाता है और जितनी अधिक लगन के साथ वह अभ्यास करता है

उतना ही प्रेम बढता जाता है। जो सन्त या सतगुरु यह संसार छोड़ चुके है और जिनके साथ हमारा कोई व्यक्तिगत सम्बन्ध या सीधा सम्पर्क नही था, उनके चित्र या फोटो का हमारे लिये कोई महत्व नही है। सन्त-मत जीते जागते देहधारी गुरु तथा गुरु और शिष्य के सीधे सम्पर्क पर जोर देता है।

मन और आत्मा दो अलग-अलग और महत्वपूर्ण ताकतें है। मन एक बहुत शक्तिशाली सत्ता है। ये जितने भी सुख, आराम और सभ्यता के आश्चर्यजनक कार्य हम आज देखते है, सब मन से ही प्राप्त हुए है। परन्तु अगर हम मन के दायरे में ही रहें और मन के ही इशारो पर चलते रहें तो आत्मा कभी भी मन से अलग या मन के बन्धनो से मुक्त नही हो सकेगी। हमारा उद्देश्य तो आत्मा को मन के बन्धनों से आजाद करना है ताकि यह वापस अपने दिव्य घर की ओर जा सके तथा परमात्मा से मिलकर एक हो सके।

९४—मुझे स्पष्टवादिता पसन्द है और सन्त-मत के सिद्धान्तो तथा दर्शन का सभी पहलुओं से अध्ययन करने के आपके प्रयत्न की मै सराहना करता हूँ। परम सत्य को बतलानेवाली सन्त-मत की शिक्षाओ की प्रेत-विद्या या परलोक-विद्या से कोई तुलना ही नही की जा सकती। सन्त-मत का उद्देश्य है आत्मा को मन और माया के जाल से मुक्त करना और उसे परमात्मा के साथ मिला देना। ऐसी आत्मा के फिर और जन्म नही होगे। दूसरी ओर, प्रेत-विद्या और प्रेतो को बुलाने के लिये की जानेवाली बैठके एक जिज्ञासु के ध्यान को महत्व-हीन बातो की ओर लगा कर उसके आत्मिक-विकास मे बाधा डाल सकती है।

पूरी तरह से सन्त-मत के आदर्शो के अनुसार रहना बहुत आसान नही है। इसलिये अगर हमे जिन्दगी मे ऐसे

लोग (जिनमे सत्संगी भी है) मिलें जिनके काम इन आदर्शो के विरुद्ध है तो हमें इससे मायूस और निराश नही होना चाहिये। दूसरे लोग क्या करते है और क्या नही करते, इसकी चिन्ता न करके हमें खुद मार्ग पर चलते रहने की कोशिश करना चाहिये। दूसरे लोगों के रूहानी अनुभवों का हमारे लिये कोई खास महत्व नही है। सतगुरु की कृपा से जो अनुभव हम खुद प्राप्त करते है, हमारे लिये केवल वे ही महत्वपूर्ण है।

उस महिला को जो आपने सलाह दी उसके लिये मैं आपको बधाई देता हूँ। "सत्संगियो के व्यक्तित्व या उनकी रहनी की ओर ध्यान न दें और सन्त-मत का अध्ययन केवल सन्त-मत को समझने के लिये करे।" इस सलाह मे आपने अपनी खुद की समस्या का भी जवाब दे दिया है। सरदार बहादुर महाराज जगतसिंहजी यह सलाह देते थे कि दाहिने या बॉये किसी ओर न देखो, सिर्फ सतगुरु को देखो। जिस प्रकार ताँगे के घोड़े की आँखो पर चमड़े के ऐसे पट्टे लगा दिये जाते है जिनसे वह दाये-बॉये नही देख सकता, सीधे अपने सामने की ओर ही देख सकता है। इसी प्रकार सत्संगियो को भी इधर-उधर ध्यान न देकर केवल अपने सतगुरु की ओर ही देखना चाहिये। यह सलाह आपके लिये भी लाभदायक हो सकती है।

अपनी चेतनता या सुरत को पूरी तौर से शरीर से निकाल कर आँखों के पीछे एकत्रित करके अन्तर मे सूर्य, चन्द्र तथा तारा-मण्डल को पार कर लेने के बाद ही सतगुरु के नूरी स्वरूप से भेट हो सकती है। यह नूरी स्वरूप सकट के समय मे आपकी रक्षा करेगा, कठिनाइयो के वक्त आपको सलाह देगा, वास्तव में यह हमेशा आपके साथ रहेगा।

९५—मैं यह साफ़-साफ़ बतला देना चाहूँगा कि विभिन्न

आध्यात्मिक मार्गों के पूर्ण अध्ययन, गहरी जाँच और खोज को रोकना तो दूर रहा, हम ऐसे प्रयासो को प्रोत्साहन देते हैं, क्योकि इन विभिन्न शिक्षाओ के निष्पक्ष तुलनात्मक अध्ययन और जाँच के द्वारा ही किसी प्रणाली के सच्चे महत्व को जाना जा सकता है। मुझे खुशी है कि आप भी इसी भावना के साथ......का अध्ययन कर रहे हैं।......

जो दावे आपके अनुसार......कर रहे है, वे निश्चय ही बहुत बडे है। लेकिन आपको पता चलेगा कि इन सभी बातो में सन्त-मत के सिद्धान्त ही अन्तिम सत्य है। सन्त-मत को स्वीकार करने के लिये मै आप पर दबाव नही डालना चाहता, बल्कि मैं चाहता हूँ कि आप खुद ही सब बातों को देखें, समझें और स्वय निर्णय करे। इस दिशा मे जो भी समय जाँच-पड़ताल मे लगाया जाता है, वह व्यर्थ नही जाता, क्योंकि जिज्ञासु जब इस मार्ग को पूरी जाँच-पड़ताल करके अपनाता है तो वह इस पर सच्ची लगन और दृढ़ता के साथ चलता है और इसलिये, परिणाम भी जल्दी मिलते है।

मै यह जानकर खुश हुआ हूँ कि आप दोबारा पूर्ण शाकाहारी भोजन पर रहने की पूरी कोशिश कर रहे है। सन्त-मत मे यह बहुत ही जरूरी है। मासाहारी भोजन से हमारे कर्मो का बोझ बढ़ता है, इसलिये मास, मछली, अण्डे आदि सब तरह के सामिष भोजन के त्याग के बिना किसी भी प्रकार की रूहानी तरक्की असम्भव है। इसी प्रकार शराब आदि नशीली चीजो का शौक भी एक बहुत बड़ी बाधा है, परन्तु अगर आप थोड़ी दृढ़ता से काम लेगे तो मुझे विश्वास है इस इच्छा को वश मे करके शराब को बिलकुल छोड़ा जा सकता है। हिन्दुस्तान मे और विदेशो मे सैकड़ों लोग ऐसा कर चुके है और आप भी जरूर कर सकते है। सतगुरु की दया-मेहर तो हमेशा है और खास कर उन पथ-भ्रष्ट सत्सं-

गियो पर ज्यादा है जो कि राह पर आने की निरन्तर कोशिश कर रहे है । कमी तो सिर्फ इच्छा-शक्ति और दृढ़ निश्चय की है ।

९६—मुझे यह जानकर खुशी हुई है कि आपने शराब पीना छोड़ दिया है । गरम दिन मे ठण्डी बीयर पीने की इच्छा भी चली जायेगी अगर आप आइन्दा किसी भी हालत मे इस आदत में न उलझने का पक्का इरादा कर ले । ऐसी कोई भी बुरी आदत या दुर्बलता नहीं है जिसे मनुष्य सफलता के साथ जीत न सके, बशर्ते कि उसमें लगन, दृढ़ निश्चय और सही मनोवृत्ति हो । आदते एक ही दिन में नही बनती और जब तक कि मनुष्य सच्ची लगन और पक्के इरादे वाला न हो, वे एकाएक छोडी भी नही जा सकती । पर अब क्योंकि आपने तस्वीर के दोनों पहलुओ को देख लिया है और अनुभव कर लिया है कि शराब पीने की आदत कितनी हानिकारक तथा साथ ही खर्चीली भी है, मुझे पूरा विश्वास है कि आप इसे बिलकुल छोड़ देगे । बहुत से लोग इस भ्रम मे आकर अपने आपको धोका देते है कि उन्होने इस बुरी आदत को ताजगी और स्फूर्ति पाने के लिये अपनाया है ।

स्थायी शान्ति और आनन्द तथा सच्चे सतोष की भावना को पाने का केवल एक ही रास्ता है, और वह है अन्दर जाकर उस आन्तरिक शक्ति (शब्द) का आसरा लेना । उस आन्तरिक शक्ति से आप सच्चे सतगुरु के द्वारा ही जुड सकते है । एक देहधारी सतगुरु से बाहर और अन्दर दोनो तरह से सम्पर्क साधा जा सकता है । इसलिये सत्संगियो मे विश्वास और सुरक्षा का भाव होता है और वे जानते है कि उन्हें मझधार मे नही छोडा जायेगा और और वे सतगुरु से अपनी कठिनाइयो और सन्देहों का हल हमेशा पा सकेंगे । पर जैसा कि आप जानते हैं, हर बात का अपना वक्त होता है ।

हमारा काम तो सिर्फ सच्ची लगन के साथ निरन्तर कोशिश करते रहना है। जब वक्त आयेगा और जब मालिक चाहेगा तो हमें वह महान दात मिलेगी।

बिना किसी शर्त के समर्पण जिसका आपने जिक्र किया है, एक निराली वस्तु है, लेकिन यह जबानी जमा-खर्च नही है। आप उसी वस्तु को भेट कर सकते है जो कि आपकी अपनी हो, किसी दूसरे की नही। अपने आपको सतगुरु के हवाले करने से पहले आपको अपने आप पर पूरा काबू होना चाहिये, आपको अपना स्वामी होना चाहिये। नही तो आप किस तरह अपने आप को हवाले कर सकते है ? सन्त-मत मे तन, मन, धन और सुरत (आत्मा) के द्वारा सतगुरु की सेवा करके ही अपने आपको उनके हवाले किया जा सकता है। आत्मा को शब्द के साथ जोड़ना ही सुरत की सेवा है।

९७——किसी को भी सन्त-मत मे आने के लिये मजबूर नही करना चाहिये। सन्त-मत के सिद्धान्तो को अच्छी तरह समझने के बाद और उस पर चलने की सच्ची कामना होने पर ही नामदान के लिये दरख्वास्त आनी चाहिये। अगर उसकी कामना सच्ची है, उसके दिल में आत्मिक उन्नति के लिये तडप है तो उसे मार्ग बतलाया जायेगा, परन्तु आत्मिक उन्नति के लिये उसे मेहनत करनी होगी। सतगुरु अभ्यास का तरीका बताते है, शिष्य की आत्मा को नाम या शब्द-धुन के साथ जोड़ देते है, और इस मार्ग मे उसकी सहायता और देख-भाल भी करते है। लेकिन अभ्यासी को कोशिश और मेहनत तो खुद ही करनी होगी अर्थात उसे अपनी सुरत को तीसरे तिल तक समेट कर लाना होगा ताकि उस समेटी हुई चेतनता को पूरी तरह से शब्द के साथ जोड़ा जा सके। यह रूहानी सफ़र असल मे पैरों के तलवो से शुरू होकर सिर की चोटी तक जाता है। अगर शिष्य में दृढ विश्वास

और लगन है और वह अभ्यास के लिये आवश्यक समय दें सकता है तो इससे अधिक और कुछ नही चाहिये ।

पढना, समझना आदि सब हमारी बुद्धि को सन्तुष्ट करने और यह विश्वास दिलाने के लिये है कि यही सही मार्ग है। एक बार आपको यह दृढ़ विश्वास हो जाये तो फिर आर्पका काम अपने आपको केवल इस आन्तरिक यात्रा को तय करने मे लगा देना है। उसके बाद भक्ति और प्रेम के वातावरण को पैदा करने तथा रुकावटो और ध्यान को बटाने वाली बातो को हटाने के सिवाय और किसी बाहरी सहायता की जरूरत नही है।

मुझे खुशी है आपने फिर से शाकाहारी भोजन शुरू कर दिया है और अब आपको शराब पीने की जरा भी इच्छा नही होती। सतगुरु हमेशा सहायता, मार्ग-दर्शन और पथ-प्रदर्शन के लिये तैयार है, परन्तु इसके लिये पहल जिज्ञासु की ओर से होना चाहिये । धैर्य और लगन के साथ जुटे रहिये और अपने आपको विश्वास दिलाइये। केवल सुनी-सुनायी बातों से ही नही, बल्कि भली प्रकार किये गये अध्य-यन, छान-बीन और सत्सगियो की सगति के द्वारा अपने मन को इस नतीजे पर लाइये कि यही सही रास्ता है। अगर फिर भी आपको कोई सन्देह या कठिनाई हो तो मुझ से पूछने मे न झिझके । परन्तु एक बार इस मार्ग पर आने के बाद फिर पछतावा नही होना चाहिये और न वापस कदम हटाना चाहिये। अगर आप इस जीवन में कुछ रूहानी तरक्की करना चाहते है तो धीरे धीरे सासारिक बातो की ओर से मुँह मोडिये और आध्यात्मिक जीवन बिताने की कोशिश कीजिये। इसका यह मतलब नही कि हमे अपने कर्तव्यो और जिम्मेदारियो को नही निभाना है या ससार से भाग कर जगलों, पहाड़ों और गुफाओं मे छिप जाना है । वास्तव

में हम इस मार्ग में तभी प्रगति कर सकते हैं जब कि अपने रूहानी अभ्यास के साथ-साथ हम अपने सांसारिक कर्तव्यों को भी बराबर करते रहे । परन्तु संसार में रहते हुए भी हमें संसार का बन कर नहीं रहना चाहिये ।

६८—आपने प्रेम और भक्ति के मार्ग के बारे में जो कुछ लिखा है वह दिलचस्प है । हिन्दुस्तान मे भी कई लोग बहुत कुछ यही सोचते है । परन्तु फर्क या अन्तर भक्ति और ज्ञान में है, न कि भक्ति और परलोकवाद में । किसी भी गम्भीर योग के मार्ग में परलोक-विद्या का कोई स्थान नहीं है और आत्मिक उन्नति मे बाधक होने के कारण इसका विरोध किया जाता है । भक्ति का सार है अपने आप को मालिक की शरण में छोड़ देना, अपने आपको प्रेम-पूर्वक उसके हवाले कर देना, और इसमें कोई कमजोरी या दुर्बलता की बात नही है । असल मे तो मन से लड़ाई करके और अपनी अहंकार-पूर्ण प्रवृत्तियो का मुकाबला करके सतगुरु की शरण लेने के लिये बहुत साहस और दृढ़ता की आवश्यकता होती है । हम मे से बहुत से तो मन की शरण लिये बैठे है, मन के अधीन है ।

सन्त-मत का किसी भी व्यक्ति या प्रणाली से कोई झगड़ा नही है, बल्कि यह सभी प्रणालियों और तरीकों को उनका उचित स्थान देता है । ये तरीके एक हद तक ऊपर जाते है और उनका महत्व भी है, परन्तु सन्त-मत उनसे बहुत आगे जाता है । इसकी पहुँच उस अलख, अगम और असीम सत्ता तक है जो अपने आप में परिपूर्ण है ।

यह खुशी की बात है कि आप सबसे निभा लेते है । हम किसी से सहमत हो या न हो, लेकिन दिल मे किसी के प्रति बुरे भाव रखने में कोई लाभ नही है । इसी प्रकार व्यर्थ की नुक्ताचीनी या आलोचना, फिजूल की बहस और

अर्थ-हीन वाद-विवाद भी केवल अपनी शक्ति को बरबाद करना ही है। हमारा वक्त कीमती है और उसे उपयोगी तथा महत्वपूर्ण कार्यों में ही लगाना चाहिये। इस जन्म-मरण के चक्कर से छुटकारा पाने की कोशिश करने तथा सचखण्ड की ओर ले जाने वाले इस मार्ग पर परिश्रम करने से अधिक उपयोगी और महत्वपूर्ण कार्य क्या हो सकता है?

९९——कभी-कभी आत्म-विश्लेषण या अपने बारे में विचार करना लाभप्रद होता है और आप जैसे दृढता और लगन वाले व्यक्ति के लिये तो यह जीवन में एक नया अध्याय शुरू कर सकता है। मायूस और निराश होने की कोई वजह नही है। प्रसन्नता के साथ कार्य करते जाइये और उन ऊँचे सिद्धान्तो को अपने दैनिक जीवन में उतारने की कोशिश कीजिये। वक्त पर सब-कुछ हो जायेगा।

१००——आपको अपने लिये ऐसे शाकाहारी भोजन की व्यवस्था करने में कोई कठिनाई नही होनी चाहिये जिसमें कि भोजन के सब पौष्टिक तत्व तथा खास कर प्रोटीन भी मौजूद हो और जो आपके लिवर (जिगर) के लिये भी फायदेमन्द हो। आपके डाक्टर ने जो आपको सलाह दी है कि "कच्चा लिवर (जानवर का कलेजा) खूब खाइये"——इसे हिन्दुस्थान में अधिकाश लोग एक पाशविक या जंगलीपने का सुझाव मानेगे। लेकिन यह सच है कि लोग सभी तरह की चीजें खाते है। जो लोग आध्यात्मिक अभ्यास करना चाहते है वे इन चीजो के प्रयोग से होने वाले नुक्सान को जानते है और वे हानिकारक आदतों और नुक्सान पहुँचाने वाले भोजन को आसानी से त्याग देते है। मुस्लिम लोग (जो कि आम तौर पर मासाहारी होते है) भी जब किसी ख़ास रूहानी अभ्यास में लगते है तो मांस वगैरह बिलकुल छोड़ देते है। आप जो कुछ भी कहते है उसके बावजूद भी मुझे विश्वास

है कि आप में काफी मानसिक बल और इच्छा-शक्ति है और इस समस्या को हल करने में अगर आप इनका उपयोग करेंगे तो आपका स्वास्थ्य सुधर जायेगा और साथ ही आप कुछ अनावश्यक खर्च से भी बचेंगे ।

१०१——जीवन मे सबसे पहली और जरूरी बात तो यह है कि आप अपने मन मे पक्का और अटल निश्चय कर लें और फिर इस मार्ग पर चले ताकि आप उस परम सत्य का अनुभव अपने जीवन-काल मे ही कर सकें । ईसा मसीह उन्ही की सहायता कर सके जो उनके जीवन-काल में उनके खुद के सम्पर्क मे आये । आज उनकी शिक्षाओं का अध्ययन आपको कुछ मानसिक लाभ तो दे सकता है, परन्तु आपको आन्तरिक आध्यात्मिक मण्डलों मे नही ले जा सकता । सवाल यह नही है कि पश्चिम के देश सन्त-मत की शिक्षाओं को चाहते है या नही, वल्कि यह है कि आपको खुद को इनकी जरूरत है या नही । अगर आप इनकी जरूरत महसूस करते है तो इस मार्ग को अपना कर पहले अपनी समस्याओं को सुलझाइये । समय-समय पर जो समस्याएँ मन में उठती है उन्हे केवल बुद्धि या तर्क के द्वारा नहीं सुलझाया जा सकता; हालाँकि यह सही है कि उन अच्छे और बुद्धिमान सत्संगियो की संगति में, जो कि इस मार्ग पर लगन और सचाई के साथ चल रहे है, वहुत सी वाते सुलझ सकती है ।

यह सम्भव नही कि आपकी सब शकाएँ इस मार्ग पर कदम रखने से पहले ही सुलझ जाये । यह तो उस व्यक्ति की तरह है जो कहता है कि कही डूब न जाऊँ इसलिये मैं पानी मे तब तक नही उतरूँगा जव तक कि मुझे तैरना न आ जाये । स्पष्ट है कि वह कभी तैरना नही सीख सकता । सतगुरु हमारी त्रुटियो और कमियो पर ध्यान न देकर हमें

मार्ग दिखाने तथा उस पर प्रगति करने में हमें सहायता देने के लिये हमेशा तैयार है, परन्तु हमे भी इस मार्ग पर प्रगति करने के लिये उतनी ही मेहनत और लगन के साथ कोशिश करनी चाहिये जितनी कि हम दुनिया के काम-काज के लिये करते है। यह अच्छा है कि आप फिर से शाकाहारी भोजन पर आ गये है। जब आप इस भोजन पर सफलापूर्वक छः महीने तक कायम रह लें तो आप नामदान के लिये फिर से लिख सकते है।

१०२—सतगुरु के बहुत उत्तम शिष्य बनने की आपकी उत्कण्ठा सराहनीय है। जब तक सच्ची लगन और तड़प रहती है, सतगुरु हम पर दया-मेहर करते है ताकि हम बराबर अभ्यास कर सके। उनकी दया-मेहर और हमारी कोशिश, दोनों तब तक साथ-साथ चलती है जब तक कि हम धुरधाम तक न पहुँच जायें।

१०३—जीवन ऐसा ही है। कुछ लोग इसकी असारता को समझ लेते है और जानना चाहते है कि इसके परे क्या है। अन्य लोग इससे निरन्तर चिपके रहते है और आखिर तक सुख-दुःख सहते रहते है। हमें जीवन से घृणा नही करनी चाहिये, बल्कि उसकी सही कीमत को समझना चाहिये तथा यह जो दुर्लभ अवसर मिला है इसका ज्यादा से ज्यादा फ़ायदा उठाना चाहिये। वैज्ञानिक भी हमे बताते है कि अनेक शताब्दियों तथा अनगिनत निचली जूनो में से होते हुए हमारा मनुष्य के रूप में विकास हुआ है। इसका अवश्य ही कुछ उद्देश्य है। उस उद्देश्य को मालूम तथा पूरा करना चाहिये। (निस्सन्देह वे यह नही जानते कि आदि में मनुष्य अपने दिव्य धाम से निकला है और अपनी इच्छाओं, कर्मो तथा उनके फलों के अनुसार नीचे की जूनों में जन्म लेता रहा है।)

केवल मनुष्य-जन्म में ही हम परमात्मा को ढूंढ सकते

हैं तथा उससे मिलने की कोशिश कर सकते है। सच्ची शान्ति, सच्चा सुख केवल उसी के चरणो में है। वही सत्य और अविनाशी है। हम जितने अधिक उसके निकट जाते हैं उतने ही प्रसन्न और शान्त होते है। आपकी इस संसार से छुटकारा पाने की इच्छा, और इस इच्छा को जगाने वाली भावना यह बताती है कि आप इस मार्ग पर चलने के लायक है, परन्तु जरूरी यह है कि इस भावना को वनाये रखा जाय तथा सही रास्ते पर कदम उठाये जाये। कृपया...से मिले, वे आपको सन्त-मत की पुस्तकें दे सकेगे। तब तक के लिये, अभ्यास करते समय अपनी तवज्जह को दोनों भौहों के बीच मे रखने की कोशिश करे। जब आप एक-दो पुस्तके पढ ले तब मुझे फिर से लिखें।

१०४--आप ठीक कहते है, 'स्वय' का सभी बातों में बहुत महत्वपूर्ण हिस्सा होता है, क्योकि आख़िर इस मार्ग पर चलना तो खुद शिष्य को ही पड़ता है। शिक्षक पथ-प्रदर्शन और मदद करता है, पर काम तो विद्यार्थी को करना पड़ता है। ये हमारे अपने ही कर्म है जो हमारे मार्ग में रुकावट डालते है। वे धीरे धीरे कमजोर होते जायेंगे और अन्त में खत्म हो जायेंगे।

यह अच्छा है कि आप सतगुरु से प्रार्थना करते है और इस मार्ग पर चलने की तीव्र इच्छा रखते है, क्योकि इससे भी मन निर्मल होता है। अभी तो आप सन्त-मत की पुस्तकें पढे और प्रतिदिन आँखे बन्द करके मन ही मन 'राधास्वामी' नाम का जाप करे। यह अभ्यास आधे घण्टे से अधिक न करे तथा इसे करते समय शरीर या आँखों पर कोई दबाव या जोर न डालें। अपने जीवन का अन्त करने का विचार दुर्भाग्यपूर्ण ही नही बल्कि बहुत बड़ा पाप और अनर्थ है। दुःख और कष्ट को अगर विवेक के साथ सह लिया जाये तो

उससे अन्तर की सफाई होती है, और छुटकारे की आशा तो हरदम रहती ही है।

१०५—मैं आपके सन्देहों और कठिनाइयों को समझता हूँ और आपने उनके प्रति जो दृष्टिकोण रखा है उसकी सराहना करता हूँ। यह आपके लिये बिलकुल ठीक है कि आप इस बात का निश्चय कर ले कि आप वास्तव में इस मार्ग पर चलना चाहते है। हम छान-बीन और पूछ-ताछ के विरुद्ध नही है, बल्कि चाहते है कि लोग खोज करे। अगर आप अपना आधा जीवन भी सन्त-मत के सिद्धान्तों और उनकी पहुँच की खोज और छान-बीन में बिता दें, तो भी मुझे अफसोस न होगा। ईसानदारी और सच्चाई के साथ की गयी खोज मे बिताया गया सब वक्त आपके लेखे में जमा होगा।

सन्त-मत का मार्ग आन्तरिक है, बाहर-मुखी नही। सन्त-मत किसी भी तरह की बाहरी पूजा या उपासना के पक्ष में नहीं है, बल्कि यह हमे अपने आन्तरिक मन्दिर में पूजा करना सिखाता है। वहाँ पहुँचने से पहले मनुष्य को यह मालूम होना चाहिये कि अन्तर मे जाने का तरीका क्या है। बेशक इसके बारे मे आदेश तो बाहर ही दिये जा सकते है। रास्ता तब शुरू होता है जब आप इन आदेशो का पालन करना शुरू कर दे और इनके अनुसार हर रोज अपनी सुरत को आँखो के बीच मे समेटने की कोशिश करे, जहाँ से असली रूहानी सफ़र शुरू होता है। तब शब्द अथवा दिव्य-धुन से सम्बन्ध स्थापित होता है।

सत्सगी के लिये पूरी तरह से शाकाहारी होना बहुत जरूरी है। एकाध बार भी ऐसा सूप (शोरबा) ले लेना जिसमे अण्डे, मछली या मास का अश हो सत्संगी के लिये ठीक नही है, क्योंकि इससे बुरे कर्मो का बोझ बढ़ता है।

रूहानी इलाज या आत्मिक-शक्ति के द्वारा उपचार की

इजाजत नही दी जा सकती, क्योंकि सत्संगी का उद्देश्य तो अपनी पूरी तवज्जह को अन्तर मे समेटना, ध्यान के द्वारा उसे वहाँ ठहराना तथा ऊपर के मण्डलों मे चढ़ाई करना है। रूहानी इलाज मे ध्यान बाहर की ओर जाता है या दूसरे लोगों के कर्मो में उलझता है। यह तो ऐसा ही है जैसे कि बहुत मेहनत और तकलीफ़ के साथ एक बड़े पत्थर को ऊँचे पहाड़ पर चढाते-चढ़ाते बीच मे ही उसे नीचे लुढ़क जाने दें।

नाम का निवास हमारे हृदय में है (सन्त-मत के अनुसार हमारे मस्तक का ऊपरी भाग हमारा आत्मिक केन्द्र है, सन्त इसी को हृदय कहते हैं)। नाम के लिये भक्ति होना तो अच्छा है, परन्तु नाम से हम अन्दर जाकर ही जुड़ सकते है। अगर कोई एक पैर कमरे के अन्दर और दूसरा कमरे के बाहर रख कर कभी अन्दर देखता है और कभी बाहर तो वह कमरे के अन्दर बैठ नही सकता। हम बाहरी कारोबार करने की सलाह उसी हद तक देते है जहाँ तक कि अपनी आजीविका या रोजी कमाने और अपने सांसारिक कर्तव्यों तथा जिम्मेदारियों को पूरा करने का सवाल है, ताकि मौत के बाद मनुष्य मे कोई इच्छाएँ और तृष्णाएँ न रहें और उसकी आत्मा शब्द के साथ जुड़ कर मालिक के दरबार में आसानी से पहुँच सके। बेशक यह आसान नहीं है और इसके लिये एक हद तक आत्म-नियन्त्रण तथा अपनी इच्छाओ का दमन भी करना पड़ता है। यही वजह है कि कई लोग सन्त-मत को पसन्द नही करते। उनके लिये यह ठीक भी है। वे अभी सन्त-मत के योग्य नही हैं।

१०६—मै आपकी लगन और सचाई की कद्र करता हूँ। आपकी आत्म-ज्ञान की इच्छा सराहनीय है। अपने आपको जानना परमात्मा को जानने की ओर पहला कदम है। हम अपने सच्चे स्वरूप को तब जान सकते हैं जब हम

माया और जड़ पदार्थों के उन परदों को हटा दें, जो हमें इस समय सच्चे और यथार्थ मालूम होते है ।

शान्ति, आनन्द और पूर्णता हमे अपने अन्दर ही मिल सकती है, कही बाहर नही । परमात्मा भी आपके अन्दर ही है और वह सतगुरु की सहायता तथा सही रूहानी अभ्यास से मिल सकता है । सतगुरु के द्वारा बताये गये तरीके से अभ्यास करके आप अपनी चेतनता को––जो इस समय आपके सारे शरीर मे फैली हुई है––समेट कर आँखों के पीछे आत्मा के केन्द्र मे एकाग्र कर सकेगे ।

यह अभ्यास रोज नियमित रूप से करते रहना है, जब तक कि आत्मा या सुरत का पूरा या करीब-करीब पूरा सिमटाव न हो जाये। तब आप उस शब्द या दिव्य धुन से जुड़ जायेगें जो सबसे ऊँचे रूहानी देश–सचखण्ड–से आ रही है । यह शब्द या धुन हम सब के अन्दर–चाहे हम अच्छे है या बुरे–निरन्तर गूँज रही है, परन्तु इसका हमे कोई पता नही होता जब तक कि हमें नाम नही मिलता और इसका भेद नहीं बताया जाता । सिमटाव जितना ज्यादा होता है, शब्द-धुन से हमारा मेल भी उतना ही गहरा होता है और अन्तर में चढ़ाई भी उतनी ही ज्यादा होती है । इसका अभ्यास हर रोज नियमित रूप से करीब तीन घण्टे तक करना चाहिये । सुरत का सिमटाव कहाँ तक हुआ है इसकी पहचान शरीर के सुन्न होने या मुर्दे के समान होने से होती है । पहले शरीर के नीचे का भाग, पैर, हाथ आदि सुन्न होते है और फिर सारा शरीर ही सुन्न हो जाता है । निस्सन्देह, यह सब एक ही दिन में नही किया जा सकता । यह तो जीवन भर चलने वाला अभ्यास है ।

शरीर का सुन्न होना अस्थायी है, जो केवल अभ्यास के समय ही होता है । इससे मन या शरीर की क्रियाओं को कोई नुकसान नही पहुँचता और न ही उनमें कोई बाधा या

कमी आती है। बल्कि इस अभ्यास से हमारी मानसिक शक्तियाँ बलवान होती हैं, क्योंकि इसके द्वारा हमे अपनी तवज्जह को एक ही स्थान पर एकाग्र करने की आदत हो जाती है।

मनुष्य के शरीर में आत्मा का प्रधान केन्द्र या सदर मुकाम आँखो के बीच मे पीछे की ओर है। यहाँ पर आत्मा मन के साथ जुडी हुई है और यही से यह सारे शरीर मे फैली है। हमारा सबसे पहला और जरूरी काम तो आत्मा को समेट कर इस केन्द्र पर लाना और उसे सतगुरु के ध्यान के द्वारा यहाँ ठहराना है। यह एक धीमा और थकानेवाला काम है जिसके लिये धीरज, लगन और मेहनत की जरूरत है। एक बार इस रुकावट को पार कर लेने पर आगे का सफर इसकी तुलना मे आसान हो जाता है। इसके बाद आत्मा को अपने केन्द्र पर ले जाना तथा वापस शरीर में लाना इतना आसान हो जाता है जितना कि एक तलवार को म्यान से निकालना और वापस उसमें डालना। केवल पहुँचे हुए अभ्यासी या गुरुमुख ही यह क्रिया पूर्णता के साथ कर सकते है।

नामदान के समय सतगुरु शिष्य को अन्तर मे शब्द के साथ जोड देते है और जब शिष्य अपनी आत्मा को समेट कर इस केन्द्र पर ले आता है तो शब्द उसे ऊपर की ओर खीचना शुरू कर देता है। इस केन्द्र तक आने से पहले भी उसे शब्द सुनाई दे सकता है और खुशी और उत्साह प्रदान कर सकता है, परन्तु उसे ऊपर खीच नही सकता। अन्दर रूहानी सफ़र की पाँच मजिलें है और हरएक मंजिल का अपना-अपना शब्द है। जिस शब्द-धुन को हम पकड़ते है वह हमें धीरे-धीरे एक से दूसरी शब्द-धुन तक ले जायेगी और इस एक मजिल के शब्द के द्वारा दूसरी मजिल के शब्द से जुड़ते हुए हम धुरधाम तक पहुँच जायेगे, जहाँ से फिर आने

की जरूरत नही, जहाँ पहुँचने पर दोबारा जन्म नही होता। परन्तु यह प्रगति हमारे पिछले कर्म, हमारी लगन, मेहनत और उत्साह, अभ्यास के लिये दिये गये समय और सतगुरु की दया-मेहर पर निर्भर है।

यह हमारे मार्ग और अभ्यास का संक्षिप्त वर्णन है। "राधास्वामी" परमात्मा का नाम है जो कि स्वामीजी महाराज ने रखा है। उन्होने उसे अनामी भी कहा है अर्थात जिसका कोई नाम नही।

अब आपके प्रश्नों को लें:—

(१) नामदान सतगुरु के द्वारा दिया जाता है, वे अभ्यास की पूरी रीति समझाने के साथ-साथ आपको अन्तर में शब्द से जोड़ते भी है। अगर नाम माँगनेवाला योग्य जिज्ञासु बहुत दूर हो तो सतगुरु किसी और को भी उनकी ओर से नाम देने का अधिकार दे देते है, परन्तु उसकी रूहानी देख-भाल और सँभाल वे खुद करते है। छः महीने तक शाकाहारी भोजन पर दृढ़ रहने के बाद आपको इस प्रकार से नाम दिया जा सकता है।

(२) अभ्यास का पूरा और सही तरीका तथा अन्तर की शब्द-धुनों और मंजिलो का भेद, शिष्य को नाम-दान के समय ही बताया जाता है, उससे पहले नही।

(३) आप आँखें बन्द करके अपने ख़याल और तवज्जह को दोनों भौहो के बीच में एकाग्र करें और मन ही मन "राधास्वामी" नाम का जाप करें। आप भौहों के बीच में एक नुक्ते या बिन्दु की कल्पना कर सकते है, अगर इससे आपको कुछ सहूलियत हो। कुछ समय के बाद आपको प्रकाश की झलके या चमक दिखाई देगी। आप इस तरीके से अभ्यास करे और देखे कि आप पूर्ण शाकाहारी भोजन पर रह सकते है या नही। फिर छः महीने के बाद आपको नामदान मिल सकता है।

हठयोग शरीर के लिये बहुत अच्छा साधन है । राजयोग इससे भी अच्छा है, परन्तु इससे भी मन पूरी तरह से वश में नही आता और न ही इसके द्वारा जन्म-मरण का चक्कर ख़त्म हो सकता है, क्योकि इस साधन के द्वारा कर्मो के बीज का नाश नही होता । सुरत-शब्द योग से कर्मो के बीज भुन जाते है और फिर उनमें अंकुर नही आते । मन को केवल किसी ऐसी शक्ति के द्वारा ही पूरी तरह से वश में किया जा सकता है जिसकी उत्पत्ति ऐसे स्थान से हो जो मन की पहुँच से परे है, और वह शक्ति है दिव्य शब्द ।

सचखण्ड पहुँचने के बाद आत्मा मालिक मे लीन हो सकती है और इस प्रकार अपनी पूर्णता का आनन्द ले सकती है या इस लोक अथवा किसी अन्य लोक मे औरों के उपकार तथा उद्धार के लिये आ सकती है, परन्तु उसके लिये यहॉ वापस आना जरूरी या अनिवार्य नही ।

मुझे उम्मीद है कि मैने सब बाते स्पष्ट रूप से बता दी है । अगर किसी भी बात के बारे में आप कुछ और पूछना चाहे तो खुशी से पूछ सकते है ।

१०७—सन्त-मत के अनुसार, हमे अपनी सुरत या तवज्जह को अन्तर की ओर ले जाना है तथा बाहरी ससार के प्यार व लगाव धीरे धीरे कम करना है । ध्यान को तीसरे तिल पर रखते हुए सुमिरन करना बहुत जरूरी है, क्योकि सुमिरन की मदद से ही सुरत अन्दर की ओर मुड़ती है ।

रूहानी नजारे, स्वरूप, प्रेम, शब्द, सब अन्तर में है, हमेशा से वही मौजूद है, परन्तु उन्हे पाने के लिये हमें अन्दर जाना होगा । अन्दर जाने पर हमें सतगुरु की दया-मेहर और उनका प्रेम भी मिलता है । अभ्यास का पहला भाग सुमिरन है, जिसके द्वारा हम आँखो के केन्द्र तक आते है । सुमिरन करने में हमे कुछ परिश्रम और कोशिश करना पड़ती है ।

उसके बाद प्रेम और दया-मेहर की धाराएँ बहने लगेंगी। मैं आपसे नाराज़ या अप्रसन्न नही हूँ, परन्तु इस मार्ग पर बढ़ने के लिये मेहनत तो आपको ही करनी होगी। विश्वास अच्छी चीज है, परन्तु इसे एक ऐसे जीते-जागते सक्रिय विश्वास में बदलना होगा जिससे प्रेरणा पाकर हम और मेहनत कर सकें।

१०८—सन्त-मत की शिक्षा में आपकी दिलचस्पी के बारे में मालूम हुआ। रूहानी तरक्की और मालिक की प्राप्ति के लिये यह सबसे आसान और निश्चित मार्ग है। शराब, मांस, मछली, अण्डे आदि वस्तुओं के त्याग के सिवाय आपको न तो अपना दुनिया का काम-काज छोड़ना पड़ता है और न अपने जीवन का ढंग बदलना पड़ता है। इस मार्ग में कोई भय या खतरा नही है। सतगुरु की बाहर और अन्दर सँभाल तथा मार्ग-दर्शन की वजह से किसी प्रकार के खतरे की कोई सम्भावना ही नही है।

मै आपके पति के भय को समझ सकता ँ। वे डरते है, क्योकि वे नही जानते कि असली रूहानी अभ्यास साधारण रहस्यपूर्ण क्रियाओं तथा परलोक-विद्या की बैठकों के समान नही है और इसमें कोई भी डर व खतरे की बात नही है। फिर भी आप उन्हें नाराज न करे। बल्कि इस बीच जहाँ तक हो सके सन्त-मत की पुस्तको का अध्ययन करे तथा प्रतिदिन एक घण्टा या उससे अधिक समय तक किसी भी आरामदेह आसन में बैठने की आदत डाले और अपनी तवज्जह को दोनो भौहो के बीच में एकाग्र करने का अभ्यास करे। इस अभ्यास के समय आँखो पर किसी प्रकार का जोर या दवाब न डालें। उन्हे बन्द करके बिलकुल ढीला या शिथिल छोड दें। आपको तो अपनी सुरत या तवज्जह को एकाग्र करना है, जिनका इन बाहरी आँखों से कोई सम्बन्ध

नही। इस प्रकार सन्त-साहित्य के अध्ययन से आप सन्त-मत के सिद्धान्तों को अच्छी तरह समझ जायेंगी, इस अभ्यास के द्वारा आप किसी हद तक इस मार्ग पर चल पड़ेंगी और साथ ही घर में चैन और शान्ति बनी रहेगी।

१०९—यह अच्छी बात है कि आप योग का अभ्यास करते रहे है, क्योकि कुछ न करने से कुछ करते रहना हमेशा अच्छा है। फिर भी बगैर सही पथ-प्रदर्शन के मनुष्य आसानी से धोखा खा सकता है।

सन्त-मत ऐसा योग नही है जैसा कि आम तौर पर लोग समझते है। यह सच्चा आध्यात्मिक योग है। संक्षेप मे इसका उद्देश्य है अपने अन्तर में परमात्मा को पहचानना। परमात्मा हमारे अन्दर मौजूद है, परन्तु क्योंकि हमारा मन इन्द्रियों के अधीन होकर तथा इन्द्रियो के सुख और सासारिक पदार्थो के मोह में फँस कर चारों ओर फैल गया है, इसलिये हम अपने मूल स्रोत को भूल गये है और अब नही जानते कि शरीर के नौ द्वारो से किस प्रकार ऊपर उठे ताकि परमात्मा को पहचान सके। इस संसार मे रहते हुए तथा अपने कर्तव्यो को निभाते हुए जीते-जी वापस अपने घर जाने का रास्ता यह है कि हम अपनी सुरत को नामदान के समय बताये गये नामों के सुमिरन के द्वारा तीसरे तिल मे एकत्रित करें और वहाँ शब्द-धुन से जुड़े। शब्द-धुन की मदद से हम वहाँ पहुँच जायेगे जहाँ से कि वह आती है, और वह स्थान है सचखण्ड। अभ्यास के समय आँखो पर कोई जोर या दबाव नही डालना चाहिये, क्योंकि वे ये बाहरी आँखे नही है जो अन्दर देखती है। इस प्रकार एक तरह से यह भी योग है, परन्तु व्यावहारिक तथा असली रूहानी अर्थो मे।

इस मार्ग पर चलने और ठीक तरह से अभ्यास करने के लिये सही भोजन बहुत जरूरी है। आपको अपने खाने

में से मांस, मछली, अण्डे तथा उनसे बनी हुई चीजों को निकाल देना चाहिये और शराब आदि नशीली चीजों से दूर रहना चाहिये। दूध और पनीर लिया जा सकता है। आप शाकाहारी भोजन पर छः सात महीने रहने की कोशिश करें और उसके बाद मुझे लिखें। तब तक आप सन्त-मत की पुस्तकों का अध्ययन कर सकते है।

सन्त-मत की शिक्षाएँ पति और पत्नी के बीच दरार पैदा नही करती। जब हम इन शिक्षाओ को ठीक तरह से समझते नही है या उनका उचित रीति से पालन नही करते, केवल तब ही हमारा जीवन-साथी चिन्तित या परेशान हो सकता है। मैं नहीं चाहता कि ये शिक्षाएँ किसी भी प्रकार की गलतफहमी का कारण बने। अगर सन्त-मत के उसूलों पर प्रेम और भक्ति के साथ चला जाय तो इससे मनुष्य धैर्यवान, सहनशील और दयालु होता है और हर तरह से उसका स्वभाव सुधरता है। इस प्रकार वह पहले से कही अच्छा जीवन-साथी बनता है तथा अपने साथी की और अच्छी तरह सेवा व सहायता कर सकता है। सन्त-मत में हमें सिखाया जाता है कि हम हमेशा पहले अपने कर्तव्यो का पालन प्रेम-पूर्ण सेवा के भाव से करे और यह शिक्षा पति और पत्नी दोनों पर भी लागू होती है।

११०—हाँ, पाँच नामों का एक दूसरे के बाद उसी क्रम में जाप करना चाहिये जिस क्रम में आपको बताया गया है, और जाप अथवा सुमिरन के समय अपने ध्यान को तीसरे तिल में रखने की कोशिश करें। यह सुमिरन का ही फल है कि सुरत अथवा चेतनता शरीर से सिमट कर तीसरे तिल में एकत्रित होती है और इसके बाद हमारा असली रूहानी सफ़र शुरू होता है।

आपको अन्तर में जो कुछ दिखाई दे उसके रंग, रूप या

प्रकाश के बारे में कोई चिन्ता न करें। इनका कोई महत्व नही है। महत्वपूर्ण बात तो सुरत को एकाग्र करके शब्द को पकडना है जो कि आपको ऊपर ले जायेगा। अन्तर में सतगुरु से मुलाकात और उनसे बात-चीत करना, यह दृढ और नियमित अभ्यास से ही हो सकता है। जैसा कि कहा जा चुका है, पहले चेतनता को तीसरे तिल मे एकत्रित करना है, फिर शब्द उसे वहाँ से ऊपर ले जायेगा। सूर्य और चन्द्र के मण्डलो को पार करने के बाद सतगुरु के नूरी या ज्योतिर्मय स्वरूप के दर्शन होते है।

अभ्यास के लिये सबसे अच्छा समय सुबह-सवेरे अथवा ब्राह्म-मुहूर्त का है जब कि आप स्वस्थ और ताजा होकर उठते है, मन में खयाल नही होते और आस-पास का वातावरण भी शान्त होता है। परन्तु यह जरूरी नही है कि अभ्यास इस समय ही किया जाय। अगर आप बहुत सवेरे नही उठ सकते तो कोई भी ऐसा समय निश्चित कर ले जो आपको सुविधाजनक हो और जिसमें आपको कोई विघ्न या बाधा न आये। इस बात का कोई महत्व नही कि सुमिरन के समय आप पूरब की ओर मुंह कर के बैठे या पश्चिम की ओर।

जहाँ तक दूसरो की सहायता करने का सवाल है, मनुष्य को अपने नागरिक या सामाजिक कर्तव्य निभाने चाहिये, परन्तु इन बातो में अनावश्यक रूप से उलझना नही चाहिये। हरएक बात के लिये एक समय होता है और जब आपका समय आया तो आप इस मार्ग पर लगे। महत्व पूर्ण बात तो यह है कि आप इस ओर आ गये है। सच्चा प्रेम तब पैदा होता है जब आप अन्दर जाते है और वहाँ शब्द या सतगुरु से मिलते है।

१११—आपका यह कहना सही है कि यह आपके

अभ्यास अर्थात सुमिरन व भजन पर निर्भर है कि आप कितनी जल्दी अन्दर जाते है। सतगुरु की सहायता और दया-मेहर तो हर वक्त आपके साथ है। एक पक्षी दोनों परों की सहायता से ही उड़ सकता है, और हमारे लिये ये दो पर है सतगुरु की दया-मेहर तथा सत्सगी की मेहनत अथवा करनी। परन्तु आपकी शुरूआत अच्छी है, क्योंकि आप घण्टियों की आवाज सुनने लगे है। अब यह आप पर है कि इसे बनाये रखें और आगे प्रगति करे। वह कल्पना नही थी, उस समय आपका ध्यान अन्तर मे लगा हुआ था।

११२—मै आपको सन्त-मत के महत्व और उसकी आवश्यकता को समझने के लिये बधाई देता हूँ। यह और भी सौभाग्य की बात है कि पति और पत्नी दोनों इस मार्ग पर चल रहे है। अगर दोनों अलग-अलग दिशाओं में खीचते है तो घर में सुख-शान्ति नही हो सकती और न ही रूहानी तरक्की हो सकती है। अब आपको नियमपूर्वक रोज़ भजन-सुमिरन मे पूरा समय देना चाहिये। कृपया सुमिरन पर अधिक ध्यान दे, यह शरीर की चेतनता को धीरे-धीरे समेट कर तीसरे तिल मे लाने का तरीका है। शब्द का क्रम इसके बाद शुरू होता है, अभ्यासी इससे पहले भी कभी-कभी शब्द की धुन को सुन सकता है, परन्तु जब तक सम्पूर्ण चेतनता आँखों के केन्द्र में नही आ जाती तब तक यह आत्मा को ऊपर खीच नही सकती।

११३—आपकी शुरूआत बहुत उत्साहवर्द्धक हुई है। यह आपकी भक्ति, सच्चाई और पिछले संस्कारो का फल है। अब यह आप पर है कि लगन के साथ नियमपूर्वक भजन-सुमिरन करके इसे और बढायें। आपका अनुभव सही था, कोई भ्रम या धोखा नही था। अन्तर मे अनेक खण्ड-ब्रह्माण्ड है, और जैसे-जैसे अभ्यासी अन्दर बढता है उसे

कई प्रकार के सूक्ष्म नजारे दिखाई देते और ध्वनियाँ सुनाई पड़ती है। इनसे उसके अन्दर और भी ऊपर जाने की इच्छा पैदा होती है और वह ससार की ओर से उदासीन होने लगता है। पर इन आन्तरिक दृश्यों और नजारों की ओर भी साधक का लगाव नही होना चाहिये, बल्कि उसे अपने ध्यान को शब्द में लगाये रखना चाहिये, जो कि धुर-धाम पहुँचने के लिये राज-मार्ग है।

कृपया सुमिरन और भजन करते रहे और समय को धीरे-धीरे बढ़ाये, ताकि आप बगैर थकान के अधिक समय तक अभ्यास कर सके। आप जब भी चाहे अपने अनुभवों के बारे मे मुझे लिख सकते हैं, परन्तु उनके बारे मे ज्यादा सोच विचार न करे।

११४—आपका प्रयत्न प्रशसनीय है, परन्तु शरीर को एक दिन मे ही सुन्न नही किया जा सकता। कुछ लोगो के लिये तो यहाँ तक पहुँचना जीवन-भर का काम होता है। हम बाहर जाने के आदी हो गये है और युगों से बाहर भटक रहे है, इसलिये थोडे से समय मे अपनी तवज्जह को पूरी तरह अन्दर की ओर मोड़ना बहुत मुश्किल है। फिर भी आपके अनुभव सन्तोपप्रद और उत्साहवर्द्धक है। आपको जो शब्द सुनाई दे रहे है उन्हे सुनते रहे, परन्तु उनके पीछे न भागे, उनका पीछा न करे। अपनी तवज्जह को हमेशा दोनों भौहो के बीच में ठहराये रखना चाहिये। सुमिरन की क्रिया मुँह या जबान से नही की जाती। वे अन्दर के नजारे इन आँखो से नही देखे जाते और न उस शब्द को इन कानों से सुना जाता है। अभ्यास मन से करना है, इसमे शरीर पर कोई दबाव नही डालना चाहिये। आपने जो तत्वो का दृश्य देखा वह संतोपप्रद है, परन्तु जो सत्सगी सच्ची आत्मिक प्रगति करना चाहता है, उसके लिये इनका कोई विशेष महत्व नही है।

११५—कृपया उतार-चढाव की चिन्ता न करें, जिनका आना करीब-करीब अनिवार्य ही है, बल्कि श्रद्धा और विश्वास के साथ अपना अभ्यास करते रहे। हमारी प्रगति कैसी हो रही है इसका सोच-विचार करना हमारा काम नही है। हमारा काम तो यह है कि ईमानदारी के साथ अपना कर्तव्य करे और बाकी सब-कुछ सतगुरु पर छोड़ दे। एक सिपाही का काम तो लड़ना और हुक्म मानना है। युद्ध का संचालन करना और नतीजों पर गौर करना सेनापति का काम है। अगर हम अपना कर्तव्य ईमानदारी के साथ पूरा करते है और नामदान के समय दिये गये आदेशों का बराबर पालन करते है तो हमे किसी बात की चिन्ता करने की जरूरत नही। बाकी सब कुछ सतगुरु करेंगे।

कृपया अपने भजन-सुमिरन मे बराबर जुटे रहे और नियमित रहने की कोशिश करें। सोने से पहले कुछ देर तक सुमिरन करें और जब भी आपको समय मिले सन्त-मत की पुस्तकों को पढ़े, परन्तु अपने आपको थकाये नही।

११६—हम सबके जीवन मे कभी न कभी ऐसा समय आता है जब हम किसी चीज़ की कमी महसूस करते हैं और जीवन की बुराइयो तथा परेशानियों से बचने के लिये किसी न किसी वाद या मत की तलाश करते है, परन्तु उसका असली हल तो यह है कि हम अपने अन्दर तलाश करे। सब सन्तों-महात्माओ ने यही शिक्षा दी है और हमारे महान सतगुरु बाबा सावनसिहजी महाराज भी बार-बार यही आदेश देते थे। आप फरमाया करते थे, "अन्दर जाओ"। परन्तु हमारे लिये यह जानना जरूरी है कि अपने अन्दर कैसे जाये। सन्त अपने शिष्यो को इसका तरीका सिखाते हैं। एक बार शिष्य सतगुरु की शिक्षा के अनुसार अन्दर जाता है तो फिर कोई तकलीफ नही रहती और फिर किसी प्रकार के सभा, सम्मेलन आदि की जरूरत नही।

११७—हमें मालिक से मिलने का तरीका मालूम करने के लिये जितनी भी हो सके उतनी गहरी खोज करनी चाहिये। हकीकत की सच्ची खोज में जो भी समय लगाया जाता है वह बेकार नही जाता। परन्तु जब जिज्ञासु को यह सन्तोष हो जाये कि जो मार्ग उसने चुना है वह हर पहलू से सही मार्ग है तो उसे पूरी तरह से अभ्यास में जुट जाना चाहिये। इस मार्ग पर चलने के लिये हमें अपना धर्म बदलने की जरूरत नही, क्योकि सन्त-मत का आदर्श इससे बहुत ऊँचा है और वह किसी धर्म में दखल नही देता। जब तक सत्संगी सन्त-मत के सिद्धान्तों पर दृढ है, वह किसी भी धर्म पर चलने के लिये स्वतन्त्र है। परन्तु शराब तथा नशीले पदार्थो और मांस, मछली, मुर्गी, अण्डे आदि तथा इनसे बनी चीजों से दूर रहना बहुत जरूरी है। अगर आप इस मार्ग को अपनाना चाहते है तो कृपया छः महीने तक इन चीजों से परहेज करके देखें कि यह आपको कहाँ तक माफ़िक आता है।

११८—आपके इस निश्चय की मैं प्रशंसा करता हूँ कि आप अपनी ओर से पूरी कोशिश करेगे। अगर आप पूरी कोशिश करेंगे तो वह शक्ति जो आपके अन्दर है, आपको इसका पुरस्कार देने में नही चूकेगी। अगर आपको सुबह जल्दी उठने में कठिनाई होती हो तो आप अपने अभ्यास का समय सुविधा के अनुसार बदल सकते है। वैसे सवेरे-सवेरे का समय खामोशी और शान्ति का होता है, परन्तु यह जरूरी नही कि अभ्यास इसी समय किया जाय। अगर भजन में बैठने से पहले शरीर को पूरा आराम मिल चुका हो तो यह लाभप्रद है।

साँस के आने-जाने तथा उन हलचलों की ओर जिनका आपने वर्णन किया है, कोई ध्यान न दें तथा अपने खयाल

को भौहों के बीच में रख कर मन ही मन सरल गति से सुमिरन करें। जब भी आपको समय मिले और कुछ लिखने के लिये हो तो लिख सकतें हैं। परन्तु यह कोई बहुत जरूरी नही है।

११९—ये प्रकाश ओर रंग जो आपको कभी-कभी दिखाई देते है सही है तथा उत्साह को बढ़ाने वाले है। परन्तु आपको चाहिये कि इन्हें बगैर किसी लगाव के, तटस्थ भाव से देखें। इसका मतलब यह है कि अगर ये दिखाई न दें तो भी आप उन्हे याद न करें और उन्हें देखने को न तरसें, और अगर दिखाई दें तो खुशी में फूल न जायें तथा उनमें दिलचस्पी न लेने लगें। ये सब तो केवल हमारे रास्ते में आने वाले दृश्य है। जब ये दृश्य दिखाई दे तो उनके पीछे भागने की कोशिश न करें, बल्कि अपने ध्यान को आँखों के केन्द्र पर रखते हुए उन्हें इस प्रकार देखें जैसे आप सिनेमा के परदे पर चल-चित्रों को देखते है पर अपनी कुर्सी से उठ कर परदे की ओर नही भागते।

१२०—आप हजरत ईसा को तभी देख सकेंगे जब आप उस मण्डल में पहुँचेंगे जहाँ वे है। परन्तु आप इससे नीचे भी उनके प्रभाव को महसूस कर सकते है और उनके शब्द-स्वरूप को देख सकते हैं। वास्तव में सन्त-महात्मा केवल मार्ग-दर्शन और रूहानी शिक्षा देने के लिये ही देह धारण करते है, परन्तु उनका असली स्वरूप तो शब्द या नाम ही होता है। कोई अगर हजरत ईसा से मिलना चाहता है या उनकी शिक्षा की सचाई को जानना चाहता है, तो वह किसी देह-धारी जीते-जागते गुरु के मार्ग-दर्शन मे सन्त-मत पर चलते हुए इस उद्देश्य को पूरा करने में सफल हो सकता है। परन्तु यदि आप बुरा न माने तो मैं पूछना चाहूँगा कि उनके जन्म और उनकी शिक्षाओं के बारे में जानने से आपको किस

प्रकार लाभ होगा ? आपका पहला और सबसे जरूरी उद्देश्य तो होना चाहिये अन्तर मे जाना । दूसरे शब्दों मे, गहरे और लगातार सुमिरन के द्वारा आपको अपने शरीर को खाली करके अपनी सम्पूर्ण चेतनता को समेट कर तीसरे तिल मे लाने की कोशिश करना चाहिये, ताकि आप शब्द से जुड कर अपना रूहानी सफ़र शुरू कर सकें । बाकी सब धीरे-धीरे समय आने पर होगा ।

अपनी तरक्की की गति बढाने के लिये मन ही मन हर वक्त पाँच नाम का सुमिरन करते रहे । जब भी आपको फ़ुरसत हो या जब आप किसी दिमागी काम में न लगे हो, जैसे आप किसी का इन्तिजार कर रहे हों, यात्रा कर रहे हों, या दो कार्यो के बीच में कुछ समय खाली बैठे हों, या कोई भी ऐसा काम कर रहे हों जिसमे मन के पूरे ध्यान की जरूरत न हो, ऐसे वक्त मे मन ही मन सुमिरन करते रहे । इससे आपको भजन मे बैठने पर अपने ध्यान को आसानी से एकाग्र करने मे मदद मिलेगी ।

१२१—जहाँ तक सिगरेट, तम्बाकू आदि पीने का सवाल है, स्वास्थ्य और स्नायु-मण्डल के हित में इससे परहेज करना ही अच्छा है । परन्तु इस पर कोई सख्त पाबन्दी नही है । फिर भी आप इसे धीरे-धीरे छोड़ सकते है ।

१२२—सत्संगियों की संगति अच्छी और लाभ-प्रद है, बशर्ते कि बात-चीत रूहानियत, भजन-सुमिरन, सतगुरु या सन्त-मत के सिद्धान्तो के बारे मे हो । सत्सग की चर्चाएँ ध्यान को थोडा-बहुत अन्दर की ओर ले जाती है ।

१२३—स्थिरतापूर्वक अभ्यास करते रहें । अपने ख़याल को आँखो के केन्द्र पर जमा कर सुमिरन या पाँच नाम का जाप करे । सुमिरन को जितना हो सके ज्यादा वक्त दें और कम से कम रोज आधा घण्टा शब्द को सुनने में दें । इससे

कई बातें सुलझ जायेंगी और आपको रूहानी तरक्की में मदद मिलेगी। उतावली नहीं करना चाहिये। जो कुछ मिला है उसे पक्का और स्थिर करने की कोशिश करना चाहिये। जो अनुभव आपको हुए है वे सन्तोषप्रद है, परन्तु ये आपकी आखिरी मंजिल नही है। हमारा उद्देश्य तो शब्द के साथ मजबूती से जुड़ जाना है, जो कि आपको ऊपर खीचेगा। ऐसा महसूस होना कि मुँह पर या शरीर पर मकड़ियाँ चल रही है, सत्संगियो के साथ ही नही बल्कि दूसरे अभ्यासियों के साथ भी होता है जब कि उनका ध्यान ठीक तरह से जमने लगता है। यह कोई चिन्ता की बात नही। इसकी ओर ध्यान ही न दे।

१२४—जहाँ तक फार्म पर बेकार बैलों का सवाल है, क्योकि आप न उन्हे काम मे ले सकते है और न उनके पालन का खर्चा उठा सकते है, तो सिर्फ उन्हे बेचा ही जा सकता है। परन्तु आप उन्हे वध के लिये न बेचे। आप उन्हे किसी ग्राहक को बेचे, कसाई या कसाई-खाने को नही। ग्राहक से आप यह तो नही पूछते कि इनका वह क्या करेगा। एक बार बेच देने के बाद यह आप पर नही बल्कि ग्राहक पर निर्भर है कि वह उनका क्या करे। कुछ भी हो, सत्संगी को, किसी भी हालत मे, वध के लिये जानवर, मुर्गियाँ आदि पालने की इजाजत नही है। सूअर और मुर्गी पालने के सवाल का भी यही जवाब है। ये बातें तो सत्सगी के खयाल में भी नही आनी चाहिये, इस प्रकार का व्यापार करना तो जान-बूझ कर बुरे कर्मो को इकट्ठा करना है। हिन्दुस्तान मे ही नही बल्कि अमेरिका तथा अन्य देशो में भी ऐसे कई फार्म है जो सूअर, मुर्गी तथा वध के लिये किये गये पशु-पालन के बगैर भी अच्छे मुनाफे पर चल रहे है।

अगर आप मेहनत के साथ काम करें और फार्म का

अच्छा इन्तिजाम करें तो आपको काफी फायदा हो सकता है और आप कर्मो का बोझ बढाने से बच सकते हैं। असल में यह कर्मो के पहाड़ को इकट्ठा करने के बदले (जैसा कि आप सूअर और मुर्गी-पालन से करते) उन्हे चुकाने या समाप्त करने में सहायक होगा।

१२५—यह अच्छा है कि आपने अपनी आमदनी को बढाने के लिये दूसरे तथा अधिक अच्छे साधनों को अपना लिया है। अगर आप भक्ति, प्रेम और लगन के साथ रोज नियम-पूर्वक अपना भजन-सुमिरन करते रहेगे तो आपकी बहुत सी मुश्किले अपने आप हल हो जायेगी और आपमें ऐसी हिम्मत और शक्ति आ जायेगी कि बाकी सब-कुछ आसान हो जायेगा।

१२६—आपका मुझे सीधे पत्र लिखना बिलकुल ठीक है, खासकर जब कि आपके अन्दर सत्य को जानने की इतनी गहरी लगन है; कृपया इसके लिये कोई चिन्ता न करें। लेकिन सत्य आपके अन्दर ही है और अन्दर ही उसकी तलाश करना चाहिये।

जिन्हे हम दैविक-शक्ति, अतीन्द्रिय शक्ति, मानसिक-शक्ति आदि कहते है, वे चाहे कितनी ही आकर्षक प्रतीत हों, रूहानी सच्चाई और हकीकत से उनका कोई सम्बन्ध नही है। वे केवल जड़ पदार्थो पर मन की प्रभुता के प्रमाण है और इस बात को साबित करते है कि अगर मन को ठीक तरह से सिखाया और साधा जाय तो वह जड़-पदार्थो पर लगभग पूरा प्रभुत्व या अधिकार प्राप्त कर सकता है। परन्तु हमारी असली समस्या तो आत्मा को इन पदार्थो के, नीचे खीचनेवाले प्रभाव से मुक्त करना और उसे वापस अपने मूल स्रोत परमपिता के धाम ले जाना है। जो कुछ भी हम देखते है यह सब अनित्य, भ्रमपूर्ण और नाशवान है, यह हमे

सच्चा सुख नही दे सकता । हमें उस वस्तु की तलाश करना चाहिये जो सत्य और शाश्वत है, सदा रहनेवाली है । यह एक दिन मे नही हो सकता । उसे प्राप्त करने के लिये हमें एक पूर्ण पुरुष या सच्चे गुरु की शरण लेना होगी । ऐसे पूर्ण गुरु के मार्गदर्शन में अभ्यास करना भी एक वरदान है। जैसे-जैसे अभ्यासी इस मार्ग पर बढता है उसे हकीकत का पता चलता है, वह अपनी आत्मिक उन्नति का अनुभव करता है और अपने मन पर पूरा अधिकार प्राप्त कर लेता है । तब उसकी आत्मा परमपिता परमात्मा के लिये सच्चे दिव्य प्रेम का अनुभव करती है । मन ही बहुत बडी रुकावट है, यह हमारे और मालिक के बीच में एक परदा है।

सन्त बताते है कि मालिक और मन दोनो ही हमारे अन्तर मे है । सही रूहानी अभ्यास के द्वारा हमे मन को वश में करना है, उसे बेअसर करना है । हमें अन्दर जाना है और अपने अन्तर मे ही मालिक को प्राप्त करना है । बाहर की वस्तुओं के बारे में चिन्तन हमे बाहर-मुखी करता है और उनके प्रति मोह पैदा करता है । अन्तर के केन्द्र पर ध्यान जमाने से हम अन्तरमुख होते है और मन हमारे वश मे आने लगता है । जब पूरी एकाग्रता हो जायेगी तो हमारी समस्त चेतनता शरीर से सिमट कर आँखों के केन्द्र पर आ जायेगी और कुछ समय के लिये हमारा आँखो से नीचे का सारा शरीर मुर्दे जैसा हो जायेगा । तब ही हम शब्द या नाम के साथ जुड़ेंगे, जो हमें ऊपर खीच लेगा और अन्त में ले जाकर मालिक से मिला देगा ।

इच्छा और मोह ही हमारे दु:ख और शोक के कारण हैं । ये हमारे इस जन्म तथा पिछले जन्मो के कर्मो के फल हैं, जिन्हे हम इस जन्म मे अपनी प्रवृत्तियों और सस्कारों के रूप में पाते है । हम सतगुरु के मार्ग-दर्शन मे शब्द से जुड़

कर इन प्रवृत्तियों और संस्कारों को जीत सकते है और इस प्रकार अपने कर्मो को समाप्त कर सकते है।

१२७--परमात्मा का यही विधान है कि समय-समय पर सन्त और पूर्ण गुरु भेजे जाये, ताकि वे योग्य और प्रेमी जीवों को शब्द से जोड़ते रहें। जब एक बार हमे शब्द से जोड़ दिया जाता है तो फिर हमारा कर्तव्य है कि कठिनाइयों तथा बाधाओं की परवाह न करते हुए लगन के साथ मार्ग पर लगे रहे और इस प्रकार अपने निज-घर पहुँच जायें। हाँ, यह सही है कि धीरे-धीरे किन्तु स्थिरता-पूर्वक कोशिश करने वाला अन्त में सफल होता है। जब हम शुरू मे चलना सीखते है तो कितनी बार ठोकर खाते और गिरते है। पर जब हम बडे हो जाते है तो अपनी उन कोशिशों को भूल जाते है और अपने चलने की कुशलता का आनन्द लेते हैं। यही हाल रूहानी अभ्यास का है।

१२८--पर्दे को वेध कर हकीकत को जानने की आपकी इच्छा प्रशसनीय है। सन्त और महात्मा परमात्मा के देह-धारी रूप होते है। वे खोजियो और शिष्यो की मदद और रहनुमाई करने तथा उनकी कठिनाइयो को दूर करने के लिये आते है। परन्तु वह हकीकत आपके अन्तर मे ही है। पथ-भ्रष्ट करने या भटकाने वाली ताकते भी आपके अन्दर ही हैं और कभी-कभी वे बड़ी चतुरता-पूर्वक अपना रूप बदल लेती है और अभ्यासी को धोखा देकर गुमराह करती है। इसीलिये सन्तो ने इनको परखने की कसौटी बतलाई है--वह है पाँच नाम का सुमिरन जिसके सामने ऐसी कोई भी ताकत जो सतगुरु से मेल न रखती हो ठहर नही सकती। इसलिये जब भी जरूरत पडे, इस कसौटी का उपयोग करना न भूले। शब्द-धुन को पकड़ने की कोशिश करे और उसमें लीन हो जाये, ताकि आप खुद देख सकें और पूछने की जरूरत न रहे।

१२९—सत्संगियों के लिये सिर्फ इतना ही काफी नही है कि वे जिज्ञासुओं को सन्त-मत की जानकारी दें, बल्कि सतगुरु का अनुरोध है कि वे स्वयं भी प्रतिदिन राधास्वामी मार्ग की पुस्तके या सन्त-मत से सम्बन्ध रखने वाली पुस्तकें पढे। यह सलाह खास तौर पर उन सत्संगियों को दी गयी थी जो हर रोज सतगुरु का सत्संग नही सुन सकते। मन को सन्त-मत के साहित्य और शिक्षाओ में क्यों लगा कर रखना चाहिये इसका कारण बिलकुल स्पष्ट है। यह मन ही है जिसको हमें वश में करना है। इसलिये जब ठीक तरह से अभ्यास करना और सतगुरु के सत्संग में जाना संभव न हो तो यही अच्छा है कि मन को उनकी शिक्षाओं के विचार मे लगाया जाये, वरना मन अपनी अलग ही धारणाएँ बना लेता है जो भ्रामक और गुमराह करने वाली होती है। जब तक मन को वश मे नही कर लिया जाता वह हमारा सबसे बड़ा दुश्मन है।

आप औरो को भी बता सकते है कि इन सचाइयों के बारे में जितनी बार भी पढें, कम है। हर बार पढते समय इनमे एक नया और अधिक सार-पूर्ण सन्देश मिलता है, खास कर सच्ची और प्रेमी आत्माओ को।

१३०—मै इस बात को पूरा जोर देकर कहना चाहता हूँ कि किसी भी हालत में ध्यान के लिये सतगुरु के फोटो का उपयोग नही करना चाहिये, चाहे वह कोई जिन्दा सतगुरु हो, या ऐसा सन्त हो जिसे गुजरे कुछ ही समय बीता हो या कोई पुराना सन्त या महात्मा हो। हमारे पिछले सभी सतगुरु हमे बार-बार चेतावनी देते रहे है कि सतगुरु के स्वरूप का ध्यान फोटो से न किया जाये, क्योंकि अगर हम इस प्रकार के ध्यान के द्वारा सतगुरु को अन्दर देख भी लें, तो वह केवल उनके फोटो की ही मानसिक मूर्ति होगी और

हमसे वात-चीत नही कर सकेगी। फोटो तो हमे केवल उनकी याद दिलाने के लिये है और उन लोगों को पहचान कराने के लिये है जिन्होने सतगुरु को प्रत्यक्ष नही देखा है। जब हम अपने अन्तर मे अपने सतगुरु या किसी और व्यक्ति, स्थान या वस्तु को देखे तो यह जानने के लिये कि वह सच्चाई है या धोखा, सवसे अच्छा और कारगर उपाय है पाँच नामो को दोहराना। जो इस सुमिरन के सामने ठहर जाये वह सही है, धोखा देनेवाली और झूठी वस्तुएँ सुमिरन करने पर फौरन गायव हो जायेगी। वेशक, यह परीक्षा सिर्फ वे ही कर सकेगे जिन्हे नाम-दान या पाँच नामों का भेद मिला हो। इससे यह भी प्रकट होता है कि हमारे लिये इतना सुमिरन करना जरूरी है कि हमे सुमिरन करते रहने की आदत ही पड़ जाये।

१३१—मुझे खुशी है कि आपने "सार वचन" पढा और अव भी पढ़ते रहते है। इसमे राधास्वामी मत की मूल शिक्षाएँ है, और इसे कई वार पढा जा सकता है। कोई आश्चर्य नही कि आप जव भी पढ़ते है हर वार इसमें कोई नई वात पाते है। इस प्रणाली का सार यही है कि अपनी चेतनता को नामो के सुमिरन के द्वारा धीरे-धीरे शरीर मे से समेटा जाय। जो आप सीखते है उस पर अमल करना यही है। यही दुनिया में सच्चा अनासक्त या वेलाग जीवन विताने का ढंग है, जिसमे आप दुनिया मे रहते हुए भी दुनिया के नही वनते।

१३२—अव आप वास्तव मे इस स्वप्न से जागने लगे है जिसे हम 'जीवन' कहते है और अपने आपको सच्चे अनन्त जीवन के योग्य वना रहे है। सुमिरन और भजन ही इस नये रूहानी देश मे जाने का पासपोर्ट या पारपत्र है।

आपका अनुभव विलकुल सही था और यह आपके गहरे

प्रेम और भजन में प्रगति का सूचक है। आपका मन और आप---अर्थात आत्मा---दोनों अलग-अलग हस्तियाँ है। आत्मिक साधना और अभ्यास के द्वारा ही हम आत्मा को मन के पंजे से आजाद कर सकते है। अभ्यास के द्वारा यह धीरे-धीरे और अपने आप होता है और इसमें कोई जोखिम या ख़तरा नही है। यह बिलकुल ठीक और स्वाभाविक है कि आप अपने रूहानी अनुभवो के बाद सुबह (भजन से उठने पर) अपने आपको हमेशा की तरह सामान्य पायें। इससे अपने को परेशान न होने दे, बल्कि इसके द्वारा आपको और अधिक सुमिरन करने और शब्द को तल्लीनता के साथ सुनने की प्रेरणा मिलनी चाहिये।

हम इन पाँच नामों का सुमिरन करते हैं, क्योकि ये उन आन्तरिक रूहानी देशों के स्वामियो अथवा धनियों के नाम हैं, जिन देशों में से गुज़र कर हमें अपने रूहानी सफ़र में ऊपर जाना है। उनके सुमिरन के द्वारा हम उनसे परिचय बढ़ाते हैं और इस प्रकार अपने रूहानी सफर को आसान बनाते हैं।

असली नम्रता भजन से प्राप्त होती है, जैसे-जैसे हमारा ध्यान शब्द में लगने लगता है वैसे ही नम्रता भी बढ़ती जाती है। सासारिक जीवन में भी हमारा व्यवहार नम्रता और विनय-पूर्ण तथा अहंकार और गर्व से रहित होना चाहिये।

आप हिन्दुस्तान आने में असमर्थ है, इसके लिये दु:खी न हों। सतगुरु आपके अन्दर है।

१३३---आँखों का केन्द्र सूक्ष्म मण्डल में खुलनेवाली खिडकी है जिसमे से विलक्षण दृश्य दिखाई देते है। परन्तु सत्सगी को इन दृश्यों में रुचि नही लेनी चाहिये, क्योकि इससे मन को मौका मिल जाता है कि वह हमें धोखा दे।

उन्हे केवल एक दर्शक की तरह देखते रहे । हाँ, फरिश्ते होते है, परन्तु हमे तो नजर अपनी मंजिल पर ही रखनी चाहिये ।

१३४—मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आप भजन-सुमिरन को इतना समय दे रहे है । परन्तु यह याद रखें कि इस अभ्यास का मुख्य उद्देश्य अपनी सुरत को समेट कर आँखों के पीछे तीसरे तिल मे लाना है । (हमे तो सुमिरन के द्वारा अपनी सुरत को भौहो के बीच मे एकाग्र करना है, इसके बाद शब्द-धुन उसे अन्तर मे ऊपर की ओर ले जायेगी ।)

(अ) जब ध्यान दोनो भौहों के बीच मे अच्छी तरह एकाग्र हो जाता है, तब शरीर के निचले भाग, हाथ-पैर आदि सुन्न होते है । परन्तु यह केवल अस्थायी है और शरीर मे से चेतनता के सिमटने के कारण होता है । जब मन की तवज्जह वापस नीचे आ जाती है तो सुन्नता मिट जाती है और मनुष्य अपना रोज का काम-काज सामान्य ढंग से, बल्कि ज्यादा अच्छी तरह कर सकता है ।

कुछ लोगों को कभी-कभी ऐसा भी महसूस होता है जैसे शरीर पर चीटियाँ चल रही है या सुइयाँ चुभ रही हैं । ये सब बातें ठीक है, परन्तु सत्संगी को इनसे परेशान नही होना चाहिये । पेट मे वायु या गैस पैदा होना ज्यादा कर भोजन और उसके अच्छी तरह न पचने की वजह से है । रूहानी अभ्यास का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है । इससे आराम पाने के लिये खाने मे आवश्यक परिवर्तन करना चाहिये, जो भोजन माफ़िक आये उसे उचित मात्रा मे लेना चाहिये ।

(ब) सुमिरन मे पाँच नामों को मन ही मन जपना या दोहराना चाहिये । आँखों पर किसी भी प्रकार का जोर या दबाव डाले बगैर ध्यान को पूरी तरह से भौहो के बीच मे

जमाना चाहिये। यह मन ही है जिसे इस केन्द्र पर सुमिरन करना है और इसी सुमिरन के द्वारा सुरत इस स्थान पर सिमट कर आयेगी। जब सुरत या चेतनता पूरी तरह से इस स्थान पर एकत्रित हो जायेगी तो फिर शब्द अपने आप उसे तीसरे तिल मे तथा और ऊपर के मण्डलो मे खीच कर ले जायेगा।

जब सुरत आँखों के केन्द्र पर स्थिर हो जायेगी तब आपको अन्दर कुछ प्रकाश दिखाई देगा, हो सकता है यह कुछ चमकीले बिन्दु, बिजली की चमक या और किसी प्रकार की रोशनी के रूप मे दिखायी दे। जैसे-जैसे आप प्रगति करते जायेगे, सिमटाव जल्दी होने लगेगा और शरीर के निचले भाग में दर्द होना बन्द हो जायेगा। पैरो की सुन्नता सिटने के बजाय और शीघ्रता से होने लगेगी और अभ्यास का समय पूरा होने पर चेतनता की धारा पहले की बनिस्बत जल्दी शरीर मे लौटेगी।

(स) आप कितने घण्टे अभ्यास करे यह अपनी सुविधा के अनुसार तय कर सकते है, परन्तु अपने आप को इतना न थका दें कि नतीजे उलटे होने लगे। यदि ऐसा हो तो यह बेहतर होगा कि उस समय अभ्यास बन्द कर दें और कुछ समय बाद दूसरी बैठक शुरू करें। आपके मन का अच्छा पक्ष आपको आगे बढ़ने के लिये उकसाता है, आप इसके लिये कोई चिन्ता न करें, परन्तु अपने सांसारिक कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को भी बराबर निभाते रहें।

१३५—परमात्मा अपनी बख्शिश बिना मॉगे करता है और बदले में कुछ नहीं चाहता। फिर भी बख्शिश प्राप्त करने वाले को चाहिये कि उसकी कीमत पहचाने और उसका पूरा लाभ उठाये।

शब्द की प्राप्ति की बुनियाद सुमिरन है। इसलिये

अगर आप अच्छी तरह सुमिरन करते रहे है तो आप अन्तर में शब्द को आसानी से पकड़ सकेंगे और वह धीरे-धीरे स्पष्ट होता जायेगा। यह शुरू-शुरू मे कठिन है, परन्तु अभ्यास से आसान हो जाता है। जब आप सुरत को समेट सकेंगे और उसे भौहों के बीच मे स्थिर रख सकेगे तो शरीर अपने आप कहना मानने लगेगा। शरीर एक हुक्म में चलने वाली मशीन के समान है और हमेशा मन का हुक्म मानता है। इससे आपको शान्ति, शक्ति और स्थिरता प्राप्त होगी। आप तो केवल अपने भजन-सुमिरन में श्रद्धा और भक्ति के साथ लगे रहे।

१३६––मै आपको सलाह दूंगा कि नाम लेने से पहले सन्त-मत के साहित्य को अच्छी तरह पढ़ें और उस पर विचार करे। इससे आपको अपने अधिकांश प्रश्नों के उत्तर मिल जायेगें। अगर आपके और प्रश्न या शंकाएँ हों तो उनके समाधान के लिये बिना किसी झिझक के लिख सकते है।

१३७––नाम-दान के समय आपको बता दिया गया होगा कि हम किसी निजी स्वार्थ की पूर्ति या किसी दुनि-यावी फायदे के लिये नही, बल्कि आत्मिक जागृति तथा मुक्ति के लिये नाम लेते है। इसके लिये हमें कर्मो के उस भार को हटाना है जो हमे लगातार नीचे की ओर खीच रहा है। इन कर्मों का कर्ज उन्हें भुगत कर तथा रूहानी अभ्यास के द्वारा उन्हे काट कर चुकाया जा सकता है। सन्त-मत में यह इन दोनो विधियों से किया जाता है। जितना ज्यादा हम भजन-सुमिरन करते है, कर्मो का बोझ उतना ही हलका होता जाता है।

रूहानी अभ्यास तथा नामो का जब भी और जहाँ भी हो सके प्रेम-पूर्वक सुमिरन करने का एक और लाभ यह होता है कि इससे इच्छा-शक्ति बलवान होती है तथा सत्सगी

का विश्वास दृढ होता है। हमें सिर्फ रूहानी अभ्यास में ही नही बल्कि प्रतिदिन के कर्तव्यो का पालन करने में भी पूरी लगन के साथ कोशिश करनी चाहिये और नतीजा अपने सतगुरु पर छोड देना चाहिये। बडी अच्छी बात है कि आप सब-कुछ प्रसन्नतापूर्वक भुगत रहे है और अन्तर मे सतगुरु का आसरा लिये हुए है। कर्मो के कर्ज को चुकाने का यही सबसे अच्छा तरीका है।

कृपया चिन्ता न करे तथा अपने आपको निराश्रित न समझे, बल्कि लगन और प्यार के साथ नाम का सुमिरन करते रहे और जितना भी सुविधापूर्वक हो सके शब्द का अभ्यास करे। पॉच नाम के सुमिरन पर अधिक जोर दें तथा अभ्यास में बैठने के नियत समय के अलावा जब आपको समय हो और जब आप कुछ न कर रहे हों तब भी सुमिरन करते रहे। यह अन्तर में शब्द से जुड़ने में सहायक होगा।

नाम-दान के समय अभ्यास का जो आसन बताया जाता है, वही प्रचलित और नियमित आसन है, परन्तु यह पश्चिम के सभी लोगों को सुविधाजनक मालूम नही देता। आसन का यही उद्देश्य है कि पूरे समय तक हम एक ही तरह से स्थिरतापूर्वक बैठे रह सके ताकि सुमिरन तथा उसके बाद शब्द का अभ्यास कर सके। अगर आप इस आसन पर न बैठ सके अथवा ज्यादा समय तक इस पर सुविधापूर्वक न बैठ सके तो आप कुर्सी पर बैठ सकते है या जिस प्रकार की बैठक आसान और सुविधापूर्ण लगे उसमे बैठ सकते है।

१३८—रूहानी अनुभव तो हमारी सुरत या चेतनता को ही करना है, और वह इस समय हमारे सम्पूर्ण शरीर में फैली हुई है। जब तक इसे समेट कर तीसरे तिल मे नही लाया जाता, आन्तरिक अनुभव नही हो सकते और न अन्दर सतगुरु के दर्शन हो सकते है। सतगुरु अन्तर मे हमेशा मौजूद

है। उनसे मिलने के लिये हमें सिर्फ ऊपर जाना है। ऊपर जाने के लिये हमें दोनों भौहों के बीच में तवज्जह रख कर सुमिरन करना है। अभ्यास के नियत समय के अलावा भी दिन में किसी भी समय मन ही मन सुमिरन किया जा सकता है। यह हमारे रोज के काम-काज में बाधा नही डालेगा। हम किसी से मुलाकात के लिये इन्तिजार करते समय, स्टेशन पर गाडी की बाट जोहते समय, सफर करते या मोटर चलाते हुए या जब भी हम फुरसत मे हो और कोई खास काम न कर रहे हो, सुमिरन कर सकते है।

जहाँ तक शब्द सुनने का सवाल है, अगर आपका सुमिरन अच्छा और पक्का होगा तो आपको शब्द की धुन भी स्पष्ट और जोर से सुनाई देगी तथा उसमें कशिश होगी। धुन को हमेशा शुरू-शुरू मे दाहिनी ओर से और जब स्पष्ट होने लगे तो मध्य में सुनना चाहिये। परन्तु उसे बाईं ओर से कभी भी नही सुनना चाहिये। अगर बाईं ओर से आवाज आना बन्द न हो तो आपको बाये कान पर से अँगूठा हटा देना चाहिये। अगर फिर भी बाईं ओर से शब्द आना जारी रहे तो आप वापस सुमिरन शुरू कर दे या उस समय अभ्यास मे से उठ जाये और बाकी समय सन्त-मत की किसी पुस्तक को पढने में लगाये; खास कर 'सार वचन' या 'आध्यात्मिक मार्ग भाग २' पढ़ सकते है। परन्तु अगर आप बाईं ओर से आनेवाली आवाज की ओर ध्यान ही न दे और आँखों के बीच में तवज्जह को जमाये रखे तो बाईं ओर से आवाज आना अपने आप बद हो जायेगी।

१३६—जैसा कि आप जानते ही है, हमारा रूहानी सफर पैरो के तलवो से शुरू होकर सिर की चोटी तक जाता है। इसका सबसे जरूरी अंश अपनी तवज्जह को तीसरे तिल या शिव-नेत्र पर स्थिर करना और अन्तर मे चढ़ाई करना

है । उस वक्त हमारे पिछले कर्म, पिछले लगाव, संस्कार आदि सबसे ज्यादा बाधक बनते है । परन्तु धीरे-धीरे शिष्य धैर्य और साहस के साथ, अपने सतगुरु के पूरे संरक्षण और मार्ग-दर्शन मे अपने कदम बढ़ाता जाता है ।

शुरू शुरू में शब्द की ताकत या तेजी को सहन करना आसान नही होता, जो कि हमेशा ही मधुर और सौम्य नही होता बल्कि अत्यन्त तीव्र और प्रबल भी हो सकता है। ऐसी अवस्था मे कठिनाई पैदा होती है । उस दिव्य सत्ता को सहने की आदत स्थूल शरीर को धीरे-धीरे ही होती है । जैसे-जैसे समय बीतता है, शब्द की धुन शरीर मे बड़े उपयोगी परिवर्तन लाती है और उसे शब्द की दिव्य धुन को ग्रहण करने के अधिक योग्य बनाती है ।

मायूस या निराश होने का कोई कारण नही है। आप अच्छी प्रगति कर रहे है और उस महान बख्शिश को पाने के योग्य बन रहे है । हॉ, यह सच है कि शब्द को प्रेमपूर्ण समर्पण की भावना के साथ सुनना चाहिये । यह आपके शरीर मे रम जायेगा और आपको ऊपर ले जायेगा । परन्तु उस समय विश्लेषण अथवा बौद्धिक छान-बीन की कोशिश नही करनी चाहिये । इससे आप पथ से अलग हो जायेगे, क्योंकि तब मन पूरी एकाग्रता के साथ ऊपर नही जायेगा और उसका कुछ अंश छान-बीन और दलीले करने मे अटका रहेगा । जैसे-जैसे मन शब्द को ग्रहण करेगा, वह नई शक्ति और समझने की नयी योग्यता पायेगा और कई बाते जो अब तक समझ में नही आती थी, अब स्पष्ट हो जायेगी । आपमे विश्वास की भावना भी बढेगी ।

शब्द को मस्तक के बीच मे या सिर की चोटी पर सुनना अच्छा है । यही उसका मुकाम है । हॉ, आप ऑखे खुली या बन्द रख कर भी शब्द को सुन सकते है तथा लोगो से बात-

चीत करते वक्त भी वह सुनाई दे सकता है। यह सब आपकी तल्लीनता पर निर्भर है। शब्द को परदे मे इसीलिये रखा गया है कि हम अपने रोज के काम-काज बराबर कर सके, नही तो अगर हमारी पूरी तवज्जह शब्द मे ही लगी रहे तो हमारे लिये और कोई भी कार्य करना असम्भव है।

भजन मे धीरे-धीरे शरीर का सुन्न होना यह साबित करता है कि तवज्जह को शरीर से हटा कर और कही लगाया जा रहा है। आप इस से और......से घबराये नही। सतगुरु और सुमिरन को याद रखे, आपको कोई चीज नुकसान नही पहुँचा सकती।

१४०——बेशक यह जिन्दगी बड़ी सख्त और कष्टपूर्ण है, परन्तु हमारी अधिकांश तकलीफें हमारी ही पैदा की हुई है। ये हमारे ही पिछले कर्म है जो किसी न किसी रूप में अपना असर दिखा रहे है।

आपकी शारीरिक अवस्था के लिये मैं सलाह दूँगा कि आप किसी प्रकार की प्राकृतिक चिकित्सा शुरू करे और किसी ऐसे चिकित्सक की तलाश करें जो आपको इस चिकित्सा के बारे मे सलाह दे सके। हमारे आहार का भी हमारे स्वास्थ्य पर काफी प्रभाव पड़ता है। शाकाहारी भोजन में भी यह खयाल रखना चाहिये कि कौन सी चीजे किस मिश्रण में आसानी से हजम होती है और अपने स्वास्थ्य के लिये उनका प्रयोग करना चाहिये। शरीर की बहुत ज्यादा चिन्ता भी नही करना चाहिये, लेकिन तन्दुरुस्ती के लिये जो कुछ भी आवश्यक हो वह करना चाहियें।

मै भली प्रकार समझ सकता हूँ कि दुनियावी असफलताएँ और बीमारियाँ भजन मे कितनी रुकावटे पैदा करती है, परन्तु यह कर्मो का कर्ज है जिसे कभी न कभी अदा करना ही होगा। इन्न प्रारब्ध कर्मो के असर को कम करने का सबसे

अच्छा उपाय है जितना भी हो सके ज्यादा से ज्यादा सुमिरन करना। आजकल अपने स्वास्थ्य की वजह से आप काम पर नहीं जा सकते और शायद अधिक समय के लिये बैठ भी नही सकते, इसलिये हर समय और हर परि-स्थिति मे नाम का सुमिरन करते रहे। बिस्तर में लेटे-लेटे भी सुमिरन करें। अपने भजन के नियत समय पर यह ध्यान रखें कि लेट कर सुमिरन करते समय आप सो न जायें। इस बात का ध्यान रखते हुए आप बिस्तर मे लेटे हुए भी तवज्जह को भौहो के बीच में रख कर सुमिरन कर सकते है। आँखों को हलके से बन्द कर लेना चाहिये और गले या जबान में कोई हलचल नही होनी चाहिये, क्योंकि सुमिरन करना और अन्दर नजारे देखना आपकी तवज्जह का काम है, जबान या आँखों का नही। इससे आपकी सुरत अन्तर में जायेगी।

इस समय आपको काफी फुरसत है, इसलिये आपको चाहिये कि सुबह और शाम ही नही बल्कि सारा वक्त ही नाम के सुमिरन मे बिताये और सतगुरु से, जो हमेशा आपके अंग-संग है, अन्तर में प्रार्थना करें।

१४१—शब्द से बिछुड़ जाने और मन के साथ गाँठ बाँध लेने के कारण ही हमें बार-बार इस संसार में जन्म लेना पड़ता है।

जिस आवाज का आपने वर्णन किया है वह सही है। सुमिरन का उद्देश्य सुरत को पूरी तरह से समेटना और उसे शब्द के साथ जोड़ना है। अगर सुमिरन के समय शब्द की आवाज इतनी जोर की हो कि मजबूरन तवज्जह को अपनी ओर खींचती हो तो उस पर तवज्जह देना बिलकुल ठीक है, परन्तु खयाल को तीसरे तिल से हटने न दिया जाय अर्थात् आपको आवाज के पीछे भागने की कोशिश नही करना

चाहिये, बल्कि तवज्जह को तीसरे तिल पर स्थिर रखते हुए उसे प्रेम और प्रतीति के साथ सुनना चाहिये।

हाँ, यदि शब्द-धुन को पूरी तवज्जह के साथ सुना जाय तो सिमटाव जल्दी होता है। आपको जो देह मे कँपकँपी का अनुभव होता है, वह एक शारीरिक हलचल है और उसका कारण भी शारीरिक ही है। खाने मे परिवर्तन तथा अन्य उपायो द्वारा उसे ठीक किया जा सकता है। यह खेद की बात है कि इन शारीरिक बाधाओं से आपका शब्द से सम्बन्ध टूट जाता है। दर्शन तभी होगे जब आप कुछ समय तक बगैर बाधा के लगातार शब्द से जुड़े रहेगे। अन्तर में दर्शन की तड़प बनाये रखे, इससे आपको बहुत मदद मिलेगी।

दिन के बाकी समय में और काम-काज करते हुए भी सुमिरन करते रहने की आपकी कोशिश बिलकुल ठीक है। मन ही मन सुमिरन करते रहना बहुत जरूरी है और रूहानी तरक्की में बहुत सहायक है। सतगुरु हमेशा अन्दर मौजूद है और मदद करने को तैयार है, बल्कि वे शिष्य की निरन्तर बाट जोह रहे है। आप जितना अधिक सुमिरन करेगे और साथ-साथ अपने सासारिक कर्तव्य भी जितनी अच्छी तरह हो सके करते जायेगे उतनी ही ज्यादा आपको मदद मिलेगी।

पूरा विश्वास बडी उत्तम वस्तु है, पर उसकी प्राप्ति आसान नही। यहाँ तक कि जब हमे ऐसा लगने लगता है कि हमने पूर्ण विश्वास की अवस्था प्राप्त कर ली है, तो भी यह साधारणतया मन का भ्रम ही होता है। जब कभी जिन्दगी मे हमारे विश्वास की सच्ची परीक्षा होती है तभी हमें पता चलता है कि हमारा विश्वास वास्तव मे अडिग है या नही अथवा हमारा कितना विश्वास है।

सोने से पहले शब्द को सुनते रहना बिलकुल ठीक है। सुमिरन शब्द की प्राप्ति का मूल आधार है।

१४२—सतगुरु आपके अन्दर मौजूद है। अगर आप सुमिरन के द्वारा चेतनता को समेटकर तीसरे तिल मे ले आयेगे तो वे आपके सब सवालो का जवाब देगे और समस्याओ का हल बतायेगे। जब तक यह अवस्था प्राप्त नही होती आप जो कुछ कर रहे है अर्थात उनका ध्यान करके अपनी समझ और योग्यता के अनुसार कार्य कर रहे है, वह ठीक है। इस प्रकार आपको सतगुरु की दया-मेहर प्राप्त होगी। सतगुरु से व्यक्तिगत सम्पर्क न होने की वजह से आपके सामने जो कठिनाइयाँ आती है, मै उन्हे समझता हूँ। परन्तु जितनी कठिनाइयाँ है, उतनी ही ज़्यादा दया-मेहर भी आपके साथ है।

सत्संग का लाभ दो तरफा है। इससे गैर-सत्संगियों को मौका मिलता है कि वे असलियत की खोज करे, अपने सन्देहो को दूर करें और सन्त-मत के सिद्धान्तों और उनके महत्व को भली प्रकार से समझे। दूसरी ओर, इससे सत्सं-गियो मे अन्दर जाने की लगन पैदा होती है और मन को एकाग्र करने मे मदद मिलती है। असली सत्सग तो अन्तर मे शब्द को सुनना है। हमे भजन-सुमिरन के लिये अधिक से अधिक समय निकालना चाहिये। उन्नति करने का यही गुर है।

१४३—जहाँ तक मेरे अमेरिका आने का सवाल है, आने या न आने की इच्छा करना हमारा काम नही है, बल्कि हमे यह हुजूर महाराजजी के हाथो मे छोड देना चाहिए, जिनकी शरण मे हम है और जिनके हुक्म से सब काम हो रहा है। अगर उनकी मौज होगी कि मै अमेरिका जाऊँ तो ऐसा ही होगा और मेरा प्रोग्राम काफी समय पहले सूचित किया जाएगा। सतगुरु से सहयोग करने का सबसे अच्छा तरीका भजन-सुमिरन में जितना भी हो सके समय देना है।

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आपकी छुट्टियाँ आनन्द से वीती । अव आप अपने दुनियावी कार्य और भजन-सुमिरन अधिक लगन और उत्साह के साथ कर सकेगे । हमे दोनो वातों का खयाल रखना है । प्रगति कुछ धीमी है, पर इससे हमे चिन्तित नही होना चाहिये । अगर आप एक दीवार मे लगातार सूराख करते जाये तो दीवार चाहे कितनी ही मोटी क्यो न हो आप एक दिन दूसरी ओर तक पहुँच जायेगे, परन्तु जव तक आप पूरा छेद नही कर लेते दूसरी ओर के प्रकाश को नही देख सकते । कोशिश कभी वेकार नही जाती ।

१४४—आप मस्तक मे तीसरे तिल या किसी खास विन्दु को ढूंढने की कोशिश न करे, वल्कि अपनी तवज्जह को दोनों भौहो के वीच मे जमाये रखे । समय आने पर वह अपने आप सही केन्द्र पर चली जायेगी ।

१४५—मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आप अपना ध्यान शव्द और सुमिरन मे लगाये रखते है और अपनी तकलीफ के वारे में चिन्ता नही करते । यह सही मनोवृत्ति है और हमारा विश्वास पक्का है तो इस मनोवृत्ति को अपनाना कठिन नही । सतगुरु जानते है कि हमारे लिये क्या अच्छा है और हमारे कर्मो के कर्ज को अदा करने का सवसे अच्छा तरीका क्या है । अगर हम अपना खयाल शव्द मे रखेगे तो हमे दर्द महसूस नही होगा अथवा वहुत कम महसूस होगा । हमे सुमिरन से शुरुआत करनी चाहिये और फिर शव्द सुनने में लीन हो जाना चाहिये । अगर वैठने मे कष्ट होता है तो आप विस्तर मे लेटे हुए या जिस तरह भी आपको आराम मिले उसी तरह सुमिरन कर सकते है । शव्द सुनते समय भी आप ऐसा कर सकते है । आपको काफी आराम करना चाहिये; जव हम शव्द-धुन को सुनने मे लीन होते है तब शरीर को वहुत आराम मिलता है ।

१४६—आपकी वीमारी के वारे मे मेरी सलाह है कि

पूरी हिफ़ाजत रखें और डाक्टर की राय पर चलें। इसके बाद प्रेम और प्रतीति के साथ सब-कुछ सतगुरु पर छोड़ दे कि वे जैसा उचित समझे, करें और जो कुछ भी वे करेंगे वह आपकी भलाई के लिये होगा। भजन-सुमिरन को जितना भी समय दे सके, दें। सुमिरन किसी भी वक्त किया जा सकता है। जितना भी ज्यादा सुमिरन हो सके करे ताकि आप शब्द को आसानी से ग्रहण कर सकें। जैसे-जैसे आप अपना ध्यान शब्द-धुन मे लगायेगे, दर्द और चिन्ता भी कम होती जायेगी।

१४७——अपनी तरक्की के लिये कोशिश करते रहें और दूसरो की हालत तथा किस्मत पर आँसू बहाने मे समय नष्ट न करे। अपने आपको जन्म-मरण के चक्कर से मुक्त कर लेने के बाद ही हम दूसरो की सहायता करने के योग्य हो सकते है। जब उनका समय आयेगा तब वे भी इस ओर बुलाये जायेगे और उन्हे भी किसी पूर्ण गुरु की सहायता से इस चक्र से मुक्त होने का अवसर मिलेगा। हरएक का समय निश्चित है, उदास या निराश होने की जरूरत नही। हमे अपनी कोशिश जारी रखनी चाहिए। दूसरो की सहायता करने का सबसे अच्छा उपाय यही है कि हम पहले अपनी मंजिल पर पहुँच जायें, क्योकि वहाँ पहुँचने के बाद हम औरों की असली सहायता करने के योग्य हो जाते है।

१४८——डाक्टर की राय से मजबूर होकर लिवर (जिगर के निचोड़) की इन्जेक्शन लेने से आपको जो दु.ख हुआ उसके बारे मे पढा। इसके लिये इतने दु खी न हो। इसका असर, अर्थात रूहानी असर, कुछ महीनो मे निकल जायेगा। परन्तु यह याद रहे कि किसी भी परिस्थिति मे हमे कभी भी जानते हुए या इरादतन मास, अण्डे, शराब आदि का प्रयोग नही करना चाहिये। इन वस्तुओ को लेने की कभी भी इजाजत नही हो सकती। कृपया अपने भोजन को अपने शरीर की आवश्यकताओं के अनुसार निश्चित करे।

अगर रक्त-दान लेना आवश्यक है तो इसके लिये कोई आपत्ति नही और आप इस बात की चिन्ता न करे कि खून देने वाला कौन है, जब तक कि खून आपके ग्रुप (वर्ग) का है और चिकित्सा-विज्ञान के अनुसार आपके लिये ठीक है ।

१४९—अगर आप चाहते है तो हफ्ते मे एक दिन उपवास कर सकते हैं । परन्तु इसका कोई आध्यात्मिक महत्व नही है । अगर यह आपको स्वस्थ रहने मे मदद देता है, और इसके फलस्वरूप आप अपने आध्यात्मिक कर्त्तव्य अच्छी तरह से निभा पाते है तो बात दूसरी है । भोजन मे नियमित रहना सबसे अच्छी चीज है। हमे ठीक तरह से चुना हुआ भोजन करना चाहिये, परन्तु कभी भी बहुत ज्यादा नही खाना चाहिये । कुछ लोगो को औरो के बनिस्बत अधिक खाने की जरूरत होती है । आपको यह मालूम करना चाहिये कि आपको क्या माफिक आता है और फिर ठीक तरह से चुने हुए खाने की उचित मात्रा ले, परन्तु बहुत ज्यादा न खाये । जब भी आप जरूरत समझे एक दिन उपवास कर लें, परन्तु इसे आदत न बनाये । ज्यादा खाकर फिर उपवास करने के बजाय हल्का और नियमित भोजन स्वास्थ्य के लिये कही बेहतर है ।

१५०—आपने अपने पत्र मे जिन घटनाओ का वर्णन किया है, उनसे मैं आपकी व्यथा समझ सकता हूँ । यह बडे दु ख की बात है, परन्तु मै स्पष्ट कर देना चाहूँगा कि सन्त-मत ऐसी बातो को समर्थन या प्रोत्साहन नही देता। इस प्रकार के व्यवहार को ठीक साबित करने की कोशिश तो और भी बुरी बात है। सन्त-मत इस बात पर जोर देता है कि हम अपनी जिम्मदारियो को अपना कर्त्तव्य समझ कर निभाये, और इस प्रकार एक बेहतर नागरिक, बेहतर पति-पत्नी बनें । सन्त-मत का नियम उजडा या बिखरा परिवार नही, बल्कि सुखी परिवार है जिसमे सब एक ही मार्ग पर चल रहे हो और सबकी

एक ही मजिल हो । परन्तु एक सच्चे और लगनशील अभ्यासी के लिये, जो कि अन्दर जाना और अपनी रूहानी मंजिल पर पहुँचना चाहता है, यह बहुत आवश्यक है कि और लोग क्या कर रहे है इससे चिन्तित या परेशान न हो । हमें किसी भी सत्संगी को आदर्श या अपने लिये नमूना नही मानना चाहिये और न उसके व्यवहार से सन्त-मत के बार में धारणा बनाना चाहिये । हमे सतगुरु के द्वारा बताई हुई बातों को अच्छी तरह समझ कर इस मार्ग पर चलना चाहिये । हमे अपने आप को शब्द मे लीन कर देना चाहिए और किसी व्यक्ति विशेष के बारे मे चिन्तित या परेशान नही होना चाहिये ।

खोजी को चाहिये कि सन्त-मत की जितनी चाहे छान-बीन करे, सिद्धान्तो को अच्छी तरह से समझे और जो समझ मे न आये उसकी पूरी तरह से जाँच-पड़ताल करे, परन्तु एक बार सन्त-मत को समझने और स्वीकार कर लेने के बाद अपनी सारी शक्ति अन्दर जाने मे लगा दे ।

१५१—आप अपने आपको अकेला और बेसहारा क्यों महसूस करते है, जब सतगुरु और शब्द हमेशा आपके साथ और आपके अंदर है और आपके आने की बाट जोह रहे है? जब लोग आपको आवाज देते है तो आप उत्तर देते है या जब वे आपको बुलाते है तो आप जाते है । पर अब समय आ गया है कि आप सतगुरु का बुलावा सुने और उनकी ओर बढे, ताकि आपके अकेलेपन की भावना सदा के लिए दूर हो जाय । लोगो की बेरुखी और असहिष्णुता, जैसा कि आपने लिखा है, हमारे लिए छिपे हुए वरदान के समान है और इससे आपको धीरे-धीरे ससार से विमुख होने की प्रेरणा मिलनी चाहिये । जिनका दुनिया मे कही भी ठीक तरह से मेल नही बैठता, यदि अवसर मिले तो उनका अन्तर मे ठीक मेल बैठ जाता है ।

सुमिरन अर्थात पाँच नामो का जाप आन्तरिक मण्डलों

की कुंजी है । सुमिरन के द्वारा अपनी सुरत को समेटिये या तीसरे तिल पर तवज्जह को जमाये रखने की कोशिश कीजिये, इससे आपको शब्द से जुड़ने मे आसानी होगी । सुमिरन केवल अभ्यास के नियत समय पर ही नही बल्कि दिन के बाकी समय मे भी किया जाना चाहिये, खासकर जब आपको अकेलेपन की भावना सताये । ऐसे समय मे अन्दर, कभी न छोडने वाले सच्चे मित्र तक पहुँचने की कोशिश करे ।

आपको जीते-जी मौत की घाटी को पार करने की कोशिश करनी चाहिये, अर्थात इस दुनिया मे रहते हुए जीते-जी मरने का अनुभव करना चाहिये । फिर न कोई भय रहता है न अनिश्चितता ।

'सतगुरु के चरण-कमलों का विश्वास' भक्ति की भावना को प्रकट करने की भारतीय रीति है । इसमे और 'सतगुरु में विश्वास' में कोई अन्तर नही है ।

१५२——मैं आपकी भावनाओ की कद्र करता हूँ और मुझे यह जानकर बडी खुशी हुई कि अब आप शान्ति और सन्तोप का अनुभव करने लगे है । सच्ची शान्ति, आनन्द और ज्ञान तभी प्राप्त होते है जब हम अन्दर जाकर शब्द के साथ एक हो जाते है । अगर कर्मो के कानून और धैर्यपूर्वक दु ख भोग लेने के महत्व को ही अच्छी तरह समझ लिया जाय तो हमें इन्साफ और दया-मेहर की बहुत हद तक समझ आ जाती है । वह परमपिता दया-मेहर का सागर है ।

चाहे यह बात अजीब लगे, लेकिन दु ख भी हमारे लिये शक्ति का स्रोत हो सकता है और अगर उसे इस समझ के साथ भुगत ले तो निर्मलता प्राप्त होती है । अगर शिष्य सतगुरु के आदेशो का प्रेम-प्रतीति के साथ पालन करता है तो इतना ही काफी है । कृपया अपना भजन-सुमिरन नियमित रूप से करते रहे ।

पुस्तकें औरो को पढ़ने के लिये देना अच्छा है। इस प्रकार आप सन्तों की शिक्षा जिज्ञासुओं तक पहुँचाते है। यह प्रचार या प्रोपोगेण्डा की दृष्टि से नही बल्कि सूचना देने के ख़याल से है। केवल वे ही इस ओर आकर्षित होगे जिनके मस्तक पर धुर-लेख है।

जहाँ तक हबशियों से शादी-ब्याह करने का सवाल है, हमें इसमे कोई एतराज नही है। सन्त इस प्रकार के भेद-भाव में विश्वास नही करते। आत्मा तो सबमे समान ही है। बाकी तो सामाजिक और व्यक्तिगत सुविधाओ का सवाल है।

१५३—हिन्दुस्तान आना जरूरी नहीं है। ख़ास बात तो अन्दर जाना और सतगुरु के नूरी स्वरूप के दर्शन करना है। इसके लिये बाहर की यह दूरी कोई रुकावट नही है। सत्संगी को न तो दुनिया मे रहने की लालसा होनी चाहिये, न दुनिया को छोड़ने की इच्छा। उसे तो अपना खयाल शब्द में लगाये रखने की कामना करना चाहिये तथा जीवन और मृत्यु के प्रश्न को सतगुरु पर छोड़ देना चाहिये। वे जानते है कि हमारे लिये क्या अच्छा है। शब्द की कमाई से हमारे कर्म—जो कि हमें जड ससार से बाँधे रखते है—धीरे धीरे कट जाते है और आत्मा निर्मल तथा हलकी होती जाती है और अपने निज-धाम की ओर चढाई करने लगती है।

हमारे यहाँ 'स्पिरिट' और 'सोल' का एक ही अर्थ में प्रयोग किया जाता है। हमारा उससे तात्पर्य उस अविनाशी चेतनता से है जिसे हम आत्मा कहते है, जो परमात्मा का अश है।

जो इस मृत्यु लोक में सांसारिक इच्छाओं और वासनाओ से बँधे हुए है, वे यहाँ अधिक काल तक ठहरना चाहते है। सन्तो का यह अनुभव है कि शब्द-अभ्यासियो को धीरे धीरे

इस मायामय ससार की निस्सारता का पता लगने लगता है और वे ज्यादा से ज्यादा चार जन्मों में इस ससार-सागर को पार कर लेते है तथा उस सर्वोच्च आत्मिक-मडल, सचखण्ड में पहुँच जाते है जहाँ से शुरू मे वे आये थे । यह एक पूर्ण गुरु की सँभाल, मदद और रहनुमाई से ही सम्भव होता है । लोग एक देहधारी पूर्ण गुरु के महत्व और आवश्यकता को नही समझते और इसीलिये कई प्रकार की क्रियाओ और अभ्यासो मे उलझ बैठते है। लेकिन आपको इसकी चिन्ता नही होनी चाहिये, आपको रास्ता मिल गया है और आप उस पर चल रहे है ।

१५४—औरों को संत-मत के साहित्य को पढने का अवसर देना और उन्हे संत-मत के सिद्धांतों से परिचित करना अच्छी सेवा है, परन्तु इसका परिणाम हमारे हाथो मे नही है । जिनके भाग्य मे इस जन्म मे नाम लेना लिखा है, वे ही इस जन्म मे इस मार्ग पर चलेगे । बाकी लोग जो सत-साहित्य का अध्ययन, सत-मत की छान-बीन आदि करते है, वे आगे के लिये अच्छे कर्म कर रहे है जो अगले जन्म मे उनके सहायक होगे। अपने मित्रो के लिये आप इतना अफसोस न करे ।

अगर सत्संगी सुमिरन के द्वारा अपनी तवज्जह को तीसरे तिल मे जमा लेता है और अंदर जाने लगता है, तो सतगुरु से बाहर की दूरी से कोई फर्क नही पड़ता । आपका यही ध्येय होना चाहिये । अगर परिस्थितियाँ अनुकूल है और आप यात्रा कर सकते है तो आप खुशी से आ सकते है । परन्तु, अंतर मे नूरी स्वरूप तक पहुँचने की कोशिश क्यों न करे ? मेहनत कभी व्यर्थ नही जाती ।

१५५—अपने पत्र मे आपने अपने सुमिरन की जो इतनी सही और निष्कपट व्याख्या की है उसे पढ़कर मुझे

खुशी हुई। शुरू-शुरू मे ऐसा ही होता है। यदि आप डटे रहेगे तो धीरे-धीरे अधिक सफलता मिलेगी। अपनी प्रगति को इतना असतोषजनक न समझे। अगर ६०% सफलता और ४०% सघर्ष या खीचातानी है, तो इसका अर्थ यह है कि पासा पलट गया है और अब आपका पलडा भारी है। मन कई युगो से बाहर भटकने का आदी हो चुका है, और उसे धीरे-धीरे ही वश मे किया जा सकता है। नियत समय के अलावा बाकी समय भी लगातार सुमिरन करते रहना ही उसे वश मे करने का गुर है, और मुझे उम्मीद है कि आप सफल होगे।

१५६—हम अपने पिछले अनुभवो और सस्कारो के अनुसार परिस्थितियो को परखते हैं। यही वजह है कि मनुष्य-मनुष्य मे इतना फ़र्क है, जीवन और उसकी समस्याओ के प्रति उनके दृष्टिकोण मे इतना अन्तर है। कुछ लोगो का एक निश्चित ध्येय होता है, उसे प्राप्त करने की लगन होती है, और वे उसके लिये मेहनत करते है। कुछ अन्य लोग यही जानने की कोशिश मे रहते है कि वे किस चीज के लिये काम करे और किस लिये जिन्दा रहे।

मन एक बहुत जरूरी माध्यम और बहुत शक्तिशाली सत्ता है। अनियन्त्रित और बेलगाम हो जाने पर वह हमे परेशानी मे डाल सकता है और हमारे सफल सासारिक या आध्यात्मिक जीवन की संभावनाओ को बिगाड सकता है। नियन्त्रण और सयम में रहने पर यह सासारिक और आध्यात्मिक सफलता की ओर ले जाता है। यह आग के समान है—एक अच्छा नौकर परन्तु खतरनाक मालिक।

जिन्दगी का कोई उद्देश्य और प्रयोजन भी है। मनुष्य-जन्म का महान उद्देश्य यही है कि इसे प्राप्त करके हम अपने निज-घर सचखण्ड—जहाँ से कि हम आये है—जाने

की इच्छा को जाग्रत करे तथा उसे बढ़ाये और सही मार्ग-दर्शन में वहाँ पहुँचने की कोशिश करें। केवल मनुष्य-जन्म में ही यह सम्भव है। इसीलिये मालिक ने हमें इतना विकसित और पूर्ण मस्तिष्क दिया है और उसमें रूहानी केन्द्र रखे हैं। हमारे अन्तर के ये केन्द्र उचित अभ्यास से विकसित हो सकते है। सब आत्मिक अनुभव अन्दर ही होते हैं। खुदा की बादशाहत अन्दर ही है। इसीलिये हमे अन्दर जाना चाहिये अर्थात अपने खयाल और अपनी तवज्जह को अन्तर की ओर मोड़ कर सही केन्द्र पर ठहराना चाहिये, ताकि हम पहले अपने आपको तथा उसके बाद परमात्मा को पहचान लें।

मन एक बहुत बडी रुकावट है। जैसा कि आपने लिखा है, वह हमे इस धोखे में रखता है कि हम परमपिता परमात्मा की इच्छा के अनुसार कार्य कर रहे हैं, जबकि सारा समय वह अपनी अहकार-पूर्ण इच्छाओ और कामनाओ को पूरा करता रहता है। यही सतगुरु और सन्त हमारी मदद को आते हैं। वे आपको मन की चालाकियो से होशियार करते है और मन को दोस्त बनाने में आपकी मदद करते है, ताकि वह आपको अपने रूहानी ध्येय की प्राप्ति मे सहायता और सहयोग देने लगे। सन्तो की दृष्टि असीम है। सृष्टि का उद्देश्य उनके लिये प्रकट वस्तु है। इसलिये वे हमें सही मार्ग पर लगा सकते है और वापस अपने परमपिता की ओर ले जा सकते है। शिष्य का जितना अधिक विश्वास और भरोसा होगा, उसके लिये इस मार्ग पर चलना और बाधाओं को पार करना उतना ही आसान होगा। परन्तु मार्ग पर प्रगति करने के लिये मेहनत उसे खुद ही करना होगी। सन्त केवल मार्ग-दर्शन और मदद करते है।

इस पत्र मे आपको सन्त-मत के सिद्धान्तो का कुछ आभास दिया जा रहा है। यदि आपको कोई प्रश्न पूछना

हो या किसी बात को और समझना हो तो बगैर किसी संकोच के खुशी के साथ मुझे यहाँ लिख सकते है।

१५७—आपका पत्र पढ़कर प्रसन्नता हुई। मै आपकी भक्ति तथा सन्त-मत में अपने आपको समर्पित करने की भावना का आदर करता हूँ। पर आप जानते है कि हम केवल वही वस्तु दे सकते है जो कि हमारी अपनी है, और समर्पण के मार्ग में यही कठिनाई आती है। हम मन के बारे मे लगातार ऐसे सोचते और बात करते है जैसे कि वह हमारा है या हमारे अधीन है। परन्तु सच्च तो यह है कि ९९ ९% स्थितियों मे हम मन के पंजे में है, उसके अधीन है। इस दु खपूर्ण सच्चाई का हमें तब पता चलता है जब हमें कोई ऐसा काम करने के लिये कहा जाता है जिसे हमारा मन पसन्द नही करता। फिर खीचा-तानी शुरू हो जाती है। सब रूहानी भेद हमारे अन्दर मौजूद है, परन्तु मन कहना नही मानता और अन्दर जाने से इन्कार करता है या केवल कुछ क्षणो के लिये ही अन्दर जाता है, क्योकि उसे बाहर सासारिक भोगों और विषय-विकारो के स्वाद लेने की आदत पड़ी हुई है।

इसलिये पहला कदम है लगातार सुमिरन के द्वारा अन्दर जाना और अगर शरीर की सम्पूर्ण चेतनता को ऊपर न खीचा जा सके तो ज्यादा से ज्यादा चेतनता को समेट कर तीसरे तिल में लाना तथा उसे शब्द-धुन के साथ जोडना, जो कि हम सबके अन्दर गूँज रही है। सुमिरन का भेद नामदान के समय दिया जाता है।

आप अपनी सेवा करके ही मेरी सबसे अच्छी सेवा कर सकते है। यह सेवा है एक अनासक्त दृष्टिकोण को अपनाना और रूहानी अभ्यास करना जिसे भजन-सुमिरन कहते हैं

और जिसके बारे में आपको नाम-दान के समय समझाया जायेगा ।

आपकी भक्ति और आपका दृढ निश्चय दोनो ही प्रशसनीय है । कृपया याद रखे कि जो लोग श्रद्धा और विश्वास के साथ कठिनाइयों का सामना करने की कोशिश करते है, कठिनाइयों के समय सतगुरु स्वय आगे बढकर उनकी सहायता करते है ।

१५८——यह भावना कि हम किसी के भी नही है आध्यात्मिक उन्नति में सहायक है, क्योंकि तब हम इस संसार की वस्तुओ से कोई लगाव नही रखते और अपने कर्तव्यों को अपनी पूरी योग्यता के साथ, परन्तु अनासक्त भाव से, पूरा कर सकते है ।

मैने आपके अनुभवों के बारे मे पढा । कभी-कभी कई विचित्र शक्ले नजर आती है, बल्कि कभी-कभी कुरूप और भयानक चीजे भी दिखाई देती है । ये सब हमारे पिछले जन्मो के सस्कारों या दबी हुई भावनाओं की वजह से है । सुमिरन या पाँच नामों के जाप पर अपना पूरा ध्यान लगाना चाहिये, धीरे-धीरे ये सब शक्ले गायब हो जायेगी । चाहे कितनी ही भयानक शक्ल दिखाई दे, डरने या घबराने की कोई बात नही है । जब तक आप पांच नाम का सुमिरन करते रहेगे आपको कोई भी नुक्सान नही पहुँचा सकता और न ही कोई आपके पास आ सकता है । इसलिये दिन भर, जब भी मौका मिले सुमिरन करना चाहिये, चाहे वह अभ्यास का समय न भी हो । इसी प्रकार जब मन किसी ऐसे कार्य मे न लगा हो जिसमे पूरे ध्यान की आवश्यकता है, तब भी सुमिरन करते रहना चाहिये । ऐसा करते रहने से हमारी निरन्तर सुमिरन करने की आदत हो जायेगी और हम स्वप्न मे भी सतर्क रह सकेंगे ।

१५९--आपने ध्यान अथवा चिन्तन के बारे मे पूछा है। हरएक मनुष्य किसी न किसी समय गहरा विचार या चिन्तन करता है, परन्तु यह चिन्तन किसी सजग प्रयास के रूप मे नही होता है। लोग अपनी तकलीफों के बारे मे, अनजानी बातो के बारे में या आगे क्या होने वाला है आदि के बारे मे चिन्तन करते हैं। परन्तु सत्सगी अपने मन और अपनी आत्मा के विकास के लिये चिन्तन या ध्यान करता है। सही प्रकार के विचार हमे एक और अधिक अच्छा मनुष्य बनाते है, क्योंकि एक पक्का दुनियावी मनुष्य भी यह स्वीकार करेगा कि कोई भी कार्य करने से पहले उसके बारे मे विचार कर लेना चाहिये।

१६०--आपने अपने भजन के बारे मे जो कुछ लिखा है सब ठीक है सिवाय इसके कि बाईं ओर की किसी भी वस्तु पर ध्यान नही देना चाहिये, चाहे वह घण्टी की आवाज हो या कोई और आवाज़। जैसे आप आगे बढ़ेगे आपको कई नजारे दिखाई देगे और कई प्रकार की आवाजें सुनाई देगी। बेहतर तो यह है कि आपको जो कुछ भी दिखाई या सुनाई दे उसे बगैर किसी दिलचस्पी के साथ देखे और सुने तथा अपने मन को कभी भी उनके पीछे भागने न दे। इन सबमे घण्टे का शब्द सुनाई देना तरक्की की निशानी है। आपने जिन अन्य आवाजो का जिक्र किया है, वे शुरू-शुरू मे सुनाई देती है, पर धीरे-धीरे आप ऊपर बढ़ेगे और घण्टे की आवाज को पकड़ सकेगे।

मै खुश हूँ कि आपको आसन मे बैठने की आदत होती जा रही है, परन्तु यह धीरे-धीरे करे और जो कुछ भी हो उसके बारे मे डरे या घबराये नही। इसमे कोई खतरा या डर नही है। सतगुरु हमेशा आपके साथ है और आपके लिये डरने की कोई बात नही है। वे कदम-कदम पर सँभाल

करते हैं, परन्तु जब तक शिष्य अंतर में नहीं जाता उसे इसका पता नहीं चलता। शरीर मे से पूरी चेतनता को समेट लेना या आधी चेतनता को भी समेट लेना बहुत मुश्किल है। जब चेतनता या सुरत ऊपर लगी रहती है, तब सिर्फ प्राणो से अपने आप होने वाली शारीरिक क्रियाएँ ही होती रहती है। जब आप शरीर को या उसके कुछ भाग को भी खाली कर देंगे तो आपको अंदर और भी नजारे दिखाई देंगे और प्रकाश भी बढेगा।

अगर आप पूरी लगन और नियमितता के साथ भजन-सुमिरन में लगे रहेंगे और साथ ही अपने सांसारिक कर्तव्यो को अच्छी तरह से निभाने की कोशिश करेंगे तो आपका सासारिक जीवन भी सुधर जायेगा। इस मार्ग मे प्रेम ही एक-मात्र आवश्यक वस्तु है। प्रेम जितना अधिक होगा उतनी ही जल्दी और आसानी से सफलता प्राप्त होगी। यह प्रेम औरो के साथ आपके रोज के व्यवहार और आचरण में भी झलकेगा।

१६१—ढाई घण्टे लगातार एक ही समय बैठने के बजाय अभ्यास के समय को सुबह और शाम दो बैठको में बाँटने में कोई हरज नही। भजन-सुमिरन का समय नियत करना और उसका पालन करना बहुत अच्छा है और शुरू-शुरू मे तो यह नियमितता जरूरी है। (परन्तु धीरे धीरे अभ्यासी को एक ही बैठक मे कम से कम ढाई घण्टे अभ्यास करने की कोशिश करना चाहिये।) भारतीय योगियो की तरह अपने आपको सारे दिन एक ही कमरे मे बंद रखने से कुछ न बनेगा। मैं सलाह दूंगा कि अपना पूरा ध्यान अपने आप पर और अपने अभ्यास पर लगाये तथा औरो के साथ व खास कर स्त्रियो के साथ अधिक मेल-जोल न रखें।

आपको जो अनुभव हुआ और उसके बाद जो कुछ

हुआ वह काफी हद तक आपके विचारों, भावनाओं और पिछले संस्कारों का असर था। ऐसे अवसरों पर आपको अपने ख़याल को आँखों के बीच मे जमाने की कोशिश करना चाहिये और सुमिरन शुरू कर देना चाहिये। अगर आवश्यक हो तो ऐसे अवसरों पर सुमिरन जबान के द्वारा जोर से या धीरे-धीरे भी किया जा सकता है। काम-शक्ति बहुत सहायक हो सकती है यदि उसकी धारा को बदल दिया जाय अर्थात उसका रुख अन्तर की ओर पलट दिया जाय और उसे भजन-सुमिरन में लगाया जाय। यही सच्चा रूपान्तरण या कायापलट है जिसमें अपनी निम्न वृत्तियो को उन्नत करके अपने ऊँचे और पवित्र व्यक्तित्व में मिलाया जाता है। यदि किसी दूसरी तरह से इस वासना को पूरा करने या शान्त करने की कोशिश करेगे तो आप गलत प्रवृत्तियों मे उलझ जायेंगे और इस शक्ति से प्राप्त होने वाले लाभ से वञ्चित हो जायेंगे।

हाँ, फलों और सब्जियों का सोच-समझ कर चुना हुआ भोजन मदद देता है और अगर आवश्यक हो तो सर्दियो में इनके साथ सूखे मेवे भी लिये जा सकते है। परन्तु इन सब बातो का सबसे अच्छा इलाज आँखों के बीच मे तवज्जह जमा कर सुमिरन करना है।

१६२—कृपया दु:खी और चिन्तित न हो, बल्कि अपने सम्पूर्ण प्रेम और विरह को अन्दर जाने में लगाये। दूरी तब तक ही है जब तक कि हम बाहर इस मायामय संसार मे बैठे है। पर जब हम अन्दर जाकर ऊपरी मण्डलो मे चढ़ाई करते है तो फिर कोई दूरी नही रह जाती। और वह मिलाप कितना अधिक मूल्यवान होता है!

१६३—आपका स्वप्न (हालाँकि मै आपसे कहूँगा कि स्वप्नो के बारे मे अधिक न सोचे) यह जाहिर करता है

कि किस प्रकार सतगुरु शिष्य के अन्दर दबी हुई वृत्तियो को बाहर लाते है और किस प्रकार उनका इलाज करने की कोशिश करते है। इस प्रकार शिष्य को अपनी कमजोरियो का पता चलता है, वह यह समझ जाता है कि इनसे छुटकारा पाना चाहिये और उसे सतगुरु की सँभाल का अनुभव होता है।

आपको केवल सतगुरु मे ही भरोसा रखना चाहिये और जब भी आप किसी परेशानी मे हो या आपको किसी प्रकार का डर लगे तो पाँच नाम का सुमिरन करे और बाकी सब-कुछ सतगुरु पर छोड दे। अगर आप प्रेम और प्रतीति के साथ सुमिरन करेगे तो कोई भी गलत वस्तु या हस्ती वहाँ नही ठहर पायेगी और उसे हट जाना पडेगा। अगर आप नियमित रूप से पूरी लगन के साथ अपना रोज का अभ्यास कर रहे है तो सुमिरन का असर और भी जल्दी होगा।

मैं आपको सलाह दूंगा कि संसार और सासारिक पदार्थो का बहुत ज्यादा चिन्तन न करे, पर अपना कर्तव्य निभाये, अपनी आजीविका कमाये और जहाँ तक सम्भव हो ध्यान को सतगुरु और भजन-सुमिरन मे लगाये रखे। आलस्य और बुरी सगति आध्यात्मिक उन्नति मे बाधक है।

जहाँ तक सुमिरन का सवाल है, आपको केवल उन पाँच नामो का ही सुमिरन करना चाहिये जो नामदान के समय आपको दिये गये थे। जब शिष्य प्रगति करके पाँचवें स्थान तक पहुँच जाता है तो उसके बाद ही सत्पुरुष उसे आगे ले जाते है। अभी तो आपके लिये सबसे उत्तम बात सिर्फ पाँच नामो का सुमिरन करना है।

१६४---यह सच है कि इस ससार मे हमारे रिश्ते-नाते हमारे पिछले कर्मो और सस्कारो पर आधारित है, उन्हे पूर्ण और स्थायी नही समझना चाहिये, क्योकि वे हर जन्म में बदलते रहते है। परन्तु इस जन्म में हमे अपने उन कर्तव्यो

का पालन अवश्य करना चाहिये जो इस जन्म की परिस्थितियों के अनुसार हमे मिले हैं। सच्चा पिता सचखण्ड मे है।

आपके स्वप्न के अनुभवो के बारे मे यही उचित होगा कि आप उन पर विशेष ध्यान न दें। कभी-कभी सतगुरु स्वप्नावस्था मे सत्संगी के कर्मो का भुगतान करवाते है, परन्तु ज्यादातर स्वप्न पुराने सम्बन्धो, कर्मो या सस्कारो के अपने आप उभर आने की वजह से होते है। फिर भी इनमे ज्यादा दिलचस्पी नहीं लेना चाहिये और जब सत्सगी अपने आपको विपत्ति या संकट की अवस्था में पाये तो उसे सतगुरु का ध्यान और पाँच नामो का सुमिरन करना चाहिये।

१६५—मै आपके अध्ययन और जीवन के ऊँचे उद्देश्यों की प्रशंसा करता हूँ। इस ससार में मनुष्य तो सिर्फ कोशिश ही कर सकता है, परन्तु अपनी सारी इच्छाओं को पूरी करने मे वहुत कम लोग सफल हुए है। जब एक वस्तु प्राप्त हो जाती है तो अन्य इच्छाएँ, लालसाएँ और योजनाएँ सामने आ जाती है। हमें सदैव अपने कर्त्तव्य पर निगाह रखते हुए सासारिक कार्य करने चाहियें। अपने कर्तव्य से मेरा मतलब भजन-सुमिरन से है जो कि हमारा सबसे पहला और प्रमुख कर्तव्य है, उसके बाद जो भी अच्छे कार्य हम कर सकते है, करे। सतगुरु का मार्ग-दर्शन हमेशा साथ है।

अपनी आजीविका के लिये व्यापार या व्यवसाय को चलाने में कोई आपत्ति नही है, परन्तु अपने दिल को उसमें वहुत अधिक न उलझा ले। उसे सामान्य कार्यक्रम की तरह या आजीविका के लिये करते रहे और अपने मन और पूरे खयाल को भजन-सुमिरन मे लगाये रखे। बहुत हाथ पसारना उचित नही है।

सन्त-मत सन्यास लेने या घरबार छोड़ने के पक्ष में नही

है, बल्कि संसार मे अपने कर्त्तव्यों को पूरा करते हुए आध्यात्मिक अभ्यास करने का उपदेश देता है। जैसे-जैसे आपको भजन मे स्वाद आये और मन मे भजन करने की इच्छा बढे, अपने भजन-सुमिरन का समय भी बढाते जाइये। भजन के लिये जो रोज ढाई घण्टे का समय नियत है, वह समय तो किसी भी स्थिति मे भजन मे लगाना ही चाहिये।

१६६—आर्थिक दृष्टि से जीवन का मुख्य सिद्धान्त यही है कि मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो, अपनी योग्यता के अनुसार अपनी आजीविका कमाये और किसी पर भार बन कर न रहे। अगर कोई जितना चाहता है उतना नही कमा सकता है तो उसे चाहिये कि अपनी जरूरतो को कम करे। सन्त-मत की रहनी इस दृष्टिकोण को अपनाने मे मदद देती है।

१६७—सत्य एक है और वह कम या ज्यादा मात्रा में हर धर्म मे मौजूद है। वास्तव में हरएक धर्म की तह में हकीकत और रूहानियत मौजूद है, परन्तु वह बाहरी रीति-रिवाजों के मोटे पर्दे मे ढँक गई है। राधास्वामी मार्ग के अभ्यास में इस पर्दे को भेदकर उस हकीकत अथवा शब्द से जुड़ने की कोशिश की जाती है।

१६८—विश्वास और साहस से कई समस्याये हल हो जाती है। जो कुछ आप चाहे और जो कुछ आपके लिये उचित हो वह करे, परन्तु भजन-सुमिरन को अपना खास काम बनाये रखे। हम कोई नौकरी या व्यवसाय इसलिए करते है कि हम ईमानदारी के साथ अपनी रोजी कमा सके। हक हलाल की कमाई के बिना आध्यात्मिक उन्नति कठिन है।

१६९—पाँच नामो के सुमिरन के बारे मे आपने पूछा है। यह सुमिरन सिर्फ मन की बाहर भटकने की आदत को छुड़ाने और उसे वश में करने के लिये ही नही है। अगर इन

नामो का सुमिरन प्रेमपूर्वक ठीक ढंग से किया जाय तो ये अन्तर मे चेतनता की लहरे उठाते है और हमें अन्तर मे उन रूहानी मण्डलो से जोड़ते है जिनमे से होकर आत्मा को सतलोक पहुँचना है ।

१७०—आपके अनुभवों का और समय-समय पर उठने वाले प्रश्नो का सबसे सन्तोषपूर्ण हल अन्दर तीसरे तिल मे पहुँचने पर ही मिलता है । शब्द को सुनने मे आप जितना अधिक समय लगायेगे उतना ही आपका आध्यात्मिक ज्ञान स्पष्ट होता जायेगा । शब्द का सुनना अभ्यास का सबसे जरूरी अग है, परन्तु सुमिरन उसकी नीव या बुनियाद है । अब आपके सवालो को ले—

(१) आप प्रार्थना करने के आदी है, इसलिए आप उसे जारी रख सकते है । परन्तु अपने मरीजो का इलाज करते समय या उनके लिये सतगुरु की कृपा की याचना करते समय आप अपनी प्रार्थना सामान्य और तटस्थ भाव से करे । मानवता के नाते आप अपने मरीज के भले की कामना कर सकते है, परन्तु इस भावना को लेकर प्रार्थना न करे कि वह आपका मरीज है इसलिए उसे अच्छा किया जाना चाहिये । यह स्वाभाविक है कि हरएक मरीज को निरोग या स्वस्थ नही किया जा सकता । उन सबको भी अपने-अपने कर्म भोगना है । फिर भी, नेक तथा सहायतापूर्ण होने की तथा मानव-जाति की सेवा करने की सामान्य भावना एक अच्छी चीज है ।

(२) जम्हाई (उबासी) आने का कोई आध्यात्मिक महत्व नही है । यह शारीरिक तथा कुछ हद तक मानसिक अवस्था पर आधारित है और इसका सम्बन्ध प्राणों की गति से है । पर हमे इन सबसे कोई मतलब नही ।

(३) जैसे-जैसे आप अपने भजन में आगे बढ़ेगे और एकाग्रता की आदत डाल लेंगे, आप ऐसी कई वस्तुएँ देखेंगे ।

परन्तु इन दृश्यों को अपने ध्यान में रुकावट न बनने दे और न ही अपनी तवज्जह को इनकी ओर जाने दें। एक अच्छे सत्संगी का उद्देश्य तो अपने मन को और सब वस्तुओं की ओर से हटाना और शब्द-धुन में लीन होना है, ताकि शब्द के सम्पर्क से पवित्र होकर वह उसके (शब्द के) साथ निर्मल व ऊँचे रूहानी मण्डलों मे जा सके।

(४) आपने "आनन्द-योग पर प्रकाश" (लाइट आन आनन्द-योग) नामक पुस्तक से जो उद्धरण दिये है उनका यही भाव है कि इस ससार में एक पूर्ण गुरु के आदेशों के अनुसार बिताया गया जीवन बहुत अभीष्ट है और स्वर्ग के जीवन से कही अच्छा है, क्योकि स्वर्ग मे जब जीव अपने अच्छे कर्मो का फल भोग चुकता है, तब उसे अपने वचे हुए कर्मो को भुगतने के लिए वापस इस मर्त्यलोक मे जन्म लेना पड़ता है। परन्तु इस धरती पर अच्छी तरह बिताया हुआ जीवन न सिर्फ आपको यहाँ सुखी करता है, वल्कि आपको उन ऊँचे आत्मिक-मण्डलों में जीते-जी ही जाने का अधिकारी वना देता है, जहाँ से वापस इस दुनिया में आने की जरूरत नही।

(५) "आध्यात्मिकता को शारीरिकता में उतारने" का अर्थ यही है कि ऊँचे आध्यात्मिक सिद्धान्तों को अपने दैनिक जीवन मे इस प्रकार ले आये कि आप अपने आस-पास के लोगों के लिए प्रकाश, शान्ति और सहायता के स्रोत वन जाये। सभी सन्तों-महात्माओ ने यह उच्च अवस्था प्राप्त की है। परन्तु यह तभी सम्भव है जब हम ससार और उसके मोह-जाल से ऊपर उठकर तीसरे तिल मे आ जाये और शब्द में लीन हो जाये।

(६) हाँ, अन्दर तीसरे तिल मे पहुँचना अवश्य ही एक कठिन काम है, क्योकि युगों-युगों से हमे वाहर भटकने की आदत पड़ी हुई है। परन्तु एक बार इस मार्ग में पूरी प्रतीति

हो जाने और अन्दर जाने की परम आवश्यकता को समझ लेने पर, यह कार्य इतना कठिन नही होना चाहिये । अन्त मे परिश्रम, लगन और धैर्य की विजय होती है । मन अकुश लगाने और जबरदस्ती करने के बजाय समझाने-बुझाने और मनाने को अधिक पसन्द करता है । अगर भजन के समय विचार बाहर की ओर बहुत जाये या सब तरफ से इकट्ठे होने लगें तो उन्हे आहिस्ता से एक ओर हटा दें और दृढ़तापूर्वक कहें, "इन सब बातो पर भजन के बाद विचार करेंगे ।" फिर धीरे-धीरे आपको भजन के समय अन्दर जाने और बाकी समय सांसारिक कर्तव्य पूरे करने की अच्छी आदत पड़ जायेगी । यह वह आदर्श अवस्था है जिसे प्राप्त करने के लिये पूरी कोशिश करनी चाहिये ।

(७) माता-पिता के लिये यह आवश्यक है कि वे बच्चों के साथ दृढ रहे और उन्हे प्रेम और सहानुभूति-पूर्वक अनुशासन मे रखे, परन्तु कभी क्रोध के आवेश मे न आये । यह बहुत जरूरी है कि उन्हें किसी बात के लिये मजबूर न किया जाय, परन्तु सन्त-मत को समझने का उन्हे अवसर और पढने को आवश्यक साहित्य दिया जाय । सबसे बडी बात तो यह है कि आपका अपना जीवन बाकी परिवार के लिये एक ज्वलन्त उदाहरण होना चाहिये । बच्चे बड़ो की नकल बहुत जल्दी करते है ।

१७१—यह सच है कि सब-कुछ पहले से ही प्रारब्ध मे लिखा हुआ है । परन्तु यह एक सामान्य कथन है और इसके कई अपवाद भी हो सकते है, ये अपवाद भी प्रारब्ध के नियम के ही अंग है । उदाहरणार्थ, जब एक पूर्ण सन्त किसी मनुष्य को दीक्षा देते है और उसे अपनी शरण मे ले लेते है, तो उसके भाग्य की धारा काफी हद तक बदल जाती है । इस कथन के भी स्पष्टीकरण की आवश्यकता है, क्योंकि यह

बात बहुत जटिल है और हमारे मन के लिये इसे समझना आसान नही है। इतना कहना ही काफी है कि सतगुरु न केवल सत्सगियो की ही सहायता करते है, बल्कि उन सबकी भी सहायता करते है जिनसे सत्सगियों को प्यार है, जिनकी वे सेवा करते है। इसी प्रकार वे उनकी भी मदद करते हैं जो सत्संगियों से प्रेम और उनकी सेवा करते है। एक सत्संगी को सच्ची लगन, विश्वास और भक्ति के साथ अभ्यास करना चाहिये, इससे उसके अंतर मे सतगुरु के लिये गहरा प्रेम जाग्रत होगा। सच्चे प्रेम का अर्थ अपना अधिकार जमाना नही है, बल्कि अपने आपको सतगुरु की मौज पर पूरी तरह बिना किसी शर्त के न्यौछावर कर देना है। केवल वही जानता है कि हमारे लिये क्या अच्छा है। अगर सत्संगी अपना कर्तव्य-पालन करता जाये और अपने सतगुरु के हुक्म में चलता रहे तो चिन्ता करने अथवा किसी भी बात के लिये व्याकुल होने की उसे आवश्यकता नही।

यह सच है कि सतगुरु के लिये सच्चा प्रेम मन को शुद्ध करता है और जमी हुई मलिनता को काफी हद तक धो देता है। परन्तु अगर यह प्रेम संभव न हो या कठिन हो, तो सत्सगी को इसे प्राप्त करने के लिये सुमिरन के द्वारा आँखों के मध्य मे एकाग्र होकर शरीर को खाली करने की कोशिश करना चाहिये।

हाँ, वर्षो से हमार मस्तिष्क पर जो सस्कार जड़ जमाये हुए हैं उन पर विजय पाना मुश्किल होता है। परन्तु शायद आप तस्वीर के दूसरे पहलू को भी जानते हैं कि उसमे सुधार करना संभव है और सुधार किया गया है। जिन्हें सतों, महात्माओं या पूर्ण पुरुषो के सत्संग का सौभाग्य मिला है, उनके लिये यह सुधार आसान है। ऐसी उच्च सगति न मिले तो सतों के साहित्य के अध्ययन, सतगुरु का ध्यान

और उनके बारे मे विचार और मन की तवज्जह के द्वारा नामो के सुमिरन—इन सबका इकट्ठा असर भी वही होता है। हमे नही भूलना चाहिये कि हमारे मस्तिष्क पर उन संस्कारो को इतनी गहरी जड़ जमाने मे समय लगा था और यह स्वाभाविक ही है कि उन्हे मिटाने और नयी धाराएँ बनाने मे भी कुछ समय लगे।

हाँ, शब्द-धुन मन को निर्मल और पवित्र करती है, परन्तु साधारणतया चंचल और अपवित्र मन (सिवाय सतगुरु की उपस्थिति मे) उसे पकड़ नही सकता।

जो आवाजे आप सुन रहे है वे वास्तव मे सामान्य और बिलकुल शुरू की है और उन्हे शब्द की श्रेणी में नही रखा जा सकता। ये आवाजे तो केवल शुरूआत है, रस्सी का निचला छोर है। अगर आप इन आवाजो पर ध्यान लगाते रहेगे (जो कि दाहिने कान से आती प्रतीत हो या मस्तक के बीच मे आ रही हो, बाईं ओर से आने वाली पर ध्यान न दे) तो वे धीरे-धीरे पहले से अधिक स्पष्ट और अच्छी आवाज मे बदल जायेगी। तब कुछ समय बाद घटे की आवाज तक पहुँचेगे। तब तक के लिये कुछ भी सुनाई दे रहा है उसे ग्रहण करे, उसे ध्यानपूर्वक सुने और इस प्रकार और ऊँची वस्तुओं को पाने के योग्य बने। मेरी यही सलाह है।

ऊँचे रूहानी मण्डलो के प्रेम और आनन्द का अनुभव करने के लिये वहाँ पहुँचने की कोशिश करना चाहिये। अगर कोई व्यक्ति उन मण्डलो के अनुमान और वहां की बातो की कल्पना से ही सन्तुष्ट है तो बात दूसरी है। उन मण्डलो में पहुँचने का मार्ग आपको अपने सतगुरु द्वारा पहले ही बताया जा चुका है। अगर आप मे सतगुरु के लिये गहरा प्रेम है या आप अपनी सुरत को समेट कर तीसरे तिल मे ले जा सकते है तो आप अवश्य सरदार बहादुर महाराज जगतसिह जी के दर्शन और उनसे बात-चीत कर सकते है।

१७२—भजन के समय ऊँघने या नीद आने से सावधान रहना चाहिये। अगर आपको अभ्यास के शुरू मे ही झपकियाँ आने लगे तो आप अभ्यास शुरू करने से पहले अपना मुँह धो ले। अगर आपको अभ्यास के बीच मे ऊँघ आने लगे तो थोड़ा हिल-डुल कर अपने आपको सचेत करे, ऊपर देखे और फिर शुरू करें। अगर झपकियाँ आती ही रहे तो उठकर कुछ कदम चल-फिर कर फिर से अपने अभ्यास मे बैठ जायें। ऊँघ तभी आती है जब तवज्जह आँखों के केन्द्र से खिसककर नीचे चली जाती है। अगर आप अपने ध्यान को आँखो के केन्द्र पर जमाये रखेगे और मन की तवज्जह से सुमिरन करते रहेगे तो नीद आने की समस्या हल हो जाएगी। दृढ़तापूर्वक कोशिश करने से अभ्यास के समय ऊँघ या नींद आने की परेशानी जरूर दूर हो जायेगी।

१७३—एक बार अपना लेने अथवा नाम देने के बाद सतगुरु अपने शिष्य को कभी नही छोडते, वल्कि इस मार्ग पर उसकी रहनुमाई के लिये वे हमेशा तैयार रहते है। हमारे लिये जो कुछ वे करते है, उसे मनुष्य की सीमित बुद्धि समझ भी नही सकती। हमसे सिर्फ इतनी ही आशा की जाती है कि हम उनके हुक्म का भक्ति और विश्वास के साथ पालन करे; बाकी सब-कुछ वे आप कर लेगे।

१७४—आप बगैर दर्द के दाँत निकलवाने के लिये 'नोवोकेन' के इन्जेक्शन लगवा सकते है। इसमें किसी प्रकार की आपत्ति नही है।

आपने अपनी रूहानी तरक्की के बारे मे पूछा है। इस तरक्की की गति हरएक मनुष्य के साथ अलग-अलग होती है। यह आपके पिछले सस्कार, आज की मेहनत व लगन, अभ्यास मे लगाया गया कम या अधिक समय, मन की वृत्ति आदि पर

निर्भर रहती है। मायूस या निराश होने की कोई वजह नही है। समय आने पर सब-कुछ हो जायेगा।

आपको अन्दर केवल अँधेरा ही दिखाई देता है, क्योंकि अभी तक आपकी चेतनता की धाराये अथवा सुरत अन्तर मे एकाग्र नही हुई है। जैसे जैसे आप सुमिरन के द्वारा शरीर को खाली करके सुरत को समेट कर तीसरे तिल मे लाने लगेंगे, आपको प्रकाश की चमक दिखाई देने लगेगी।

प्रगति की रफ्तार को तेज करने का एक उपाय पाँच नामों का मन ही मन हर वक्त सुमिरन करते रहना है, खासकर जबकि आप फुरसत में हों या किसी ऐसे कार्य मे लगे हों जिसमे मन की पूरी एकाग्रता की जरूरत नही है, जैसे स्टेशन पर या दफ्तर में प्रतीक्षा करते समय, रेल या मोटर में आते-जाते समय, या इसी प्रकार कही भी और किसी भी समय। यह सुमिरन आप बगैर किसी का ध्यान खीचे और बगैर किसी की टीका-टिप्पणी का विषय बने आराम से कर सकते है। परन्तु जैसे ही कोई ऐसा काम आ जाये जिसमें आपके ध्यान या आपकी एकाग्रता की आवश्यकता है तो आप अपना मानसिक सुमिरन बन्द करके हाथ मे आये काम को सँभाल सकते है। फिर जब आप नियत समय पर अभ्यास मे बैठेंगे तो निरन्तर सुमिरन करते रहने की क्रिया के फलस्वरूप आपको जल्दी एकाग्रता प्राप्त होगी।

१७५—धूम्रपान (सिगरेट आदि पीना) कोई अच्छी आदत नही है, हालाँकि आज के समाज में इसका काफी प्रचलन है। वैसे इसका बिलकुल निषेध या मनाही नही है, फिर भी यह अच्छा होगा कि आप धीरे-धीरे इसे छोड़ दें। जो भी वस्तु हमारी इच्छाशक्ति को कमजोर बनाती है या हमे उस पर बहुत अधिक निर्भर रहने का आदी बनाती है, वह चाहे एक हानि-रहित सुस्ती उड़ानेवाला पदार्थ ही क्यो न हो, हमारे

लिए अहितकर है। जितना आप अपने ध्यान को एकाग्र करने और अन्दर जाने में सफल होगे, उतना ही आप इस प्रकार की चीजो को छोडने के लिए तैयार होंगे और सही माने मे आप आजाद हो जायेगे।

१७६—सन्त-मत पारिवारिक जीवन और पति-पत्नी के सम्वन्धों को अधिक सुखी और शान्तिपूर्ण वनाता है, खास कर अगर हम उसके सिद्धान्तो के अनुसार रहने का प्रयत्न करे। सन्त-मत मे आने पर पति और पत्नी दोनों का ध्यान अपने आध्यात्मिक उद्देश्य की प्राप्ति की ओर रहना है और वे सासारिक सम्वन्धों को अव अधिक तटस्थ भाव से देख सकते है। पति और पत्नी दोनो को इस मार्ग पर साथ चलना चाहिये क्योकि वे एक दूसरे के लिये वहुत सहायक हो सकते है।

पति और पत्नी दोनो को नाम मिल जाना मालिक की खास दया है, क्योंकि ऐसे कई है जिनमें से पति या पत्नी को नाम लेने की कोई इच्छा नही है या जिनके भाग्य में इस जीवन मे नाम लेना नही लिखा है। फिर भी यह अपने पारिवारिक कर्तव्यो से वचने का वहाना नही होना चहिये। जव दोनो को नाम मिल गया है तो वे अच्छी तरह जानते है कि संसार में किस तरह रहना और अपने कर्तव्यो को निभाना है और उन्हें अपने गृहस्थ-जीवन को शान्तिपूर्वक चलाने मे कोई कठिनाई नही होनी चाहिये।

यह सच है कि वैवाहिक जीवन मे कभी-कभी मतभेद पैदा हो जाते है, परन्तु अगर हम सही और सुलझे हुए ढंग से सोचे और यह याद रखे कि हमे जीवन-भर साथ निभाना है, तो मतभेद जल्दी ही दूर हो जाते है और एक-दूसरे को समझने की भावना पैदा हो जाती है। दूसरी ओर, अलग होने या तलाक देने से वुरा उदाहरण स्थापित होता है और यह सतगुरु के काम मे सहायक होने के वजाय वाधक होता है। मै आप दोनों

को यही सलाह दूँगा कि आपके आपस मे जो भी मतभेद हो उन्हे शान्तिपूर्वक सुलझा ले और एक प्रकार से नये सिरे से जीवन शुरू करे और साथ ही अपने सांसारिक कर्त्तव्यो का पालन करते हुए नियमित रूप से अपना भजन-सुमिरन करे। सतगुरु हमसे यही चाहता है और यही सेवा उसे सबसे प्रिय है। भूल जाना शायद सम्भव न हो, परन्तु क्षमा करना तथा फिर से नयी जिन्दगी शुरू करना जरूर सम्भव होना चाहिये।

१७७—सतगुरु की सेवा करने और उनके मार्ग मे अपने आपको अर्पण करने की आपकी भावना की मै कद्र करता हूँ। परन्तु ऐसा करने से पहले हमे अपने आप पर पूरा अधिकार होना चाहिये, हमे अपना स्वामी बनना चाहिये। जब तक हम अपने स्वामी नही है, हम अपने आपको कैसे अर्पण कर सकते है? जो वस्तु हमारी नही या जिस पर हमारा अधिकार नही उसे हम कैसे भेट कर सकते है? दान पहले अपने घर से शुरू होना चाहिये और हमें दूसरों की सेवा करने से पहले अपनी सेवा करनी चाहिये। वह सेवा है अपनी आत्मा को मन के पजे से मुक्त करना, और यह तभी सम्भव है जब हम अपने सासारिक कर्त्तव्यो की उपेक्षा न करते हुए अपने आपको शब्द-अभ्यास मे नियमपूर्वक लगाये। इसलिए मै आपको यही सलाह दूँगा कि सतगुरु तथा संगत की सेवा करने के अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये अपनी सेवा शुरू करें अर्थात् सन्त-मत के सिद्धान्तो के अनुसार जीवन बीताये, अपना ज्यादा से ज्यादा समय भजन-सुमिरन में लगाये और शब्द को प्रकट करके उसमे लीन हो जायें।

सब सत्सगी एक ही पथ के पथिक है, उन्हें एक-दूसरे से प्रेम करना चाहिये और आपस में सहिष्णुता और सहानुभूति-पूर्ण व्यवहार करना चाहिये।

१७८—कृपया इन बातों का ज्यादा खयाल न करें।

हो सकता है कि ये केवल इसीलिये हो कि आप ससार की वस्तुओ का सही मूल्य आँक सके, वल्कि उनकी निस्सारता को समझ सके। सच तो यह है कि मनुष्य हरदम ही अकेला है, परन्तु वह इस भूल मे रहता है कि उसके कई दोस्त है, सम्पत्ति है, सम्वन्ध हैं। आखिर एक समय आता है जव वह इस भ्रम से जागता है और तव, अगर वह सत्संगी है तो अनुभव करता है कि इस ससार मे उसका एकमात्र असली और सच्चा दोस्त सिर्फ सतगुरु ही है।

अगर हम निर्लिप्त है, हमारी कोई आशा या अधूरी इच्छा नही है तो लोगों के व्यवहार का हम पर कोई खास असर नही होता। आखिर कोई भी वात अपने आप महत्वपूर्ण नही होती, वल्कि उसका हम पर जो असर होता है वह महत्व-पूर्ण है। दुनियादार लोग भी काफी ठोकरे खाने और घोर निराशाओं को सहने के वाद अंत में इसी नतीजे पर पहुँचते है। परन्तु सत्सगी शव्द-अभ्यास के द्वारा धीरे-धीरे करीव-करीव अनजाने मे ही संसार के मोह-माया के वन्धनों को ढीला करता जाता है।

कृपया सतगुरु पर भरोसा रखे और हिम्मत न हारे। जवकि आपको ससार, ससार के पदार्थ और उनके मोह के थोथेपन का पता लग गया है तो अव आप मन लगाकर, पूरी मेहनत के साथ अपना ध्यान जव भी संभव हो भजन-सुमिरन मे लगा सकेंगे। जैसा कि आपको अच्छी तरह मालूम है, सुमिरन या पाँच पवित्र नामों का जाप इस रूहानी अभ्यास की वुनियाद है। दुनिया के सुमिरन के द्वारा, दुनिया की चीजो के वारे में सोच-सोच कर हम इस मर्त्यलोक के निवासी वन गये है और अपने असली घर को भूले वैठे है। इसलिये हमें रूहानी सुमिरन के द्वारा धीरे-धीरे अपनी सुरत को तीसरे तिल मे लाना चाहिये। उसके वाद शव्द अपने आप हमारी

सँभाल कर लेगा। हमें तो सिर्फ अपना कर्त्तव्य करना है, और आप इस बात का पक्का भरोसा रखें कि सतगुरु अपना कर्त्तव्य अवश्य पूरा करेंगे अर्थात् वे हमे समय आने पर अन्दर ले चलेंगे। हमें तो सिर्फ इतना ही करना है कि दुनिया की ओर से मुँह मोड़कर सतगुरु की ओर मुँह कर लें। वह दोनो हाथ फैलाकर हमारा स्वागत करने को हमेशा तैयार है।

मेरे खयाल से कई लोगो को मूल प्रवृत्ति या सहज स्वभाव के बारे में गलत धारणायें है। वैज्ञानिक दृष्टि से मूल-प्रवृत्ति किसी जाति या व्यक्ति के पिछले अनुभवों पर आधारित होती है और उसका सहज उद्देश्य जिन्दगी के संघर्षो में जिन्दा बचे रहना है। जैसे-जैसे मनुष्य विकास या उन्नति करता है, ये प्रवृत्तियाँ भी बदलती जाती है। परन्तु हरएक मनुष्य के अन्तर की गहराई में (उनमें भी जिन्हे हम समाज मे वहुत ऊँचा नही मानते) शान्ति प्राप्त करने और एक ऊँची या सर्वोच्च सत्ता मे समा जाने की प्रवृत्ति रहती है। लेकिन अगर इस प्रवृत्ति का विकास न किया जाय तो इसे अपने आप उभर कर फली-भूत होने में शायद कई शताब्दियाँ बल्कि कई युग तक लग सकते है।

हुजूर महाराज जी फरमाया करते थे कि ये भावनायें जिन्हें लोग मूल प्रवृत्तियाँ कहते है मनुष्य और पशुओं मे समान रूप से पायी जाती है। मनुष्य और पशु मे यही अन्तर है कि मनुष्य इन प्रवृत्तियों से ऊपर उठकर वापस अपने सिरजनहार तक जा सकता है। हुजूर महाराजजी यह भी कहा करते थे कि पशुओ के चोले मे भी हमारे माँ-बाप, स्त्री और बच्चे होते थे और हम मे काम, क्रोध, मोह, प्रेम, घृणा आदि भाव-नाएँ थी। अब जब हमें मनुष्य-जन्म प्राप्त हो गया है तो हमे कुछ बेहतर काम करना चाहिये और जिस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये हमे मनुष्य-शरीर मिला है, उसे पूरा करने की कोशिश

करना चाहिये; वह उद्देश्य परमात्मा की प्राप्ति है।

सन्त ससार मे इस उच्च प्रवृत्ति को जाग्रत करने के लिये आते है। अपने निज सम्पर्क तथा अन्य आन्तरिक और रूहानी तरीको से वे हमे परमात्मा की प्राप्ति के मार्ग पर लगाने के लिये आते है, ताकि हममे से वुरे से वुरे मनुष्य को भी इस दुख-दर्द की नगरी मे चार मनुष्य-जन्मो से अधिक न ठहरना पडे। इस ससार मे यह वापस आना सिर्फ ऐसे ही जीवो के लिये है जो सन्तो के उपदेश के वावजूद अपने मन को तृष्णाओ और इन्द्रियो के भोगो की कामनाओं के मैल से मुक्त न कर सके। ऐसे जीवो के लिये भी वाद में आने वाले जन्मों में ये तृष्णाये और कामनायें कमजोर होती जायेगी और आत्मिक जाग्रति और उन्नति के अवसर वढ़ते जायेंगे और इस प्रकार एक शक्की इन्सान एक सच्चा भक्त वन जायेगा। अन्त में वह एक बड़ी उच्च आत्मिक अवस्था प्राप्त कर लेगा, गुरुमुख वन जायेगा।

संसार से तथा मन और इन्द्रियो से ऊपर उठना कोई आसान काम नही है। सबसे पहले मन को समझाना और विश्वास दिलाना पड़ता है, ताकि वह प्रकट या मूक विरोध करने के बदले हमारी सहायता करने लगे। इससे सतगुरु का काम भी आसान हो जाता है। उसके वाद शब्द की धारा हमें ऊपर खीचती है और कर्मो के मैल को पूरी तरह से धो देती है। इस प्रकार निर्मल होकर हम सतगुरु में समा जाते है।

१७९—आज दुनिया बहुत ही दु:खी और परेशान है। मन के रोग शरीर के रोगों से बहुत ज्यादा वढ गये है। इन सवका एक, और केवल एक ही इलाज है—वह है नाम।

१८०—परन्तु जैसे जैसे वे भजन करेंगे और ऊपर जायेंगे, उन्हें पता चलेगा कि वाहरी संसार की अच्छी से अच्छी चीजें भी अन्दर जाने और दिव्य-धुन से जुड़ने के

आनन्द और रस की तुलना में कुछ नही है । पूर्ण एकाग्रता न प्राप्त हुई हो तो थोड़ी एकाग्रता प्राप्त होने पर भी हमें आनन्द का अनुभव होने लगता है । जो लोग किसी वैज्ञानिक या दार्शनिक कार्य मे लगे है, एकाग्रता की यह अवस्था प्राप्त करने पर उन्हें अपने आप नये विचार और सुझाव प्राप्त होते है । फिर भी ये सब केवल मन को ही सन्तोष प्रदान करते है । हमारा असली ध्येय तो मन से ऊपर उठकर उस प्रेम के सागर मे समा जाना है । मै चाहता हूँ कि सब सत्सगियो मे आपस मे मेल-जोल और प्रेम-प्यार रहे और वे सब मिलकर अपनी भलाई तथा नये सत्संगियों के लाभ के लिये काम करे ।

१८१——मैने आपसी समता और मेल-जोल के लिये इसीलिये निवेदन किया था कि यह सतगुरु के कार्य मे सहायक होता है । मुझे खुशी है कि इस बात को सही दृष्टिकोण से अपनाया गया है । 'ब्रह्मवाद' और 'अध्यात्मवाद' भी प्रकृति के ऐसे ही सत्य है जैसे उसके अन्य अद्भुत रूप और उनके अपने गुण और उपयोग है । इनमे कितनी रूहानी सच्चाई है यह साबित करने या इसका खंडन करने से कोई फर्क नही पडेगा । ज़िन्दगी इतनी छोटी है और हमारे निज-घर के मार्ग में काल द्वारा खड़ी की गई रुकावटो को तोडकर आगे जाने के लिये हमें इतना काम करना है कि मुझे आश्चर्य है कि लोग कैसे व्यर्थ के वाद-विवाद में समय नष्ट कर सकते है ? सत्सगियो के लिये तो मार्ग स्पष्ट है——सेवा भाव के साथ औरो के लिये जो कुछ भी सुविधापूर्वक कर सकते हो वह करें और अपने खुद के आत्मिक उद्धार के लिये अधिक से अधिक कोशिश करे । हमे चाहिये कि अपने आपको मालिक के हाथो में एक उपकरण या यन्त्र के समान अर्पण कर दें, ताकि वह जिस प्रकार चाहे हम से काम ले ।

आपके व्याख्यान देने के कार्य से बहुत से नये लोगों का

राधास्वामी साहित्य से परिचय हुआ है, इस प्रकार इस कार्य का दुगना महत्व है। यह सतगुरु की मौज है। आपने शरण लेने के पथ पर पहले ही कई तेज कदम बढाये हैं। यह शरण का मार्ग सबसे कठिन है, पर साथ ही मन को निर्मल करने का सबसे आसान उपाय है। मन को बिलकुल ही मिटा देना भी ठीक नही है, क्योकि उसके द्वारा भी कुछ कार्यो की पूर्ति होती है। मै आपके इस दिलचस्प और उपयोगी कार्य मे सफलता की कामना करता हूँ। इससे उकताने के बजाय आपको सन्तोष होना चाहिये कि आपके प्रयत्न सफल हो रहे है।

१८२—असल बात तो यह है कि मनुष्य को अपने गुजारे के लिये कोई व्यवसाय या नौकरी करना चाहिये, परन्तु उसमे इतना नही डूब जाना चाहिये कि अपनी आध्यात्मिक उन्नति मे, बाधा आये। यहाँ आम कहावत है, 'दस्त ब कार व दिल ब यार' अर्थात हाथ कार्य मे हो, पर मन सतगुरु मे। इसके सिवाय हमे कर्मो के हिसाब को भी चुकाना है। अपने प्रारब्ध से कोई नही बच सकता, परन्तु अगर उसे समझ के साथ, सतगुरु की शरण लेकर, उनके मार्गदर्शन मे भुगत लिया जाय तो वह हमारे ऊँचे आत्मिक उद्देश्य की प्राप्ति मे सहायक हो सकता है।

१८३—आपका यह विचार सही है कि अगर हम प्रेम और लगन के साथ अपना भजन-सुमिरन करते जाये तो कई बाते अपने आप स्पष्ट हो जाती है। फिर भी अगर आपको कुछ पूछना हो तो लिखने मे संकोच न करे। सतगुरु आपके अन्दर है और हमेशा आपकी मदद के लिये तैयार है। जब शिष्य ऊपर चढाई करके अन्तर मे सतगुरु के स्वरूप तक पहुँच जाता है तो सतगुरु के लिये खुशी की इससे बडी और कोई बात नही है। हमारे अन्दर प्रकाश, नूर, खुशी और आनन्द है और जब हम अन्दर जाते है तो हमें यह दात और सच्ची

शान्ति प्राप्त होती है ।

आपका अनुभव आपके पिछले संस्कारों अर्थात पिछले जन्मों के अच्छे कर्मो के द्वारा बनी प्रवृत्तियों का फल है । लेकिन आपको दाहिने कान से ही आवाज को सुनना चाहिये, बाये कान से नही । आवाज सुनते समय ध्यान को आँखो के केन्द्र अथवा तीसरे तिल पर जमाये रखना चाहिये । यह आवाज, जो कि शब्द ही है, असल मे बीच में से ही आती है, परन्तु हमें कानों से सुनने की आदत है इसलिए हम सोचते है कि यह कानों मे आ रही है । आँखों के केन्द्र पर ध्यान जमाये रखने से यह आवाज धीरे-धीरे केन्द्र मे स्थिर होगी और सीधे ऊपर ले जायेगी । बाँया हिस्सा विरोधी शक्ति अथवा काल के शासन या नियन्त्रण मे है और चाहे वह कभी-कभी अधिक आकर्षक प्रतीत हो तो भी उसकी ओर ध्यान नही देना चाहिये । सतगुरु का मार्ग दाहिनी ओर है ।

१८४––यह मार्ग आपको अच्छा लगा यह जान कर खुशी हुई । यह तो अभी शुरूआत ही है । जैसे जैसे आप लगन-पूर्वक इस मार्ग पर चलेगे तथा प्रेम-प्यार के साथ भजन को पूरा समय देगे, आपको आत्मा की महानता का पता लगेगा और आप सतगुरु की रहनुमाई तथा सँभाल महसूस करेगे ।

आपके अनुभव सही है । अभ्यास का तरीका यह है कि नाम-दान के वक्त दिये गये पाँच नामो का सुमिरन करीब दो घण्टे तक या जितनी भी देर आपसे हो सके, करे और उसके बाद लगभग एक घण्टा शब्द को सुनने मे लगाये । सुमिरन के समय आपको तवज्जह तीसरे तिल पर रखनी है और शब्द की ओर कोई ध्यान नही देना है, जब तक कि शब्द लगातार और स्पष्ट होकर आपको ध्यान देने पर मजबूर न कर दे । जब शब्द आपको ऊपर खीचने लगे तब अपने आपको उसके हवाले कर दें । शब्द सुनते समय में आप सुमिरन केवल उसी समय करें

जब आपको कोई शंका, दुविधा, कठिनाई या भय महसूस हो; वरना जब आप शब्द सुन रहे हों, सुमिरन न करे। सच्ची लगन और अच्छी एकाग्रता के फलस्वरूप किसी भी समय जब मनुष्य कुछ आराम मे हो, शब्द-धुन सुनाई दे सकती है, परन्तु ऐसे समय उसकी खीच या कशिश अधिक नही होती। अगर ऐसे समय आपको शब्द बहुत जोर का मालूम हो तो आप उसे सुनने मे लग सकते हैं, परन्तु बाईं ओर से आनेवाली किसी भी आवाज को न सुने। यह शब्द का अनुभव मुख्यतः आपको अपने पिछले कर्मो की वजह से हो रहा है। इसके बाद आपको नूरी स्वरूप के दर्शन भी होगे। प्रेम, विश्वास और लगन सफलता के मूल-मंत्र हैं।

योगासन और गहरी साँस लेने के अभ्यास स्वास्थ्य और शारीरिक योग्यता के लिये अच्छे है। अगर आप उन्हें आध्यात्मिक महत्व न देकर केवल तन्दुरुस्ती के लिये ही करते है तो कोई हरज नही है। परन्तु उन्हे रूहानी अभ्यास के लिये नही करना चाहिये।

१८५—मुझे खुशी है कि आप इस आध्यात्मिक मार्ग की जरूरत और उसके महत्व को समझते है। शान्ति और आनन्द अन्दर जाने और शब्द से जुड़ने मे है। अच्छे नैतिक जीवन और भजन-सुमिरन मे नियमितता से उन्नति होती है।

अगर कोई पाँच शत्रुओं पर फौरन विजय पाने मे असमर्थ है तो उसे सच्ची कोशिश करनी चाहिये, सतगुरु से प्रार्थना करनी चाहिए कि वे उसे ताकत बख्शें और साथ ही अपने अभ्यास मे पूरी लगन और भक्ति के साथ लगे रहना चाहिए। जब सत्संगी सच्चे दिल से कोशिश करता है, तो उस पर मेहर होती है और जरूर सहायता मिलती है।

मेहमानो के लिए भी मांस, मछली, मुर्गे आदि खरीदना और उन्हें पकाना अनुचित है और इससे परहेज करना चाहिये।

आप उन्हें फल या ऐसी ही अन्य वस्तुएँ दे सकते है ।

अपने अभ्यास मे नियमित रहें और सुमिरन पर जोर दें । नियमित समय के अलावा आप और समय में तथा बिस्तर मे भी सुमिरन कर सकते है ।

१८६—आपका अनुभव सही है । जैसे जैसे आप अपनी तवज्जह को आँखों के केन्द्र पर जमा कर लगन के साथ सुमिरन करते जायेगे, घण्टे का शब्द जो कि इस समय धीमा है स्पष्ट और तेज होता जायगा और धीरे-धीरे आपको अन्य अनुभव भी होगे । मन जितना अधिक एकाग्र और अनासक्त होगा, शब्द भी उतना ही स्पष्ट और तेज होगा । प्रेम, विश्वास और लगन के साथ की गई मेहनत का बहुत असर होता है ।

आपकी दूसरी समस्या के बारे में मै आपको नाम-दान के समय दी गई हिदायतो और आदेशो की याद दिलाना चाहूँगा । इस मार्ग में प्रगति करने के लिये नेक और पवित्र नैतिक जीवन बहुत आवश्यक है । हालाँकि आपकी वर्तमान परिस्थितियों मे भी नियमित भजन-सुमिरन बेअसर नही जायेगा, लेकिन वह असर अधिक नही होगा । भजन-सुमिरन के द्वारा हम मन और आत्मा को ऊपर ले जाने की कोशिश करते है, परन्तु हमारे लगाव और खासकर वासनापूर्ण लगाव उन्हे नीचे ले आते है । इस प्रकार हम भजन के प्रभाव को करीब-करीब खत्म कर देते है ।

एक अच्छा सत्संगी बनने की आपकी इच्छा की मै कद्र करता हूँ । दोनों हाथो से हिम्मत बटोरिये और इस गन्दगी में से निकल आइये । सतगुरु उनकी मदद करता है जो नैतिक और आध्यात्मिक मार्ग पर चलना और एक सच्चे सत्संगी की तरह जीवन बिताना चाहते है । जो बीत चुका है उसके बारे में न सोचें, उस पर ध्यान न दें, यहाँ तक कि अब उसके बारे में विचार भी न करे । उस अध्याय को बन्द करके एक प्रकार से

नया जीवन शुरू करें। अगर आप अपने निर्णय पर दृढ रहेंगे तो सतगुरु आपकी पिछली बातों को माफ कर देंगे। इससे आपके भजन-सुमिरन मे भी सुधार होगा।

१८७—आपका पत्र यथा समय मिल गया था। मैंने आपके पत्र की बातों को ध्यानपूर्वक पढ़ा। मुझे अफसोस है कि उत्तर देने मे इतनी देर हो गई है। पर देर होना अनिवार्य था क्योकि यहाँ ऐसी कई आवश्यक बाते थी जिन्हे मेरे निजी ध्यान की जरूरत थी। यहाँ हर वर्ष २९ दिसम्बर को भण्डारा अर्थात इस डेरे के सस्थापक बाबा जैमलसिहजी महाराज की पुण्य-तिथि मनाई जाती है। इस भण्डारे मे तीस-चालीस हजार प्रेमी सत्संगी देश के विभिन्न भागो से आते है, और इसका अर्थ होता है दो हफ्तो का वहुत व्यस्त कार्यक्रम।

आपकी समस्या बहुत ही व्यक्तिगत या निजी समस्या है और इस बारे मे आपका अपना निर्णय ही अन्तिम होना चाहिये। मै केवल सलाह देने वाले की हैसियत से आपके उस विस्तृत पत्र का उत्तर दे रहा हूँ जिसमे आपने सारी स्थिति का बहुत अच्छा विश्लेषण और वर्णन किया है।

विवाह का अर्थ एक दूसरे को ठीक तरह से समझना और परस्पर सहयोग करना है। एक दूसरे को समझने की इस भावना के वगैर निभाव वहुत कठिन है। परन्तु अगर प्रेम से प्रेरित होकर कोई पूरे सहयोग के साथ निभाने का निश्चय कर ले तो यह परस्पर समझने की भावना अपने आप आ जाती है। अपने आदर्शो के बिलकुल अनुरूप एक त्रुटि-हीन जीवन-साथी पा लेना लगभग असम्भव ही है, क्योकि लोगो को इस प्रकार पति-पत्नी के रूप मे साथ लाने वाले कई कारण होते है। फिर भी प्रेम आपसी सद्भाव और सामंजस्य पैदा करता है, और एक साथी दूसरे को सुखी करने मे खुशी का अनुभव करता है। हमारी जिन्दगी और हमारे नाते-रिश्ते कर्मो के लेन-देन

पर निर्भर है, जिन पर हमारा कोई वश नही है। पिछले कर्मो के इसी आधार पर हम एक-दूसरे के समीप आते है और कई बार हमें ऐसी परिस्थितियो से गुजरना पड़ता है जो हमारे कर्मो को भुगतने के लिये जरूरी होती है, चाहे हम उन्हे पसन्द करे या न करे। असल मे, इस संसार मे हमारी जिन्दगी नाटक मे एक अभिनय के समान है, और अगर हम यह याद रखे और अपना पार्ट अच्छी तरह से अदा करें, तो हम सुखी रहेगे। विवाह पर भी यही नियम लागू होता है।

इसके सिवाय हमें बहुत ज्यादा बाल की खाल भी नहीं निकालना चाहिये। इससे कोई फ़ायदा नही होता। हम जितना अधिक विश्लेषण करेंगे उतना ही खोखलापन नजर आयेगा और हम निराश होंगे। अगर हम सारी जिन्दगी लोगों की परीक्षायें ही लेते रहेगे तो हमारा कोई मित्र न होगा जिसका कि सहारा ले सके। जिन बातो मे आप दोनों की सहमति और एकता है उनको ध्यान में रखते हुए तथा मतभेद और विरोध की बातो को नजर-अन्दाज करते हुए, अपना फैसला करे और फिर उस पर दृढ रहें।

जहाँ तक भोजन का सवाल है, शादी का विचार बहुत अच्छा है, बशर्ते कि आप शाकाहारी भोजन मे अपने पति की सहायता करे। संतान के बारे में कोई दबाव या बन्धन नही है। यह पूर्णतया माता-पिता पर छोड़ दिया जाता है। असल में सन्त-मत किसी भी विषय मे किसी प्रकार की जबरदस्ती या दबाव के पक्ष मे नही है। जन्म-मरण की समस्या का हल तथा अपना आश्रय सन्त-मत केवल उन्ही को पेश करता है जो उसके इच्छुक है और जो उसे ग्रहण करने के लिये तैयार है। यद्यपि सन्त-मत मनुष्य-जीवन के महत्व पर जोर देता है और मनुष्य होने के नाते हमारे सामने सत्य को समझने के अवसर प्रस्तुत करना आवश्यक समझता है, फिर भी वह अपनी शिक्षा

को अनिच्छुक लोगों पर लादता नही है। केवल मनुष्य-जीवन में ही हकीकत की खोज की जा सकती है, परमात्मा को प्राप्त करके स्थायी शान्ति और आनन्द पाया जा सकता है। पर इसके लिये करीब-करीब आपकी पूरी जिन्दगी आपके सामने है।

वास्तव मे, जीवन मे मनुष्य हमेशा ही एकाकी या अकेला है और इसीलिए वह किसी न किसी को अपना वनाने की कोशिश करता है। पर फिर भी ऐसा समय आता है जब वह महसूस करता है कि जीवन में कोई भी उसका अपना नहीं है। मै इस एकाकीपन की भावना का स्वागत करता हूँ। जितनी जल्दी यह भावना आये उतना ही अच्छा है। केवल तव ही हम किसी ऐसे की खोज शुरू करते है जो कि वास्तव में हमारा अपना है और जो सदा के लिये हमारा रहेगा। यह खोज ही इस दुनिया मे हमारी जिन्दगी का प्रमुख उद्देश्य है।

१८८——मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आपको अपने भजन मे रस मिलता है, यद्यपि इस रस मे कभी-कभी दुनिया के विचार और चिन्ताये बाधा डालती है। जैसा कि आप जानते ही है, सन्तो द्वारा बताये गये अभ्यास की विधि आत्मा को ससार की ओर से विमुख करके परमपिता के साथ जोड़ती है। यह केवल धीरे-धीरे ही किया जाता है और इसमे लगभग सारा जीवन ही लग जाता है। पर जैसे-जैसे आप लगन के साथ नियमपूर्वक अभ्यास करते है, आपको काफी आनन्द और शान्ति प्राप्त होती है। यह आपकी मेहनत का फल है और इससे आपको अपनी अन्तिम और महान विजय का धैर्य और प्रसन्नता के साथ इन्तिजार करने की प्रेरणा मिलती है।

आप अभ्यास में बैठने से पहले यह पक्का निश्चय कर लें कि जब तक आप अपने नियत समय का अभ्यास पूरा न कर लें तब तक अभ्यास के बीच में इन बातों के बारे मे कोई चिन्ता

न करेंगे और न ही किसी और बात के बारे में सोचेंगे । आप जानते ही हैं कि भजन-सुमिरन के समय इन विचारो का उभरना न तो किसी दुनियावी समस्या के हल में सहायक होता है और न अभ्यास में । लेकिन अगर आप सच्ची लगन और पूरे ध्यान के साथ अपने खयाल को अभ्यास मे लगाये रखेगे और नियमित रूप से रोज अभ्यास करेंगे, तो आपको अपनी सांसारिक समस्याओं को सुलझाने में भी सहायता प्राप्त होगी ।

सतगुरु हमेशा सहायता और सँभाल करते है, परन्तु शिष्य को इसका पता तभी लग सकता है जब वह अन्दर जाये । आप इतमीनान रखें कि जो कुछ भी होता है, सत्संगी के आत्मिक लाभ के लिये होता है, चाहे उस समय इस बात को वह समझ न पाये । इसीलिये अडिग विश्वास और प्रेम की आवश्यकता है, जो कि भजन-सुमिरन से ही उत्पन्न और उसी से मजबूत होते है ।

१८९—आपका यह विचार सही है कि हमे जितनी भी हो सके कोशिश करनी चाहिये और नतीजा सतगुरु पर छोड देना चाहिये । हम जितना अधिक समय प्रेम और भक्ति के साथ सुमिरन और शब्द को सुनने मे देते है, उतने ही हम अपनी मंजिल के नजदीक आते जाते है । यह रूहानी यात्रा इस शरीर के अंगो के द्वारा नही, बल्कि सुरत या तवज्जह से तय की जाती है । जब हम नाम का सुमिरन करते है तो हमारी सुरत का रुख आंतरिक मंडलों की ओर हो जाता है । व्यर्थ की बात-चीत और गप-शप हमारी सुरत को बाहर की ओर रखती है ।

१९०—आप यहाँ प्रसन्नतापूर्वक आ सकते है, परन्तु भजन-सुमिरन के मार्ग मे दूरी कोई रुकावट नही है । आप चाहे कही भी हों, आपको तो अभ्यास के लिये अपने मन को सही ढाँचे मे ढालना है ।

१९१—मुझे यह जान कर खुशी हुई कि आप नाम-दान के महत्व को समझ रहे है और आप उस सर्वव्यापी सत्ता का अनुभव कर रहे है जो कि आम लोगो मे से उन अधिकारी आत्माओ को, जिन पर धुर से छाप लगी है, अपनी ओर बुला लेती है। अब आपको चाहिये कि उस बुलावे के उत्तर मे पूरी लगन के साथ अपना सहयोग दें।

सुमिरन के समय कोई तनाव या दबाव नही डालना चाहिये। आँखे बद करके अपनी तवज्जह को मस्तक के बीच में रखते हुए अँधेरे को देखे और तवज्जह को नीचे गिरने या बाहर जाने से रोके। अगर बाहर जाती है, तो उसे वापस लाये। जिस समय आप स्वयं को शात, एकाग्र और अतर की ओर प्रवृत्त पायें, उस समय का उपयोग शब्द को सुनने मे करे।

शब्द या धुन ही वह ताकत है जो समय आने पर आपको ऊपर खीचेगी। अब आपको नाम मिल चुका है इसलिये आपको चाहिये कि सुमिरन के द्वारा शब्द को सुनने की नीव या आधार तैयार करें।

ऐसे किसी खास अनुभव के समय, जिसका कि आपने वर्णन किया है, कुछ क्षणों के लिये भक्ति के साथ पाँच नाम का सुमिरन करे। अगर वह सुमिरन के सामने ठहरे तो उस सत्ता या हस्ती को स्वीकार करके उसके शुभ प्रभाव को ग्रहण करे।

१९२—आप कुछ परेशान मालूम होते हैं। कभी-कभी परिस्थितियाँ विचित्र मोड़ ले लेती है, पर जैसा कि आप जानते है, जो कुछ हमने किसी समय बोया है उसका ही फल हम पा रहे है। सत्संगी को चाहिये कि इन सब परिस्थितियों का सामना विश्वास और साहस के साथ करे, हिम्मत न हारे और भजन-सुमिरन मे तो कभी भी ढील न आने दे। अगर किसी प्रकार की ढील या शिथिलता आ गई है तो उसे जितनी जल्दी दूर किया जा सके उतना ही अच्छा है। भजन-सुमिरन मे नियमित रहने

से ऐसा विश्वास और बल मिलता है जिसे और किसी भी प्रकार प्राप्त करना कठिन है। भजन से ही आपको यह भी पता चलेगा कि सतगुरु किस प्रकार आपकी गढ़त और सँभाल कर रहा है।

१९३---सच मे नाम सबसे बडी बख्शिश या प्रसाद है और अन्दर जाने पर ही हमें इस वरदान की महत्ता का कुछ आभास होना शुरू होता है।

हाँ, मन को वश में करना ही असली समस्या है। उसे स्थिर करके अपने वश मे करना कोई आसान बात नही है। हो सकता है कि अध्ययन, चिन्तन तथा अन्य उपायों से मनुष्य उसे कुछ हद तक थोड़ा-बहुत स्थिर कर ले; परन्तु मन वश में आकर वैरी से मित्र तभी बनता है जब वह शब्द के सम्पर्क मे आकर उसमे आनन्द और रस लेने लगे।

अन्य साधनो से मन को वश में करना ऐसे ही है जैसे कि एक जहरीले साँप को पिटारी मे बन्द करना। जब तक वह पिटारी मे है, हमे लगता है कि वह हानि-रहित है, परन्तु जब भी उसे बाहर निकलने का अवसर मिलेगा वह जरूर डसेगा। परन्तु अगर हम साँप की जहर की थैली ही निकाल देते है तो उसे पिटारी में बन्द करने की कोई जरूरत नही और हम चाहें तो उसे गले मे डाल सकते है।

तीव्र और लगातार सुमिरन के द्वारा शब्द को सुना जा सकता है। अभ्यासी को कई तरह की आवाजे सुनाई दे सकती है---जैसी कि आप सुन रहे है और यह अच्छा भी है---परन्तु जब सम्पूर्ण चेतनता सिमट कर तीसरे तिल में आयेगी, तभी शब्द के साथ जुड़ा जा सकेगा। (आपको जोर या दबाव नही डालना चाहिये और न अपनी तवज्जह को जबरदस्ती खीच कर वहाँ लाने की कोशिश करना चाहिये, बल्कि उसे केवल तीसरे तिल पर रखना चाहिये। वह अन्दर और ऊपर अपने आप चली जायेगी।)

शब्द का आनन्द या रस संसार के और सब सुख और

स्वाद से कही उत्तम और श्रेष्ठ है। एक बार मन इस आनन्द का स्वाद लेने लग जाता है तो वह इसमें लीन हो जाता है, और फिर वह सांसारिक सुखो की ओर दृष्टि भी नही डालता। तब वह उस साँप के समान हो जाता है जिसकी जहर की थैली निकाल दी गई है।

कृपया लगन के साथ जुटे रहे और विश्वास तथा प्रेम के साथ अपना अभ्यास नियमित रूप से करते रहें। धीरे-धीरे सब-कुछ ठीक हो जायेगा।

१९४—आप खुशी से जितने चाहे उतने सवाल पूछ सकते है। आपके यहाँ आने या मेरे वहाँ जाने तक का इन्तिजार क्यो किया जाये? अभी शुरूआत कर दें—सन्त-मत की पुस्तको का अच्छी तरह अध्ययन करें, सत्संग सुनें और अभ्यास करना आरम्भ करें तथा जो कुछ भी स्पष्ट न हो उसके बारे में मुझे लिखकर शौक से पूछ लें। जब कोई सच्चे दिल से अध्य-यन और अभ्यास शुरू करता है तो उसे अपने कई प्रश्नों का उत्तर अपने आप मिल जाता है।

प्रकाश आपके अन्दर है और जब आप अपनी सुरत को तीसरे तिल पर एकाग्र करके अन्दर जायेंगे तो उसे देख सकेंगे। सुमिरन इस सारे अभ्यास की कुंजी और इस प्रणाली की बुनि-याद है।

१९५—आपने यह साफ-साफ स्वीकार किया है कि आप अपने कर्त्तव्य को पूरा करने और रोज ढाई घण्टे भजन करने के अपने वादे को निभाने मे शिथिल या ढीले रहे है। इस गलती को मंजूर करना अच्छा है, परन्तु यह एक ऐसी भूल है जिसे सुधारना ही चाहिये। खोया हुआ समय फिर हाथ नही आ सकता, परन्तु अब अपना कार्य अच्छी तरह करने का हम ईमानदारी के साथ निश्चय अवश्य कर सकते है।

सन्त-मत मे दीक्षा मिल जाना एक बड़े सौभाग्य की बात

है, एक बडी नियामत है और इसका पूरा फायदा उठाना चाहिये । उचित आहार भी एक जरूरी चीज है, परन्तु मुख्य बात है भजन-सुमिरन । निस्संदेह जब तक मनुष्य मास, अण्डे, शराब से परहेज नही करता, वह ठीक तरह से एकाग्रता प्राप्त नही कर सकता ।

भजन का उद्देश्य हमारी तवज्जह या सुरत के रुख को बाहर की ओर से मोड़ कर अन्तर में हकीकत की ओर करना है, जिसकी तुलना मे ये बाहर के आडम्बर सिर्फ परछाई के समान है । उन आन्तरिक मण्डलो का द्वार ऊपर दोनो आँखों के पीछे है और नाम-दान के समय बताये गये तरीके से उस द्वार को लगातार खटखटाने (अर्थात सुरत को दोनों भौहों के बीच में जमाने) से ही अन्दर प्रवेश किया जा सकता है ।

अपने सामान्य दैनिक जीवन और वर्तमान सम्बन्धों में विघ्न डाले बिना इस लक्ष्य तक पहुँचने का सबसे सरल मार्ग प्रतिदिन कम से कम ढाई घण्टा भजन करना है, ताकि सत्संगी धीरे-धीरे अपनी तवज्जह को अपनी इच्छा से समेटना और तीसरे तिल में ठहराना सीख ले । यह प्रारम्भिक कार्य कठिन है और शुरू-शुरू मे यह थकाने और उबाने वाला भी लगता है, क्योकि मनुष्य के मन की प्रवृत्ति बाहर जाने की है न कि अन्दर । अन्दर जाकर ही हम 'खुदा की बादशाहत' मे पहुॅच सकते हैं । एक बार एकाग्रता पूर्ण हो जाने पर, बाकी सब कुछ पहले से कुछ आसान हो जाता है, क्योकि तब भजन मे रस आने लगता है । तो भी औसत सत्संगी के लिये यह करीब-करीब जिन्दगी भर का काम है । परन्तु जब यह पूर्ण हो जाता है, तब मनुष्य सचमुच संसार से ऊपर उठ जाता है ।

आँखों का केन्द्र या तीसरा तिल वह द्वार है जिसमे से होकर हम ऊपर रूहानी मण्डलो में जाते है, और इसी द्वार से हम नीचे इस शरीर या संसार में आते है । ससार

का हमारे लिये अस्तित्व और उसका हम पर प्रभाव तभी तक है जब तक कि हम नौ द्वारो मे विचर रहे है। पर जव हम दसवें द्वार को खोलते हैं तो हम ससार से ऊपर उठ जाते हैं। तभी हमें सतगुरु पर दृढ विश्वास प्राप्त होता है और हम यह अनुभव करते है कि हम चाहे कैसी भी परिस्थितियो का सामना कर रहे हों या कुछ भी भुगत रहे हो, सतगुरु हमेशा हमारे अंग-संग है, हमारी निरन्तर सँभाल और हमारा मार्ग-दर्शन कर रहे है। सतगुरु हमेशा सँभाल और मार्ग-दर्शन करते है (यद्यपि वे प्रारब्ध कर्मों मे कभी-कभी ही हस्तक्षेप करते है) परन्तु इस अवस्था को प्राप्त कर लेने पर ही हम देख और समझ पाते है कि सतगुरु हमारे लिये क्या कर रहे है और यह जानकर हमारे अन्दर प्रेम, विश्वास और साहस उत्पन्न होता है। तभी हमारा सतगुरु के साथ एक ज्ञात[1] अथवा हमारी जानकारी का सम्पर्क हो जाता है और तभी हम जब चाहें उनसे मिलाप कर सकते हैं।

मैंने आपको विस्तार पूर्वक लिखा है, क्योकि इन छोटे-छोटे सन्देहो और विचारो की उथल-पुथल से पता चलता है कि आपको ससार की ओर से असन्तोप है और आप किसी ऐसी वस्तु की कामना कर रहे है जो यह ससार नही दे सकता। अगर आप अभ्यास मे मेहनत और विश्वास से लगे रहेगे तो आपकी अधिकाश समस्याएँ अपने आप सुलझ जायेगी।

कोई आश्चर्य नही कि भविष्य के विचार आपको कभी-कभी चिन्ता मे डाल देते है। जव तक हम पूरी तरह से अपने आप पर या अपने साधनों पर निर्भर रहते है, यह चिन्ता स्वाभाविक है। परन्तु इस बारे में भी आपको अपने विवेक और अनुभव के अनुसार कार्य करते हुए सतगुरु का आसरा लेना चाहिये और विना चाहे तथा विना किसी प्रयत्न के अन्तर से

---

१ सतगुरु से सम्पर्क तो सभी सत्सगियो का होता है, परन्तु जव तक वह अन्दर नही जाता उसे इसकी प्रत्यक्ष जानकारी नही होती।

जो सुझाव या इशारे आये, उनकी उपेक्षा नही करना चाहिये ।

जहाँ तक मनोविश्लेषण करवाने का सवाल है, हमारी इसके प्रति कोई बुरी धारणा नही है, परन्तु जैसा कि आपने खुद ही अनुमान किया है, वही नतीजे नियम और लगन के साथ किये गये भजन से प्राप्त हो सकते है । सैकडो लोग सतगुरु से अपनी आन्तरिक समस्याओं के बारे में मिलते और उनसे सलाह लेते है । उससे तथा सत्सग मे की गयी व्याख्या से उनकी कठिनाइयाँ हल हो जाती है और उन्हे मनोविश्लेषण से कही ज्यादा अच्छे परिणाम मिलते हैं । आप मनोविश्लेषण का यह क्रम जारी रख सकते है जब तक कि आप उसे उपयोगी पाये, परन्तु उस पर बहुत अधिक निर्भर न हो ।

१९६—सन्त और सतगुरु 'देहधारी शब्द' होते है । शब्द अथवा दिव्य ध्वनि सर्वत्र व्याप्त है, परन्तु उसमे दीक्षित होने का पूरा लाभ लेना अब आपके हाथ में है । आप अपनी सुरत या चेतनता को शरीर से समेट कर आँखों के केन्द्र पर लाकर यह लाभ ले सकते है ।

जितने अधिक आप मोह और लगाव से रहित हो सकेंगे, उतन ही अधिक आप शब्द को सुनने मे सफल होगे । कभी-कभी आपको बहुत सी आवाजे सुनाई दे सकती है । आप उनमें से सबसे स्पष्ट और आकर्षक आवाज को चुने और उसे पकड़े रहें, जब तक घंटी या बड़े घण्टे की आवाज आना शुरू न हो जाय । परन्तु आवाज के पीछे जाने की कोशिश कभी न करे, बल्कि अपनी तवज्जह को हमेशा दोनो भौहो के बीच के स्थान पर जमाये रखे । शब्द स्वयं आपको अन्दर और ऊपर खीच लेगा । आपको इसके लिये कुछ समय तक मेहनत करना पडेगी, पर निराश न हों । शांति और श्रद्धा के साथ अपने अभ्यास को जारी रखे । कृपया यह भी याद रखे कि बाईं ओर से आने वाली किसी भी आवाज को नही सुनना है, चाहे वह कितनी ही

मीठी क्यो न हो । अगर वह बायीं ओर से आती ही जाये तो उसकी ओर जरा भी ध्यान न दे ।

हाँ, आप स्टूल या तिपाई का उपयोग करके आरामदेह आसन में बैठ सकते है । खास बात तो अपनी तवज्जह को एकाग्र करके तीसरे तिल मे जमाना है, लेकिन अगर शरीर असुविधापूर्ण या कष्टप्रद स्थिति में है तो वह तवज्जह को लगातार नीचे की ओर खीचेगा । लेकिन बताये गये आसन में बैठने की धीरे-धीरे आदत डालना चाहिये, क्योकि इससे आपको सहायता मिलेगी ।

१९७—कभी-कभी दुर्बल स्वास्थ्य अभ्यास पर असर डालता है, परन्तु अगर आप शब्द से सम्पर्क स्थापित कर सकें और अपने आपको उसमे लीन कर सकें तो शब्द आपको शक्ति और स्फूर्ति प्रदान करेगा । फिलहाल आप अपने अभ्यास के समय को उचित भागों मे बाँट सकते है, परन्तु सतगुरु और नाम के खयाल को सारे दिन मन में रखें ।

यह सही है कि मनुष्य शब्द की दीक्षा प्राप्त करने के योग्य तभी होता है जब वह शरीर को कम से कम नाभि तक खाली करने मे सफल हो चुका हो । परन्तु मनुष्य की कम उमर तथा अन्य खतरों और मुश्किलों को देखते हुए हमारे महान सतगुरु हुजूर महाराज सावनसिहजी ने शर्ते बहुत नरम कर दी है । आपको अपने रोज के अभ्यास मे से शब्द सुनने के कार्यक्रम को हटाना नही चाहिये तथा जब भी और जहाँ भी सुविधापूर्वक हो सके, प्रतिदिन कम से कम आधा घण्टा शब्द को सुनने में लगाना चाहिये । जब आप अकेले हो तब भी, कुर्सी पर बैठे हुए ही, आँखे बन्द करके, अपने दाहिने हाथ को चेहरे पर लाकर और दाहिने कान को ढँक कर आप यह अभ्यास कर सकते है । शब्द को सुनने से सिमटाव मे मदद मिलती है । शब्द को सुनते समय ध्यान को दाहिने कान में नही बल्कि दोनों भौहों के बीच

मे रखे, जैसा कि आप सुमिरन के समय करते है ।

जहाँ तक कर्मो का सवाल है, सबसे अच्छा तो यही है कि उनके बारे में चिन्ता न करें, बल्कि अपना कर्त्तव्य करें और फिर सब-कुछ सतगुरु पर छोड़ दें । अपने आपको या किसी और को दोष देने से कोई फायदा नही । सतगुरु की शिक्षाओं के अनुसार ही हमारा रुख या दृष्टिकोण भी स्पष्ट, निश्चित और हरएक वस्तु की अच्छाई को देखने का होना चाहिये ।

जहाँ तक सामाजिक कार्यो का प्रश्न है, उन पर कोई पाबन्दी या रोक नही है और आप अपने मित्रों से अवश्य मिल सकते है । परन्तु आपको यह कभी नही भूलना चाहिये कि आप सत्संगी है और आपको ऐसी बातों में भाग लेने या ऐसे काम करने से बचना चाहिये जो कि एक सत्संगी के लिये उचित न हों । अगर आप अपने सिद्धान्तों पर सचाई के साथ कायम रहते हुए मित्रों से नम्रता और खुशमिजाजी के साथ मिलते हैं, तो यह उनके तथा आपके, दोनों के लिये लाभप्रद होगा ।

१९८—आपके सतगुरु अब भी आपके अन्तर मे है और लगनपूर्वक गहरे सुमिरन और भजन के द्वारा आप अन्दर जाकर अपने प्यारे सतगुरु के दर्शन कर सकते है । सतगुरु अविनाशी हैं, वे कभी नहीं मरते । वे तो यही राह देख रहे है कि कब शिष्य उनकी ओर मुख करता है । मुझे आशा है कि इससे आपको तसल्ली और सात्वना मिलेगी ।

१९९—मेहरबानी करके निराश और मायूस न हों । प्रगति धीमो है, पर है अवश्य, चाहे हम इस समय उसका अनुभव न कर सकें । दाहिने कान से धुन का सुनाई देना, उस प्रगति की निशानी है । धीरे-धीरे आप शब्द के अधिक गहरे और निकट सम्पर्क में आयेगे । तीसरे तिल पर अपने सतगुरु के स्वरूप के ध्यान के अभ्यास से बहुत मदद मिलेगी ।

आपको अपने सतगुरु बाबा जगतसिंहजी के स्वरूप का ध्यान करना चाहिये। आपके लिये वे जिन्दा है और उनसे मिलने के लिये आपको सिर्फ तीसरे तिल तक पहुँचना है। हताश और कुण्ठित नही होना चाहिये।

२००—यह स्पष्ट है कि आप प्रगति कर रहे है, हालाँकि ऐसा लगता है कि आपको इसके बारे मे कुछ शका है या आप इसे स्वीकार करने में संकोच का अनुभव करते है। अन्तर में एक स्पष्ट खीच और सिमटाव का अनुभव कोई अनुमान मात्र ही नही है और न ही सारे दिन अपना काम-काज करते हुए भी अन्तर में एक आनन्द की भावना का बना रहना निरी कल्पना है। यह तभी होता है जब हमारे ध्यान का प्रमुख अश अन्तर मे लगा रहे। यह बहुत अच्छा है कि ऐसे समय भी, जब आपको खुशी और आनन्द का अनुभव होता है, आप नाम का सुमिरन करते है। यह आपको ऊपर की ओर प्रेरित करता है और इसका निरन्तर अभ्यास आपको हर्ष और शोक से ऊपर उठने मे सहायक होगा।

आँखो के केन्द्र पर प्रकाश की धाराओं का प्रवाह और तेज सूरज की रोशनी का अनुभव बिलकुल ठीक है और शरीर के ऊपरी हिस्सों का सुन्न होना आपके अन्दर सिम-टाव की प्रगति में कोई सन्देह नहीं रहने देता। हाँ, यह एहसास कि सतगुरु आपके आस-पास है, यथार्थ है। जब आप कुछ और प्रगति करेगे तो सतगुरु को बिलकुल अपने सामने देख सकेगे और कुछ समय बाद उनसे बाते भी कर सकेगे। इस जिन्दगी मे अगर कुछ प्राप्त करने योग्य सार-मय वस्तु है, तो वह अन्तर में सतगुरु के स्वरूप के दर्शन और शब्द से पूर्ण मिलाप है। अन्त मे ये ही आपको अपनी मंज़िल तक ले जायेंगे।

मुझे बड़ी खुशी है कि आपने दिन में हर वक्त, अपने

काम-काज करते हुए भी सुमिरन करते रहने की युक्ति सीख ली है। वास्तव में यह अधिकांश समस्याओ को सुलझाने की कुजी है।

सुमिरन या ध्यान के समय कभी-कभी हमारी नजर के सामने से भीड़ तथा कई प्रकार की वस्तुओं आदि के दृश्य भी गुजरते है। इनके तथा ऐसी अन्य वस्तुओ के प्रति आपका भाव एक तटस्थ या उदासीन दर्शक का रहना चाहिये, रुचि लेने वाले दर्शक का नही। तब आपकी उन्नति की गति और बढ़ेगी।

२०१——जहाँ तक भजन-सुमिरन का सवाल है, यह हमारा सबसे जरूरी काम है और कही भी किया जा सकता है। यह भौगोलिक परिस्थितियो पर निर्भर नही है, यह तो मुख्यत: मन को रोकने और उसे वश मे करने का कार्य है। शब्द आपके अन्तर में है और इसी प्रकार सतगुरु भी अन्दर ही है। उनसे संपर्क आपको स्थापित करना है, इसमे दूरी से कोई फर्क नही पडता; चाहे आप अमेरिका में हों या हिन्दुस्तान मे।

२०२——अपनी पत्नी और बच्चो का पालन-पोषण करना पति का कर्तव्य है और इसी प्रकार पत्नी का भी कर्तव्य है कि पति की देख-भाल करे, उसके आराम और आवश्यकताओ को पूरा करे और परिवार के सुख और शान्ति के लिये कार्य करे। पति और पत्नी रथ के दो पहियों के समान है। परिवार रूपी रथ का सुचारु रूप से चलना इन दोनो ही पहियो पर निर्भर है, और इसके लिये दोनो में परस्पर सहयोग होना चाहिये। सन्त-मत पारिवारिक शाति और सामजस्य का प्रबल समर्थक है, क्योंकि और बातों के अलावा इससे आत्मिक उन्नति मे भी सहायता मिलती है। जहाँ अनबन होती है, वहाँ बहुत-सा समय व्यर्थ नष्ट होता है।

२०३—सभी अनुचित रुझानों, इच्छाओं और प्रलोभनों को नियमित भजन-सुमिरन, खास कर सुमिरन के द्वारा वश में किया जा सकता है। अगर आप प्रतिदिन नियमित रूप से कम से कम दो घण्टे सुमिरन करते रहेंगे तो धीरे धीरे आप उदासीन या अनासक्त होते जायेंगे। सुमिरन हमारी तवज्जह और चेतनता को ऊपर की ओर खींचता है और इसलिये इस संसार में रहने से हम पर पड़े मोह-माया के बन्धन ढीले हो जाते है।

२०४—शब्द और नाम ही हमारे सच्चे, स्थायी और विश्वसनीय मित्र है और इन्ही से हमें सम्पर्क बढ़ाने की कोशिश करना चाहिये। शब्द कभी हमारा साथ नही छोड़ता और न सतगुरु ही हमसे कभी अलग होते हैं। हम ही उनकी ओर से उदासीन या लापरवाह बने बैठे है। संसार का प्यार और अन्य बन्धन हमारे ध्यान को काफी हद तक अपनी ओर खीचे रखते है और हम शब्द से सम्पर्क खो बैठते है। पर इस सबके बावजूद शब्द हरदम अन्दर मौजूद है और सुमिरन के द्वारा हम उससे कभी भी जुड़ सकते है; केवल उस ओर रुख करने की जरूरत है, सहायता मिलने लगेगी।

यह संसार कर्म-भूमि है, यहाँ हमें अपने कर्मों के अनुसार प्राप्त अपनी जिम्मेदारियाँ निभाना चाहिये, फर्ज़ अदा करना चाहिये, परन्तु साथ ही उस शाश्वत सत्य अथवा रूहानी हकीकत को नही भूलना चाहिये। हम अपने कर्मों के अनुसार मिलते और बिछुड़ते हैं, इस पर हमें दु:खी होने के बजाय नाम और शब्द की ओर मुड़ना चाहिये।

कृपया अपना अभ्यास पहले जैसी लगन और नियमितता के साथ शुरू कर दें और शब्द को ही अपना सच्चा मित्र मान कर उसी की ओर अपना रुख करें। इससे आप सुखी

होगे। क्षमा कर देना हमेशा अच्छा होता है।

२०५——मैं खुश हूँ कि आप अपना अभ्यास पहले से अधिक नियमितता के साथ कर रहे है। हमें शरीर के कष्ट और दुनिया के सदमे अपने मोह व लगाव के अनुसार ही कम या ज्यादा महसूस होते है। भजन-सुमिरन के द्वारा हम सत्य और स्थायी सत्ता के साथ अपना प्रेम बढ़ाते है और अस्थायी या फ़नाह हो जाने वाली वस्तुओं के साथ अपने लगाव को कम करते है।

हम अपने पिछले कर्मो के अनुसार ही इस संसार में मिलते और बिछुड़ते है, जिस प्रकार नदी मे तैरते हुए शहतीरों को एक लहर इकट्ठा कर देती है और दूसरी वापस अलग-अलग कर देती है। आपके   और आपके   .. के व्यवहार और उससे पैदा होनेवाली पीड़ा और दु ख में आप कर्मो की गति का खेल देखें। कर्मो के इस क्षण-भंगुर खेल के पीछे सदा अमर रहने वाले पदार्थ है——शब्द और आपकी आत्मा। दोनों का मूल स्रोत और सार एक ही है और ये दोनों उस सत्ता से बिलकुल भिन्न है जिसे हम मन कहते है। मन ही हमें बाहर संसार में प्यार और घृणा, लगाव और विरक्ति आदि में उलझाता है, जो यहाँ हमारे दु.ख और दुर्गति के कारण है। इनसे हमें अलग करने की शक्ति सिर्फ शब्द में ही है। जब हम शब्द की दिव्य धारा से जुड़ जाते हैं तब हम इस मायामय संसार से ऊपर उठ जाते है और दु:खी तथा व्यथित होना छोड़ देते है। सन्त इसीलिये शब्द की भक्ति और नाम के सुमिरन पर इतना जोर देते हैं।

नामों के सुमिरन का प्रभाव ऊँचा उठाने वाला होता है। सुमिरन कर्मो की नीचे गिरानेवाली प्रवृत्ति को रोकता है और हमारी तवज्जह व सुरत को तीसरे तिल में एकाग्र

करने में सहायक होकर हमें शब्द से जोडता है। अपने भजन को अधिक लगन और नियम के साथ करने से आपको घटनाओं के 'क्यों' और 'कैसे' का पता चलेगा और उनकी वजह से होनेवाली पीडा कम हो जायेगी। फिर यदि भाग्य में होगा तो परिस्थितियाँ सुधर भी सकती है। परन्तु जो कुछ भी हो, अन्य चीजों से हटाकर आपको अपनी प्रीति आन्तरिक हकीकत अथवा शब्द-धुन मे लगाना चाहिये। शन्ति और सुख का यही मार्ग है। इसका यह मतलब नही कि और सब सम्बन्ध एकाएक तोड़ दिये जाये। हमे चाहिये कि हरएक के प्रति अपने कर्तव्य निभाते रहे, परन्तु हमारा दिल कही और ही लगा रहना चाहिये।

दुर्भावना के द्वारा हम स्थिति को और भी जटिल अथवा पेचीदा बना देते है और कर्मो के नये बन्धन बाँध लेते है। अपना कर्तव्य अदा करे, जो सही और सत्य हो वह करे, परन्तु द्वेष या दुर्भावना के साथ नही। प्रेम के द्वारा दूसरों को जीतें।

२०६—अगर मन में लगन हो और अभ्यास नियमित हो, तो उमर से कोई खास फ़र्क नही पड़ता। आप यह भी महसूस करेगे कि अगर आप शब्द से जुड़े रहे तो आपकी अधिकाश समस्याएँ अपने आप सुलझ जायेगी।

मनुष्य-जन्म का उद्देश्य मुक्ति प्राप्त करके वापस अपने घर जाना है। इसके लिये आवश्यक है कि संसार मे अपने कर्तव्यो को निभाते हुए हम अपने ध्यान को इस जड़ ससार से समेट कर चेतनता के केन्द्र पर लाने का अभ्यास करना सीखे और इसमे अधिक से अधिक समय लगावे। इसके लिये वक्त और मेहनत दोनो की जरूरत है। इसीलिये मेहनत के साथ अभ्यास मे जुटे रहना आवश्यक है।

२०७—आपकी बीमारी के बारे मे सुन कर दुःख हुआ।

जो भी इलाज आपको माफ़िक आये और अच्छा लगे, वही कराये। हमारी बीमारियाँ हमारे अपने कर्मों के परिणाम है और अपनी मन की धाराओ या वृत्तियों को बदलने से बहुत फर्क पड़ सकता है। हालाँकि कर्मों के कुछ अंश को शायद भुगतना ही पडे। उचित तो यह होगा कि आप अपने आपको सच्चे दिल और पूरी लगन के साथ अभ्यास और भक्ति मे लगा दे तथा अपने दुश्मनों और निन्दा करने वालो से भी प्यार करे। शायद दुश्मनो के साथ ऐसा व्यवहार करना आपको कठिन प्रतीत हो, परन्तु आप कम से कम उनकी ओर से उदासीन रहते हुए आत्मा की अच्छाई और मालिक की दया-मेहर को याद करके सन्तोष कर सकते है। जब दूसरों के बुरे व्यवहार से आपके अन्दर नफरत और दुःख के भाव उठने लगें तब याद करें कि परमात्मा कितना अच्छा और दयालु है। इन जख्मों को भरने वाला यह सबसे अच्छा मरहम है।

इस जिन्दगी में हम जो कुछ भी चुका रहे है या भुगत रहे है ये एक ही जन्म के नही बल्कि अनेक जन्मो के कर्म है। हमे इनका विश्लेषण या छान-बीन करने के बजाय यह सोचना चाहिये कि किस प्रकार उन्हें चुका कर हम आजाद हों।

आप जिस प्रकार चाहें प्रार्थना कर सकते है। परन्तु जो कुछ मालिक चाहता है उसे प्रसन्नता-पूर्वक झेलने की शक्ति और साहस माँगना तथा उसकी रजा मे राजी रहना सबसे अच्छी प्रार्थना है।

मोह और लगाव सब मुसीबतों की जड़ है। हम किसी से लगाव रखे बिना भी उसकी सहायता कर सकते है।

२०८—मै आपकी कठिनाई को समझता हूँ, परन्तु मुझे खुशी है कि आप महसूस करते है कि इन सभी कष्टो का

इलाज आत्म-नियन्त्रण और भजन-सुमिरन है । सन्त-मत समाज और जाति का त्याग नही सिखाता, पर साथ ही यह भी नही चाहता कि हम अपने बन्धनों को और मजबूत बनाते जायें, जिनको बाद मे हमे ढीला करना पड़े ।

राधास्वामी मार्ग के बारे मे लोगों को आप जरूर बता सकते है, परन्तु जिनको इस ओर रुचि है, उनको कुछ मोटी-मोटी बाते बता देना ही काफी है । वे खुद ही इसके बारे में और पूछेगे । और जिन्हें इस ओर रुचि नही है, उनके सामने कितने ही भाषण दिये जाये, कोई फायदा नही ।

जहाँ तक मन के भटकने का सवाल है, यह जन्म-जन्मान्तरों से बाहर रहता आया है और एक वस्तु से दूसरी पर भागते रहना इसकी आदत हो गयी है । भजन और सुमिरन ही इसका इलाज है । हमें निराश नही होना चाहिये, बल्कि धैर्य और स्थिरता के साथ यह उपाय करते रहना चाहिये; कुछ समय बाद मन काबू मे आने लगेगा । यह हालत सिर्फ आपकी ही नहीं है, शुरू-शुरू में अधिकांश सत्संगी मन के भटकने की शिकायत करते है ।

आपको फोटो का ध्यान नही करना चाहिये, बल्कि आँखें बन्द करके मन में स्वरूप का ध्यान करना चाहिये । इससे आपकी कठिनाई कुछ हद तक हल हो जायेगी । फोटो आपके कमरे मे रह सकता है, आप स्वरूप को याद करने मे उससे सहायता ले सकते है, परन्तु अभ्यास के समय उसकी ओर न देखें और न उसका ध्यान करे । शब्द-धुन अन्तर मे हमेशा मौजूद है, परन्तु एकाग्रता की कमी अथवा मन के भटकने के कारण हम उसे पकड़ नहीं पाते ।

आपके बारे में यही कहना है कि आप इस मार्ग पर हैं और जितनी अधिक आप इसमें प्रगति करेंगे उतना ही अपने मित्रों और सम्बन्धियों को प्रभावित करेंगे । सन्त-मत तीखी

आलोचना और नुक्ता-चीनी में नहीं, बल्कि मिठास और प्रेम के साथ समझाने में विश्वास रखता है ।

२०९—यह खुशी की बात है कि आप सन्त-मत में आ गये है और आपको शब्द के अभ्यास की दीक्षा मिल गयी है जो हमारे असली निज-घर को जाने का राज-मार्ग है । आँखों के केन्द्र पर ध्यान रखते हुए आप जितना अधिक भजन-सुमिरन और खास कर सुमिरन करेगे, उतनी ही आपके अन्दर प्रेम और विश्वास की भावना जाग्रत होगी और आप महसूस करेगें कि आप अकेले नहीं है ।

सतगुरु हमेशा आपके साथ है । उनका असली स्वरूप शब्द है और वह आपके अन्दर है । अब अभ्यास द्वारा ऊपर जाकर उस नूरी स्वरूप से मिलाप करना आपका काम है ।

जब सत्संग से दूर हों तो सन्त-मत का साहित्य पढ़े, इससे भी आपको अपने भजन में मदद मिलेगी ।

२१०—मुझे खुशी है कि आप अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ है और शराब आदि प्रलोभनों के सामने नहीं झुकते । परन्तु बेहतर यह है कि ये वस्तुएँ, जिनकी हमारे लिये मनाही है, हम अपने दोस्तों को भी पेश न करे । मैं आपकी परिस्थिति और कठिनाइयों को समझता हूँ, परन्तु जब एक बार आपके दोस्तों को आपके सिद्धान्तो का पता चल जायेगा तो वे आपका दृष्टिकोण समझेगे और उसकी कद्र भी करेगे । अपने दोस्तों की सेवा और खातिर अन्य तरीको से भी की जा सकती है । इस बारे मे हुजूर महाराज जी भी यही सलाह दिया करते थे ।

२११—सतगुरु हमेशा अपने सत्संगियो के अग-संग है और उनकी सॅभाल कर रहे है । आप अपना भजन-सुमिरन हर रोज बराबर करते रहें, जैसा कि नाम-दान के समय आपको बताया गया है । आप नियमित रूप से अपनी ओर से पूरी

कोशिश करें और बाकी सतगुरु पर छोड़ दे, वे हर बात की खुद सँभाल करेगे ।

अपने मेल-जोल में हमेशा अच्छी संगति रखें और ऐसा कोई काम न करे जो आप अपने सतगुरु की मौजूदगी में नही करते। वह हमेशा आप पर नजर रखते है, चाहे आपको उनकी उपस्थिति का एहसास या जानकारी न भी हो। एक सत्सगी होने के नाते आपको ऐसा कोई कार्य नही करना चाहिये जिससे कि लोगो में आम संगत के बारे में वुरी धारणा वने। औरों को प्रभावित करने का सवसे अच्छा उपाय स्वयं अपने आदर्शो के अनुसार जीवन विताना है। यह सारे प्रचार और उपदेश से कही अधिक प्रभावशाली और महत्वपूर्ण है। दूसरो को उपदेश देने से तो यह कही वेहतर है कि हम खामोश रहे और अपनी सम्पूर्ण रहनी और व्यवहार को सन्त-मत की शिक्षा के अनुसार ढाल ले ।

२१२—आपके पत्र से मालूम हुआ कि आपको वहुत छोटी उमर मे हुजूर महाराज वावा सावनसिंहजी से नाम-दान मिला था। यह एक वहुत वड़ा सौभाग्य है, क्योकि ऐसे सतगुरु से मिला हुआ नाम समय आने पर अवश्य फल देगा। कोई वात नही यदि आपने अभी तक इस अवसर का लाभ नही उठाया, परन्तु इसका यह मतलव नही कि आप अव भी उस अवसर की उपेक्षा करते रहें। पिछली भूल को सुधारने का सवसे अच्छा तरीका यही है कि अव से आप अपने समय का सही उपयोग करे ।

नाम-दान के वाद से सतगुरु अपने शिष्य के अन्तर में हमेशा मौजूद रहते हैं। इसके वाद शिष्य को तो सिर्फ इतना करना है कि वह अपनी तवज्जह या सुरत को बाहर से हटा कर ज्यादा से ज्यादा अन्दर की ओर ले जाये ।

अपने अन्य सत्संगी बन्धुओं के प्रति प्रेम और आदर की

भावना का होना बहुत अच्छी बात है। इस प्रेम व आदर का होना तो ठीक है परन्तु उन्हे उपदेश देना या सिखाने की कोशिश करना अलग बात है। औरों को समझाने और शिक्षा देने के पहले मनुष्य को खुद उन बातो का ज्ञान होना चाहिये। एक अधूरा शिक्षक केवल अधूरे विद्यार्थी ही तैयार कर सकेगा। जब सन्त किसी को अपना कार्य करने के लिये नियुक्त करते है, तो उसके पीछे उनकी शक्ति काम करती है। परन्तु जो लोग उस काम को स्वयं हाथ में लेकर करना चाहते है, उनके साथ यह शक्ति नही होती।

जो सलाह आपको दी गयी थी वह आपके ही लाभ के लिये थी, और समय आने पर आपको इसका पता चलेगा। अपने व्यवहार, आचरण और प्रेमपूर्ण बर्ताव के द्वारा ही आप सत्संगियों की सहायता कर सकते है और उन्हें प्रेम और भक्ति की प्रेरणा दे सकते है। परन्तु सबसे पहली और सब से जरूरी बात यह है कि आप अपना भजन और सुमिरन बराबर करे अर्थात हर रोज ढाई घण्टे अभ्यास मे लगाये—— दो घण्टे सुमरिन मे और आधा घण्टा भजन अथवा अन्दर शब्द को सुनने में।

भजन-सुमिरन की दिशा में आपके प्रयासो का हाल जानने और आपको यथा-सम्भव सहायता देने मे मुझे खुशी होगी। कृपया अपनी पढ़ाई की उपेक्षा न करें। दोनों बातें साथ-साथ होनी चाहिये। पहले कर्तव्य आता है। जो मनुष्य अपनी सासारिक जिम्मेदारियो और कर्तव्यों को नही निभाता वह बहुधा अपने आत्मिक कर्तव्यों की भी परवाह नही करता।

२१३——आपने अपने पहले पत्र में सलाह और आशीर्वाद माँगे थे। मैने आपको सलाह दी थी कि जहाँ भी आपको सुविधा हो अपना व्यापार करें और आजीविका

कमायें, परन्तु सन्त-मत के सिद्धान्तों को हमेशा याद रखें और अपना भजन-सुमिरन नियमित रूप से करें। मालूम होता है कि आपने सलाह के अनुसार काम नही किया और मास आदि का इस्तेमाल न करने के अपने वादे को भी तोड़ दिया है।

यह सच है कि सतगुरु हमेशा अपने शिष्य के अग-संग है। परन्तु यदि शिष्य सतगुरु से मिलने के लिये अन्तर में झाँकने तक की कोशिश नही करता और सन्त-मत के सिद्धातों के ही विरुद्ध आचरण करता है, तो क्या किया जा सकता है? अगर आप अपना भजन-सुमिरन नहीं कर सकते तो मास आदि न खाने की अपनी प्रतिज्ञाओं को तोड़ कर कम से कम अपने कर्मो का बोझ तो मत बढ़ाइये। भजन में बैठकर सतगुरु से अन्तर में प्रार्थना कीजिये।

२१४—मैं प्रसन्न हूँ कि आप शाकाहारी आहार पर बगैर किसी कठिनाई के दृढ़ रह सके हैं। इससे आपको अवसर मिलेगा कि अपने भोजन के बारे में पूछने वालों को आप सन्त-मत के सम्बन्ध मे कुछ बतायें। ये पूछने वाले सच्चे जिज्ञासु और साधारण प्रश्नकर्ता, दोनों ही हो सकते है। जब भी समय मिले आप भी सन्त-मत की पुस्तकें पढ़ें और सोने से पहले भजन मे बैठे। सोने से पहले, बिस्तर में लेटे हुए भी सुमिरन किया जा सकता है। आप अपना मन और ध्यान जितना अधिक सतगुरु में रखेगे उतनी ही मदद मिलेगी। परन्तु इसका यह मतलब नही कि आप उस काम की उपेक्षा करे जिसके लिये आपको वहाँ भेजा गया है।

जहाँ तक औरो से बात करने और उन्हें अपना दृष्टि-कोण समझाने का सवाल है, आप अधिक से अधिक शिष्ट, नम्र और उदार रहे। लोगों के हृदय को जीतने और अपने विचारो के लिये आदर प्राप्त करने का यही उपाय है। इसके

सिवाय, शब्दों के बनिस्बत व्यवहार का असर कहीं अधिक होता है।

२१५——......की मृत्यु के बारे मे आपका पत्र मिला। शरीर का यही धर्म है। फिर भी सत्संगियों को मृत्यु का कोई डर नही होता, क्योंकि उनका आधार सतगुरु है।

अच्छे लोग इस जेलखाने से जल्दी छुटकारा पा जाते हैं, क्योंकि उनके कर्मो का कर्ज हलका होता है। जिन्हे हम प्यार करते है उनकी मृत्यु के समय उनके पास रहने की इच्छा स्वाभाविक है, पर मालिक की मौज ही ऐसी थी, मालिक जानता है कि हमारे लिये सबसे अच्छा क्या है। अपने शोक मे मेरी सहानुभूति स्वीकार करे, और इस विचार से अपने दु:ख को शान्त करे कि मालिक की यही मौज थी और कम से कम, जानेवाले के लिये तो सब तकलीफों का अन्त हो गया है।

२१६——मुझे आपका प्रेम और भक्ति से परिपूर्ण पत्र मिला। सन्त-मत के प्रति आपकी इतनी गहरी रुचि को देख कर मै बहुत खुश हूँ। हमारे जीवन का उद्देश्य यही है। आपके पिछले संस्कार आपको इस ओर इतनी गहरी कशिश के साथ खीच रहे है, परन्तु फिर भी आपको सन्त-मत का पूरा अध्ययन करना चाहिये। अगर कुछ पूछना जरूरी समझे तो मुझे लिखने मे संकोच न करे।

२१७——मै अच्छी तरह समझता हूँ कि आपको नाम लेने की कितनी तीव्र इच्छा है। इसमें मैने जान बूझ कर देर इसीलिये की है कि आप सन्त-मत की अपनी खोज पूरी कर सके। अगर मनुष्य की सारी जिन्दगी ही इस खोज में बीत जाय, तो भी यह समय खोना नही है बल्कि उसका उत्तम उपयोग है, क्योकि इससे भविष्य के लिये एक मजबूत बुनियाद पड़ेगी जिस पर बना हुआ निर्माण भी मजबूत

होगा। इसीलिये यह आवश्यक है कि सन्त-मत के मार्ग को अपनाने से पहले इसके बारे मे पूरी छान-बीन और गहरी खोज कर ली जाय।

एक बार फैसला कर लेने के वाद आपको चाहिये कि छान-बीन करना छोड़ कर अपने ज्ञान को व्यावहारिक रूप दे अर्थात उस पर अमल करे। यह मनुष्य-जन्म एक दुर्लभ अवसर और मालिक की अनमोल वख्शिश है, क्योकि जीवन के असली उद्देश्य—आत्म-ज्ञान—की प्राप्ति मनुष्य चोले मे ही हो सकती है। हमे चाहिये कि अपने सासारिक कर्तव्यों को निभाते हुए एक सामान्य मनुष्य की तरह रहे, परन्तु अपने असली उद्देश्य और मंजिल को कभी न भूले।

२१८—मै खुश हूँ कि आप दोनों ने नाम ले लिया है। यह जीवन को आसान बनाता तथा अभ्यास मे सहायक होता है, क्योकि अब पति और पत्नी दोनों का झुकाव एक ही दिशा मे हो जाता है।

हाँ, परमात्मा अपने ही रहस्यमय तरीकों से काम करता है और 'क्यों और कैसे' पूछना हमारा काम नही है। केवल उसकी दया-मेहर से ही हमारी आँखे खुलती है और हमारे अन्तर मे हलचल पैदा होती है, क्योकि वह हम सबके अन्दर मौजूद है। हमें उसे बाहरी जगत में नही, बल्कि अपने अन्तर में ही सतगुरु और शब्द की सहायता से ढूँढना है। शब्द वह दिव्य सत्ता है जिसने हमें बनाया है और जो हमारी सँभाल कर रही है।

डाक्टर जॉनसन के कथन का मतलब यह है कि अगर हम अपना भजन प्रेम, विश्वास और श्रद्धा की भावना के साथ शुरू करे (अथवा भजन शुरू करते समय इन भावनाओं के साथ मन ही मन एक छोटी सी प्रार्थना करे) तो हम

अपने आपको सतगुरु के निकट सम्पर्क में ले आते है या लाने की ओर बढ़ते है ।

अगर सुबह तीन बजे बिना कठिनाई के भजन में बैठा जा सके तो यह सुबह छः बजे बैठने से कही अच्छा है, क्योंकि सुबह तीन बजे न केवल चारों ओर शान्ति रहती है और मन दिन भर के भटकाने वाले ख़यालों से मुक्त रहता है, बल्कि सम्पूर्ण वातावरण दिव्य धाराओ से परिपूर्ण रहता है । फिर भी काफी हद तक यह मनुष्य के स्वभाव और उसकी परि-स्थितियों पर निर्भर रहता है । यह समय कुछ लोगों को अनुकूल मालूम देता है, जब कि औरों के लिये कठिन होता है ।

अभ्यास के समय को धीरे-धीरे बढ़ाना अच्छा है । बढा-कर उतना समय कर ले जितना कि आप अधिक से अधिक दे सकते है, और उस बढ़ाये हुए वक्त पर कायम रहे । उसमें वापस कमी नही आनी चाहिये । मन्द किन्तु अडिग चाल वाला अन्त मे विजयी होता है ।

मन एक बन्दर के समान है जो कैद होकर निश्चल बैठना पसन्द नही करता । एक स्थान से दूसरे स्थान और एक विचार से दूसरे विचार पर उछलते फिरना इसका स्वभाव है, मानो यह उस सुख की तलाश मे हो जो वह कभी त्रिकुटी मे प्राप्त करता था । जब वह शब्द को पकड सकेगा, तब स्थिर होगा । वह युगों से बाहर भटक रहा है और अब उसे अन्दर जाने मे कठिनाई होना स्वाभाविक है । सुमिरन वह मन्त्र है जो उसे धीरे-धीरे अन्दर की ओर प्रेरित करता है । परिश्रम और लगन से जुटे रहिये, फिर वह वक्त बढ़ता जायेगा जब कि मन आपके—असली 'आप' के—वश मे रहेगा ।

आप दोनों एक ही कमरे मे अभ्यास कर सकते है । पर

आपके लिये यह उचित नही है कि आप अपने अनुभवों का आदान-प्रदान करें, कम से कम फिलहाल तो नही ।

२१६—जिस सत्य की आपको तलाश है उसकी प्राप्ति ही हमारी जिन्दगी का असली उद्देश्य और प्रयोजन है । क्योकि यह खोज केवल मनुष्य-जन्म में ही की जा सकती है, इसलिये हमें हकीकत या सत्य की खोज में कोई कसर नही रखना चाहिये । यह खोज हमें अपने अन्दर ही करनी चाहिये । यह ठीक ही कहा गया है कि 'खुदा की वादशाहत हमारे अन्दर है' । परन्तु वगैर किसी खेवट की सहायता के हम इस अनजाने सागर को पार नही कर सकते ।

२२०—वास्तव मे नाम हमारे जीवन का परम सत्य है और वे लोग भाग्यशाली हैं जिन्हें नाम का मार्ग वता दिया गया है और जो उस पर चल रहे है । 'नाम', 'लोगोस' 'वर्ड', 'शब्द', सवका असल मे एक ही अर्थ है । शब्द के द्वारा ही हम अपने आपको इस जड़ तथा नाशवान संसार से हटा कर हकीकत से जुड़ सकते हैं । सन्त-मत के द्वारा आप अपने दैनिक सामान्य जीवन में वगैर कोई दखल दिये ऐसा कर सकते है । आप किसी भी व्यवसाय में लगे हों और कही भी हों, अपनी भक्ति और अभ्यास के लिये आप कुछ समय निकाल सकते हैं और तब धीरे-धीरे आपका पूरा जीवन ही बदल जायेगा ।

सुमिरन अथवा दिये गये पवित्र नामों का जाप जादू का काम करता है । दरअसल सुमिरन पर जितना भी जोर दिया जाय कम है । सुमिरन दोनों भौहों के बीच में ध्यान को जमा कर श्रद्धा और नियमितता के साथ करना चाहिये । सुमिरन के द्वारा हम अपनी सुरत को तीसरे तिल मे एकत्रित कर लेते है और फिर शब्द से जुड़ते है, जो कि हमे आगे ले जाता है ।

सतगुरु का शरीर भी शब्द का ही मूर्तिमान या प्रकट रूप है। बाहर वे हमें अपने देह-स्वरूप में समझाते और उपदेश देते है, और अन्दर अपने शब्द-स्वरूप में हमारी मदद और रहनुमाई करते है। श्रद्धापूर्वक किया गया सुमिरन और देह-स्वरूप सतगुरु की प्रीति और भक्ति हमें अन्दर शब्द-स्वरूप से मिलाते है। सतगुरु अपने शिष्य की प्रगति पर नजर रखते हैं और उसकी सँभाल और सहायता करते हैं, परन्तु शिष्य को इसका बोध अन्दर जाने पर ही हो सकता है।

भजन और सुमिरन भी सतगुरु की सेवा है, और यही सबसे उत्तम और सतगुरु के पसन्द की सेवा है।

२२१—वास्तव मे, ब्रह्मचर्य सबसे अच्छा उपाय है, परन्तु केवल तभी जबकि उसे परस्पर स्वीकृति और बगैर किसी दबाव के अपनाया जाये। .... ने जो 'निरापद काल' की विधि बतलाई है, वह इसके बाद सबसे अच्छा उपाय है। पारिवारिक शान्ति और एकता भंग नही होनी चाहिये।

मैं खुश हूँ कि आप सन्तों के इस मार्ग पर चलने के लिये उत्सुक हैं। आपको अपने अभ्यास में एक सच्चा मार्ग-दर्शक और मित्र मिलेगा।

२२२—असफल अभ्यास की वजह गलत तरीके, सांसारिक पदार्थों में बहुत अधिक रुचि या बहुत ज्यादा दुनियावी आकर्षण हो सकते हैं, क्योंकि ये अभ्यास के समय ध्यान को एकाग्र करने में बाधा डालते है। यह कर्मो के जोर की वजह से भी हो सकता है। समय के साथ इन सब पर विजय पाई जा सकती। अगर लगन-पूर्वक काफी देर तक सुमिरन किया जाय तो उससे ये बाधाएँ दूर हो सकती है और अन्दर जाने का चाव भी उत्पन्न हो सकता है। वास्तव में सुमिरन इस सम्पूर्ण प्रणाली की बुनियाद है। सुमिरन का असली ध्येय,

ध्यान को बाहर की सभी वस्तुओं की ओर से समेट कर, बगैर किसी जोर या दवाव के, तीसरे तिल में ठहराना है।

विवाह कोई बाधा या रुकावट नही है, परन्तु अधिक विलासिता से बचना चाहिये। कर्मों को पूरा करने का और नये कर्मों को इकट्ठा करने से वचने का सवसे अच्छा उपाय यही है कि सभी बातों को कर्तव्य की भावना के साथ किया जाय। जीवन का यह दृष्टिकोण और नियमित अभ्यास अर्थात भजन-सुमिरन, कर्मों के जाल से छुटकारा पाने और आध्यात्मिक उन्नति करने का सर्वोत्तम मार्ग है।

२२३—मन केवल सारे शरीर मे ही नहीं बल्कि संसार के नाना पदार्थों में भी फैला हुआ है, क्योकि युगों से हम बाहर देखने के आदी हो चुके हैं, अन्दर देखने के नही। हमारी असली समस्या तो अपने ध्यान को बाहर की वस्तुओ से तथा शरीर की ओर से हटा कर दोनो भौहों के वीच के केन्द्र पर स्थिर करना है। आँखो को बन्द कर लेना चाहिये क्योकि इन बाहर की आँखो से हमें इस केन्द्र को नही देखना है, बल्कि अपनी तवज्जह को यहाँ पर जमाना है। सतगुरु के बारे में, उनके कार्य और सत्संग के वारे में चर्चा करने से भी एकाग्रता मे सहायता मिलती है।

२२४—आपने 'बिना किसी शर्त के समर्पण' के बारे में लिखा है। निस्सन्देह सन्त-मत मे यह आध्यात्मिक उन्नति की बुनियाद है, परन्तु इसे प्राप्त करना बहुत कठिन है। जब तक हम नौ द्वारो को खाली करके अन्दर सतगुरु से मिलाप नही कर लेते, बिना शर्त का समर्पण वास्तव मे सम्भव नही है, यद्यपि बाहरी समर्पण भी वहुत अच्छा है। उस आन्तरिक दर्शन के लिये पूरी कोशिश कीजिये। तब बिना शर्त का समर्पण प्राप्त होगा जो एक बार मे ही आपकी सब समस्याओं को सदा के लिये हल कर देगा।

कृपया अपना तमाम खाली वक्त भजन-सुमिरन में लगायें ताकि इस उत्तम ध्येय को पा सकें तथा अन्य लोगों के बारे में चिन्ता न करें ।......औरों की सहायता करने का सबसे अच्छा तरीका पहले अपनी सहायता करना और दूसरों के लिये खुद को एक मिसाल बनाना है ।

सबसे उत्तम और सतगुरु के पसन्द की जो सेवा आप कर सकते हैं वह है नियमित रूप से तथा जो भी खाली वक्त मिले, उसमें भजन-सुमिरन करना ।

२२५—सबसे जरूरी बात तो अन्दर जाना और शब्द से प्रत्यक्ष या सीधा आत्मिक सम्बन्ध स्थापित करना है । यह आपकी सब समस्याओं को अपने आप सुलझा ही नहीं देगा, बल्कि आपको आत्म-ज्ञान के मार्ग पर तेज़ी से बढ़ायेगा भी । असल में अपना निजी अभ्यास या प्रयास तथा निजी अनुभव ही तो खास बात है । . . . मेरे ख़याल से, इस प्रकार आप खुद की मदद भी करेंगे और इन सब वस्तुओं से अलग रहकर अपने सतगुरु (हुजूर महाराज जी) के आदेशों का पालन भी करेंगे; और जब महाराजजी ने आपसे फ़र-माया था कि 'आपके और आपके ध्यान के बीच कोई भी चीज नही आनी चाहिये' तो उनका यही मतलब था । आप जो महसूस कर रहे है उसे मैं अच्छी तरह समझता हूँ । यह मन की कमजोरी के कारण है और इसी कमजोरी पर आपको भक्ति तथा भजन-सुमिरन से विजय पानी है । जिन्होने अपनी खुद की समस्याओं का सन्तोषजनक समाधान कर लिया है, केवल वे ही वास्तव मे औरो की सहायता करने के योग्य होते है ।

शब्द-भक्ति के सिवाय इस संसार की कोई भी वस्तु मृत्यु के समय और मृत्यु के बाद हमारी सहायता नही कर सकती । शब्द-भक्ति ही सबसे जरूरी और सार वस्तु है । अतीन्द्रिय दृष्टि तथा इस प्रकार की अन्य बातों का आप काफी

अनुभव कर चुके हैं । अब समय आ गया है कि आप अपना सम्पूर्ण ध्यान और पूरा खाली वक्त केवल भजन-सुमिरन में लगायें, यही आपका साथ देगा ।

कृपया याद रखे कि आपके अपने आन्तरिक अनुभव आपकी निजी सम्पत्ति है और इन्हें दूसरों को नही बताना चाहिये और न उन्हें इस भेद में शरीक करना चाहिये । हर-एक सत्संगी को अपने आन्तरिक अनुभव अपने तक ही रखना चाहिये और उनके बारे में अपने सतगुरु के सिवाय और किसी से न तो चर्चा करना चाहिये और न लिखना ही चाहिये । यह सलाह सत्संगी के अपने फ़ायदे के लिये है ।

२२६—**मैं** यह जानकर बहुत खुश हूँ कि आप शान्ति का अनुभव करते हैं और अपने असली काम अर्थात भजन-सुमिरन में लीन है । यही सबसे जरूरी चीज़ है और यही आपके काम आयेगी । संसार की पसन्दगी और प्रशंसा का कोई मूल्य नही । हमारा ख़ास काम तो उन बन्धनों को तोड़ना है जो हमें इस संसार में जकड़े हुए हैं और जो हमें इस काल के देश से निकलने नही देते । यह सुरत को सुमिरन और शब्द में लगाने से ही हो सकता है, क्योंकि केवल शब्द ही हमें काल की सीमा से परे सचखण्ड में ले जा सकता है । पर जब तक हमारे अन्दर शिकायतें, अधूरी इच्छाएँ और लालसाएँ है, तब तक हमें बार-बार नीचे गिरना पडता है ।

आपको जो भी अनुभव होते हैं, उन्हे अपने तक ही रखें । आपने जो वर्णन किया है वह तो अभी केवल शुरूआत ही है । सबसे जरूरी तो यह है कि आप शब्द से जुड़ जायें, अपने आपको उसमें लीन कर दें, ताकि वह आपको ऊपर के रूहानी मण्डलों में ले जा सके । हमारी भक्ति और हमारे भजन-सुमिरन के अभ्यास का असर हमारे रोज के व्यवहार और रहन-सहन में झलकता है । जैसी कि कहावत है, 'हाथ कंगन को आरसी क्या ।'

अन्दर प्रकाश, रंग और आवाजें कई स्थानों पर हैं। उन पर अधिक ध्यान न देना ही अच्छा है, क्योंकि ये हमारे उद्देश्य या हमारी मंजिल नहीं है। हमारा ध्येय तो शब्द के साथ एक हो जाना है और वहाँ पहुँचना है जहाँ से कि शब्द अलग-अलग मण्डलों में से होता हुआ आ रहा है। कृपया अपने ध्यान को घण्टे के शब्द पर लम्बे समय तक लगाये रखिये।

जब सत्संगी शरीर से निकलना शुरू कर देता है, चाहे वह थोड़े समय के लिये ही क्यों न हो, तो संसार तथा अपने लगावों के प्रति उदासीन हो जाता है। पर यह उदासीनता की भावना तभी बनी रह सकती है जब कि वह अपने अभ्यास में नियमपूर्वक बहुत देर तक बैठता रहे और यह क्रम लम्बे अरसे तक चलता रहे।

२२७—मुझे यह जानकर खुशी हुई कि जीवन के प्रति आपका दृष्टिकोण बदल गया है और आप अब अनुभव करने लगे है कि हमारा एक-मात्र सच्चा मित्र या साथी शब्द ही है। वास्तव में अपनी हाल ही की यात्रा मे आपको इसका व्यावहारिक अनुभव हुआ है, जिसका आपने वर्णन किया है।

संसार के रिश्ते-नाते और सासारिक लगाव केवल अस्थायी ही नही, बल्कि दुःख और सूनेपन की भावना को पैदा करने वाले भी हैं। इस संसार में हम सभी अकेले हैं, परन्तु हम ऐसा महसूस नही करते। जितनी जल्दी हम यह महसूस करने लग जाये उतना ही अच्छा है, क्योकि तभी हम उस वस्तु के साथ जुड़ सकेंगे जो कि सच मे हमारी है। निस्सन्देह वह वस्तु शब्द ही है।

२२८—मुझे आपके भजन-सुमिरन मे प्रगति और स्वास्थ्य में सुधार के बारे मे जानकर खुशी हुई। शान्ति अन्दर से आती है, बाहर इच्छाओं और तृष्णाओं की पूर्ति से नही।

शब्द से प्राप्त होने वाली शान्ति के समान संसार में और कोई शान्ति नही है। सुमिरन के द्वारा अपनी सुरत को नौ द्वारों से समेटना इस साधना की बुनियाद है। अभ्यासी कभी-कभी सुमिरन की उपेक्षा करते हैं और अभ्यास के इस आवश्यक अंग पर समय और ध्यान नही देते, जिसके फलस्वरूप सिमटाव अधूरा होता है। सुरत के शब्द के साथ जुडने और उसमें लीन हो जाने से जो शान्ति, सुख और आनन्द मिलता है उससे बढ कर और कोई शान्ति, सुख और आनद नही है। जिन्हें भी नाम मिल गया है, वे सब शब्द-भक्ति और सतगुरु-भक्ति के द्वारा एक दिन सचखण्ड पहुँचेगे। सतगुरु का असली स्वरूप भी शब्द ही है और उनके आदेशों का प्रेम और विश्वास के साथ पालन करना सतगुरु-भक्ति है। सतगुरु-भक्ति ही हमे शब्द-भक्ति की ओर ले जाती है।

२२९—'आवाजों' के बारे मे आपसे मैं यही कहूँगा कि इन आवाज़ों पर अधिक भरोसा न करे, जव तक कि सुरत सिमट कर ऊपर न आ जाय और अन्य प्रामाणिक लक्षण न मिले। कई बार अभ्यासी को आवाजे सुनाई देती हैं जो ऊपर के मण्डलों से आनेवाली प्रतीत होती है, परन्तु वे केवल नकली आवाज़े है और विरोधी शक्ति अथवा काल द्वारा अभ्यासी या नये शिष्य को गुमराह करने के लिये भेजी जाती हैं। (इसीलिये यह चेतावनी दी जाती है कि केवल दाहिनी ओर या बीच मे से आनेवाली आवाज को ही सुनना चाहिये।)

२३०—मै आपका ध्यान उस अनुवाद की ओर खीचना चाहूँगा, जो आपको भेजा गया है ... जिसका विषय यह है कि 'हरएक को अपने सतगुरु का ही ध्यान करना चाहिये' अर्थात जिन सत्सगियों को हुजूर महाराज जी से नाम मिला है उन्हें हुजूर महाराज जी का ही ध्यान करना चाहिये और उनके ही दर्शन की प्यास पैदा करनी चाहिये। इसी प्रकार,

जिन्हे सरदार बहादुर महाराज जी से नाम मिला है, उन्हें सरदार बहादुर महाराज जी के ही दर्शन की इच्छा करनी चाहिये। निस्सन्देह आपको यह भी मालूम है कि हमारे पिछले दोनों महान सतगुरुओं में से किसी ने भी अपने फोटो सत्संगियों के पास भेजने की अपने अन्तिम वर्षो के सिवाय कभी इजाजत नही दी, और तब भी उन्होने बार-बार चेतावनियाँ दीं कि सतगुरु का अन्दर ध्यान करने के लिये फोटो का उपयोग नही करना चाहिये, बल्कि सिर्फ सतगुरु को पहचानने के लिये फोटो रखे जा सकते है।

२३१—लोग किसी भी मत या फिलासाफी के बारे में अपनी राय उसकी व्याख्या या प्रतिपादन से नही बनाते, बल्कि उसको मानने वालो पर पड़ने वाले प्रभाव तथा उसके अनुयायियो के जीवन में आने वाले परिवर्तनों से बनाते है। सभी सामाजिक, धार्मिक और दार्शनिक नेता निरन्तर जनता की नजर में रहते है और खुली आलोचना के विषय बनते है। और तो और, उनके कार्यो और उद्देश्यों का अर्थ भी हमेशा उदारतापूर्वक नही किया जाता। लोगों की इस आलोचना को कोई जितना अधिक सह सकता है, उतना ही वह अपने उद्देश्य की पूर्ति मे सफल हो सकता है। कोई वस्तु मनुष्य को इतना अनासक्त, इतना महान और इतना ऊँचा नही बना सकती जितना कि निरन्तर, और लगन पूर्वक किया गया भजन-सुमिरन बनाता है। इसमें भी भजन अर्थात शब्द को सुनने का असर बहुत अधिक होता है। शब्द को सुनने का यह अभ्यास जितना भी करें कम है। (परन्तु निस्सन्देह पहले सुमिरन करना चाहिये।)

२३२—पिछले जन्मो के सम्बन्धी हमारे वर्तमान जीवन में मिलते अवश्य है, परन्तु पुराने सम्बन्धों को फिर से उभारना गलत है, क्योकि इससे हम काल और कर्मो के जाल में

फँस जाते हैं। ऐसे सम्बन्धों को मन बहुत जल्दी पहचान लेता है, परन्तु यह खतरनाक है और हमारे पतन का कारण बन सकता है। हमारे राग और लगाव हमें इस संसार में लाये है और इस दु:ख-दर्द की नगरी मे हमारे जन्म लेने का कारण बने है, जबकि हम इस नगरी से छुटकारा पाना चाहते है। सन्त हमें कर्मों को भुगतने और उन्हें नष्ट करने का उपाय सिखाते है, ताकि हम उनके बाधक प्रभाव और नीचे खीचने वाले असर से मुक्त होकर अपने मालिक और सतगुरु के चरणों मे पहुँच जायें।

२३३—आप जानते ही है कि हम सबको अपने-अपने प्रारब्ध कर्म भोगना पड़ते है। यह कानून अटल है; परन्तु नाम या शब्द के अभ्यास के द्वारा हमे कर्मो के दु:ख या पीड़ा से ऊपर उठने और आत्म-विश्वास तथा शान्ति के साथ परि-स्थिति का सामना करने की शक्ति प्राप्त होती है। जितना ज्यादा सुमिरन और भजन हम करते है, उतना ही शरीर से ऊपर उठ जाते है और शरीर को होने वाले कष्टो के प्रति उदासीन हो जाते है। लेकिन फिर भी, कर्मो का लेखा तो सबको चुकाना ही पड़ता है।

२३४—फार्म मे फालतू बैलों का प्रश्न बड़ा कठिन और जटिल है। इसके बारे में......से भी बात-चीत हुई थी। अगर बैलों का फर्म पर कोई उपयोग नही है, तो उन्हे निका-लना तो होगा ही। उन्हे किसी खरीददार को बेच दे परन्तु, वध के खयाल से न बेचे। उसके बाद खरीददार जो कुछ भी करता है यह उसकी ज़िम्मेदारी है, आपकी नही। दूसरे लफ्जों में, उन्हें वध के लिये नही बेचना चाहिये, परन्तु खरीददार उनका क्या करता है इससे आपको कोई सरोकार नहीं। किसी हालत में भी जानवरों को वध के लिये नहीं पालना चाहिये और न ही किसी सत्संगी को सूअर या मुर्गी पालने का व्यापार करना चाहिये।

२३५—सन्त-मत की साधना में मन को शरीर से अलग नहीं किया जाता बल्कि उसे शरीर के अन्दर ही ऊँचे रूहानी मण्डलों में ले जाया जाता है और धीरे-धीरे कुछ समय बाद अभ्यासी को इतना नियन्त्रण प्राप्त हो जाता है कि वह जब चाहे अन्तर में चढाई करे और जब चाहे नीचे आ जाये। परन्तु, जब इच्छा हो तब अन्दर जा सकने की अवस्था पर पहुँचने में काफ़ी समय लगता है, क्योकि मन को युग-युगान्तरों से बाहर भटकने की आदत पड़ी हुई है।

हमारा शरीर पिण्ड या आलमे-सगीर है और इसलिये इसमें ब्रह्माण्ड या आलमे कबीर की सभी विशेषताएँ मौजूद है। मन और तवज्जह को मस्तक के ऊँचे केन्द्रों पर लेजाने का कार्य सतगुरु की पूरी देख-भाल और सँभाल में किया जाता है। यह धीरे-धीरे किया जाता है और इसके लिये अभ्यासी को अपना रोज का व्यवसाय नही छोड़ना पड़ता। इसलिये इसमें कोई एकाएक विच्छेद या परिवर्तन नही करना पड़ता, जो कि कभी-कभी खतरनाक हो सकता है।

इस अभ्यास की पहली अवस्था है ध्यान को दोनो भौहों के बीच में केन्द्रित करना और उसे वहाँ स्थिर रखना और पूरी तरह से नही तो कम से कम काफी हद तक, दिन के बाकी वक्त मे भी ध्यान को वही टिकाये रखना। इस अवस्था को प्राप्त करने के लिये काफ़ी समय और अभ्यास की ज़रूरत है, क्योंकि अभ्यासी को इस अवस्था में रहने का आदी होना पड़ेगा। एक फ़ारसी कहावत है, "दिल बा यार, दस्त बा कार" अर्थात अपने हाथों को अपने काम में लगाओ लेकिन मन को अपने दोस्त के ख़याल मे रखो।

जब सुरत या तवज्जह अपने केन्द्र पर सिमट कर काफी एकाग्र हो जाती है, तो वहाँ से शब्द के सहारे ऊपर की यात्रा शुरू की जाती है। सतगुरु (जो कि स्वय शब्द ही है) निरन्तर सहायता और मार्ग-दर्शन करते है।

२३६—जहाँ तक साइन्टोलॉजी और उसके इस दावे का सवाल है कि उसके द्वारा मनुष्य का आचरण और दृष्टिकोण सुधारा जा सकता है, यह आपको मन की पहुँच से परे नहीं ले जाता, बल्कि यह आपको मन पर अधिक से अधिक निर्भर बनाता है। यद्यपि इस विज्ञान का सम्बन्ध ऊँचे या सूक्ष्म मन से है, फिर भी यह सन्त-मत के आदर्शों से बहुत नीचे है।

२३७—आपने 'सुन्न' के बारे मे जो पूछा है, वह इतना अमली या व्यावहारिक सवाल नही, जितना कि किताबी या सैद्धान्तिक है। 'सुन्न' संस्कृत शब्द 'शून्य' का प्राकृत रूप है जिसके अर्थ है रिक्तता या खालीपन। परन्तु ये 'सुन्न' वास्तव में खाली या रिक्त स्थान नहीं हैं और जिसने अपना रूहानी सफर पूरा नही किया है उसके लिये नीचे के 'सुन्नों' के बारे में चर्चा करना व्यर्थ है तथा उनमे जाना खतरे से खाली नहीं है। सतगुरु हमे केवल उन्ही 'सुन्नों' के बारे में बतलाते हैं जो हमारी ऊपर की यात्रा मे सहायक होते है। सचखण्ड पहुँच जाने के बाद ही अभ्यासी को कही भी जाने और कुछ भी देखने की इजाजत दी जा सकती है, क्योंकि तब उसके गुमराह होने की कोई सम्भावना नही रहती।

२३८—ऐसा लगता है कि मिस्टिक बाइबिल* को लोगों ने बहुत पसन्द किया है। लेखक सन्त-मत को बड़ी अच्छी तरह से समझते है और उन्होंने इस पुस्तक में उसे ईसाई-धर्म के दृष्टिकोण से—अर्थात बाइबिल के पुराने और नये टेस्टामेट से—समझाया है; जैसे कि हिन्दुस्तान में उसे ग्रन्थ साहिब, रामायण तथा अन्य धर्म-ग्रन्थों के दृष्टिकोण से समझाया जाता है। हाँ, इसमें यहूदियों और ईसाइयों के

*डाक्टर रेन्डाल्फ स्टोन द्वारा लिखी पुस्तक का नाम।

लिये विशेष सुझाव और प्रेरणा है और इससे उन्हें सन्त-मत को समझने में सहायता मिलेगी।

आपने जो महात्माओं की रूहानी पहुँच के बारे में लिखा है, उस सम्बन्ध में यही कहना है कि ओम् से मन और स्थूल संसार की उत्पत्ति हुई है; परन्तु सन्त-मत के महात्मा हमें उससे कही ऊपर ले जाते है। हमें उनकी महानता और महिमा का आभास केवल तुलना से ही लगता है।

२३९—यह वास्तव मे एक महान अवसर है और जिसे नाम-दान की प्राप्ति का सौभाग्य मिला है उसे चाहिये कि अपना अधिक से अधिक समय और ध्यान इस मार्ग में प्रगति करने की ओर लगाये। सतगुरु अपने शिष्य की कोशिश और अभ्यास की निगरानी करते है, परन्तु कोशिश तो शिष्य को स्वयं ही करनी है।

अभ्यास बड़े प्रेम और लगन के साथ शुरू करना चाहिये और मन को सांसारिक पदार्थो से अलग या दूर रखना चाहिये ताकि आप अपनी सुरत को समेट कर अन्दर तीसरे तिल में एकाग्र कर सकें। हम अपने विचारों के द्वारा ही बाहरी दुनिया से बँध गये है और उसी प्रकार, अर्थात विचारो की सहायता से ही हमें बाहर से सिमट कर अन्दर तीसरे तिल मे आना है। जब सतगुरु अपने शिष्य को लगन और ईमानदारी के साथ अपनी मंजिल की ओर जाने की कोशिश करते हुए देखता है तो वह बहुत प्रसन्न होता है। और सतगुरु की दया-मेहर हमेशा ऐसे शिष्य के साथ रहती है।

२४०—नामदान के समय आपको जो अनुभव हुआ उसके बारे में पढकर बहुत खुशी हुई। हालाँकि यह बहुत शुरू की अवस्था है, फिर भी इससे आपको इतना यकीन अवश्य होगा कि आप सही रास्ते पर है। सुमिरन पर पूरा

समय देने से यह अनुभव स्थायी हो जायेगा और तारा-मण्डल, चन्द्र और सूर्य के पार जाने पर आपको अन्तर में सतगुरु के दर्शन होंगे। परन्तु इसमें समय लगता है। आपकी शुरुआत अच्छी है और आपको लगन के साथ आगे बढ़ने की कोशिश करना चाहिये।

अह अच्छा है कि आप दोनों सत्संगी हैं और इस मार्ग पर चलने की कोशिश कर रहे है। जब पति और पत्नि दोनों का रुझान एक ही दिशा मे हो तो इस ओर बढ़ना अधिक आसान हो जाता है। जब हम नेकी और सच्चाई के मार्ग पर चलने की कोशिश करते हैं तो कठिनाइयाँ अवश्य आती हैं और रुकावटें पैदा होती हैं, परन्तु यदि हम दृढ़ रहे, श्रद्धा और विश्वास रखें तो सब-कुछ ठीक हो जाता है। कठिनाइयों के समय सुमिरन करें और सतगुरु से प्रार्थना करें और अपने अभ्यास में लगनपूर्वक जुटे रहें।

२४१—ये हमारे अपने ही कर्म हैं जिन्हें हमारे शरीर पर बीमारी या तकलीफ के रूप में भुगताया जा रहा है और यह हमारे हित मे नही है कि हम गलत तरीके अपनायें और गलत खाना खायें। आपकी निष्कपट भावना, सलाह माँगने के भक्ति-पूर्ण भाव और सही कार्य करने की तीव्र इच्छा का मैं आदर करता हूँ, परन्तु खेद है कि मैं इस विषय में समझौता नहीं कर सकता और आपको सन्त-मत के सिद्धान्तों के विपरीत राय नहीं दे सकता। प्रेम और भक्ति के द्वारा लोग जितना सोचते है उससे कही अधिक कार्य हो सकते है। भजन-सुमिरन की नियमितता कर्मो के कर्ज़ को चुकाने में आपकी सहायक होगी।

जब आपको नींद में बाधा पड़े तो बिस्तर में लेटे-लेटे नाम का सुमिरन करने की कोशिश करें। इससे आराम मिलता है और नींद आ जाती है।

२४२—नाम की बख़्शिश की कदर करने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि जितना भी समय मिले नाम के अभ्यास में लगायें। केवल शुरू की मंजिल तय करना ही कठिन होता है, क्योंकि हमे अपनी सुरत को—जो इस समय शरीर के रोम-रोम में फैली हुई है—समेट कर तीसरे तिल में लाना पड़ता है। करीब एक घण्टे के अभ्यास के बाद आपके पैरों में दर्द होने का यही कारण है; परन्तु धीरे-धीरे आपको इसकी आदत हो जायेगी और तब कोई तकलीफ़ नही होगी। अभ्यास के समय को धीरे-धीरे बढ़ाने का तरीका अच्छा है ताकि आपकी प्रगति स्थिरता-पूर्वक हो। नामों का सुमिरन करते समय अपनी तवज्जह को दोनों भौहों के बीच में रखने की कोशिश करें।

आपने "सार बचन" में जो दिन मे एक बार ही खाना खाने के बारे मे पढा है, वह आप पर लागू नहीं होता और न ही यहाँ के हरएक सत्संगी पर लागू होता है। यह हिदायत उन अत्यन्त उत्साही और व्यग्र सत्संगियों के लिये है जो इस संसार से ऊब चुके है, जिनकी करीब-करीब कोई जिम्मेदारियाँ नही हैं और जो जल्दी से जल्दी अपने निज घर पहुँचने के लिये आतुर है। परन्तु बहुत अधिक भोजन अर्थात अपने स्वास्थ्य के लिये जितना आवश्यक है उससे अधिक खाना हमें आलसी बनाता है और हमारे मन की एकाग्रता मे बाधक होता है।

जहाँ तक बच्चों का सवाल है, उनकी जिम्मेदारी माता-पिता पर है। (बच्चों के लिये) अण्डे, मछली का तेल आदि सामिष चीजें जरूरी नही हैं और जहाँ तक हो सके उन्हें ऐसी चीजें देने से परहेज करना चाहिये। अच्छा प्राकृतिक भोजन, जिसमें फल, सब्जी दूध तथा दूध से बनी वस्तुएँ हों, बच्चों के विकास में प्रकृति की सहायता करता है। उनका सर्वोच्च हित आपके हितों से भिन्न नही है।

२४३—सतगुरु के बगैर अकेले कोई इधर-उधर भटक सकता है, पर चौरासी के चक्कर से नहीं निकल सकता। शब्द वह रेशमी डोर है जो आपको अपने 'घर' ले जा सकती है, बशर्ते कि आप उसे पकड़े रहें। सबसे पहला काम तो है लगातार सुमिरन के द्वारा शरीर को खाली करना और सुरत को तीसरे तिल में एकाग्र करना। यहाँ आने पर आप शब्द से जुड़ेगे और सतगुरु के नूरी स्वरूप से मिलेंगे। उलझा हुआ मन केवल शब्द के अभ्यास से सुलझेगा।

२४४—हमे वही करना चाहिये जो हुजूर महाराजजी चाहते है। उनकी रजा में राजी रहने मे ही हमारा कल्याण और हमारे लिये सुख है। राधास्वामी मत आपको अपने निज-घर सचखण्ड जाने का सबसे उत्तम मार्ग बताता है और जिज्ञासु आत्माओ को अपने निज-धाम ले जाने में सतगुरु को जो खुशी होती है, वह उन्हें और किसी बात से नही होती।

जहाँ तक आसन का सवाल है, पैरों के भार बैठना, जिसमे अँगूठे कानों में और उंगलियाँ आँखों पर हों, लाभ-दायक है, परन्तु आपको जिस तरह बैठने में ज्यादा सुविधा हो उसी तरह बैठ कर अपना भजन करते रहना चाहिये। खास बात तो मन की सभी धाराओं को तीसरे तिल मे एकाग्र करना है।

जब आप आँखों के केन्द्र में बैठते है तब आपकी चेतनता शरीर के निचले भाग को छोड़ देती है और इसलिये आँखों से नीचे का शरीर या उसका कुछ हिस्सा कुछ समय के लिये सुन्न या संज्ञा-हीन हो जाता है।

मै राय दूंगा कि आप कुर्सी पर बैठना जारी रखे, जैसा कि अभी कर रहे हैं, परन्तु साथ ही हर रोज पाँच या दस मिनट के लिये पालथी लगा कर भी बैठें और धीरे-धीरे इस प्रकार बैठने की आदत डालें।

२४५—इस मार्ग में प्रगति करने की आपकी लगन की मै कदर करता हूँ और मुझे खुशी है कि आपको अपने अभ्यास में रस आता है। दुनिया की कोई भी चीज वह खुशी नहीं दे सकती जो इस मार्ग पर चलने मे मिलती है। अपने ध्यान को आँखों के केन्द्र तक समेटने में आप जितने अधिक सफल होगे उतनी ही अधिक प्रसन्नता का अनुभव आपको होगा, और तब शब्द धुन को पकड़ना भी आसान हो जायेगा। कृपया प्रेम और लगन के साथ अपने अभ्यास मे जुटे रहिये। अपनी गति को जबरदस्ती बढ़ाने की कोशिश न करे, अभ्यास में नियमित रहें और जो कुछ प्राप्त हो उसे स्थायी बनाने की कोशिश करें।

२४६—आप ज्योतिष-विद्या का अध्ययन करना चाहते है ताकि औरों की मदद कर सकें। इस विषय में मैं यही कहूँगा कि औरों की मदद करने का सबसे अच्छा तरीका पहले अपनी खुद की मदद करना है। यह किस तरह किया जाय ? अपना समय आध्यात्मिक अभ्यास में लगायें और उसे प्रेम और लगन के साथ नियमपूर्वक करते रहें। जब तक हम स्वयं आत्म-ज्ञान प्राप्त न कर ले तब तक आत्मज्ञान पाने में औरों की सहायता नही कर सकते। और आत्मज्ञान अथवा आत्म-साक्षात्कार ही हमें परमात्मा के साक्षात्कार की ओर ले जाता है।

राधास्वामी मार्ग की पुस्तको को पढ़ने में प्रतिदिन कुछ समय व्यतीत करना अच्छा है, खास कर उन अंशों को पढ़े जो प्रेम और भक्ति की भावना को उभारते हों। इससे भजन के लिये सही मनोदशा या मूड बनाने में सहायता मिलेगी।

हाँ, अगर हम अपने बीते हुए दिनों पर दृष्टि डालें तो हमें पता चलेगा कि जिन्दगी मे आनेवाली मुसीबते ही आत्म-ज्ञान और मुक्ति पाने की हमारी इच्छा को मजबूत बनाती

है, क्योंकि उन मुसीबतों से हमें इस संसार और इसके पदार्थों की नश्वरता का पता चलता है।

२४७—जिस कष्ट का आपने वर्णन किया है वह पिछले जन्मों के कर्मों की वजह से है। प्रतिदिन बिना नाग़ा भजन-सुमिरन में काफी समय देते रहने से वह कष्ट कुछ समय बाद दूर हो जायेगा। डरने की कोई बात नहीं है। इस आसन से आपकी रीढ़ की हड्डी पर कोई बुरा असर नही पड़ेगा, बल्कि यह तो उसे फिर से सीधा कर देगा।

अभ्यास के समय बिलकुल निश्चिन्त होकर किसी भी सुविधाजनक आसन में आराम से बैठें और शरीर के किसी भाग पर अथवा आँखों पर किसी प्रकार का तनाव या दवाव न डालें। आँखों को हलके से वन्द करके शरीर को ढीला छोड़ देना चाहिये। सुमिरन मन की तवज्जह के द्वारा किया जाना चाहिये। यह आपका निजी या व्यक्तिगत कार्य है और इसमें औरों की संगति पर निर्भर नहीं होना चाहिये। परमात्मा को पाने से पहले अपने आप को पाने का काम आपको स्वयं ही करना है। आराम से वैठना और मन को भौहों के बीच मे एकाग्र करना पहला कदम है।

जैसा कि आपको नाम-दान के समय बताया गया है, केवल उसी आवाज़ को सुनें जो दाहिने कान से आती प्रतीत हो या जो बीच में से आ रही हो। बाँयें कान से आनेवाली किसी भी आवाज़ की ओर ध्यान न दें चाहे वह घण्टे की आवाज़ ही क्यों न हो। शुरू शुरू में घण्टे की आवाज़ें सुनने से पहले अभ्यासी को कई प्रकार की आवाज़ें सुनाई दे सकती हैं।

२४८—आपकी बीमारी के बारे मे जान कर दुःख हुआ। कोई वजह नही कि आप अच्छे होने की कोशिश न करें और अपना ठीक तरह से इलाज न करवायें। कर्मों का

मुकाबला एक ओर तो अपने मन को शरीर की ओर से हटा कर सुमिरन में लगा कर तथा दूसरी ओर अपना उचित इलाज करवा कर किया जाना चाहिये। जितना ज्यादा आपको ध्यान सुमिरन में लगा रहेगा, उतनी ही तकलीफ कम महसूस होगी और कर्मों का धीरे-धीरे भुगतान हो जायेगा। आपको सुमिरन की ओर ध्यान देना चाहिये, कर्मों की ओर नही। सहायता हमेशा मिलती है, परन्तु वह अन्दर से आती है। इसलिये मै फिर यही कहूँगा कि जितना ज़्यादा आप सुमिरन करेंगे उतने ही हलकेपन का अनुभव होगा।

राधास्वामी मार्ग की सचाइयों को आप अन्दर जाकर साबित कर सकते है, बहस और तर्क के द्वारा नहीं। विश्वास और ईमानदारी के साथ आदेशों का पालन कीजिये, तब ज्ञान भी आयेगा। विश्वास और करनी दोनों ही जरूरी है। आप बिस्तर में सीधे लेट कर भी, आँखें बन्द करके ख़याल को भौहों के बीच मे टिका कर सुमिरन कर सकते है।

२४६—आपको उत्साह-हीन और हताश पाकर मुझे अफ़सोस हुआ। सहायता हमेशा मिल रही है, परन्तु उसे देखने के लिये आपको अन्दर जाना होगा। आपने अपने पत्र में जिसकी चर्चा की है, वह केवल कर्मों का बोझ है और उसी की वजह से आपको सब-कुछ वीरान और नीरस लगता है। दीवार जितनी मोटी होती है उतना ही समय उसमें आर-पार सूराख करने में लगता है। परन्तु सब-कुछ चुका दिया जायगा। प्रकाश की किरणें आने लगेंगी। हमें निराश नही होना चाहिये; हिम्मत नहीं हारना चाहिये। जैसे-जैसे आप सुमिरन का समय बढ़ायेंगे, धीरे-धीरे शब्द अपने आप आने लगेगा।

इस समय आपके लिये यही उचित होगा कि जितना ज्यादा हो सके उतना सुमिरन करें। करीब आधा घण्टा शब्द

में लगायें और बाकी समय सुमिरन को दें। वाकी वक्त भी, खास कर जब आप परेशान और हताश हो, सुमिरन के आसन पर बैठे विना भी मन ही मन सुमिरन करे।

आप पागलपन के बारे में क्यों सोचते है ? इसके बजाय सतगुरु के बारे मे सोचे और सुमिरन करें, सन्त-मत की पुस्तकें पढ़े या अच्छे सत्संगियों की संगति करें।

२५०—जो मनुष्य अपने आप को पाँच नाम के सुमिरन में लगाये रखता है और शब्द को सुनता है उसे किसी भी चीज से डरने की जरूरत नही। आपको डर किस बात का है ? जब भी आपके मन में डर या अनिश्चितता का भाव पैदा हो तो सतगुरु का ध्यान और नाम का सुमिरन करें और यह याद रखे कि सतगुरु हमेशा अंग-सग है और सदा सहायता और रक्षा कर रहे हैं। आप जो अनुभव कर रहे हैं वे सम्भवतः आपके पिछले सम्बन्धों और कर्मो के परिणाम है, जो अपना कर्ज वसूल करने के लिये आ रहे हैं। विश्वास और साहस के साथ ऐसे सब खयालों को दृढ़ता के साथ हटा दें और कहे कि आपका उनसे कोई सरोकार नही है। अब आप सतगुरु के साथ है। कृपया इस बात का सोच-विचार या दलील न करें कि क्या हो रहा है या क्या होगा, बल्कि सतगुरु और नाम की सँभाल और संरक्षण मे अपने आपको सुरक्षित महसूस करे। नाम के सिवाय और कही भी शान्ति नही है।

एक चमकता हुआ बड़ा तारा देखने और उसमें समा जाने का आपका अनुभव बहुत उत्साह-वर्द्धक है। हाँ, इसका महत्व बड़ा शुभ और सुख-प्रद है। इस अनुभव के बाद आपको अपने अन्दर शान्ति महसूस होना चाहिये।

२५१—सन्त-मत मे यही नियम है कि शिष्य को सारी सहायता और मार्ग-दर्शन देह-स्वरूप सतगुरु अथवा मौजूदा

सतगुरु से मिलना चाहिये और उसे उन्ही की सेवा करना चाहिये, परन्तु जिन सतगुरु ने उसे नाम दिया है, चाहे वे स्थूल शरीर छोड़ चुके हों तो भी वे उसके लिये सतगुरु बने रहेंगे और उसकी आत्मा की आन्तरिक मण्डलों मे रहनुमाई करेंगे। हाँ, सरदार बहादुर महाराज जगतसिंहजी, जिन्होंने आपको नाम दिया है, अब भी आपके सतगुरु है।

राधास्वामी सबसे ऊँचा मुकाम है। राधास्वामी मार्ग के ऊँचे आदर्शो के अनुसार रहना और भजन-सुमिरन के लिये यथा-संभव समय देना, पूरी जिन्दगी के लिये काफ़ी काम है। इससे पहले कि हम दूसरों को इस ओर खीचने का प्रयत्न करे, हमारा ध्येय अपने आपको पूर्ण बनाने का या कम से कम अपने आत्मिक अभ्यास में कुछ ठोस प्रगति करने का होना चाहिये। राधास्वामी मार्ग का अभ्यास दूसरे दर्शनो और मतो की तरह नही है, और इसमें दूसरों को इस ओर आकर्षित करने के लिये अकारण कोशिशे करने की जरूरत नही, जब तक कि सतगुरु ऐसा करने के आदेश न दे। जिन लोगो के भाग्य में इस मार्ग पर आना लिखा है, वे कभी न कभी इस पर खीच लिये जायेगे। अपने मित्रो तथा और लोगो के साथ आपके व्यवहार में अपने को औरों से भिन्न या ऊँचा समझने के भाव की जरूरत नही और न कभी ऐसी भावना आनी चाहिये, आपके व्यवहार में ऐसी भावना का आभास-मात्र भी नही होना चाहिये। केवल इतना जरूरी है कि आपका आचार-व्यवहार सन्त-मत के उसूलों के अनु-सार बडे ऊँचे स्तर का हो।

आप सत्सगियो और सत्संगी मित्रो से जब भी सुविधा-पूर्वक सम्भव हो मिल सकते है, परन्तु जब कभी आप सुविधापूर्वक ऐसा न कर सके तो चिन्ता न करें। कृपया जितना भी ज्यादा से ज्यादा हो सके उतना समय भजन-

सुमिरन को दे और साथ ही राधास्वामी साहित्य तथा इस प्रकार की अन्य पुस्तकें पढें ।

२५२—वे सब चीजें हमारे लिये वरदान है जो हमें मालिक की याद दिलाती है और अन्तर में उसके पवित्र चरणों में पहुँचने की तीव्र लगन पैदा करती हैं। यह लगन हमें प्रेरणा देती है कि हम और भी मेहनत के साथ भजन-सुमिरन करें। भजन-सुमिरन जितना भी किया जाय कम है।

२५३—हमारे लिये महाराजजी (बाबा सावनसिंहजी) अब भी जीवित हैं, यद्यपि हमें उनकी शारीरिक उपस्थिति का अभाव खटकता है । जो कुछ उन्होंने कहा है वह सब ठोस और अटल सत्य है, आप उनके वचनों का चिन्तन करते है, यह बहुत अच्छा है । उनके वियोग में दु:खी लोग जब उनके बारे में सोचते और उनके वचनों का चिन्तन करते हैं तो चैन और सांत्वना पाते है। हमारे संसार के रिश्ते-नाते, चाहे कितने ही अच्छे और नजदीकी क्यों न हों, क्षणिक है, परन्तु सतगुरु और शिष्य का नाता अटूट है । जब तक सतगुरु अपने शिष्य को उसके अन्तिम विश्राम-स्थान—धुरधाम—तक नहीं ले जाते, वे चैन नहीं लेगे । इससे आपके निराशा के बादल हट जाने चाहिये और आपको प्रसन्न होना चाहिये ।

मैं आपके सूनेपन की भावना को समझता हूँ और मुझे आपसे सहानुभूति है । इस सूनेपन की भावना को भी अच्छी दिशा में मोड कर इसका फायदा उठाया जा सकता है, क्योंकि जब ऐसे अकेलेपन का अनुभव होता है तो मनुष्य किसी ऐसे सच्चे साथी की तलाश करता है जो उसका मित्र बन सके । इस विषय में आप भाग्यशाली है कि आपको एक ऐसा सच्चा साथी तथा स्थायी मित्र मिला हुआ है, और सबसे बड़ी बात तो यह है कि वह आपसे दूर भी नहीं है। आपको सिर्फ अन्तर में झाँक कर देखना है कि वह आपके

लिये क्या कर रहा है और किस प्रकार आपकी आत्मा को धोकर निर्मल बना रहा है।

कृपया सुमिरन में जितना भी ज्यादा से ज़्यादा हो सके उतना समय दे। सुमिरन केवल नियत समय में ही नही बल्कि दिन के किसी भी समय जब आपको फुरसत हो करें और खास कर जब आप दु.खी और उदास हों या दुःखप्रद स्मृतियो से घिरे हों। परन्तु सुमिरन करते समय ध्यान को तीसरे तिल पर जितना भी हो सके एकाग्र करने की कोशिश करे। यह अभ्यास आपको अन्दर जाने और संसार के कष्टों को भुलाने में सहायक होगा। परन्तु कोई तनाव या दबाव न डालें। एक आरामदेह अवस्था और सरल भाव को अपना कर अभ्यास करें।

महाराज जी फरमाया करते थे कि जब सत्संगी अपने सतगुरु और सत्संग से दूर हो तो उसे सत्संग और सन्त-मत की पुस्तकें पढना चाहिये। ऐसे साहित्य का पढ़ना मन को सतगुरु और शब्द के मेल में लाने में सहायक होता है।

२५४—मुझे यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई कि अब आप अन्तर में अधिक शान्ति का अनुभव कर रहे है। वास्तव में हुजूर महाराज जी फरमाया करते थे कि शान्ति केवल अन्तर में ही प्राप्त हो सकती है, और जितना अधिक हम अन्तर में जायेगे और वहाँ ठहरेगे उतनी ही अधिक शान्ति और खुशी प्राप्त होगी। बेशक हमें कर्मो का हिसाब भी चुकाना है—दोनो तरह से—कुछ भुगत कर और कुछ भजन के द्वारा। गहरा और निरन्तर सुमिरन कर्मो को हलका और कम कर देता है और जिन कर्मो को टाला नही जा सकता उन्हे भुगत लिया जाता है। इन्हें भोगते समय सत-गुरु की मौज मे पूर्ण श्रद्धा और विश्वास रखना चाहिये। तब किसी प्रकार की कटुता या कडुवाहट बाकी नही रहती।

२५५—मैं खुश हूँ कि आपने नये वर्ष के सन्देश को पसन्द किया। इसमे सन्त-मत का सार आ गया है, इसे पढ कर इस पर अमल करना चाहिये। सतगुरु हमारे अन्दर हैं और अगर हम उनके आदेशों को मानें और लगन के साथ भजन-सुमिरन करे तो उनसे मिल सकते है। शान्ति और सुख अन्दर ही मिलते है।

२५६—जैसा कि आप जानते हैं, सपने हमेशा सच नहीं निकलते। सपने अच्छे भी होते है और बुरे भी, और जो लोग अपना भजन-सुमिरन ठीक तरह से करते रहते है उनको आम तौर पर अच्छे सपने आते है। अगर ज्यादा लोग सन्त-मत मे आते हैं और उस पर चलते है तो ठीक है, परन्तु हमारे लिये सबसे जरूरी बात तो यह है कि हम स्वयं इस मार्ग पर चले।

जहाँ तक आपको दिखाई देने वाले नजारों का सवाल है, आपको उन पर ज्यादा ध्यान नही देना चाहिये। खास बात तो लगातार और स्थिरता के साथ सुमिरन करना और फिर शब्द को सुनना है। कभी-कभी पिछले रिश्तेदारों की शक्लें सामने अवश्य आती है, परन्तु उस समय उचित तो यह है कि सतगुरु का ध्यान और पाँच नामों का सुमिरन किया जाय। इन सबका इलाज सुमिरन है।

२५७—.. ..और सत्य की खोज मे आने वाली आपकी कठिनाइयो का पता चला। यह खोज कठिनाइयों से घिरी हुई है, जो कि खतरनाक भी हो सकती है और कभी-कभी, जैसा कि आपने लिखा है, हमारे सामने निराशा का घना अन्धकार भी छा जाता है। परन्तु एक साहसी मनुष्य को संघर्ष छोड़ नही देना चाहिये। अगर कोई लगन के साथ डटा रहे, तो वह अपनी मंजिल पर अवश्य पहुँचेगा। हरएक चीज का एक समय होता है।

हम अपनी छोटी-छोटी उलझनों व कोशिशों, इच्छाओं और निराशाओ में इतने डूबे हुए है कि अपने यहाँ आने के महान प्रयोजन के बारे मे विचार ही नही करते। मनुष्य चोले का मिलना बहुत बड़े सौभाग्य की बात है, क्योंकि मनुष्य-जन्म में ही हम अपनी मुक्ति के लिये प्रयत्न कर सकते है और इस प्रकार जन्म-मरण के इस अन्त-हीन चक्कर से निकल सकते है।

सृष्टि का रहस्य तथा अन्य आध्यात्मिक भेद केवल वाद-विवाद या पुस्तकों के पठन-पाठन के द्वारा नही समझे जा सकते। केवल अभ्यास के द्वारा तथा इस मार्ग पर चल कर ही मनुष्य सत्य के मर्म और हकीकत को समझ सकता है। फिर भी इस ओर मन का थोड़ा-बहुत झुकाव जरूरी है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इस मार्ग में दृढ विश्वास और उस पर चलने की पूरी लगन होना चाहिये। यह विश्वास विवेक-हीन अन्ध-विश्वास नही होना चाहिये, बल्कि अध्ययन करके, तर्कपूर्ण दृष्टि से समझ कर ही इस मार्ग को अपनाने की कोशिश करना चाहिये। एक बार इस मार्ग को अपनाने के बाद साधक को चाहिये कि सच्ची लगन और विश्वास के साथ अभ्यास मे जुट जाये।

अतएव, मै यही सुझाव दूँगा कि आप पुस्तको और अन्य उपलब्ध साहित्य से और सत्संगियों के सम्पर्क के द्वारा सन्त-मत के सिद्धान्तो का अध्ययन करें और शाकाहारी भोजन करते रहे जिसमें मांस, मछली, मुर्गे, अण्डे आदि तथा उनसे बनी वस्तुओं से और शराब से परहेज जरूरी है। जब आप यह निश्चय कर ले कि आप इस मार्ग पर चलना चाहते है तो आप प्रतिनिधि के जरिये नाम-दान के लिये लिख सकते है। अगर पहले आप यह स्पष्ट रूप से निश्चित कर ले कि आप वास्तव मे परमात्मा को पाना चाहते है और उसके

लिये आवश्यक प्रयास करने को तैयार है, तो इससे आप नाम-दान के बाद इस मार्ग पर बिना किसी सन्देह या संकोच के चल सकेंगे।

कारण और कार्य के सिलसिले को ही कर्म कहते हैं और कर्मों पर ही सारे संसार की बुनियाद है। मनुष्य का चोला धारण करके इस संसार मे आकर, बुद्धि और तर्क-शक्ति की दात पाकर, हमें जहाँ तक हो सके इस रहस्य की गहरी छान-बीन करने की कोशिश करना चाहिये और फिर इस स्थूल संसार से ऊपर उठने की कोशिश करना चाहिये, ताकि हम अन्त में अपने शाश्वत घर सचखण्ड मे विश्राम पा सकें। जिस रास्ते से हम आये है, उसी से वापस जा सकते है। हमारी कामनाएँ और आकाक्षाएँ––चाहे वे पूर्ण हो गई हो या अपूर्ण रह गई हों––हमे इस संसार मे लायी है और जब हमें उनके थोथेपन और सारहीनता का निश्चय हो जाता है तब हम उनकी ओर से मुँह मोड़ कर अपने निज-घर की ओर यात्रा करने के लिये तैयार हो जाते है।

वापस घर लौटने की यह यात्रा पूर्णतया अन्तर की है, क्योंकि मनुष्य अपने आप मे एक सूक्ष्म ब्रह्माण्ड है, अर्थात जो कुछ ब्रह्माण्ड मे है वही इसके अन्तर में भी है। हमारी सोचने और महसूस करने की शक्ति अथवा चेतनता इस समय सारे शरीर में फैली हुई है। पहला कदम इस चेतनता को दोनों आँखों के बीच तथा ऊपर के केन्द्र मे समेटना है और फिर अपनी आन्तरिक यात्रा को शुरू करना है। इस केन्द्र पर आने का तरीका नाम-दान के समय समझाया जाता है; पर मै इतना कह सकता हूँ कि दोनों आँखों के बीच में ध्यान को एकाग्र करने पर ही इस केन्द्र पर पहुँचा जा सकता है, और इसके बाद चेतनता अपने आप ही अन्तर में ऊपर की ओर खिंची चली जाती है।

इस यात्रा का पहला हिस्सा ही सबसे कठिन है और बाकी यात्रा की तुलना में अधिक समय लेता है। जब सुरत या चेतनता को शरीर में से खींच कर ऊपर लाया जाता है, तो आँखों के नीचे के अंग तथा सम्पूर्ण शरीर मुर्दे के समान हो जाता है। यह वास्तव मे जीते-जी मरने की विधि है। साधक केवल शरीर की ओर से बेसुध होता है, पर अन्तर मे पूरे होश में रहता है; जब कि इससे पहले वह बाहर से सचेत और अन्तर मे अचेत था। शरीर की यह अवस्था केवल अस्थायी होती है और अभ्यास की अवधि पूरी हो जाने पर आप पहले जैसे ही जीते-जागते और क्रियाशील ही नही, बल्कि पहले से अधिक फुर्तीले हो जायेंगे।

उद्देश्य यह है कि हम अपने आपको पूरे होश में शरीर से समेट लेने में सफल हो सके। तब हम संसार में रहते हुए भी, बिना उसमें आसक्त हुए अपने कर्तव्य कर सकते है, ठीक वैसे ही जैसे एक मुर्गाबी पानी में रहती है किन्तु अपने परों को भीगने नही देती। संक्षेप में सन्त-मत का यही सिद्धान्त है कि हम दुनिया मे रहे पर दुनिया के होकर न रहें और संसार मे रहते हुए और ससार के कार्य करते हुए भी ससार से ऊपर उठते जाये। निस्सन्देह यह अवस्था सतगुरु की सहायता और अभ्यासी की लगन व मेहनत से ही प्राप्त होती है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, इस अभ्यास की विधि नाम-दान के समय बतायी जाती है।

अगर और कोई सवाल हो तो आप प्रसन्नतापूर्वक पूछ सकते है, मुझे आपकी सहायता करने मे खुशी होगी।

२५८—शान्ति का स्रोत वास्तव में आपके अन्दर ही है, परन्तु कोई आपको उस तक ले जाने वाला चाहिये, और इसके लिये एक देह-स्वरूप सतगुरु की जरूरत है। खजाना आपके अन्दर ही गड़ा हुआ है, पर उसे खोद कर निकालने

और उसका उपयोग करने के लिये आपको एक नक्शे और एक मार्ग-दर्शक की आवश्यकता है। वह खजाना आपके लिये ही है और हमेशा आपके अन्दर मौजूद है, परन्तु वह अचूक शक्ति इत बात का ध्यान रखती है कि खजाना आपको तभी मिले जब आप उसका सही उपयोग करने के योग्य हों।

उस सर्वोच्च शक्ति के धाम में जो शान्ति और आनंद है वह अखूट और एक-रस है। हम भी उसी परम-पिता के अंश है, परन्तु मानसिक विकारों तथा तृष्णाओं के वादल ने हमारी आत्मा के प्रकाश को ढँक दिया है। ये वस्तुएँ ही हमे यहाँ रोके हुए है। हमारा उद्देश्य अपनी तवज्जह को बाहर से समेटना, उसे तीसरे तिल में एकाग्र करना और फिर शब्द के साथ जोड़ना है। यह दिव्य-धुन परमात्मा का अंश है और हमें इसके साथ-साथ जाकर, वीच के रूहानी मण्डलों को पार करके, परमपिता परमात्मा तक पहुँचना है।

शाकाहारी भोजन, अहिंसा, आदि पर इसीलिये जोर दिया जाता है कि हम और बुरे कर्मो को इकट्ठा करने से बचें, क्योंकि ऐसे कर्म हमारी रूहानी प्रगति में बहुत वाधक होते हैं। ये तो प्रारम्भिक या शुरू की वातें है। जब आपको नाम मिलेगा तब आपको पूरे आदेश दिये जायेगे और अभ्यास की विधि बतलाई जायेगी। फिर प्रगति आपकी मेहनत व लगन तथा सतगुरु के प्रति आपके प्रेम और विश्वास पर निर्भर होगी।

२५६—आपका पत्र दिलचस्प है, क्योंकि यह मन की अवस्था का बड़ा स्पष्ट चित्रण करता है, जो कभी इस तरफ तो कभी उस तरफ डोलता रहता है। आपका अपना मन—अर्थात सूक्ष्म मन—चिन्तन के शान्त क्षणों में आपको बता सकता है कि कौन सा पक्ष बेहतर है। उसी पक्ष को आप चुनें और उस पर दृढ़ रहें। अपने सामर्थ्य को

पहचाने, अच्छी संगति मे रहें और ऐसा सत्साहित्य पढ़ें जो आपको आत्म-ज्ञान की प्राप्ति और अन्दर जाने की प्रेरणा दे---और तब दुविधा की अवस्था न रहेगी।

सन्त-मत सन्यास लेने को नही कहता, बल्कि उसकी सिफारिश तक नही करता। सन्त-मत आपको हरएक वस्तु का सही मूल्य आँकना सिखाता है और कहता है कि जो वस्तु शाश्वत महत्व की है उसे ग्रहण करो। जब आप सन्त-मत के साहित्य का अध्ययन करेगे, सत्संगियों की संगति मे रहेगे और अभ्यास करने लगेगे, तो आप उस तमाशे की असलियत को समझ सकेगे जिसे हम दुनिया और दुनिया के सुख कहते हैं। तब आपको इस कथन की सचाई का पता लगेगा कि 'हर चमकनेवाली चीज सोना नही होती'।

सन्त-मत सच्चे और उत्सुक जिज्ञासु का मुक्त-हृदय से स्वागत करता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि आप ध्यान और एकान्त के शान्त वातावरण मे प्रार्थना करे, वह आन्तरिक शक्ति अवश्य सुनेगी।

२६०---हाँ, यह आसान नही है, लेकिन सतगुरु हमारी सहायता और रहनुमाई के लिये हमेशा तैयार है, हमे केवल उसकी ओर मुँह करना है। सतगुरु कभी अपने शिष्य को नही छोड़ता और हमेशा उस पर दया-मेहर करता रहता है, चाहे शिष्य को इसका पता न भी चले।

योग्य बनने की कामना एक बड़ा ऊँचा आदर्श है और इसको प्राप्त करने का तरीका अधिक से अधिक समय भजन-सुमिरन मे देना है, परन्तु कम से कम प्रतिदिन ढाई घण्टे का समय तो जरूर देना ही चाहिये। मन्द-गति किन्तु अडिग चाल वाला अन्त में विजयी होता है।

प्रकट रूप में असफलता का आभास होने पर भी अपना अभ्यास विश्वास और लगन के साथ करते रहना चाहिये।

मन अनगिनत युगों से बाहर भटक रहा है और हर बार यह अधिक फैलता गया है। हमारा उद्देश्य यह है कि मन को समेट कर तीसरे तिल पर ले आयें, शब्द से जुड़े और अपने निज-घर की ओर की यात्रा शुरू करें। तीसरे तिल तक आना पहला कदम है; यही सबसे कठिन है और बहुत अधिक समय लेता है। यह समय हमारे पिछले कर्मो के फल, सतगुरु के आदेश के अनुसार अभ्यास करने में हमारी सचाई, लगन और मेहनत पर निर्भर है।

करनी और दया-मेहर साथ-साथ चलती है। जितना अधिक हम प्रयत्न करेंगे, हमे और मेहनत करने के लिये उतनी ही अधिक दया-मेहर तब तक प्राप्त होती रहेगी जब तक हम अपनी मंजिले-मक्सूद पर नही पहुँच जाते।

२६१—मैं यही सलाह दूँगा कि आप आध्यात्मिक उन्नति के लिये ऐसे बाहरी साधनो का आसरा न लें, बल्कि नाम-दान के समय बताये गये अभ्यास और एकाग्रता के तरीको पर दृढ़ रहें। आप अपने अभ्यास में कुछ दिनों को अन्य दिनों से बेहतर पाते हैं, यह आपकी उस समय की मानसिक अवस्था पर निर्भर करता है। सुमिरन या पाँच पवित्र नामो का जाप भजन की बुनियाद है, क्योंकि श्रद्धा और भक्ति के साथ किये गये सुमिरन के द्वारा ही हम अपनी चेतनता को आँखों के केन्द्र तक समेट सकते है। अत-एव आपको प्रतिदिन लगभग दो घण्टे सुमिरन के लिये देना चाहिये और आधा घण्टा भजन (शब्द को सुनने) के लिये, तथा इस बात की चिन्ता नही करना चाहिये कि किसी विशेष दिन आपका अभ्यास अच्छा हुआ, बहुत अच्छा हुआ या साधारण रहा।

२६२—वातावरण का, खासकर शुरू-शुरू मे, अभ्यास पर जरूर कुछ असर पड़ता है। परन्तु जैसे-जैसे आप सुमिरन

पर अधिक जोर देंगे और पवित्र नामों के जाप मे अधिक समय लगायेगे, आप बाहरी परिस्थितियों से इतने परेशान नही होगे। फिर भी, अगर आप किसी और अच्छे वातावरण मे रहने के लिये बगैर किसी कठिनाई के जा सकते है, तो जरूर ऐसा कर लें।

वास्तव में सुमिरन ही बुनियाद है। सुमिरन के द्वारा ही तवज्जह और चेतनता की धाराएँ आँखो के केन्द्र पर एकत्रित होती है, जहाँ से हमारी असली आध्यात्मिक यात्रा शुरू होती है। अभ्यासी को अपने स्वास्थ्य का उचित ध्यान रखना चाहिये, क्योंकि जब स्वास्थ्य अच्छा होता है तो भजन-सुमिरन भी आसान हो जाता है।

अगर प्राणायाम के व्यायाम बहुत जरूरी है तो उन्हें किया जा सकता है, परन्तु केवल स्वास्थ्य के लिये। प्राणायाम तथा स्वाँसों के व्यायाम को भजन-सुमिरन से कभी भी नही जोड़ना चाहिये। जितना ज्यादा से ज्यादा सुमिरन आप कर सकते हों, करें। सुमिरन करते समय अपना ध्यान दोनो भौहों के बीच मे जमाये रखे।

२६३—काल भी परमात्मा या सत्पुरुष की इजाजत से काम करता है और उसका कारोबार हमारे कर्मो के अनुसार होता है। अगर हम शब्द के अभ्यास मे लगे रहे और उस दिव्य-धुन के सम्पर्क में रहे तो हमे काल से डरने की कोई जरूरत नही। तब हम काल के अधिकार क्षेत्र से बाहर आ जाते है। अपने कर्मो और अपनी कामनाओ के कारण ही हम काल के चंगुल मे फँसते है।

कृपया कोई रुपया न भेजे। हुजूर महाराजजी (बाबा सावनसिंहजी) की दया से हमारे पास अपना काम चलाने के लिये काफ़ी है। हमें केवल भजन-सुमिरन के लिये आपके समय और आपकी लगन की आवश्यकता है। शब्द के

अभ्यास के द्वारा अन्तर मे सतगुरु से भेंट करने की कोशिश करें।

२६४——......मुझे यह जान कर अफ़सोस हुआ कि आपने बात का इतना बुरा माना और उस पर इतने दुखी हुए। मेरा भाव आपको किसी प्रकार का दुःख या कष्ट पहुँचाने का नही था, मै तो केवल यही कहना चाहता था कि इसकी कोई जरूरत नही है क्योकि हमारे पास डाक-खर्च आदि के लिये आवश्यक पैसा है। इसके सिवाय और कोई बात नही थी। कृपया इस बात पर नाराज और दु.खी न हो, बल्कि प्रेम और विश्वास के साथ अन्तर में सतगुरु की ओर मुख करे, इसी में सच्चा जीवन,प्रेम और आनन्द है।

२६५——हमारे मनुष्य चोले में आने और नाम-दान प्राप्त करने का मुख्य उद्देश्य यही है कि हम अपने समस्त पिछले बन्धनो और कर्मो से छुटकारा प्राप्त कर लें और इस प्रकार जन्म-मरण के चक्कर से मुक्त हो जाये। यह केवल मनुष्य-जन्म मे ही हो सकता है, इसलिये हमें इस अवसर का पूरा लाभ उठाना चाहिये। नाम का मिलना एक दुर्लभ वरदान है और इसका पूरा फ़ायदा उठाने का यही तरीका है कि अपने सांसारिक कर्तव्यो का पालन करते हुए आप भजन-सुमिरन में अधिक से अधिक समय लगायें।

आपके कुत्ते और बिल्ली पालने में कोई एतराज नही है। हमें सफ़ाई और स्वास्थ्य के लिये दुनियावी मामलों में उचित व्यवस्था करना चाहिये। सतगुरु तो हमारी आत्मा को अपनी सँभाल और निगरानी मे लेते है तथा उसका मार्ग-दर्शन करते है। वे हमारे कर्मो को बहुत-कुछ कम कर देते है, फिर भी कुछ कर्म ऐसे होते है जिन्हें हमे भुगतना ही पड़ता है। प्रेम और लगन के साथ हम जितने अधिक अपने अभ्यास मे जुटते हैं, कर्मो की वजह से आनेवाले सुख-दुःख

का असर हमें उतना ही कम महसूस होता है। सतगुरु का असली स्वरूप शब्द है और वह हमेशा आपके साथ है। आपको शब्द से जुडने की कोशिश करना चाहिये क्योंकि वह आपकी हमेशा और हर जगह रक्षा करेगा।

२६६—मैं आपकी शुभ भावनाओं की कदर करता हूँ और कर्मो के प्रति आपकी आशंका और डर को भली प्रकार समझता हूँ। कृपया कोई चिन्ता न करें। जब तक सत्संगी नियमित रूप से अभ्यास में निश्चित समय देता है और अपने सासारिक कर्तव्यों का प्रसन्नता-पूर्वक अपने पूरे सामर्थ्य के साथ पालन करता है, तब तक चिन्ता करने की कोई बात नही है और न ही उसे परेशान होना चाहिये। ऐसे सभी विचार मन को बाहर फैलाते है, जब कि हमें मन को अन्दर एकाग्र करना है, जिसके लिये पूरी कोशिश जरूरी है।

भजन के समय होने वाले अपने शारीरिक और मानसिक अनुभवों के बारे में आपने जो लिखा, उसे मैंने ध्यानपूर्वक पढ़ा है। मेरे ख़याल से जब तक आप कुछ और प्रगति न कर ले तब तक आपको यह बताना लाभप्रद नही होगा कि इनकी वजह क्या है। लेकिन इन से पता चलता है कि आत्मा ऊपर आने की कोशिश कर रही है। ठिठुरन या कभी-कभी दर्द महसूस करने के अनुभव कुछ सत्सगियों को होते है, सबको नही। ये गलत अनुभव नही है।

मै सलाह दूँगा कि आप आपने भोजन के बारे मे सावधान रहे और (अभ्यास के समय) आँखो पर दबाव न डालें। भोजन हलका, सरलता से पचनेवाला और पौष्टिक होना चाहिये। अभ्यास के समय कोई तनाव नही होना चाहिये; पर अपनी तवज्जह से आँखो के केन्द्र मे देखे, आँखें धीमे से बन्द करलें तथा कोई उम्मीद या अंदाज न लगये।। जो कुछ दिखाई दे, उसे आराम से देखे। सुमिरन के समय

नामों को मन ही मन दोहराये। सुमिरन आहिस्ता-आहिस्ता, लय के साथ तथा भक्ति और प्रेम की भावना के साथ करे। अभ्यास के लिये नियत किये गये समय में अन्य सब विचारों को या किसी भी वस्तु अथवा व्यक्ति के बारे मे आनेवाले खयालों को दूर हटा दें। धीमे धीमे और आराम के साथ अभ्यास करना अच्छा है, परन्तु क्या सामने आता है या क्या होता है, इसकी चिन्ता किये बगैर अभ्यासी को अपना प्रयास करते रहना चाहिये।

२६७—एक नागरिक की हैसियत से यदि आपको जूरी[1] का कर्तव्य करना पड़ता है तो आप कर सकते हैं। पूर्णतया निष्पक्ष रहने की कोशिश करें। कार्यवाही शुरू करने के पूर्व और अपना निर्णय देने से पहले आप एक मिनिट या कुछ समय के लिये मन ही मन नाम का सुमिरन तथा सतगुरु का ध्यान करे।

हम छोटे बच्चों के लिये भी मांसाहारी भोजन का प्रयोग नही करते और न ही इसकी सिफ़ारिश करते है। उन्हें अपनी खुराक के पौष्टिक तत्व माता से प्राप्त होते है; माता का भोजन अच्छा होना चाहिये और उसके खाने मे केल्सियम (चूर्ण-सार) की कमी नही होनी चाहिये, जो कि बढ़ते हुए शिशु की खास आवश्यकता है। यहाँ के डाक्टर कभी-कभी एक या दो चम्मच सन्तरे का रस या चूने के पानी से बनी कोई वस्तु बच्चों को देने की राय देते है, आप वहाँ के डाक्टरों से इस बारे मे सलाह ले सकते है। दूध एक पूरा आहार है और रस मे विटेमिन सी मिल जाता है।

बच्चे की सहायता करने का सबसे अच्छा उपाय अधिक से अधिक सुमिरन करना तथा रोज भजन में बैठना है।

---

(१) पचों का एक मण्डल जो फौजदारी मुकदमे मे अभियुक्त के अपराधी होने या न होने के सम्बन्ध मे जज को अपनी राय देता है।

खास कर माता बच्चे को दूध पिलाते समय मन ही मन सुमिरन कर सकती है ।

२६८—सत्संगियों को खुश, सन्तुष्ट और शौक के साथ अपने अभ्यास मे जुटे हुए देख कर मुझे खुशी होती है। हाँ, यह एक अमानत या धरोहर है और अपने आपको प्रेम-पूर्वक हुजूर महाराज जी (बाबा सावनसिंह जी महाराज) की शरण में अर्पित करके तथा नियमित रूप से लगनपूर्वक भजन-सुमिरन करके आप अपनी जिम्मेदारियों को अच्छी तरह निभा सकते है। दुनियावी मामलों मे सत्सगी को अपनी समझ के अनुसार ठीक तरह से काम करना चाहिये, परन्तु अन्तर में हमेशा सतगुरु पर निर्भर रहना चाहिये। कुछ समय बाद अभ्यासी को अपनी पूरी जानकारी में रोशनी और रहनुमाई मिलने लगेगी। रूहानी अभ्यास में नियमितता, प्रेम और श्रद्धा सफलता की कुंजी है।

२६९—सुमिरन के समय आपके मन के भटकने की कठिनाई के बारे में पढा। जो लोग अपने काम-काज और अपने कर्तव्यों को जरूरत से ज़्यादा महत्व देते है उनके साथ ऐसा होता है, क्योंकि संसार के कार्यो के विचार अभ्यास के समय उन पर छा जाते है। दूसरी वजह यह है कि हमें बाहरी सोच-विचार करते रहने की आदत है और अन्दर की ओर हमारा रुख बिरले ही होता है। फिर भी आपको इससे मायूस और निराश नही होना चाहिये। कुछ समय बाद आप मन की बाहर भागने और भटकने की आदत पर काबू पाने में सफल होंगे। जब आप इस बात से सजग हो गये है कि सुमिरन के समय मन साथ नही था, तो वास्तव में उसे वश में करने की ओर आपने शुरूआत कर ली है। जैसे ही आपको पता चले कि मन बाहर चला गया है, उसे वापस अन्दर लायें।

भजन मे बैठन से पहले कुछ मिनिटों के लिये सतगुरु से विनती करें और दृढतापूर्वक अपने मन से कह दे कि जब तक आप भजन में बैठे है वह कोई भी बाहर के विचार न उठाये । अगर आप भजन के समय बहुत अधिक बाधा या परेशानी महसूस करे तो कुछ समय के लिये आँखे खोल दें और धीमे स्वर में सुमिरन करें। इस प्रकार दस या पन्द्रह मिनिट तक करें और उसके बाद आँखे बन्द करके फिर से मन ही मन सुमिरन शुरू कर दे ।

२७०—ऐसा लगता है कि आप बिलकुल ही गलत और भ्रमपूर्ण धारणाएँ बना बैठे है। अभ्यास और मानसिक बीमारी दो बिलकुल ही अलग-अलग वस्तुएँ हैं ।

हम सब ही या तो नये कर्म इकट्ठे कर रहे है या उन्हें भुगत रहे है । सत्संगी सुमिरन के द्वारा आँखों के केन्द्र पर एकाग्र होकर तथा शब्द से जुड़ कर अनासक्त या मोह-रहित हो जाते है और पिछले कर्मो को अधिक सरलतापूर्वक भुगत लेते है । उनके मन और मस्तिष्क अव्यवस्थित और विक्षिप्त होने के बजाय अधिक तीव्र, तीक्ष्ण और नियन्त्रित हो जाते है । अगर आप सुमिरन और भजन अर्थात पाँच पवित्र नामो के जाप तथा अन्तर मे दिव्य धुन को सुनने में पूरा समय देंगे तो आपको इस बात का अनुभव हो जायेगा । मानसिक-चिकित्सा करनेवालो का सम्बन्ध मन की बहुत निचले स्तर की चेतनता से होता है, वे सन्त-मत की विधि को समझने और उसका सही मूल्य आँकने मे असमर्थ है ।

अगर आपको कभी-कभी ऐसा लगे कि आपका मन, बल्कि आत्मा आकाश में तैर रही है तो कृपया घबराये, डरे या चिन्ता न करें । उस समय डरने के बजाय आपको सुमिरन करना तथा शान्त रहना चाहिये । यह ध्यान रखें कि किसी भी प्रकार का उद्वेग या तनाव नहीं होना चाहिये ।

कब्ज, बदहजमी आदि शारीरिक कारणो से या गलत ढंग से अभ्यास करने से भी सर में दर्द हो सकता है। अगर इसका कारण शारीरिक है तो भोजन आदि मे परिवर्तन करने से इसमे लाभ हो सकता है। अगर इसकी वजह अभ्यास मे गलती है तो अभ्यास के समय तनाव या दबाव डालना छोड दें। आँखे बन्द करके अपने सामने सरल स्वाभाविक रूप से देखे और आँखो पर या चेहरे की नसो पर किसी प्रकार का जोर या दबाव न डाले।

हाँ, दूध, पनीर, सब्जियो के प्रोटीन तथा ताजे फल अच्छी खुराक है।

कृपया अपने भजन-सुमिरन में लगे रहे और कोई भय या शका न करें। प्रेमपूर्ण विश्वास और श्रद्धा से बहुत मदद मिलती है; परन्तु अगर आपको कोई भी कठिनाई हो या कोई ऐसा अनुभव हो जिसे आप समझ न सके और जो आपको परेशान करे, तो मुझे लिखने मे सकोच न करे।

२७१——आपके पत्र से मालूम हुआ कि आपको भजन के समय तथा कभी-कभी और समय मे भी दाहिने कान मे एक स्थिर गुनगुनाहट सी सुनाई देती है। यह सही है और आप इसे सुनते रहे। कुछ समय बाद, निरन्तर अभ्यास से यह आवाज अधिक निर्मल और स्पष्ट हो जायेगी।

सुमिरन के समय तन्द्रावस्था मे आपको जो अनुभव हुए है और जो वास्तविक घटना जैसे मालूम पडते है, उनके बारे मे परेशान होने की जरूरत नही। मलिन विचार अधिकतर सुमिरन के द्वारा नष्ट हो जाते है।

जैसा कि आपको मालूम ही है, हमे निषिद्ध वस्तुओं अर्थात मास, शराब आदि को ग्रहण करने की सख्त मनाही है। हमें इन नियमों का अपने दैनिक जीवन मे सजग और सचेत होकर पालन करना चाहिये। अगर आपको अपने

आप पर पक्का भरोसा है और ऐसे समाज और संगति में आनेवाले प्रलोभनो का मुकाबला करने में आप समर्थ है तो आप ऐसे सामाजिक समारोहो में——जिनका आपने उल्लेख किया है——जा सकते है। अगर नही, तो उनसे दूर रहना ही बेहतर है।

२७२——आखिर जरूरी बात तो अभ्यास ही है। यह आन्तिरिक यात्रा आपको ही तय करनी है। अब आपको पूरी हिदायतें मिल गयी है और अन्दर जाने की विधि समझा दी गयी है, तो आपको चाहिये कि अपने नियमित समय के अलावा सम्पूर्ण फुरसत के समय को (अर्थात जो भी समय आप सुविधापूर्वक निकाल सके) इस कार्य को पूरा करने में लगा दे।

किसी यात्रा पर चलने के पहले मनुष्य अपना सामान बाँधता है तथा उसके सब खयाल अपनी मंज़िल की ओर हो जाते हैं। मार्ग का यही अंश (सुमिरन) कुछ कठिन है तथा काफी समय लेता है, जब तक कि अभ्यासी की लगन और उसका शौक बहुत तीव्र न हो। इसीलिये सतगुरु के प्रति प्रेम और ध्येय के प्रति लगन, हमारी प्रगति को आसान बनाने में बहुत सहायक होते है। सतगुरु तो सहायता करने के लिये सदैव तैयार है। तैयारी शिष्य की चाहिये कि वह उस सहायता को स्वीकार कर सके।

२७३——मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आप अपना भजन-सुमिरन नियमित रूप से कर रहे है तथा अभ्यास में अधिक समय देने के लिये आपने दूसरे कार्यो को कम कर दिया है। अभी शायद यह एक कुर्बानी प्रतीत हो, परन्तु अगर आपने यह दृढ़तापूर्वक जारी रखा तो इसके काफी अच्छे परिणाम होगें। सोने के समय की कुर्बानी नही करनी चाहिये, क्योंकि नींद से आराम और ताज़गी प्राप्त होती है।

बाद में, जब आप शब्द-धुन से अच्छी तरह जुड़ जायेंगे, तब आपको नीद की जरूरत कम महसूस होगी। तब नीद अपने आप आवश्यकतानुसार कम हो जायेगी।

आम तौर पर शुरू शुरू में प्रगति धीमी होती है, परन्तु इसका कोई ऐसा नियम नही जो सब पर लागू होता हो। यह एक व्यक्तिगत चीज है जो कई बातो पर निर्भर है। मेहनत और लगन का फल अवश्य मिलता है, और इसके लिये अभ्यास मे कम से कम ढाई या तीन घण्टे देना चाहिये।

सतगुरु कई तरीको से मन की सफाई करते है और उसे इस प्रकार ढालते है कि वह एक योग्य साथी और उपयोगी मित्र बन सके।

आपने शुरूआत अच्छी की है। जैसे जैसे आप सुमिरन पर अधिक जोर देगे और तवज्जह को आँखों के केन्द्र पर एकाग्र करेगे, आपको और अनुभव होंगे। प्रकाश अधिक स्थिर और शब्द अधिक स्पष्ट हो जायेगा तथा शब्द आपको ऊपर की ओर खीचेगा भी। आपको प्रगति के लिये बहुत अधीर नही होना चाहिये और न जल्दी करने की कोशिश करनी चाहिये।

२७४—मुझे यह जानकर खुशी हुई कि अब आपको एकाग्रता का अभ्यास पहले से आसान लग रहा है। जैसे जैसे आप अभ्यास करेंगे, एकाग्रता की प्राप्ति और भी आसान होती जायेगी। इसका गुर है नियमितता और लगन के साथ जुटे रहना तथा अन्तर में भक्ति की भावना को बनाये रखना।

नीद तभी आती है जब हमारा खयाल आँखो के केन्द्र पर से नीचे खिसक जाता है। जब हम सचेत होकर अपने खयाल या सुरत को आँखो के केन्द्र पर स्थिर रख कर अपनी तवज्जह से नाम का सुमिरन करेगें तो हमें नीद नहीं आयेगी।

यहाँ हिन्दुस्तान में हम अभ्यास के लिये सुबह (तीन बजे) का समय अधिक पसन्द करते है, क्योकि इस समय मन ताजा और शान्त रहता है और शरीर को भी रात भर मे आवश्यक विश्राम मिल चुका होता है। परन्तु पश्चिम के कुछ लोगो को सुबह का समय माफ़िक नही आता। अगर आपको सुबह का समय असुविधाजनक मालूम हो तो आप अपना अभ्यास और किसी भी समय––जब भी आपको आसानी और सुविधा हो––कर सकते है।

२७५––मुझे खुशी है कि आप सन्त-मत की शिक्षाओं को इतना महत्व देती है। वास्तव मे नाम एक ऐसी निआमत है जिसकी तुलना इस ससार की किसी वस्तु से नही की जा सकती; परन्तु इस बात का पता अन्दर जाने पर ही लग सकता है। जैसे जैसे हम नियमितता और ईमानदारी के साथ अभ्यास करते है और हमारी तवज्जह अन्तर में और अधिक जाने लगती है, वैसे वैसे वे कई चीजे जिनकी प्राप्ति के लिये कभी हम तरसते थे और वे काम जिन्हे करने के लिये हम पहले व्यग्र थे, अब अपने आप अपना आकर्षण खो देते है।

आपको अभिनेत्री का काम छोड़ने की जरूरत नही। इस व्यवसाय मे खुद कोई बुराई नही है, परन्तु इसके साथ जुडे हुए प्रलोभनों के वशीभूत नही होना चाहिये। मैं तो यह कहूँगा कि इस दुनिया के रंगमंच पर हम सभी अभिनेता या एक्टर है। अतएव जिन्दगी वे ही अच्छी तरह गुजार सकते है जो अपने आपको यहाँ एक अभिनेता ही समझते हैं और ससार के बन्धनो मे नही फँसते। आपको भी अभिनेत्री का व्यवसाय इसी प्रकार करना चाहिये। सबसे जरूरी बात है मोह या लगाव से रहित होना। अगर हम लगाव-रहित होकर तथा प्रसन्नता के साथ कार्य कर सके और बाद में उनके बारे में दुःख न करे या उन्हे याद न करे, तो यह सब

ठीक है । आप अपना कर्तव्य करती रहे, परन्तु, जैसा कि आपने लिखा है, अनासक्त भाव से कार्य करें और यह सोचें कि यह व्यवसाय भी जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति अथवा अपने गुजारे का एक साधन मात्र है ।

आपकी बीमारी और आपरेशन के बारे में सुनकर तथा आपको नाम लेने से एक महीने पहले मजबूरन मास खाना पड़ा, यह जानकर मुझे अफसोस हुआ । पर मुझे बडी खुशी है कि आप सिद्धान्त पर दृढ रही और आपने डाक्टर को अपनी बात समझा कर उनसे शाकाहारी भोजन पर जमे रहने की इजाजत ले ली । इस बारे मे आपको कोई दोष नही दिया जा सकता । कृपया अपना भजन-सुमिरन नियम-पूर्वक प्रेम-प्यार के साथ करती रहें, सब-कुछ ठीक हो जायेगा । अगर शाकाहारी आहार मे चीजों का चुनाव सही ढंग से किया जाय तो यह बहुत सन्तोषप्रद और पौष्टिक हो सकता है ।

जहाँ तक अभ्यास के समय का सवाल है, सुबह तीन बजे का समय बहुत से पश्चिम-निवासियो को माफिक नही आता, और आप बेशक अपनी सहूलियत के अनुसार समय मे परिवर्तन कर सकती है । अगर आपको दिक्कत न हो तो आप सुबह पाँच या छः बजे से अभ्यास शुरू कर सकती है । लेकिन अगर आपको आधी रात का समय अधिक अनुकूल मालूम देता है तो आप आधी रात को भी भजन में बैठ सकती है; परन्तु नियमित अभ्यास का समय प्रतिदिन एक ही होना चाहिये । इससे मन में भजन के लिये एक प्रकार की तैयारी हो जाती है जो काफी सहायक होती है ।

आपको पिछले जन्म में नाम मिला था या नही—हो सकता है मिला भी हो—इस बारे में सोच-विचार करने से कोई लाभ नही, क्योंकि एक सवाल दूसरे की ओर ले जाता

है और इसमें मनुष्य का बहुत समय और शक्ति नष्ट होती है। फिर भी, जब हम अन्दर जाते हैं तो कई बातों का हमें प्रत्यक्ष ज्ञान हो जाता है और यही हमारा उद्देश्य होना चाहिये।

२७६—मै आपकी कठिनाइयों को समझता हूँ और उनके प्रति आपने जो सही रुख अपनाया है उसकी प्रशंसा करता हूँ। मुझे खुशी है कि आप अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ रही है और आपमे सिर्फ लगन और धीरज ही नही बल्कि विश्वास और विवेक भी है। आत्म-निर्भरता के साथ-साथ अगर श्रद्धा और विश्वास भी हो तो परमात्मा की ओर से भी मदद मिलती है। जैसे-जैसे आप इस मार्ग पर चलेंगी आपको ज्ञान भी प्राप्त होगा—ऐसा ज्ञान जो शब्द या नाम की भक्ति और श्रद्धा से उत्पन्न होता है। मार्ग सँकरा और कठिन भले ही हो, परन्तु प्रेम और विश्वास बहुत बड़ी चीज है।

हाँ, जिन लोगों को इसकी जरूरत है, जो सच्ची सांत्वना चाहते है और प्रकाश की खोज मे है, उन्हे आप ये बातें समझा सकती है, परन्तु एक लगाव-रहित तथा उदासीन भाव के साथ।

आपकी निजी समस्या के बारे में आपके पत्र से मालूम हुआ। आपने अपना व्यवसाय छोड़कर व्यापार शुरू करने की कोशिश की, परन्तु व्यापारिक जगत को आपने और भी बुरा पाया और आपका खयाल है कि आपका अपना रोजगार ही बेहतर है जो कि आप अब तक करती रही है। मैं आपसे सहमत हूँ। आप अपना पुराना व्यवसाय जारी रख सकती है, बशर्ते कि आप सन्त-मत के सिद्धान्तो पर दृढ़ रहें और अपने व्यवसाय के साथ लगे हुए खतरो और प्रलोभनों से दूर रहें। अपने तटस्थ दृष्टिकोण तथा ऐसी

परिस्थितियों का मुकाबला करने में अपनी दृढ़ता के कारण आपको एक प्रतिष्ठित और ईमानदारी की रोजी कमाने मे कठिनाई नहीं होनी चाहिये ।

"शर्म व हुर्मत[1] नाम से होती नही,
फ़र्ज पूरा हो जहाँ इज्जत वही ।"

तब इसकी क्या चिन्ता कि आपको कौन-सी भूमिका (पार्ट) करना पड़ती है ? जब आप रंगमंच से उतर जाती है तो आप जिसकी भूमिका अदाकर रहीं थी वह नही, बल्कि अपने वास्तविक रूप मे है । अभिनय तो आखिर अभिनय ही है, चाहे वह अच्छे पात्र का हो या किसी बुरे पात्र का । आप वह नही हैं, और यही काफी है, परन्तु अभिनय करते समय अपने आपको खो न दें । आपके कार्य-कर्ताओं या एजेण्टों को चाहिये कि वे अच्छे लोगो से सम्पर्क साध कर आपके लिये कार्य ढूंढे । और सबसे बडी बात तो यह है कि सुमिरन की ताकत आपके साथ है, खासकर जब कि आपमें 'इतर वर्ग के प्रति कोई कामनाएँ' नही है, जैसा कि आपने लिखा है ।

मन मे विश्वास और साहस रखते हुए तथा सुमिरन मे खयाल रखते हुए आप जो भी कार्य योग्यतापूर्वक कर सकती है करे तथा ऐसे वातावरण में भी सन्त-मत के सिद्धान्तों से जरा भी न डिगें । जीवन में अपना कार्य करने का एक सत्संगी का यही तरीका है । यह विशाल ससार एक रंगमंच है और हम सब इसमे अभिनेता है तथा वही पार्ट अदा कर रहे है जो हमें अपने कर्मो के अनुसार मिला है । जैसे नदी में बहते हुए शहतीरों को लहरे इकठ्टा कर देती है और फिर लहरे ही उन्हे अलग-अलग कर देती है, ऐसे ही

(१) प्रतिष्ठा

हम एक-दूसरे से मिलते और बिछुड़ते है। इस संसार में हमारे नाते-रिश्तो की यही असली अवस्था है।

२७७——हाँ, आप अपना कलाकार का व्यवसाय चालू रख सकते है और अपनी रचना के विषयों को सामाजिक तथा राजनैतिक परिस्थितियों और व्यापार की आवश्यकताओं के अनुसार बदल सकते है। अपने इस व्यवसाय को करते रहने मे कोई हरज नही, परन्तु यह हमेशा याद रखें कि यह केवल एक रोजगार या व्यवसाय ही है। अपने भजन-सुमिरन मे कभी ढील न करे अर्थात भजन-सुमिरन को अपने वचन के अनुसार नियमित रूप से पूरा समय देते रहे। सतगुरु सदैव अग-संग है और सच्चे तथा लगन के साथ मेहनत करनेवाले शिष्यों पर वह निरन्तर दया-मेहर की वर्षा कर रहा है।

२७८——मुझे खुशी है कि आपको शब्द की दीक्षा मिल गयी है। अब आप देखेगे कि आप पहले से अच्छी प्रगति कर रहे है। हरएक चीज का एक समय होता है और हमारे कर्म ही हमारे रास्ते मे रुकावट होते है। पहले आपको महसूस होता था कि दीवार गिर चुकी है और रास्ता साफ हो गया है। पर अब आप जब शब्द को सुनने लगेगे तो आपको और भी अद्भुत और ऊपर उठाने वाले अनुभव होगे।

मुझे खुशी है कि आप यह महसूस करते है कि आपको दो भागो मे नाम-दान मिलने से लाभ हुआ है और आपके इस सुझाव की कद्र करता हूँ कि भविष्य मे भी नाम चाहने वालो को दो भागों में नाम देकर उन्हे इसका लाभ दिया जाय। असल में सरदार बहादुर महाराजजी ने यह तरीका अपनाया था; परन्तु इसके विरुद्ध हमें उन खतरों को भी ध्यान में रखना चाहिये जो संसार में मनुष्य के सामने आते है। हो सकता है कि आँखों के केन्द्र तक पहुँचने से पहले

ही मनुष्य की मृत्यु हो जाय; या कर्मो की वजह से उत्पन्न कठिनाइयाँ और परिस्थितियाँ उसके लिये काफी लम्बे समय तक शब्द की दीक्षा प्राप्त करना असम्भव कर दें। शब्द में दीक्षित हो जाने के बाद ही शिष्य को सतगुरु की पूरी रक्षा और सँभाल प्राप्त होती है और तभी सतगुरु उसकी पूरी जिम्मेदारी ले लेते है, क्योंकि यह सर्वव्यापी शब्द ही सतगुरु और शिष्य को जोडने वाली कडी है। पूरा नाम-दान लेने में किसी को कोई नुकसान नही हो सकता, बल्कि उससे अपार लाभ हो सकता है। अतएव, यह निर्णय किया गया है कि पहले की तरह पूरा नाम एक साथ ही दिया जाय।

२७६——शब्द की दीक्षा एक अपूर्व वस्तु है और यह राधास्वामी मत का मूल तत्व और सार है, क्योकि शब्द ही सतगुरु का असली स्वरूप है। शब्द-स्वरूप में ही सतगुरु सर्वत्र व्याप्त है तथा अपने शिष्यो की सहायता, सँभाल और रहनुमाई कर रहे हैं।

निरन्तर परेशान करनेवाले अपने मानसिक उद्वेग को शब्द की भक्ति के द्वारा भूलने की कोशिश कीजिये। अगर आपको हर समय शब्द सुनाई नही देता तो जिस वक्त भी ये मानसिक धाराये आपको परेशान करने लगें आप पाँच नामो का सुमिरन करें, उस समय यह सुमिरन आप अकेले में धीमे स्वर में भी कर सकते है। इन नामो का शीघ्रता से और लगातार किया गया सुमिरन मन को करीव-करीब अपनी ओर जमाये रखेगा और अनुचित विचारों और भावनाओ को रोक देगा।

सतगुरु शिष्य की सहायता करने के लिये हमेशा खुशी के साथ तैयार है, बशर्ते कि शिष्य उनकी ओर अपना मुख करे। इसलिये इस मार्ग में पूरी मेहनत और लगन के साथ

अभ्यास और अन्तर में सतगुरु से मिलाप बहुत जरूरी है। मुझे आशा है कि आप इस शब्द की दीक्षा का पूरा लाभ उठायेंगे और भजन-सुमिरन में अधिक से अधिक समय लगायेंगे।

२८०—रास्ता जरूर लम्बा है और इस पर वे ही सफल होते है जो धीरे-धीरे और स्थिरता के साथ अपना अभ्यास करते रहते है और जल्दबाजी नही करते। दोनों भौहों के बीच में ध्यान को रखने से एकाग्रता में मदद मिलती है, पर इसे भी धीरे-धीरे ही बढ़ाना चाहिये ताकि आपने जो कुछ प्रगति की है उसे स्थिर रख सके।

टाँगों में दर्द कुछ हद तक तो आसन की वजह से है, जिसमे बैठने की पश्चिम के लोगों को आदत नही है। कुछ समय बाद शरीर को इसकी आदत हो जायेगी और इस दर्द का शारीरिक कारण मिट जायगा। परन्तु इस दर्द का एक और भी कारण है, और वह है आत्मा और शरीर के बीच कशमकश की शुरूआत। जैसे-जैसे अभ्यासी तीसरे तिल की ओर बढना शुरू करता है, चाहे वह कितने ही धीरे क्यों न बढे, उसे एक प्रकार की ऐंठन या सनसनाहट के रूप में इस दर्द का अनुभव होता है। इस प्रकार का दर्द टाँगों से शुरू होता है और फिर धीरे-धीरे ऊपर की ओर सरकता जाता है। परन्तु इससे चिन्तित नही होना चाहिये, क्योकि यह अपने आप कम हो जाता है। और जब आप अन्तर में ज्योति को देखेंगे तो उसके आनन्द के सामने सब दर्द और बेचैनी को बिलकुल भूल जायेंगे।

अभी आपके लिये यह अन्दाज लगाना बहुत जल्दी है कि आप कहाँ तक पहुँचे है। अभी आप शरीर मे ही है, लेकिन आपने चढाई शुरू कर दी है और यह काफी सन्तोष की बात है। फ़ायदा तो हमेशा इसी मे है कि जो कुछ भी

अनुभव आपको हों उन्हें आप सहज भाव से लें तथा उनके बारे में अधिक सोच-विचार न करें, क्योंकि इससे मन की शक्ति बाहर फैलती है।

जहाँ तक विवाह का प्रश्न है, सन्तों ने इसके लिये कोई मनाही नही की है। यह मनुष्य की व्यक्तिगत आवश्यकताओं और उसके स्वभाव पर निर्भर है। अगर कोई विवाह करना चाहता है और कर सकता है तो कर ले। परन्तु साथ ही उसे शाकाहारी भोजन और आध्यात्मिक अभ्यास को भी जारी रखना चाहिये। जब मनुष्य सन्त-मत के आदेशों और सिद्धान्तो के अनुसार जिन्दगी बसर करता है तो वह अपने आप एक अच्छा नागरिक, अच्छी पत्नी, अच्छा पति आदि बन जाता है। विवाह के विषय में इस बात पर जोर देना आवश्यक है कि एक ऐसा जीवन-साथी ढूंढा जाय जो इस मार्ग में सहायक हो, बाधक नही।

२८१—आखिर, इस संसार में यही सबसे जरूरी काम है। यह कार्य केवल मनुष्य-जन्म में ही हो सकता है, इसलिये हमें इसे सबसे अधिक महत्व देना चाहिये, ताकि हमे इस भव-सागर मे बार-बार न भटकना पड़े और हम वापस अपने परमपिता के पास जाकर शान्ति और आनन्द में विश्राम पा सकें।

आपके पति के चोला छोड जाने का मुझे दु.ख है, पर मै आपको यकीन दिलाता हूँ कि आपके विश्वास, प्रेम और भजन-सुमिरन मे आपकी लगन से आपके पति को भी सहायता मिलेगी।

२८२—आपके पत्र के लिये धन्यवाद। आपने लिखा है कि आप पूरी तरह से शाकाहारी भोजन पर चल रहे है और आप नाम मिलने से पहले ही अभ्यास शुरू करने की इजाजत चाहते है।

हाँ, आप किसी भी आरामदेह अवस्था में बैठ कर, हलके से आँखे बन्द करके अपने ध्यान को दोनों भौहों के बीच मे स्थिर करने की कोशिश कर सकते है। इस समय एकाग्रता प्राप्त करने के लिये आपको जो भी नाम पवित्र लगता हो उसका मन के द्वारा जाप करे। कृपया ख़याल रखें कि आँखों पर किसी प्रकार का जोर न पड़े, क्योंकि इस केन्द्र पर एकाग्र होने की चेष्टा मन की तवज्जह को करना है, इन स्थूल आँखो को नहीं। आप यह अभ्यास पन्द्रह मिनिट या आधे घण्टे तक कर सकते है। धीरे-धीरे आप इसे एक घण्टे तक बढ़ाये। इस अभ्यास के लिये दिन या रात का कोई भी समय ठीक है, परन्तु सवेरे-सवेरे का समय सबसे अच्छा है, बशर्ते कि इस समय अभ्यास में बैठने मे आपको सुविधा हो।

जब आप यह महसूस करे कि आप शाकाहारी भोजन पर आसानी से रह सकते है और आपने बाकी जिन्दगी में इस पर स्थिर रहने का पक्का इरादा कर लिया है तो आप प्रतिनिधि के जरिये अपना प्रार्थना-पत्र भेज सकते है।

२८३——यह सही है कि कभी-कभी हमारे दबे हुए कर्म उभर आते है और हमे बुरे स्वप्नो के रूप मे डराते या परेशान करते है। परन्तु इसमें डरने या चिन्तित होने की कोई बात नही है। जब आपको सुमिरन करने का पक्का अभ्यास हो जायेगा तो ऐसे समय में भी सुमिरन शुरू हो जायेगा और ऐसी अशुभ या डरावनी वस्तुओं को हटा देगा।

२८४——वास्तव में कर्म ही सबसे बडी समस्या है, क्योंकि सारी सृष्टि ही कर्मो के आधीन है। अपने वर्तमान तथा पिछले कर्मो के द्वारा ही हम इस ससार और ससार के सम्बन्धों के साथ बँधे हुए है। यही वजह है कि हमें दुनियादारों और दुनियावी चीजों में जरूरत से ज्यादा रुचि

न लेने का आदेश दिया जाता है। बेशक हमें जीवन के हरएक क्षेत्र में अपने कर्तव्यो को पूरा करना चाहिये, परन्तु उनके मोह मे उलझे बिना, अपना फर्ज समझ कर उन्हें निभाना चाहिये। समस्त मानव-जाति के कल्याण के लिये प्रार्थना की जा सकती है, यह भावना ऊँचा उठानेवाली है। परन्तु किसी ख़ास व्यक्ति के लिये प्रार्थना करने से उसके कर्मो में कुछ हद तक भागीदार बनना पडता है। ऐसे लोगो के लिये सतगुरु से यह प्रार्थना की जा सकती है कि हे सतगुरु! अगर आपकी मौज हो तो इनकी सहायता करे। डॉक्टर जॉनसन की पुस्तक इन समस्याओ पर बहुत प्रकाश डालती है और नाम-दान के बाद आप उन्हें ज्यादा अच्छी तरह समझ सकेंगे।

आपके अनुभव सही है और आध्यात्मिक जीवन के प्रति आपकी गहरी रुचि प्रकट करते है जो कि आपके पिछले कर्मो की वजह से है। नाम-दान के बाद ही आपको इनके पूरे महत्व का पता चलेगा। शाकाहारी भोजन करना जारी रखे और उसके बाद ही नाम-दान के लिये निवेदन करें। इस बीच मे आप जो चाहे लिख कर पूछ सकते है। आपको जो भी अनुभव हो उन्हे अपने तक ही रखे।

२८५—हाँ, आपको सहायता माँगने का तथा अपने सवालो व समस्याओ का समाधान पाने का अधिकार है।

हमारा जीवन कर्मो पर आधारित है, परन्तु कर्मो का कई प्रकार से सामना करने का अधिकार और सामर्थ्य भी हमें प्राप्त है। जब भी आप तकलीफ मे हो, पहले की तरह प्रार्थना कर सकते है। तकलीफ के समय में अपने आपको सतगुरु की शरण में छोड़ दे और उससे प्रार्थना करे कि वह आपको अपनी तकलीफ़ो को प्रसन्नता और धीरज के साथ सहने की शक्ति प्रदान करे। आप दूसरे डाक्टरो से भी राय

ले सकते है और सम्भव है कि इससे आपको कुछ आराम मिले । विस्तर मे लेटे-लेटे चुपचाप सतगुरु से प्रार्थना करना अच्छा है ।

जो मनुष्य शाकाहारी भोजन पर स्थिर है और जिसके अन्दर नाम प्राप्त करने की सच्ची लगन है, सतगुरु उसकी भी बहुत हद तक सँभाल और रक्षा करते है ।

२८६—सन्त-मत बहुत सादा और सरल है । इसमे रूहानी अभ्यास और रहनी पर जोर दिया जाता है, किसी भी प्रकार के रीति-रिवाज या कर्मकाण्ड पर नही । जीता जागता उदाहरण बेशक बहुत प्रेरक होता है, परन्तु हम सत्संग को भी बड़ा महत्व देते है । सच्चे सत्संग से भजन की ओर रुचि जाग्रत होती है और मन में ऐसा झुकाव पैदा होता है जिससे भजन-सुमिरन आसान हो जाता है । सत्सग से अपने आपको परखने की आदत पड़ती है और सन्त-मत के सिद्धांतों का विवेचन हमें अपने आपको समझने, अपनी त्रुटियों और कमियों को पहचानने तथा उन्हें दूर करने के योग्य बनाता है । हम जैसी संगति करते है या जैसे समाज में उठते-बैठते है उसका हम पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। इस दृष्टि से भी मन को ढालने और भजन के लिये उपयुक्त वातावरण बनाने में सत्संग सहायक होता है ।

सत्सग सत्सगियो तथा गैर सत्संगियों—सभी के लिये है । कभी-कभी लोग अजीब तरह का व्यवहार भी करते है, पर ऐसी बातों को बहुत गम्भीरतापूर्वक नही लेना चाहिये । इनकी ओर ध्यान नही देना चाहिये, परन्तु खोजियो और जिज्ञासुओ को प्रोत्साहन देना चाहिये, क्योंकि सत्संग का यह भी एक उद्देश्य है । सत्संग सभी प्रकार के लोगों के लिये खुला है, इसलिये हमें सत्संग मे ज़्यादा नुक्ताचीनी नही करना

ाहिये । हमे चाहिये कि जो भी अच्छा हो उसे अपनायें और पने ख़याल को शब्द मे रखें ।

सतगुरु हम सबके अन्दर मौजूद है और हमारी पुकार ौर प्रार्थना को सुनते है । परन्तु हमें यही प्रार्थना करनी ाहिये कि जो कुछ भी हमारे भाग्य मे है उसे शान्ति और र्य के साथ सहने तथा भजन-सुमिरन में अपने ध्यान को गाये रखने का हमें सामर्थ्य मिले । आप अपनी समस्याओ ा जिक्र भजन में सतगुरु से कर सकते हैं या पत्र द्वारा झे लिख सकते हैं---जैसा भी आपको सुविधाजनक और च्छा लगे कर सकते हैं ।

......शायद आप अन्दर देखने के लिये अपनी आँखों र बहुत ज़्यादा दबाव डाल रहे है । ऐसा नही होना चाहिये । ाप अन्तर में इन आँखों से नही देखते । जो भी बैठक ापको सुविधापूर्ण और आरामदेह लगे उसी को अपना ले ौर अपनी आँखों पर किसी भी प्रकार का दबाव न डाले । ह धीरे-धीरे दृढ़तापूर्वक उन्नति करने का मार्ग है । इसमें नयमितता बहुत आवश्यक है । मन लगा कर स्थिरतापूर्वक भ्यास में जुटे रहें, किसी प्रकार की जल्दबाजी न करे और इस बात की चिन्ता करें कि इस जन्म मे सब कर्म पूरे कये जा सकते है या नही । यह तो सतगुरु की जिम्मेदारी ; वे वही करेंगे जो सही और उचित होगा । शिष्य को ातगुरु के आदेश के अनुसार भजन करते जाना चाहिये था बाकी सब-कुछ उन पर छोड़ देना चाहिये ।

२८७---अगर आप सुमिरन पर अधिक जोर देगें अर्थात नाम के गहरे जाप के द्वारा अपनी चेतनता को आँखों े केन्द्र पर समेटने की कोशिश करेंगे तो आपकी बहुत सी कठिनाइयाँ दूर हो जायेगी । यह सच है कि हम इस विशाल जगत में बहुत छोटे से प्राणी हैं, इसीलिये हमें कुछ खास

ध्वनियो की ओर अधिक ध्यान देना चाहिये। यह विस्तृत संसार तरह-तरह की ध्वनियो से परिपूर्ण है, परन्तु हमें उन खास ध्वनियो की ओर ध्यान देना है जो कि हमे ऊपर ले जाती है। जैसे-जैसे हम सुमिरन के द्वारा अपने आपको समेटकर उनके पास पहुँचेगे, वे ध्वनियाँ अधिक स्पष्ट और निश्चित होती जायेगी।

जब हम दूर से किसी संगीत को सुनते है तो हमे मिली-जुली आवाजे सुनाई देती है, पर जैसे-जैसे हम पास आते जाते है, हम साजों की आवाजो को अलग-अलग पहचान सकते है। यही शब्द के अभ्यास में भी होता है। सुमिरन का उद्देश्य सुरत या चेतनता को शरीर से समेट कर ऊपर लाना है, और हमे इसमें जितनी सफलता मिलेगी शब्द भी उतना ही स्पष्ट होगा।

अगर आप अभ्यास के नियत समय के अलावा बाकी समय भी मन ही मन सुमिरन करने की आदत डाल ले तो इससे बहुत मदद मिलेगी। इससे मन को कुछ करने को मिल जाता है, मन कभी भी खाली या बेकार नही बैठता, क्योकि वह किसी न किसी चीज के पीछे भागता ही रहता है। जब आपका सुमिरन पक्का हो जायेगा तो आप देखेंगे कि औरो से बातचीत करते समय भी आपका सुमिरन अन्तर मे अपने आप चल रहा है। इससे भजन के समय एकाग्रता प्राप्त करने और आत्मा को समेटने में आसानी होगी।

खून के दौरे की आवाज एक शारीरिक चीज है, जब कि ये रूहानी आवाजे ऊँचे मण्डलो से आती है। तेज आवाज या घण्टे की आवाज दोनों ही अच्छी है। कृपया याद रखें कि बाँये कान से आनेवाली किसी भी आवाज की ओर ध्यान नही देना है। शब्द को सुनते समय सबसे जरूरी बात है सही शब्द को चुनना। जहाँ तक हो सके आपको घण्टे की

आवाज को पकडने की कोशिश करना चाहिये। तब बाकी की आवाजे अपने आप हट जायेंगी।

जब आप प्रकाश देखते है और जब आपको ये अनुभव होते है, तब आप 'अन्तर में' होते है। परन्तु तारे वगैरह जिनकी चर्चा......ने की है इनसे भी ऊपर है। जब आप पहली मंजिल के पास पहुँचेगे तब ये दिखाई देगे। नीला प्रकाश तथा उससे निकलती प्रकाश की किरणें तथा प्रकाश के अन्य अनुभव सही है। पहले हम अन्दर जाते है और फिर ऊपर जाते हैं।

जहाँ तक अप्रिय आवजों का सवाल है, जो कि आपको बाधक प्रतीत होती है, आपको केवल इतना ही करना है कि उनके बारे मे न सोचे, उनकी ओर से अपना ध्यान हटा ले। आप अच्छी प्रगति कर रहे है और अगर आप प्रेम और विश्वास के साथ इसी प्रकार अभ्यास करते रहेगे तो हुजूर महाराज जी (बाबा सावनसिहजी) आप पर दया-मेहर करेंगे।

नजारे, शब्द और नाचते हुए कण या जर्रे जो आपको स्थूल आँखों से दिखाई देते है उनकी ओर ध्यान न दे और यही समझे कि इनका आपके लिये कोई महत्व नही है। अपने खयाल को शब्द और सुमिरन में रखें और दृढ़तापूर्वक अपना अभ्यास करते रहे।

२८८---आपके पत्र से यह जानकर मुझे खुशी हुई कि जब से आपने सरदार बहादुर महाराज जगतसिह जी से नाम लिया है तभी से आप अभ्यास कर रहे है। अगर प्रगति की गति धीमी है तो भी कोई चिन्ता न करे। मन्द गति किन्तु स्थिर चाल वाला अन्त मे विजयी होता है। सत्सगी को चाहिये कि वह प्रेम और विश्वास के साथ जुटा रहे और अपने अभ्यास मे नियमित रहे।

मैंने अपने उद्घाटन भाषण में वही कहा जो मै महसूस

कर रहा था । मै तो महान सतगुरु वावा सावनसिंह जी का एक तुच्छ सेवक हूँ ।

२८९—शब्द सुनने के लिये एक और आसन भी अपनाया जा सकता है । जमीन पर तकिया रख कर उस पर आलथी-पालथी लगा कर वैठें जैसे कि सुमिरन के लिये वैठते है, सामने एक कुर्सी या नीचा पलंग रख ले । कुर्सी या पलग पर अपनी कोहनियों को रख कर अँगूठों को कानों में रख लें और हाथो से आँखो को ढँक लें । यह आपको इतना कठिन मालूम नही होना चाहिये ।

२९०—मैं महसूस करता हूँ कि आप दोनो अपने वच्चे की खुराक के वारे मे चिन्तित है । यद्यपि दूध, पनीर, सब्जियाँ और फल पर्याप्त खुराक है, फिर भी मैं किसी प्रकार के दवाव या जवरदस्ती की सलाह नही दूंगा । उसे समझाया और मनाया जा सकता है, परन्तु इस वारे में अपना निर्णय उसे खुद ही करने दीजिये । मुझे यह जान कर खुशी हुई कि आप मांस, शराव आदि वर्जित वस्तुएँ अपने मेहमानों को नही देते है ।

२९१—आपके पत्र से मालूम हुआ कि आप राधास्वामी मार्ग मे दीक्षित होने के लिये वहुत उत्सुक है और इस उत्तम आकाक्षा की पूर्ति के लिये पिछले नौ महीनो से शाकाहारी भोजन पर कायम है । आपके आवेदन-पत्र पर जल्दी ही विचार किया जायेगा और प्रतिनिधि द्वारा आपको इसकी सूचना दी जायगी । तव तक के लिये आप प्रतिदिन सुविधा के अनुसार आधे घंटे से दो घण्टे तक नीचे लिखें तरीके से अभ्यास शुरू करें ।—

किसी भी ऐसे सुविधापूर्ण आसन मे वैठ जायें, जिसमे वगैर हिले-डुले या बिना अपनी वैठक को वदले आप कुछ समय तक स्थिर रह सकें । एक मिनिट तक शान्त रहें और

अपने आपसे कहे कि जब तक आप अभ्यास में बैठे है किसी भी विचार के द्वारा बाधा नहीं आने देगे। तब अपनी आँखे बन्द कर लें तथा अपने ध्यान को भौंहों के बीच में स्थिर करे, परन्तु ऐसा करते समय आँखो पर किसी प्रकार का दबाव न डालें। धीरे-धीरे मन ही मन "राधास्वामी" "राधास्वामी" दोहराते जाये और अगर कोई विचार उठे या ध्यान बाहर जाये तो उसे फिर उसी केन्द्र पर वापस ले आये।

२६२——मन को वश में करने के बारे मे आपने जो कुछ लिखा है वह बिलकुल दुरुस्त है, फिर भी अभ्यास और लगन के द्वारा यह धीरे-धीरे आसान हो जाता है।

आपको जो अभ्यास की रीति (पत्र २६१ मे) बताई गई है, वह केवल आरम्भिक ही है। आपको जल्दी ही नाम मिल जायेगा और तब धीरे-धीरे यह आसान होता जायेगा। तब तक यह अभ्यास आपके मन को एक बिन्दु पर एकाग्र करने और सभी व्यर्थ के विचारों को रोकने के योग्य बनायेगा। जितना आप इस अभ्यास को करेगे आपको भजन करने मे उतनी ही आसानी होगी।

हरएक अभ्यासी की प्रगति की रफ्तार उसके उत्साह सच्चाई, लगन और खासकर पिछले कर्मो के अनुसार अलग-अलग होती है। परन्तु लगन-पूर्वक किया गया अभ्यास हमेशा फल-प्रद होता है।

२६३——मुझे खुशी है कि आप इन शिक्षाओ के महत्व को समझते है और उनकी कद्र करते हैं, लेकिन मै यह बताना चाहूँगा कि इन शिक्षाओं को मान लेना ही काफी नही है, बल्कि इन पर चलना और इनके अनुसार अपने जीवन को ढालना बहुत जरूरी है। सन्त-मत की शिक्षा की मुख्य बात इस ससार में एक मोह-रहित या अनासक्त जीवन बिताना है अर्थात अपने सब निजी और सामाजिक कर्तव्यों

ओर जिम्मेदारियों को बगैर मोह या लगाव के, केवल अपना फर्ज समझकर, निभाना है। बेशक यह कोई आसान बात नही है, और जीवन मे इस अनासक्त भाव को जाग्रत करने के लिये नियमित रूप से प्रतिदिन ढाई घण्टे भजन-सुमिरन करने पर जोर दिया जाता है। सुमिरन का अभ्यास धीरे-धीरे परन्तु निश्चयपूर्वक हमारे ध्यान को इस मायामय जगत से हटा कर आध्यात्मिक मण्डलों की ओर ले जाता है। सुमिरन चेतनता को शरीर से समेट कर आँखो के केन्द्र में लाने मे सहायक होता है और इसके बाद ही असली भजन या शब्द-भक्ति की शुरूआत होती है। सफलता कई बातो पर निर्भर करती है, जिनमे आपके पिछले संस्कार, आपकी मेहनत तथा गहरी लगन और सतगुरु की दया-मेहर भी शामिल है। यहाँ "सफलता" से मतलब है उचित समय मे काफी अच्छे परिणाम मिलना। वरना जो भी मनुष्य नाम के साथ जोड़ दिया जाता है वह कभी न कभी उस मूल स्थान पर पहुँच ही जाता है जहाँ से शब्द आता है।

याद रखे कि यह पूरे जीवन भर का कार्य है, बल्कि कुछ लोगो के लिये तो एक जीवन से भी अधिक का कार्य है। अभ्यासी को जल्दबाजी नही करना चाहिये और न अधीर होना चाहिये, बल्कि धैर्य और पूरी लगन के साथ अभ्यास में लगे रहना चाहिये और याद रखना चाहिये कि सतगुरु हमारे प्रयत्नो को देख रहे है। आपको ताकीद की गयी है कि रोज कम से कम ढाई घण्टे का समय अभ्यास को दे। अगर शुरू शुरू में आपको एक साथ ढाई घण्टा बैठने में कठिनाई होती हो तो आप इसे दो भागो मे बाँट सकते है। परन्तु हमेशा बैठक के समय को बढ़ाने की कोशिश करे ताकि आखिर एक ही बार मे आप कम से कम ढाई घण्टे बैठ सके। अगर आपको कोई कठिनाई महसूस हो या आप कुछ पूछना चाहे तो मुझे जब चाहे लिख सकते है।

२९०—...सुधार के लिये कभी भी बहुत देर नहीं होती। नये सिरे से शुरूआत करें तथा नियम पर पाबन्द रहे। अपने अन्तर में सतगुरु से प्रार्थना करे कि वे आपकी सहायता और आपका मार्गदर्शन करें और यह कभी न भूलें कि सुख तथा दुःख जीवन के नित्य बदलनेवाले पहलू हैं। नाम या शब्द ही स्थायी महत्व की वस्तु है जो आपको इन बातों से ऊपर उठा देता है। हमारा कर्तव्य है कि इस मार्ग पर पूरी मेहनत के साथ चलने की कोशिश करें।

२९५—मन का सामना अवश्य करना पड़ता है, परन्तु बिगड़े हुए बच्चों की तरह उसे ठीक प्रकार के व्यवहार से सँभाला जा सकता है। जबरदस्ती करने या दबाव डालने की बनिस्बत समझा-बुझा कर मनाना कहीं अच्छा उपाय है। उसे वश में करने का सबसे अच्छा तरीका है सुमिरन। ज्यादा से ज्यादा समय सुमिरन में लगाने की कोशिश करें और दिन मे हर समय मन ही मन सुमिरन करते रहने की आदत डाल लें। इससे एकाग्रता में आसानी होगी और मन का इधर-उधर भटकना रुकेगा।

जहाँ तक शब्द का सवाल है, पहला नियम यह है कि बॉई ओर से आनेवाली किसी भी आवाज पर ध्यान नही देना चाहिये। दाहिने कान से जो भी शब्द आये उसे सुनिये, कुछ समय बाद वह शब्द आपको घण्टे की धुन से जोड देगा तथा आपको और आगे ले जायेगा।

सतगुरु के नूरी स्वरूप के दर्शन अन्तर में ही होते है। वास्तव मे सतगुरु और शब्द एक ही है।

कृपया डाक-खर्च आदि के बारे में चिन्ता न करे तथा कुछ भी न भेजें, क्योकि इसके लिये हमारे पास आवश्यक पैसा है।

२९६—आध्यात्मिक प्रगति के लिये आपके शौक और

लगन के लिये मैं आपको बधाई देता हूँ। जहाँ तक यह प्रश्न है कि आपको कौन-सी पुस्तकें पढना चाहिये, मै यही कहूँगा कि जब आपके पास सभी राधास्वामी पुस्तके है, तो आप इन्हें बार-बार पढ़ सकते है ताकि ये शिक्षाएँ आपका एक अंग वन जाये। जब आपके पास पढने के लिये समय कम हो तो मै राय दूँगा कि आप "सार बचन (वार्तिक)" या प्रोफेसर पुरी की "स्प्रिचुएल पाथ" भाग २ ले ले और इनमें से कम से कम एक पृष्ठ प्रतिदिन पढ़े। इससे भी आपको अभ्यास के लिये उचित प्रेरणा मिलेगी।

नाम-दान के समय आपको सभी आवश्यक हिदायते दे दी गई थी। फिर भी आप कोई सवाल पूछना चाहे तो शौक से पूछ सकते हैं। आपकी प्रगति के बारे मे सुनकर मुझे हमेशा खुशी होगी। आप बहुत ही भाग्यशाली है कि नाम-दान के बाद इतनी जल्दी आप अन्तर मे नूरी स्वरूप के दर्शन करने लगे है। फिर भी मै आपको याद दिलाना चाहूँगा कि कई बार काल भी सतगुरु का रूप धर कर प्रकट होता है, अतएव जब भी आपको अन्तर मे कुछ दिखाई दे तो अपनी सुरक्षा के लिये पाँच नाम का सुमिरन करना न भूले। सुमिरन के सामने जो भी ठहरे वह सत्य है तथा उस पर पूरा-पूरा भरोसा किया जा सकता है।

सतगुरु के स्वरूप की ऐसी प्रारम्भिक झलके दिखाई देना ख़ास दया-मेहर का चिन्ह है। जब आप मेहनत के साथ अभ्यास करके ऊँचे शब्द से जुड जायेगे तो आप सतगुरु को अपने से बाते करते सुन सकेगे तथा उनकी बात समझ सकेगे। जब तक वह समय नही आता, मनुष्य के मन का परदा ही उसकी असली रुकावट है। नियमित और लगन-पूर्वक किये गये भजन-सुमिरन के द्वारा मन को निर्मल तथा वश में किया जा सकता है। साधारणतया यह पूरे जीवन-

भर का कार्य है। इसमें कितना समय लगेगा यह हमारे पिछले कर्मों, हमारे सच्चे प्रयत्नों तथा साथ ही सतगुरु की दया-मेहर पर निर्भर है। जितनी ज्यादा कोशिश हम करते है, सतगुरु हम पर उतनी ही ज्यादा दया-मेहर करते है, ताकि हम और अधिक मेहनत कर सके और अपनी मंजिल पर पहुँच सकें। अतएव प्रेम और विश्वास के साथ अपने अभ्यास में जुटे रहे, उसके फल की चिन्ता सतगुरु स्वयं करेंगे। परिश्रम का कोई भी अंश कभी व्यर्थ नही जाता। सतगुरु तो प्रेम और कृपा के मूर्त रूप है।

मेरे लिये कोई कार्य करने की आपकी उत्सुकता के लिये धन्यवाद। सबसे अच्छा कार्य जो आप कर सकते है और जिसकी सबसे ज्यादा कद्र होगी वह यही है कि आप अधिक से अधिक समय अपने अभ्यास को दे।

२९७—आपके पत्र को पाकर, जिसमें आपने अपने अनुभवों की चर्चा की है, मुझे बहुत खुशी हुई। हाँ, ये अनुभव अद्‌भुत है; परन्तु जैसे-जैसे आप अभ्यास मे अधिक समय देगे और आगे बढ़ेंगे, आप और भी विलक्षण बाते देखेगे और सुनेंगे। हमारे अन्दर तरह तरह की कई रोशनियाँ है और अपनी ऊपर की यात्रा मे वे हमे समय-समय पर दिखाई देती है। अगर आप प्रतिदिन कम से कम दो घण्टे, बल्कि ढाई घण्टे एक ही बार अभ्यास में दे तो प्रगति और भी अच्छी होगी। आप धीरे-धीरे समय को बढाये तथा दो घण्टे सुमिरन और आधा घण्टा शब्द को सुनने में दे।

धुन या शब्द सबसे जरूरी वस्तु है, क्योंकि शब्द स्वय सत्पुरुष की आत्मिक धारा है। यह वह तार है जो हमें उसके धाम से जोड़ता है। असली शब्द से जुड़ने और उसके ऊपर खीचने वाले दायरे मे आने के लिये नौ द्वारो को खाली करके, अपनी सुरत को समेट कर ऊपर तीसरे तिल मे लाना

आवश्यक है। वहाँ पहुँच जाने पर शब्द हमे अन्तर मे तथा ऊपर की ओर खीच लेता है। अगर हम प्रेम और लगन के साथ इस शब्द मे लीन हो जायें तथा अपने आप को उसके सुपुर्द कर दे तो वह हमे अपने निज-घर ले चलेगा। परन्तु आप जानते ही है कि इसमें समय लगता है। हमारे सबके संस्कार और कर्म अलग-अलग है और हमारी प्रगति की गति काफी हद तक इन पर निर्भर है, हालाँकि सतगुरु इस मार्ग पर हमारी निरन्तर सहायता और रहनुमाई कर रहे है।

यह अच्छा है कि आप बगैर भजन मे बैठे भी शब्द को सुनते रहते है। यह बहुत अच्छा लक्षण है और आपके शौक तथा आप पर हो रही दया-मेहर का सूचक है। यह तो केवल एक प्रकार की तैयारी है और इससे भजन के समय शब्द को सुनने के लिये आपका उत्साह और भी बढना चाहिये। बाकी समय मे जो शब्द हमें सुनाई देता है उससे भी एकाग्रता बढती है, परन्तु जब तक पहले सुमिरन के द्वारा हमारी समस्त चेतनता आँखों के केन्द्र पर एकत्रित नही होती तब तक यह शब्द हमे ऊपर के मण्डलों में खीच नही सकता। इसीलिये सुमिरन इतना आवश्यक है।

शब्द सर्वत्र व्याप्त है, वास्तव में शब्द ही सबको आधार दे रहा है। फिर भी हम उसे सुन नहीं सकते, क्योंकि हमारा ध्यान बाहर फैला हुआ है। एक बार आपको शब्द से जोड दिये जाने के बाद, जब भी आप एकाग्र होंगे या आपका रुझान अन्तर की ओर होगा, आपको शब्द सुनाई देने लगेगा। आपका प्रयोग बिलकुल सही था। जब आप आध्यात्मिक बातो की ओर मुडे तो आपकी सहायता करने के लिये शब्द आपके साथ था; और जब आप दुनियावी कार्यो में व्यस्त थे तो उसने आपको अपना कार्य करने दिया।

अभ्यास के लिये आपने जो समय का नया कार्य-क्रम बनाया है वह ज्यादा अच्छा है। यहाँ हिन्दुस्तान में हम सुबह तीन या चार बजे से अभ्यास शुरू करते है, परन्तु यह समय पश्चिमी देशों के बहुत से लोगो के लिये सुविधापूर्ण नहीं होता। सुबह का यह समय शान्ति-पूर्ण होता है तथा इस वक्त आत्मिक चेतनता और दया-मेहर की धाराएँ कही अधिक होती है, जिनका लाभ इस समय आभ्यास में बैठकर हम अपने आप प्राप्त करते है।

आपने लिखा है कि आवाजे बहुत स्पष्ट तथा बहुत जोर की है, परन्तु आपने यह नही लिखा कि आपको कौन-सी अलग-अलग स्पष्ट आवाजे सुनाई देती है। अगर सुमिरन में बैठते समय आपको शब्द इतना साफ सुनाई देता है तो आप अपना अभ्यास शब्द को सुनने से शुरू कर सकते है। जैसा कि आपको नाम-दान के समय बताया गया था, बाँये कान से सुनाई देने वाली किसी भी आवाज की ओर ध्यान नही देना चाहिये।

जहाँ तक अन्तर में सतगुरु से बात-चीत करने का प्रश्न है, यह भी धीरे-धीरे संभव हो जायेगा। समय आने पर सब-कुछ होगा। कई सत्संगियो को शुरू-शुरू में अन्दर सतगुरु का स्वरूप दिखाई देता है और गायब हो जाता है। बाद में जब वह वापस प्रकट होता है तो वह स्थिर हो जाता है और, तब बात-चीत संभव हो सकती है।

जब आपको आन्तरिक रूहानी भेद की कुजी मिल गयी है और आपकी आन्तरिक यात्रा की शुरूआत इतनी अच्छी हुई है, तो आपको अब यह चिन्ता नही करना चाहिये कि लोग किस बेताबी के साथ भाग-दौड मे लगे है और संसार में उलझ रहे है। वे अपने कर्मो के अनुसार चल रहे है। उनके साथ सहानुभूति होना तो ठीक है, परन्तु जब तक उनका

समय नही आता, आप ऊँची रूहानी बातों की ओर उनकी रुचि पैदा नही कर सकते। अगर आप उनसे राधास्वामी मत के बारे मे बात भी करे और अपने रूहानी अनुभवो के आधार पर उन्हे प्रेरित भी करे (जिसकी आपको किसी हालत में भी इजाजत नही है) तो भी वे विश्वास नही करेगे। औरों को समझाने से पहले, पाँचों दुश्मनों पर विजय प्राप्त करने और आन्तरिक मण्डलो मे खुद चढ़ाई करने का आपका उद्देश्य बिलकुल ठीक है। ये दुश्मन बहुत खतरनाक है और कुछ समय के लिये ये बिलकुल शान्त पडे रहते है मानों हमले की ताक मे कही दुबके बैठे हों और मौका आने पर आभ्यासी पर धावा बोल देते है। इसलिये सत्संगी को इनसे अपनी हिफाजत करनी चाहिये और उनका हमेशा मुकाबला करने के लिये पर्याप्त शक्ति एकत्रित करना चाहिये।

कृपया पत्र के लम्बे हो जाने के बारे मे चिन्ता न करें। मुझे हमेशा उन सत्सगियों के पत्र पाकर खुशी होती है जो इस मार्ग पर प्रेम और श्रद्धा के साथ चल रहे है।

२९८—आपने शब्द के बारे में जो कुछ लिखा है वह सही है। शब्द की धुन असल में कान मे नही बल्कि मस्तक मे है। हम उसे कान में सुनने की उम्मीद करते है, क्योकि हम बाहर की आवाजों को कान से सुनने के आदी हो चुके है। परन्तु आपको आवाजे बॉई ओर से आती हुई प्रतीत होती है। जब आप अपने खयाल को केन्द्र में या दाहिनी ओर रखेंगे, तो बाँई ओर से आनेवाली आवाज अपने आप बन्द हो जायेगी और आखिर उसे आप दाहिनी ओर या केन्द्र मे सुनने लगेगे।

घण्टे की आवाज जो कि दाहिने कान से या बीच में से आती हो सही आवाज है और उसे ध्यानपूर्वक सुनना चाहिये। अन्तर में अनेकों आवाजे है और ये सब संगीतमय धुने आक-

र्षक है, परन्तु जो आवाज या धुन आपको ऊपर ले जायेगी वह बड़े घण्टे की धुन है, जो शुरू-शुरू में छोटी घण्टियो की टनटनाहट के रूप में सुनाई देती है। सुमिरन के समय पूरा ध्यान सुमिरन मे देने से और भजन के समय घण्टी की जिस प्रकार की भी आवाज आये उसे एकाग्रता के साथ सुनने से वह आवाज धीरे-धीरे एक बड़े घण्टे के शब्द मे विकसित हो जायेगी। अतएव, शिष्य इन विभिन्न आवाजों को सुन सकता है और उनका आनन्द ले सकता है (परन्तु-केवल दाहिनी ओर या बीच में से आनेवाली आवाजो को ही सुने, बॉई ओर की आवाजों को नही; अगर बॉई ओर से घण्टे की आवाज भी सुनाई दे तो उस पर भी ध्यान नही देना चाहिये); परन्तु अन्त मे उसे दाहिनी ओर या बीच मे से आनेवाले घण्टे के शब्द को ग्रहण करना चाहिये। कुछ समय के बाद यह और ऊँचे मण्डलों के शब्द के रूप मे विकसित होगा। बड़े घण्टे के शब्द तथा और ऊँचे शब्दों को जो अभ्यासी सुनता है, उसके मन और आचरण मे इनका प्रभाव प्रत्यक्ष दिखाई देने लगता है।

हाँ, ये शब्द हर समय सुनाई दे सकते है, क्योकि शब्द सदैव अन्तर में मौजूद है और एकाग्रता की अवस्था मे अथवा जब भी मन बाहरी संसार की ओर से हट कर अन्तर की ओर झुकता है, एक प्रेमी सत्संगी उसे सुन सकता है। साधक सोचता है कि शायद पास मे बैठे हुए और लोग भी इसे सुन रहे होगे, परन्तु यह तो अन्दर से आता है और जिन्हे नाम नही मिला है उनकी पहुँच से परे है। कुछ अभ्यास के बाद सत्सगी शब्द को हर समय सुन सकता है; परन्तु जब उसे कोई कार्य करना हो तो उसे अपना ख़याल उस कार्य में लगाना चाहिये और कार्य समाप्त करने के बाद ख़याल को अन्तर की ओर करके शब्द से जुड जाना चाहिये। लगातार भजन-सुमिरन के फल-स्वरूप यह क्रिया अपने आप होनी

चाहिये, इसके लिये कोई प्रयास करने की जरूरत नही ।

जहाँ तक प्रकाश का सवाल है, आपको यह देखना चाहिये कि वे किस प्रकार के है और उनका आपके मन तथा शरीर पर कैसा प्रभाव पडता है । यह प्रयत्न कीजिये कि किसी भी ज्योति या दृश्य से आप उत्तेजित होकर या आवेग मे आकर विचलित और परेशान न हो । हमारा उद्देश्य इन रोशनियों या दृश्यों को देखना नही है, बल्कि शब्द की सहायता से अन्तर मे ऊपर की ओर जाना तथा उस स्रोत में समा कर एक हो जाना है जहाँ से कि हम आये है । इनमें से कई प्रकाश और दृश्य पहली मंजिल सहस्रदल कमल के मण्डल मे दिखाई देते हैं ।

मै आपकी प्रगति के बारे में जान कर प्रसन्न हूँ । मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जब आप अन्तर मे आकाश, तारे तथा ऐसी अन्य वस्तुएँ देखते है तो इसका अर्थ यह नही कि आप पागल है । वास्तव मे ठीक ये ही वस्तुएँ आपको दिखाई देनी चाहिये । आपकी एकाग्रता अच्छी है, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह एकाग्रता अथवा इसकी गहरी अवस्था अधिक समय तक स्थिर नही रहती । यही वजह है कि सतगुरु का स्वरूप दिखाई देता है और फिर गायब हो जाता है । सतगुरु हमारे अन्तर मे हैं और तारा-मण्डल, सूर्य और चन्द्र को पार करने के बाद पहले स्थान से कुछ नीचे उनके दर्शन हो सकते है । शुरू-शुरू मे ऐसा प्रतीत होता है कि स्वरूप आता है और चला जाता है या बगैर कोई बात किये अदृश्य हो जाता है । जैसे-जैसे अभ्यास का समय बढ़ता जायेगा, एकाग्रता का वक्त भी बढ़ेगा और तब अन्तर मे सतगुरु का स्वरूप भी आपके सामने पहले से अधिक देर तक ठहरेगा तथा आपसे बाते करेगा और आपको सलाह भी देगा । आप

बहुत ही भाग्यशाली है कि इतने कम समय में आप अन्दर इतनी प्रगति कर चुके है। लगन और मेहनत के द्वारा आप कुछ समय बाद सतगुरु से अन्दर बात-चीत भी कर सकेंगे।

आपको अन्दर दिखाई देने वाली सूरतों और आकृतियों की ओर कोई ध्यान नही देना चाहिये और न उन आवाजों को सुनना चाहिये जो पीछे से आ रही हो, क्योंकि यह एक छल भी हो सकता है। जो कोई आपसे बात करना चाहे उसे आपके सामने आना चाहिये और अगर वह स्वरूप पॉच नाम का सुमिरन करने के बाद भी मौजूद रहे तो वह असली है। इसीलिये सुमिरन को मन मे रखना बहुत जरूरी है।

यह बहुत अच्छा है कि अब आपने जल्दी उठने की आदत डाल ली है और रोज सुबह ढाई घण्टे सुमिरन और भजन कर रहे हैं। कृपया अपना यह अभ्यास जारी रखे; आपको अन्दर दर्शन होंगे तथा सतगुरु की सँभाल और मार्ग-दर्शन का पता चलेगा। एक बार जब आप अन्तर में सत-गुरु से सम्पर्क जोड़ लेगे, तो आप महसूस करेगे और समझ सकेंगे कि सतगुरु आपका मार्ग-दर्शन कर रहे है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, वह असली शब्द जो आपको अन्दर और ऊपर की ओर खीचता है, बडे घण्टे की ध्वनि से शुरू होता है। दूसरी आवाजें, साधारण या छोटी-मोटी आवाजे—जो कि दाहिनी ओर या बीच मे से आती है—इस बड़े घण्टे के शब्द की ओर ले जाती है और इसलिये वे भी महत्वपूर्ण है। परन्तु सभी आवाजो को दाहिनी ओर से या बीच में ही सुनना चाहिये, कभी बॉई ओर से नही सुनना चाहिये। अन्तर मे कई आवाजे हो सकती है, पर उनकी ओर तभी ध्यान देना चाहिये जब कि वे दाहिनी ओर अथवा बीच में से आयें।

आप कोई कल्पना नही कर रहे है। कुछ समय वाद आप खुद महसूस करेगे और जान लेगे कि जो कुछ आप अन्दर देख रहे है वह वाहर की वनिस्वत कही अधिक वास्तविक है। प्रेम और भक्ति भजन-सुमिरन मे सफलता पाने की कुजी है।

२६६--मुझे आपके अनुभवो के वारे में जान कर खुशी हुई। यह तो केवल शुरूआत ही है। प्रेम और विश्वास के साथ जुटे रहे और धैर्य-पूर्वक अपना अभ्यास करते रहे। अभी बहुत कुछ आनेवाला है, परन्तु कृपया याद रखे कि हमें किसी बात का पहले से अनुमान या आशा नही लगाये रखना चाहिये, वल्कि जो कुछ आता है उसे प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करना चाहिये।

सुमिरन पर जोर देना जरूरी है, सव-कुछ ठीक हो जायेगा; परन्तु बाँईं ओर से शब्द न सुने। वड़े घण्टे की आवाज पहले स्थान का शब्द है और उसमें चुम्वकीय आकर्षण है, परन्तु बाँईं ओर से आनेवाली आवाजों को कभी न सुने।

आपने अपनी इच्छा-शक्ति और दृढ़ निश्चय से काम लेकर अच्छा किया। जब इससे भी सफलता न मिले तो आप बाँये कान से अँगूठा हटा ले और दाहिने कान से आनेवाली आवाजों को ध्यान से सुने। अगर फिर भी वाँई ओर से शब्द आना बन्द न हो, तो आप शब्द सुनना छोड़ कर सुमिरन शुरू कर दे और अगर आवश्यक हो तो उस वक्त उठ जाये और अपना अभ्यास कुछ समय के लिये स्थगित कर दे।

वाँई ओर का शब्द क्यो नही सुनना चाहिये, इसके वारे में आपका अनुमान दुरुस्त है। वाँई तरफ काल का मार्ग है और इस मार्ग की वस्तुएँ हमें भुलावे और परेशानी मे डालने

के लिये बनायी गयी है। इस बात की पूरी समझ हमे त्रिकुटी मे पहुँचने पर आती है।

आपने लिखा है कि आपको अभ्यास के समय ऐसा अनुभव होता है कि एक अन्धकारमय गुफा आपको निगलने की कोशिश कर रही है। कृपया डरें नही, बल्कि याद रखें कि सतगुरु हमेशा आपके साथ हैं, चाहे आप उन्हें न भी देख सके। ऐसे अवसरों पर आपको सतगुरु का ध्यान तथा मन के द्वारा पाँच नाम का सुमिरन करना चाहिये।

मेरा समय लेने के बारे में कृपया चिन्ता न करें। मुझे हमेशा सच्चे, लगनशील और प्रेमी सत्संगियों के समाचार पाकर खुशी होती है। वास्तव में यह मेरा कर्तव्य है।

३००—सुमिरन तो बुनियाद है, यद्यपि शुरू-शुरू में यह रूखा और नीरस लगता है। सांसारिक वस्तुओं और सम्बन्धों के बारे में सोचते रहना भी तो सुमिरन ही है, लेकिन यह संसार का सुमिरन है जिसने हमें संसार के मोह में इतना फँसा दिया है। हम इस सुमिरन का रुख बदल दे तो आत्मिक मण्डलों से सम्बन्ध और लगाव पैदा हो जायेगा। धीरज, प्रेम और नियमितता के साथ अपने अभ्यास मे जुटे रहें, सतगुरु आपको अपनी मेहनत में सफलता प्रदान करेंगे। शब्द वास्तव में तभी असरकारक होता है जब हम अपनी चेतनता को शरीर मे से समेट लेते है। इससे पहले वह अच्छा लगता है और हमे प्रसन्न भी करता है, परन्तु हमे खीचता नही।

३०१—मैं आपकी यहाँ आने की उत्सुकता को समझता हूँ, परन्तु आप जानते हैं कि और बातों को भी देखना है और आपको वहाँ भी अपने कर्तव्यों को पूरा करना है। इसके अतिरिक्त, जैसा कि अब आपने खुद यह महसूस कर लिया है और आपको अनुभव हो चुका है, सतगुरु सब जगह

है और उसकी दया-मेहर समय या स्थान के द्वारा सीमित नही है। इससे मेरा मतलब यह नही है कि आपको यहाँ आने से हमेशा के लिये रोक दूँ। डेरा सब सत्संगियो के लिये खुला हुआ है और जब भी आप यह महसूस करे कि आपके यहाँ आने से आपके कार्यक्रम में कोई बाधा या आपको कोई असुविधा नही होगी तो आप बडी खुशी से आ सकते है। आप अपने आने की सूचना मुझे काफी पहले दे दें ताकि आप उन दिनों यहाँ आ सके जब कि मैं डेरे मे हूँ।

आपकी प्रगति की सूचना के लिये धन्यवाद। आपको जब भी कुछ कहना हो आप हमेशा मुझे स्वतन्त्रतापूर्वक लिख सकते है; परन्तु अगर आपके पत्रो का उत्तर देने मे देर हो जाय तो आप खयाल न करें, क्योकि आपको यहाँ के मेरे व्यस्त कार्यक्रम के बारे मे मालूम ही है। मुझे खुशी है कि आप भजन-सुमिरन अच्छी तरह कर रहे है और उसमे उचित समय दे रहे है। सुमिरन शब्द-अभ्यास की बुनियाद है और जैसे-जैसे एकाग्रता बढ़ेगी आप सुमिरन करते समय भी शब्द को सुनेंगे।

मुझे आपके......अनुभव के बारे मे पढ़कर बहुत खुशी हुई। आपका यह अनुभव आनन्द-प्रद और ऊँचा उठानेवाला था। यह हुजूर महाराज जी की दया-मेहर है कि वे हमेशा सत्सगियों की देख-भाल करते रहते हैं, और वे ठीक वक्त पर आपकी सहायता के लिये आ गये। सतगुरु का असली रूप शब्द है और दूरी उसके लिये कोई बाधा नहीं है। आपकी सहायता के लिये ठीक वक्त पर पहुँच कर उन्होने इस बात को साबित कर दिया है और हमारे अन्त-समय भी इसी प्रकार हमारी सहायता के लिये आयेंगे। शब्द अभ्यास में प्रेमपूर्वक और भी अधिक ध्यान तथा समय देकर ही हम सतगुरु के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट कर सकते है।

वैसे मै यह भी कहना चाहूँगा कि एक वकील को अपना मुकदमा कर्तव्य समझकर तैयार करना चाहिये और उसे एक व्यक्तिगत मामला नही बनाना चाहिये--चाहे उसकी जीत हो या हार। उसे अपनी ओर से पूरी कोशिश करना चाहिये, यही काफी है।

मै आपकी प्रगति से प्रसन्न हूँ और यकीन दिलाता हूँ कि आपके अनुभव सही है। जब आप अन्तर मे सतगुरु से बाते करते है तो आप जबान या होठो से नही बोलते और न ही कानों से सुनते है। यह एक यथार्थ तथा सच्चा अनुभव था; यह जैसा होना चाहिये वैसा ही था। यह एक प्रकार से आत्मा से आत्मा तक सीधे समझने की क्रिया थी, कानो से सुनने की नही, इसीलिये शब्दों का भाव एक से दूसरे तक अपने आप पहुँच जाता था।

आपने अन्तर मे लाल रंग और एक सुनहरी आकृति देखने के जिस अनुभव का वर्णन किया है, वह दिलचस्प है। अगर आपको पुस्तको मे इसके बारे मे या ऐसी अन्य बातो के बारे मे कोई उल्लेख नही मिलता तो कोई बात नही। अनुभव इनसे कही ऊँची वस्तु है और सभी अनुभवो को पुस्तकों मे नही लिखा जा सकता। मै तो यही कहूँगा कि आप किसी खास मजिल मे पहुँचने की कोशिश या इच्छा न करे और न ही यह जानने का प्रयत्न करे कि आप कहाँ तक पहुँच गये है, बल्कि अपने आपको पूरी तरह से शब्द पर छोड दे। शब्द की भक्ति का यही तरीका है। हमे कही ठहर कर उसकी भक्ति नही करना है, क्योकि ऐसा करने से द्वैत-भाव उत्पन्न होता है। बल्कि आप तो खुद को उसमें लीन कर दीजिये और उसके साथ एकता महसूस कीजिये। तब वह आपको उन ऊँचे रूहानी मण्डलो में ले जायेगा जहाँ कि आप जाना चाहते हैं।

सुमिरन करते समय आपका ख़याल पूरी तरह से सुमिरन मे ही रहना चाहिये, पर हो सकता है कि शब्द इतने जोर का हो कि कुछ समय के लिये आपके ख़याल को अपनी ओर खीच ले । फिर भी साधारणतया आपको सुमिरन समाप्त कर लेने के वाद ही शब्द की ओर ध्यान देना चाहिये, और तव आपको शब्द अधिक आसानी से सुनाई देगा । अगर सुमिरन के समय शब्द इतना जोर का हो कि आपका ध्यान वरवस अपनी ओर खीचने लगे तो आप सुमिरन छोड़कर शब्द सुनना शुरू कर सकते है । परन्तु ऐसा तभी करे जव कि शब्द आपको इसके लिये विवश कर दे ।

हाँ, भयभीत होना अथवा किसी बात की आशा बाँधे रखना, दोनो ही अच्छे नही है । सिर्फ अपने आपको शब्द के सहारे छोड़ दीजिये ।

३०२—मै खुश हूँ कि आप भजन-सुमिरन लगन के साथ कर रहे है और आपको उत्साह-वर्द्धक अनुभव भी हो रहे है । समय आने पर सब कुछ हो जायेगा । यह एक लम्बा रास्ता है, जीवन-भर का काम है, पर धैर्य और लगन से सव कुछ आसान हो जाता है । आप जिस तरह अभ्यास कर रहे है उसी तरह करते जाये और जो कुछ दिखाई या सुनाई दे उसमें वहुत ज्यादा दिलचस्पी न लें अर्थात जो कुछ नजारे आप देखे उनके पीछे न जाये और अगर वे गायव हो जाये तो उनकी कमी महसूस न करे, बल्कि अपने ख़याल को सुमिरन मे लगाये रखे । सुमिरन इस अभ्यास की वुनियाद है और आपका सुमिरन जितना पूर्ण होगा आपके लिये शब्द को पकड़ना, सतगुरु का चिन्तन करना तथा उनके स्वरूप का ध्यान करना उतना ही आसान होगा । सतगुरु के सिवाय और किसी का ध्यान न करें ।

ऐसे स्वप्न आम तौर पर स्वप्नो से कुछ अधिक होते

है, परन्तु स्वप्न तो आखिर स्वप्न ही है, चाहे वे कितने ही आनन्ददायक और सन्तोषप्रद क्यो न हों। फिर भी सुरत का अन्तर मे जाना एक निश्चित लाभ है। पुस्तकों में आपको सभी बाते नही मिल सकती। हमारे कुछ अनुभव अपने व्यक्तिगत अनुभव होते है, और पुस्तकों मे हर एक बात का वर्णन सम्भव नहीं होता।

मै आपकी राय से सहमत हूँ, वास्तव मे अभी तक ऐसा ही होता आ रहा है, परन्तु अब परिस्थितियाँ बदल रही है। सम्पत्ति के बढने की वजह से कुछ नियमित व्यवस्था आवश्यक हो गयी है। सौभाग्य से सलाहकार और प्रबन्धकों के रूप में मुझे कुछ अवकाश-प्राप्त योग्य तथा ईमानदार सत्सगी मिल गये है और कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। अपने पहले आनेवाले गुरु साहिबानों की तरह मै भी कानूनी रूप से इस सब सम्पत्ति का मालिक हूँ और यह मेरे नाम पर है, परन्तु आप जानते है कि सन्त-मत के सिद्धान्तों के अनुसार इसमे से मै एक पाई भी अपने काम मे नही ला सकता और न ही लाता हूँ। मै इसे सत्सगियों के लाभ के लिये एक ट्रस्ट या धरोहर के रूप मे सँभाल रहा हूँ और अपना निर्वाह अपनी पैतृक भूमि की खेती से होने वाली आय से करता हूँ।

३०३—आप जो कुछ भी देख रहे है और अनुभव कर रहे है वह दुरुस्त है और यह आपकी मेहनत, लगन तथा रूहानी अभ्यास में आपकी तत्परता का फल है। आप वास्तव मे बड़े भाग्यशाली है कि आपको शब्द का यह उत्तम अनुभव हुआ है। आत्मा और सतगुरु दोनों ही वास्तव मे शब्द है। दोनों के बीच में हौमै बाधक बन कर खड़ा है। आँखों के केन्द्र पर सुमिरन के द्वारा हम धीरे-धीरे स्वय को सतगुरु के चरणों में अर्पित कर देते है, इस प्रकार हम अपने हौमैं

अथवा अहं को हटा कर सतगुरु के शब्द-स्वरूप से मिलाप का आनन्द प्राप्त करते है। कृपया प्रेम और विश्वास के साथ अभ्यास करते रहे और सुमिरन पर अधिक जोर दे। यह अभ्यास की कुंजी और बुनियाद है। इस सर्वोच्च कर्तव्य का नियमपूर्वक पालन करें और यदि कभी-कभी आपको ये आनन्ददायक अनुभव न भी हो तो भी उद्विग्न या परेशान न हो। सुमिरन मन को संसार से विमुख करके शब्द के साथ जोड़ता है। शुरू शुरू में यह रूखा और नीरस जरूर होता है, परन्तु फिर भी यह नितान्त आवश्यक है। चाहे शब्द सुनाई देने लगे तो भी जब तक सुमिरन का अभ्यास पूरा नही होता आत्मा खिंच कर ऊपर नही आ सकती। हम आम तौर पर शब्द को ज्यादा समय देते है और सुमिरन की उपेक्षा करते हैं। यह बडी भूल है।

सन्त-मत के साहित्य और महाराज जी (बाबा सावन-सिहजी) के पत्रो को पढ़ना बहुत सहायक और लाभप्रद होगा और इनमें आपके मन को स्वस्थ मनोरंजन प्राप्त होगा। मन वातावरण का असर वहुत जल्दी ग्रहण करता है, इसी-लिये परमात्मा तथा अपने आध्यात्मिक उद्देश्य को याद रखना बहुत मदद देता है। इसके अतिरिक्त, हमारी बहुत सी कठिनाइयाँ और समस्याएँ एक सी है, इसलिये यह साहित्य और सतगुरु के पत्र हमें उनका हल सुझाते है तथा राह दिखाते है।

भोजन एक व्यक्तिगत समस्या है और इसकी व्यवस्था व्यक्तिगत आवश्यकताओ के अनुसार की जानी चाहिये, परन्तु इसमें कोई सन्देह नही कि हममें से वहुत से लोग जरूरत से ज्यादा खाते है। हलकी और कम खुराक भजन-सुमिरन मे बहुत सहायक होती है, जैसा कि आपने अपने अनुभव से देखा है। परन्तु इसके बारे में कोई निश्चित नियम नही बनाया जा सकता। यह अपने आप व्यवस्थित हो जाता है।

आप भजन-सुमिरन मे इतना समय दे पा रहे है इसके लिये आप बधाई के पात्र है, परन्तु यहाँ मै आपको एक चेतावनी भी देना चाहूँगा। आपको जल्दबाज़ी या जबरदस्ती अपनी गति बढाने की कोशिश नही करना चाहिये। जो प्राप्त हुआ है उसे पक्का करने व सँभालने की कोशिश करना चाहिये ताकि वह स्थायी बन सके, ऐसा न हो कि आता और जाता रहे।

पुस्तको मे आम तौर पर केवल इन बातो की रूप-रेखा ही होती है, विस्तृत वर्णन नही दिया जाता।

आपकी तथा अन्य सत्संगियो की मुझसे आमने-सामने मिलने की तीव्र इच्छा को मै समझता हूँ परन्तु जो अमेरिकन सज्जन यहाँ आ चुके है और मेरे साथ डेरे मे रह चुके है, वे आपको बता सकेगे कि मेरे लिये बाहर जाना कितना मुश्किल है। फिलहाल मेरा कोई प्रोग्राम नही है, परन्तु यदि सतगुरु की ऐसी ही मौज हुई तो आप सबसे मिल कर मुझे बड़ी खुशी होगी।

अफसोस है कि धर्म, जैसा कि आज उस पर अमल किया जा रहा है, हमे ईश्वर के साथ जोडने के बजाय मनुष्य-मनुष्य के बीच मे एक खाई पैदा करता है और इस प्रकार आपसी द्वेष के बीज बोता है। ऐसा नही होना चाहिये। हम सब उस एक ही परमपिता के पुत्र है जिसका कोई धर्म, जाति या पथ नही है, जो किसी भी देश या कौम की सीमा मे बँधा नही है। वह हम सबके अन्दर है और अगर हम किसी से नफ़रत करते है तो इसका मतलब है कि हम उस मालिक से नफरत कर रहे है। हमारे धर्म भी यही कहते है, परन्तु हम इस पर अमल नही करते। अगर हममे से हरएक व्यक्ति इस पर चले तो कोई मत-भेद और लड़ाइयाँ न रहे और स्वर्ग का राज्य सचमुच ही धरती पर उतर

आये । हुज़ूर महाराजजी हमेशा सहिष्णुता और प्यार का उपदेश देते थे और अपने जीवन में उन्होने इस पर हमेशा अमल भी किया तथा अपना विरोध करनेवालों के प्रति भी सहिष्णुता और प्रेम का व्यवहार किया ।

३०४—जहाँ तक आपके अनुभवों का सवाल है, अन्तर मे एक सम्पूर्ण और विशाल संसार मौजूद है । पूरा सूक्ष्म लोक—अपने उपलोको सहित—आबाद है और काल के राज्य में भी नेक आत्माएँ तथा प्रकाशमय स्वरूप या आकृतियाँ है । अन्तर मे जब भी आकर्षक आकृतियाँ मिले तो अपनी सुरक्षा के लिये नाम का मन ही मन सुमिरन करना चाहिये । सतगुरु के नूरी स्वरूप के दर्शन होने पर भी सुमिरन करना चाहिये ताकि आप यह मालूम कर सके कि कोई गलत ताकत उनका रूप धर कर तो नही आ गयी है । सुमिरन के सामने सतगुरु का स्वरूप ठहरा रहेगा । जैसे जैसे आप प्रगति करेंगे, सतगुरु अन्दर आपसे बात भी करेंगे, परन्तु सब-कुछ उचित समय आने पर होगा ।

यह बडी अच्छी बात है कि अब आपको शब्द बीच में या केन्द्र मे सुनाई देता है । शब्द को सुनते समय बाकी सब तरफ से ध्यान को हटा ले, सुमिरन से भी ख़याल हटा ले और अपने आप को शब्द मे लीन करने की कोशिश करे । धीरे-धीरे शब्द आपको अपना लेगा और आगे ले चलेगा । जब सुमिरन कुछ ठीक तरह से होने लगे तो आँखो के केन्द्र पर ध्यान करना चाहिये ।

३०५—मुझे यह जान कर अफसोस हुआ कि भजन में बैठते समय रीढ़ के निचले भाग मे आपको इतना अधिक दर्द होता है । यह काफी हद तक किसी पिछले जन्म मे किये गये योग-अभ्यास की वजह से है, जिसके कुछ प्रभाव आपको अब भी परेशान कर रहे हैं ।

आत्मा को ऊपर के रूहानी मण्डलों में ले जाने का राधास्वामी मार्ग, छः चक्रो से सम्बन्धित साधारण योग का मार्ग नही है। इसमें हम अपनी सम्पूर्ण तवज्जह और चेतनता को आँखो के केन्द्र पर एकाग्र करते है। लगातार और गहरे सुमिरन के द्वारा हम अपनी चेतनता को इस केन्द्र तक लाते है और फिर यहाँ से ऊपर बढते है।

जहाँ तक हो सके सुमिरन को ज्यादा से ज्यादा समय दें और दिन के बाकी समय मे भी मन ही मन सुमिरन करते रहने की आदत डाल लें। इससे सिमटाव मे मदद मिलेगी और आत्मा की चढ़ाई सरल हो जायेगी।

अपनी पीठ के पीछे गद्दी या तकिया लगाकर एक आरामदेह आसन में बैठें। अगर आप दर्द वाले स्थान पर कोई लेप या मरहम लगाये तो हो सकता है कि आपको कुछ आराम मिले।

सुमिरन ही वह साधन है जिसके द्वारा हम अपनी सुरत को बाहरी वस्तुओं से हटा कर आँखो के केन्द्र मे एकाग्र कर सकते है तथा उसे शब्द से जोड सकते है। आपको शब्द तो सुनाई देता है, परन्तु आँखो के केन्द्र पर सुरत की काफी एकाग्रता न होने के कारण आप शब्द मे जल्दी प्रगति नही कर पा रहे है।

जिन दृश्यो आदि का आपने वर्णन किया है वे पहले स्थान से नीचे के लोको के है और कोई ज्यादा महत्व के नही है। सबसे जरूरी बात तो यह है कि आप स्वय को शब्द धुन मे लीन कर दे। जितना अधिक आप शब्द मे लीन होगे उतनी ही अधिक आप सतगुरु की उपस्थिति महसूस करेंगे तथा आपको खुशी और आनन्द प्राप्त होगा। आपका धैर्य और उत्साह बहुत अच्छा और लाभप्रद है, क्योकि यह एक लम्बी और कठिन यात्रा है।

पहले स्थान पर पहुँच जाने पर हमे अपने पिछले जन्मो की झलके प्राप्त होती है। दूसरे स्थान को पार कर लेने के वाद हमे अपने सभी पिछले जन्मों का पता चल जायेगा। लेकिन, जैसा कि हुजूर महाराज जी फरमाते थे, यह ज्ञान कोई महत्वपूर्ण नही है। कभी-कभी इससे परेशानी भी हो सकती है।

मैं आपके प्रेम और भक्ति की कदर करता हूँ, परन्तु आपको इसे सतगुरु के शव्द-स्वरूप की ओर मोड़ना चाहिये, इससे यह प्रेम और भी वढेगा तथा आपको और भी प्रसन्नता प्राप्त होगी। सतगुरु का असली स्वरूप शव्द है। आप जितना अधिक शव्द को लगन से सुनेगे तथा अपने आपको उसमे लीन करेगे, आपको सतगुरु उतने ही समीप मालूम होंगे तथा आप अनुभव करेगे कि परमात्मा और सतगुरु एक ही है। ये वाते लिखने या वाद-विवाद की नहीं है, वल्कि खुद अनुभव करने की है।

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि सत्सग का कार्य अच्छी तरह चल रहा है और न केवल सत्सगियो की संख्या ही वढ रही है वल्कि वे आध्यात्मिक कार्यो मे सच्ची दिलचस्पी भी ले रहे है। हमे एक-दूसरे के प्रति सद्भाव रखना चाहिये और हमारे आचरण से यह प्रकट होना चाहिये कि हम सव एक ही पिता की सन्तान है। अगर कोई सन्देह या मतभेद हो तो उन्हे प्रेम-पूर्वक सुलझाना चाहिये। सत्संगियो मे पर-स्पर प्रेम तथा एक-दूसरे को समझने की भावना होनी चाहिये। जिनको सन्त-मत का अधिक ज्ञान और जानकारी है, उन्हे चाहिये कि अपने अन्य सत्सगी वन्धुओं की शंकाओ और कठिनाइयो को दूर करने मे सहायक हो। इस मार्ग में नये आनेवालो की सहायता उनके संदेहों और सवालो को हल करने की कोशिश तथा सन्त-मत के विभिन्न अंगो को

समझने मे उनकी मदद की जानी चाहिये । हमें ऐसा व्यवहार करना चाहिये कि वे अपने आप को हमारे बीच मे अजनबी या बेगाना न समझे ।

३०६—सत्य की खोज के लिये आपकी लगन प्रशसनीय है, परन्तु सत्य हमसे दूर नही है । वास्तव मे वह हमारे अन्दर ही है और उसे पाने के लिये हमे सिर्फ इतना ही करना है कि अन्तर की ओर मुख करे तथा उन इन्द्रियों के स्वादो को छोड दे जो कि हमे केवल क्षणिक सुख देकर अन्तहीन दु खों मे फँसा देते है । केवल एक शान्त और निश्चल मन ही सत्य को समझ सकता है ।

आप प्रतिदिन आधा घण्टा या इससे कुछ अधिक समय के लिये ध्यान कर सकते है । किसी भी आरामदेह आसन में वैठ जाये और आँखे बन्द करके अपने ध्यान को दोनो भौहों के बीच में स्थिर करने की कोशिश करे । ऐसा करते समय आप मन ही मन धीरे-धीरे 'राधास्वामी राधास्वामी' दोहरायें और अन्य सभी विचारो को बाहर निकाल दे ।

आपको निरामिष भोजन पर दृढ रहना चाहिये तथा शराब आदि से दूर रहना चाहिये । जब आप छ. महीने तक इस भोजन पर सफलतापूर्वक रह चुके तब नाम के लिये निवेदन करे ।

३०७—आपके दु.ख-भरे पत्र से मालूम होता है कि आपका मन बहुत फैला हुआ और परेशान है । मै यही कहूँगा कि आप मेरे पिछले पत्र को दोबारा पढे और उसमे दी गयी सलाह का पालन करे । जैसा कि आप स्वय स्वीकार करते है, ये कमजोरियाँ है । जैसे-जैसे आप इन पर विजय पाने की कोशिश करेगी, आपको सतगुरु से ऐसा कर सकने के लिये आवश्यक दया-मेहर भी प्राप्त होगी ।

आपके लिये परेशान या हताश होने की कोई वजह नही

है, बल्कि आप फिर से इस दृढ निश्चय के साथ अपने कर्तव्यों को निभाना शुरू कर दे कि आप हरएक कार्य को अपनी पूरी योग्यता के साथ पूरा करेंगी । आपका पहला कर्तव्य एक अच्छी पत्नी बनना तथा अपने पति की अच्छी तरह सेवा करना है । जीवन मे यही आपका व्यवसाय है, तव फिर आप यह चिन्ता क्यों करती है कि आप उनके इस ससार से चले जाने के वाद पढाने का काम या और कौन-सा काम करेगी ? अगर आपको पढ़ाई करने के लिये उनकी इजाजत मिल जाती है तो ठीक है, वरना अपने आपको अपने वर्तमान कार्य मे लगाये रखें, साथ ही अपने आध्यात्मिक कर्तव्यों का पालन करे तथा वाकी सव सतगुरु पर छोड़ दे । "यही बेहतर है अपना कर्तव्य कीजिये, वाकी सव उस मालिक पर छोड़ दीजिये ।" अगर आप स्वयं को इस प्रकार व्यस्त रखती है तो फिर आपको शारीरिक और मानसिक जड़ता का डर क्यों होना चाहिये ?

"सार वचन" मे दिन मे एक बार खाना खाने का जो जिक्र है वह उन लोगो के लिये है जिन्होंने अपने अभ्यास में काफी प्रगति कर ली है तथा जो अपना अधिकाश समय भजन मे लगाना चाहते है, और इसीलिये उन्हे अधिक खाने की इच्छा और जरूरत दोनो ही नही है । आपको जितनी आवश्यकता हो उतना खाना लेना चाहिये और जितनी बार उचित हो उतनी बार खाना चाहिये । परन्तु शर्त यह है कि आप मास आदि न खाये और शराब वगैरह से दूर रहे । खाने की चीजो का सही चुनाव स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत आवश्यक है । इस पर कुछ ध्यान देने के वाद आपको पता लग जायेगा कि कौन-सी चीज आपको माफिक आती है और कौन-सी नही । यह सही नही है कि हिन्दू लोग अमेरिकनो के बनिस्बत कम खाने और कम सोने मे गुजारा कर लेते है ।

कितना खाना और कितना सोना, यह एक पूर्णतया व्यक्तिगत बात है।

प्रेम तो स्वयं एक वरदान है जो लम्बे समय तक लगन और भक्ति के साथ किये गये लगातार रूहानी अभ्यास के बाद ही प्राप्त होता है। शुरू-शुरू में अभ्यास के समय अक्सर नीद बाधा डालती है, परन्तु रोज के नियमित अभ्यास से धीरे-धीरे उस पर विजय प्राप्त हो जाती है।

३०८—मै आपके भक्ति-भाव की कदर करता हूँ। अगर आप इसी भक्ति और विश्वास के साथ भजन-सुमिरन करते जायेगे तो यह आपके समस्त गलत और दूषित विचारों को दूर करके आपके जीवन का सम्पूर्ण दृष्टिकोण ही बदल देगा। यह आपको अपने सासारिक कर्तव्यो को प्रसन्नतापूर्वक निभाने मे भी सहायक होगा।

३०९—यह सच है कि नाम-दान का असली महत्व तथा उसकी कदर केवल धीरे-धीरे ही मालूम होती है। जैसे-जैसे हम प्रगति करते है, हमें पता चलता है कि नाम मिलने का हमारे लिये इस जीवन मे तथा इसके बाद भी क्या अर्थ है। तो भी ऐसा लगता है कि आपने राधास्वामी मत की विधि को ठीक तरह से नही समझा है, जो कि आपको नाम-दान के समय अवश्य समझाई गई होगी। हमें ये तीन बाते एक के बाद एक करना है—

(१) ध्यान —इसका अर्थ है किसी वस्तु का अन्तर में चिन्तन करना, यह चिन्तन सतगुरु के स्वरूप का होना चाहिये। सतगुरु के व्यक्तिगत सम्पर्क से यह क्रिया आसान हो जाती है। परन्तु जो लोग दूर देशो में है, उन्हे चाहिये कि अपने ध्यान को आँखो के केन्द्र पर रखते हुए प्रेम और भक्ति के साथ अपने सतगुरु के बारे में केवल विचार करें। यह करीब पन्द्रह मिनट के लिये किया जा सकता है। फिर सुमिरन शुरू करना चाहिये।

(२) सुमिरन.—जैसा कि शायद आप जानते ही हैं, यह पाँच पवित्र नामों का जाप है। इसे भी मन की तवज्जह को दोनो भौहों के बीच मे रख कर करना चाहिये। जाप या सुमिरन मन को करना है। सुमिरन के समय आपकी पूरी तवज्जह एकाग्रता के केन्द्र की ओर होनी चाहिये और मन में किसी भी प्रकार के विचारो को नही आने देना चाहिये। मन को सुमिरन मे लगाना है और जब मन सुमिरन में लगा रहेगा तो फिर उसमे और विचारो के लिये स्थान नही रहेगा। सुमिरन दो घण्टे तक करना है। परन्तु हो सकता है कि शुरू शुरू में सत्सगी के लिये पूरे दो घण्टे देना सभव न हो, उस हालत मे वह एक घण्टे या इससे कुछ कम से शुरु कर सकता है, परन्तु उसे धीरे धीरे यह वक्त बढाते जाना चाहिये ताकि वह एक ही बैठक मे प्रतिदिन दो घण्टे तक सुमिरन कर सके।

(३) इसके बाद अभ्यासी को तुरन्त आसन बदल कर शब्द सुनने के आसन मे बैठ जाना चाहिये। शब्द दाहिने कान से या बीच मे से सुनना चाहिये, बाँई ओर से कभी भी नही सुनना चाहिये। अगर बाँई ओर से कुछ भी सुनाई दे तो उसकी ओर कोई ध्यान न दे। हो सकता है कि शब्द तुरन्त सुनाई देने लगे या कुछ समय के बाद ही कुछ सुनायी दे। परन्तु यह अभ्यास रोज करते रहना चाहिये, चाहे शब्द सुनायी दे या न दे। इसे आधे घण्टे तक करना चाहिये।

मन मे ऐसा कोई अन्दाज नही लगाना चाहिये कि कोई चीज ऊपर चढ़ रही है। सुमिरन के फलस्वरूप कुछ समय बाद चेतनता आँखो के केन्द्र मे एकत्रित होने लगती है, परन्तु इस प्रकार के विचार या ऐसी कोई कल्पना नहीं करना चाहिये कि चेतनता ऊपर जा रही है या इस पैर अथवा उस पैर में से कोई चीज निकल रही है। अपनी एकाग्रता को

इस प्रकार बिखरने न दे। सिमटाव को यह न समझें कि काल की शक्ति शरीर को छोड़ कर जा रही है, यह तो केवल चेतनता का सिमटाव है। यह कुछ समय बाद अपने आप होता है और आपको इसकी ओर कोई ध्यान नही देना चाहिये।

नाम-दान कितनी बार होना चाहिये इसके बारे में कहना है कि आपको सब-कुछ मिल गया है। सरदार बहादुर महाराज जी ने नाम-दान को दो हिस्सों मे बाँट दिया था। वे पहले सुमिरन देते थे और जब शिष्य सुमिरन मे कुछ तरक्की कर लेता था तो शब्द का भेद दिया जाता था। इस बाद वाली विधि को दूसरा नाम-दान कहा जाता था। परन्तु अब हम दोनों तरीके एक ही बार बतला देते है, जैसा कि पहले किया जाता था।

३१०—मुझे खुशी है कि आपने नाम-दान के समय वताये गये अभ्यास के तरीके को अच्छी तरह से समझ लिया है और अब इस बारे मे कोई कठिनाई महसूस नही कर रहे है।

सतगुरु से भेट करने की आपकी तीव्र इच्छा बहुत अच्छी है, क्योकि सतगुरु से व्यक्तिगत सम्पर्क शिष्यत्व का सार है। लेकिन अभी की परिस्थितियो में यह सम्भव प्रतीत नही होता। सत्संगी को अपने रोज के पारिवारिक और सासारिक कर्तव्यो का भी पालन करना है और साथ ही विश्वास और भक्ति की भावना के साथ भजन-सुमिरन मे भी पूरा समय देना है, यही अन्त मे प्रेम की ओर ले जाता है। इसके अतिरिक्त, सतगुरु भी आपके अन्दर है। अभ्यास के समय नौ द्वारों को खाली करके और अपनी सम्पूर्ण चेतनता को तीसरे तिल मे एकाग्र करके तथा शब्द से जुड़ कर आप ऊपर जा कर सतगुरु के दर्शन कर सकते है। अपने उत्साह

की सम्पूर्ण शक्ति को अन्तर मे मोड़िये और मन को ऊपर ले जाने मे उसका उपयोग कीजिये ।

हम इस शरीर मे अपने कुछ ख़ास कर्मो की वजह से आये है । रूहानी अभ्यास के अलावा शरीर में आने का एक उद्देश्य यह भी है कि हम अपने सासारिक कर्तव्यों को पूरा करके उन कर्मो को चुका दे । स्वयं को सतगुरु की मौज में छोडकर हम अपने प्रारब्ध कर्मो को आसानी से चुका सकेंगे तथा एक ऐसे मार्ग पर चलने लगेंगे जो हमे अन्त मे कर्मो के इस क्रूर जजाल से मुक्त कर देगा (जो कि हमारे ही पिछले कर्मो और विचारो के फल है) और वापस अपने परमपिता के धाम पहुँचा देगा ।

३११—मै बहुत खुश हूँ कि आप अन्दर जाने के लिये इतनी उत्सुक और दृढ-सकल्प हैं तथा अपनी सब भूलो और गलतियो को सुधारना चाहती है ताकि आप अन्दर जाने मे जल्दी से जल्दी सफल हो सके । यह सच है कि धीरे-धीरे तथा सरलता और स्थिरता से आगे बढ़ना ही सही तरीका है और जल्दबाजी करना शैतान का काम है, क्योकि इसमें मन का दख़ल आ जाता है । यह मन ही है जो हमे जल्दी के लिये उकसाता है और जहाँ तक हम मन पर भरोसा कर रहे है——चाहे वह अच्छी दिशाओं मे ही क्यो न हो——हम किसी हद तक अपनी आत्मा की स्वतन्त्रता को खो रहे है । एक सच्चे सत्संगी को पूर्णतया तथा बिना किसी शर्त के अपने आप को सतगुरु की शरण में सौप देना चाहिये और सब कुछ उसकी मौज पर छोड़ देना चाहिये । सत्संगी की गति को बढ़ाना तथा उसके प्रयत्नो का फल देना सतगुरु के हाथ मे है । परन्तु इसका यह मतलब नही कि सत्संगी आलसी हो जाये; उसे तो चाहिये कि अपने पूरे सामर्थ्य के साथ दृढ़ता-पूर्वक सतगुरु के आदेशो का पालन करे और फिर सबकुछ उन पर छोड़ दे ।

आपकी यह आकांक्षा कि आप एक बार में छः घण्टे तक अभ्यास में बैठें प्रशंसनीय है, बशर्ते कि आपको इससे बहुत थकान न हो और आप अपने अन्य कर्तव्यो के प्रति लापरवाह न हो । अगर आप चाहें तो इस समय को दो भागों में बाँट सकती हैं । अन्तर में होनेवाली चिन्ता और बेचैनी को नियत्रण मे रखकर उनका रुख अभ्यास की ओर करे ताकि आपको भजन-सुमिरन मे अधिक रस आये ।

जहाँ तक आपके पति को नाम मिलने का प्रश्न है, सबसे अच्छा तरीका यह है कि आप इसके लिये जोर न दें, बल्कि अपने जीवन में ऐसे अच्छे परिवर्तन लायें, भाव के साथ उनकी सेवा करें तथा प्रेम-पूर्वक भजन-सुमिरन करती रहे, ताकि इस सबका उन पर अपने आप अच्छा प्रभाव पडे और उनका हृदय-परिवर्तन हो जाये ।

यह जरूरी नही कि सत्संगी सब-कुछ छोड़ कर सन्यासी बन जाय; हालाँकि यह मानना पड़ेगा कि सिनेमा और टेलि-विजन ध्यान को फैलाते हैं । दूध, दूध से बनी चीजे, मक्खन, पनीर आदि का प्रयोग किया जा सकता है, ये रूहानी तरक्की मे रुकावट नही डालते । सबसे जरूरी बात तो है गपशप करने की आदत को वश में करना, क्योंकि गपशप से अधिक और कोई भी बात ध्यान को इतना नही फैलाती और इतने अधिक अनावश्यक तथा हानिकारक ख़याल मन मे नही लाती । जैसे-जैसे आप अपने विचारों और कार्यो पर निग-रानी रखना शुरू करेंगी, आप खुद महसूस करने लगेंगी कि क्या जरूरी है और किस हद तक जरूरी है, और तब बेशक उसी के अनुसार कार्य करेंगी । जब कोई सच्ची लगन और ईमानदारी से शुरूआत करता है, तो उसे सब ओर से मदद मिलती है ।

नाम लेने के बाद आपको जो अनुभव हुए हैं, उनके

विषय मे मैं कह सकता हूँ कि वे सभी सत्सगियों को नही होते। लेकिन वारीक धाराओं का ऊपर जाने का अनुभव वहुत से अभ्यासियों को होता है। कभी-कभी कुछ सत्सगियो को अभ्यास के समय पाँच पवित्र नामो का सुमिरन भी सुनाई देता है। ये सभी, कुछ हद तक, पिछले अनुभवो या कर्मो की पुनरावृत्ति है, जिन्हें सस्कार कहते है। ये सब अच्छे है और इसमे चिन्ता करने की कोई बात नही है। परन्तु जब तनाव या खिचाव वहुत ज्यादा हो, जैसा कि आप कहती है, तो आप कभी-कभी लेट कर या सहारा लेकर कुछ आराम कर सकती है, और थोडे समय वाद फिर से अभ्यास शुरू कर सकती है। इसमे कोई हरज नही है।

जहाँ तक शब्द का सवाल है, घण्टियों की झनकार चाहे वह दूर से आती हुई मालूम दे रही हो, अच्छी है। लेकिन बाँयी ओर से किसी आवाज को नही सुनना चाहिये। जो भी शव्द दाहिने कान या वीच मे से आता हुआ प्रतीत हो वह ठीक है। बड़े घण्टे अथवा गिरजे के वडे घण्टे का शव्द सवसे अच्छा है, पर वह इतनी आसानी से नही आता। घण्टियों की आवाज को ध्यान से सुनती रहें और अगर बड़े घण्टे का शव्द आये तो उसकी गहरी, मीठी, गूँजती धुन पर ध्यान जमाये।

नीली, सफेद या और किसी भी रग की ज्योति आँखों के सामने आये तो आने दें, पर उन पर कोई ध्यान न दे। एक उदासीन दर्शक वनी रहे, यह अधिक सहायतापूर्ण होगा।

ध्यान के केन्द्र अर्थात तीसरे तिल को ढूंढने की कोशिश न करे, क्योंकि ऐसा करना समय और शक्ति वर्बाद करना है। आँखो को धीमे से वन्द कर ले और मन की तवज्जह के द्वारा सुमिरन करें, केन्द्र अपने आप मिल जायेगा। ध्यान को दोनों भौहों के वीच के अँधेरे मे रखें। जब एकाग्रता

पूर्ण हो जायेगी तब शब्द स्वयं ही सुरत को अन्दर और ऊपर खीच लेगा।

शरीर मे सरसराहट, झनझनी, कडापन या ऐंठन आदि इस अभ्यास मे होते है। इन बातों से चिन्तित या परेशान न हो। अभ्यास से उठने से पहले अपने शरीर को ऊपर से नीचे की ओर धीरे से सहलाये, इससे सब ठीक हो जायेगा।

हृदय की धड़कन, साँस की क्रिया और शरीर की अन्य क्रियाएँ अपने आप कार्य करने वाले केन्द्रों तथा प्राणों के अधीन हैं। हम उनमे दखल नही देते। जब इस अभ्यास में बदन अकड़ जाता या सुन्न हो जाता है तो भी इन क्रियाओं मे कोई बाधा नही आती। यह अकड़न या सुन्न होने की हालत ऊपर की ओर बढकर कन्धों तक आ सकती है, परन्तु तब भी कोई नुकसान नही होगा।

जब सुरत शरीर से सिमटेगी तो आपको एक स्थिर ज्योति दिखाई देगी और शब्द भी सुनाई देगा। किसी भी बात की पहले से आशा न बाँधे। किसी भी बात से नही डरे। जब भी आपको कोई परेशानी हो या डर लगे तो अपने खयाल को प्रेमपूर्वक सतगुरु की ओर मोडे और पाँच नाम का सुमिरन करे।

आप अपने कमरे मे फोटो रख सकती है, लेकिन उसे कभी-कभी, आते-जाते देखने के लिये रखना चाहिये। फोटो का उपयोग ध्यान के लिये नही करना चाहिये।

३१२—आपके पत्र के लिये धन्यवाद। आपने लिखा है कि आपको शब्द की दीक्षा मिल गई है। यह सचमुच एक बहुत बडी दात और नियामत है। पर कौन कह सकता है कि वह इस नियामत के लायक है? यह परमपिता की ओर से एक दात है, सन्त तो केवल उसके बाँटनेवाले हैं। अब आपको इस दीक्षा का पूरा-पूरा लाभ लेना चाहिये और

हर रोज नियमपूर्वक भजन अथवा शव्द सुनने का अभ्यास करना चाहिये। परन्तु यह अभ्यास सुमिरन के अभ्यास के वाद करना चाहिये।

जहाँ तक शव्द सुनने के आसन का सवाल है, यह वेशक कुछ मुश्किल है, परन्तु वहुत लाभकारी भी है। इसकी धीरे-धीरे आदत डालना चाहिये। जव तक आपको इस आसन में वैठने का अभ्यास न हो जाये, आप कुर्सी पर वैठ कर भजन कर सकते है अथवा किसी कुर्सी या पलंग की ओर मुँह करके जमीन या गद्दे पर पलथी लगा कर वैठ सकते है। इस प्रकार वैठ कर अपनी कुहनियों को कुर्सी या पलंग पर रख कर, अँगूठों को कानो में और हाथों को हलके से मुँह पर रख कर शव्द को सुने। इतना ध्यान रखें कि आँखों पर दवाव न पडे। शव्द के लिये वैठने का यह तरीका तव तक जारी रखे, जव तव कि आप पहले वताये गये आसन में वैठने के अभ्यस्त नही हो जाते। अथवा तव तक के लिये आप किसी भी आरामदेह आसन को अपना सकते हैं जिसमें कि आप कम से कम आधे घण्टे तक वैठ सकते हों।

३१३—इसमें कोई शक नहीं कि आपको अपने सतगुरु के इस स्थूल संसार से चले जाने से वहुत शोक पहुँचा होगा। सभी को ऐसा ही गहरा दुःख हुआ है। जिन्होने अन्तर में उनके दर्शन किये है या अन्तर मे उन्हें पा लिया है, वे सच-मुच में वड़े भाग्यशाली है, क्योंकि वे जानते है कि सतगुरु दूर नही हैं। यह अच्छा है कि उनके जो पत्र आपके पास है उनकी आप कद्र करते है। वे वड़े अनमोल है और प्रेम तथा प्रतीति के साथ उन्हे वार-वार पढ़ना भी सत्संग है। मैं आपको सलाह दूँगा कि अपने सतगुरु के पत्रों को पढने के तुरन्त वाद ही अभ्यास में वैठ जाया करे। इससे आपको अभ्यास में सहायता मिलेगी। यह सच है कि यह मार्ग

अभ्यास और रहनी दोनों का ही है। अगर हम सच्ची लगन के साथ अपने सतगुरु के आदेशों पर चलेगे तो हमें किसी बात का पछतावा नही होगा। आप भाग्यशाली है कि आप कभी-कभी उनकी झलक देख लेते है और शब्द भी सुन रहे है। परन्तु अगर आप अपने अभ्यास को पूरा समय देंगे तो आपकी और भी उन्नति होगी। अपने सतगुरु के प्रति सही प्रकार से आभार-प्रदर्शन करने का यही तरीका है।

३१४--मै आपके उच्च गुणों की तथा राधास्वामी मार्ग के अनुसार रूहानी तरक्की के लिये कार्य करने की लगन की कद्र करता हूँ। इन उत्तम पुस्तकों के अध्ययन से आपको पता लग गया होगा कि परमात्मा का साक्षात्कार अन्तर में ही किया जा सकता है, बाहर नही। रास्ता और मंजिल दोनों ही हमारे अन्दर है। हमें केवल अन्दर जाकर अपनी यात्रा शुरू करनी है, और अगर हम आदेशो के अनुसार परिश्रम करेंगे तो कोई वजह नही कि हम अपनी मंजिल पर न पहुँच सकें। आप शाकाहारी है और आपके सस्कार अच्छे है, इससे आपका कार्य और भी आसान होगा। जैसा कि आपको बता दिया गया होगा, इस मार्ग पर चलने के लिये मास, मांस से बनी वस्तुएँ, अण्डे, शराब आदि से दृढतापूर्वक दूर रहना अत्यन्त आवश्यक है।

मै यह भी बता देना चाहता हूँ कि हम सम्मोहन-विद्या, सम्मोहन के द्वारा इलाज, परलोक-विद्या, आत्माओ को बुलाने आदि के पक्ष में नही है, क्योकि ये न केवल खतरनाक है, बल्कि मन की शक्ति को बिखेरती या फैलाती भी है। हमें अपनी सम्पूर्ण शक्ति तथा सकल्प को एकत्रित करके सन्त-मार्ग पर चलने में लगाना चाहिये।

३१५--मै आपके प्रश्न की सराहना करता हूँ, क्योंकि इससे पता लगता है कि आप भोजन के बारे मे अधिक से

अधिक सही मार्ग को अपनाने के लिये कितने उत्सुक हैं। अच्छी रहनी अच्छे अभ्यास का आधार है।

आपके देश की परिस्थितियाँ यहाँ की परिस्थितियों से भिन्न हैं, फिर भी जहाँ तक सम्भव हो सत्संगियों को अपने बच्चो को (चाहे उन्हें नाम न भी मिला हो) मांस, अण्डे आदि से दूर रखना चाहिये; परन्तु फिर भी उन पर कोई जबरदस्ती नही करना चाहिये; वल्कि उनको नरमी से मनाना और समझाना चाहिये कि यह मानसिक और आत्मिक दृष्टि से अच्छा आहार नही है और सतगुरु नही चाहते कि हम किसी जीव को मारे या हमारी खुराक के लिये उसे मारा जाय। उन्हें वताइये कि इसीलिये आप (उनके माता-पिता) मछली, मांस, अण्डे आदि नही खाते और शराव भी नही पीते। उन्हे समझाइये कि अगर आप इन चीजों को अच्छी और उचित समझते तो अवश्य ग्रहण करते, परन्तु क्योकि आपका अनुभव है कि ये वस्तुएँ अच्छी नही है, इसीलिये इन्हें अपने वच्चो को भी नही देना चाहते। हिन्दुस्तान में सत्संगियों के वच्चो को इन चीजो को खाने के लिये साफ़ मना कर दिया जाता है और वे इसे आसानी से समझ जाते हैं।

अगर शाकाहारी भोजन के दृढतापूर्वक पालन से वच्चों को ऐसा लगे कि उनके साथी उन्हें अपने से अलग या अजीव समझते है तथा उन्हे इस प्रकार की कोई और कठिनाइयाँ महसूस होती है तो कृपा कर उनसे कहे कि कम से कम मांस और मछली से तो दूर रहे। इससे उनका वोझ वहुत भारी नही होगा तथा उन्हे एक दिन अच्छे सत्सगी वनने मे मदद मिलेगी। कभी कभी समझौता करना पड़ता है, पर यह केवल वच्चों के लिये तथा उन लोगों के लिये ही है जिन्हें अभी नाम-दान के लिये स्वीकार नहीं किया गया है।

३१६—सतगुरु के लिये प्रेम अन्तर मे उनके दर्शन करने

से ही जाग्रत होता है। केवल तभी सच्चे प्रेम का भाव उत्पन्न होता है। शुरू-शुरू मे इसका थोडा-वहुत अभ्यास करना पड़ता है। अगर हम सच्चे मन से सतगुरु की इच्छा और हुक्म का पालन करें तथा उनके आदेशों पर चले तो विश्वास और प्रेम का भाव उत्पन्न होता है जिससे अन्तर में दर्शन भी होते है, और दर्शन से यह प्रेम और वढ़ता तथा पक्का होता है।

३१७—मैं तो यही कहूँगा कि अपने सिद्धान्तों अथवा सन्त-मत के आदर्शो मे ढील किये बगैर या उन्हे कुर्बान किये बगैर, अनासक्त भाव से आप जो कुछ भी चाहे कर सकते हैं। हमे मनुष्य-जन्म का पूरा फायदा उठाना चाहिये, तथा नाम-भक्ति और परमात्मा का साक्षात्कार करके इस अमूल्य अवसर का सदुपयोग करना चाहिये। सृष्टि के सव प्राणियों मे मनुष्य का चोला सर्वश्रेष्ठ है और केवल इसी चोले मे हम गुरु-भक्ति और नाम-भक्ति करके आवा-गमन के चक्र से मुक्त हो सकते है। जहाँ तक सम्भव हो ज्यादा से ज्यादा समय सुमिरन और भजन में दे और अपने कारोबार को अनासक्त भाव से, आजीविका कमाने का एक साधन समझकर, करते रहें।

३१८—मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आप अपने पूरे सामर्थ्य से मेरे आदेशों का पालन कर रहे है और आपको इससे फायदा भी हुआ है।

आपको किसी प्रकार की चिन्ता या भय नही करना चाहिये। भय और चिन्ता का स्थान विश्वास और श्रद्धा को लेने दीजिये और इस उद्देश्य को प्राप्त करने का सबसे अच्छा उपाय है आदेशो का पूर्णतया पालन करना तथा अभ्यास के लिये प्रतिदिन ढाई घण्टे का समय देना (अगर आवश्यक हो तो यह समय दो वार में भी पूरा कर सकते है)।

सुमिरन करते समय आँखे वन्द करके अपने ख़याल को आँखों के केन्द्र (दोनों भौहो के वीच) में स्थिर रखने की कोशिश करें। अगर ख़याल बाहर जाये तो उसे वापस केन्द्र पर लायें और अपने को याद दिलाये कि सुमिरन करते समय आपको अन्य किसी भी वात के वारे में नही सोचना है। जैसे जैसे आप आँखों के केन्द्र के समीप आयेंगे, आपमें शक्ति और विश्वास की भावना अपने आप आने लगेगी।

वुरे और डरावने स्वप्न तथा इस प्रकार की परेशानियाँ दबी हुई वृत्तियो की शक्ति क्षीण हो जाने पर स्वयं दूर हो जायेगी। ये दबी हुई इच्छाएँ, भावनाएँ और आशंकाएँ उभर कर आ रही है। इसका सही उपाय यह है कि सतगुरु में विश्वास और भरोसा रखते हुए इनका साहस पूर्वक सामना किया जाय तथा यह अच्छी तरह समझ लिया जाय कि अव हमारा मार्ग इनसे विलकुल अलग है। विस्तर में जाने से पहले कुछ समय सुमिरन करे तथा विस्तर मे लेटे लेटे भी सुमिरन करते रहे ताकि आपके विचारों की दिशा वदल जाये। जब भी रात में आपको वेचैनी महसूस हो या वुरे स्वप्न आये तो पाँच नामो का जाप और सतगुरु का ध्यान करे।

दूसरे सत्सगियों की सफलता या उन्नति से आपको जरा भी परेशान नही होना-चाहिये। यह अच्छा है कि आप इससे परेशान नही होते। सबको अपने-अपने कर्म भुगतने है तथा जब समय आता है हमें अपनी कमाई का फल मिलता है। डरे नही तथा प्रेम-प्रतीति के साथ अपने अभ्यास मे जुटे रहें और जब भी आवश्यक समझे मुझे लिखने में सकोच न करें।

३१९——मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि आप आदेशो का पूरी लगन के साथ पालन कर रहे है और इसके

फलस्वरूप आप आन्तरिक शान्ति और स्वतन्त्रता का अनुभव कर रहे है। सुरत-शब्द-योग का अभ्यास—अर्थात मन और आत्मा को शब्द के साथ जोड़ने का अभ्यास—आपके ध्यान को अन्तर में शाश्वत सत्य की ओर मोड़ता है और आपको संसार तथा उसकी निरर्थक बातो के प्रति उदासीन बनाता है। खास महत्व तो इस बात का है कि सांसारिक चीजो का हम पर क्या असर होता है और हम उन्हे क्या महत्व देते है। सन्त-मत आपको सभी मानसिक गुत्थियो को सुलझाने तथा अपने अहं-भाव को नियत्रण में रखने में मदद देता है।

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आपके मन पर पागल हो जाने का जो डर छा गया था वह अब दूर हो गया है, गले के आस-पास होनेवाली दम घुटने जैसी तकलीफ़ भी मिट गयी है और अब आपको यह पक्का भरोसा भी हो गया है कि आप अकेले नही है। एक श्रद्धालु और प्रेमी सत्सगी कभी भी अकेला नही होता, क्योकि सतगुरु अपने हरएक शिष्य के अंग-संग है और जब सत्संगी दृढतापूर्वक अपने सत-गुरु का आसरा ले लेता है तो वह सारे संसार का सामना कर सकता है। अगर नियमित भजन-सुमिरन के द्वारा शिष्य अपनी सुरत को तीसरे तिल मे समेट सके तो वह स्वयं देख सकेगा कि किस प्रकार सतगुरु सहायता और सँभाल कर रहे है।

हाँ, नाम और सतगुरु मे विश्वास होने पर कोई भय नही रहता। अपने भजन-सुमिरन मे नियमित रहें और जब भी स्वयं को कमजोर या परेशान महसूस करे अन्तर में अपने आपको सतगुरु और शब्द की ओर मोड़े।

३२०—अपने महान सतगुरु बाबा सावनसिह जी से नाम-दान प्राप्त किये हुए सत्संगियों के समाचार पाना हमेशा खुशी की बात है और मुझे उम्मीद है कि आप ऐसे महान

सन्त से प्राप्त रूहानी दात का पूरा लाभ ले रहे है। इस मार्ग पर चलना ही जीवन का सबसे महत्वपूर्ण काम तथा मनुष्य-जन्म का असली उद्देश्य है। बाकी सब बाते गौण है।

कला भी मन को ऊँचा उठाती तथा दृष्टिकोण को विकसित करती है, परन्तु इसे हमारे रूहानी ध्येय की प्राप्ति में बाधक नही बनना चाहिये। कभी कभी कलाकार तथा प्रतिभाशाली व्यक्ति दृष्टा भी होते है और वे वस्तुओ को उनके सही रूप में देखते है। साधारण कलाकार इसे भाषा चित्र या मूर्ति के रूप में प्रकट करने की कोशिश करता है। परन्तु जिस कलाकार को नाम मिल गया है, उसे चाहिये कि अपनी इस शक्ति को ऊँचे और श्रेष्ठ आध्यात्मिक अनुभवो की प्राप्ति का आधार बनाये और इस प्रकार सम्पूर्ण रचना के मूल तत्व अथवा हकीकत को प्राप्त कर ले।

३२१—आध्यात्मिक मार्ग पर चलने तथा आध्यात्मिक जीवन बिताने की आपकी इच्छा की मैं प्रशंसा करता हूँ। परन्तु मुझे ऐसा लगता है कि जिस प्रकार से आप इस मार्ग पर चलना चाहते है उसमे कुछ कठिनाइयाँ है। आप यहाँ आकर अनिश्चित समय के लिये डेरे में रहने का इरादा रखते है। अगर आपको सुविधा हो तो कुछ दिनों के लिये आप यहाँ आ सकते है, परन्तु आज की परिस्थितियों में यहाँ आकर स्थायी रूप से अथवा अनिश्चित काल के लिये आपके रहने का सवाल ही नही उठता। स्थायी रूप से यहाँ आकर रहने में शायद सरकार की ओर से भी आपको कुछ कठिनाइयाँ होगी।

सबसे पहले मैं जानना चाहूँगा कि नामदान के समय जो आपको सुमिरन का तरीका बताया गया था उसके द्वारा आपने सुरत को अन्तर में समेटने में कितनी प्रगति की है।

ऐसा मालूम होता है कि कला के लिये आपका प्रेम

यद्यपि आपको रूहानी बातों की ओर प्रेरित करता है, परन्तु आपको अन्दर ले जाने के बदले बाहर की ओर अधिक ले जाता है। चित्रकारी तथा अन्य कलाएँ काफी हद तक आत्माभिव्यक्ति अथवा अपने आपको प्रकट करने की क्रियाएँ है और वे बेशक रुचिकर तथा समाज के लिये उपयोगी है; परन्तु जैसा कि आप जानते है, हमारा उद्देश्य तो अन्दर जाना है। जो शक्ति हम अपने आपको बाहर व्यक्त करने में खर्च करते है, हमें चाहिये कि उसका उपयोग अन्दर जाने में तथा उस केन्द्र पर पहुँचने में करें जहाँ शब्द या दिव्य-धुन हमें अपना लेती है। इस प्रकार उस शक्ति को अपनी आन्तरिक रूहानी यात्रा शुरू करने में लगायें। हमारा यह मतलब नही कि सांसारिक क्षेत्र में कोमल प्रवृत्तियों का विकास न हो, परन्तु आन्तरिक यात्रा लम्बी और कठिन है और उसे केवल एक जीवन में ही तय कर लेना मुश्किल है। परन्तु जब कोई इस मार्ग पर चलने लगता है अर्थात जब वह अन्दर की यात्रा शुरू कर देता है, तो तरक्की होती जाती है। इसी बात को ध्यान में रख कर हम बहुत अधिक बाहरमुखी कारोबार को बढ़ावा नही देते, खास कर उन लोगों के लिये जो लगभग स्थायी रूप से डेरे में रहते है।

आपको शायद यह मालूम ही होगा कि डेरे के निवासी सुबह तीन बजे उठते है और अपना दिन शुरू करने से पहले, करीब सुबह छ. बजे तक भजन करते है। अतएव यह केवल शारीरिक परिश्रम से पूर्ण जिन्दगी ही नही है, बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक दृष्टि से भी परिश्रम-पूर्ण जीवन है। मै आपको यही सलाह दूँगा कि आप इस मार्ग पर चलने की कोशिश करें अर्थात यहाँ आने से पहले अपने ही देश मे रहते हुए दृढतापूर्वक अभ्यास के इस कार्यक्रम पर चले, ताकि आप यह निश्चय कर सकें कि इस प्रकार का जीवन आपको कहाँ तक माफिक आ सकेगा। अगर आपका मन रूहानी अभ्यास

में लगा हुआ है तो आप कहीं भी रहें, एक ही बात है। दूरी से कोई फ़र्क नही पडता। इस बीच मे आप अपना कुछ समय——बहुत अधिक नही——अपने चित्रकारी के व्यवसाय मे लगाये, जिसकी अमेरिका में ज्यादा अच्छी कद्र होगी।

डेरे मे रहने के लिये यह नियम है कि हरएक व्यक्ति अपना खर्च का भार खुद ही उठाये। सेक्रेटरी से लेकर नीचे तक हमारे सब कार्यकर्ता अवैतनिक है अर्थात वे बिना किसी वेतन के काम करते है तथा अपने रहने तथा भोजन का प्रबन्ध खुद करते है।

३२२——मैं आपको एक बात जोर देकर बताना चाहूँगा कि सतगुरु व्यक्ति नही बल्कि एक शक्ति है जो हमारे कल्याण के लिये अवतार धारण करती है। मनुष्य का शिक्षक केवल मनुष्य ही हो सकता है और इसीलिये उस आन्तरिक अनन्त शक्ति को शरीर धारण करने की आवश्यकता पड़ती है। स्थूल शरीर नष्ट हो जाता है, परन्तु सतगुरु की कभी मृत्यु नही होती और आज भी अगर आप नौ द्वार खाली करके सूक्ष्म मण्डल मे जायेंगे तो अपने सतगुरु (सरदार बहादुर जगतसिह जी) से मिल सकेंगे। चाहे हम कही भी हों, सत-गुरु हमेशा हमारे अन्तर में मौजूद है, परन्तु हम अन्दर नहीं जाते इसलिये हम इस बात को नही समझते और न ही उन्हें देख पाते है। जब हम अन्दर जायेंगे और उनसे मिलेंगे तभी हमे उनकी महानता, उदारता तथा दया-मेहर का पता चलेगा और वे हमारे लिये क्या-क्या कर रहे है इसका अनुभव होगा।

जहाँ तक आपका सम्बन्ध है, सरदार बहादुर जगतसिंह जी ने आपको नाम दिया है और वे ही आपके गुरु है। आध्यात्मिक प्रगति के लिये यह बहुत जरूरी है कि आप नाम-दान के समय उनके बताये गये मार्ग पर लगन और

विश्वास के साथ चलते रहें। आपको सुमिरन के द्वारा शरीर को खाली करके ऊपर जाकर उनके दर्शन करने चाहिये, फिर वे आपको मंजिल दर मजिल ऊपर ले जायेंगे।

३२३—जहाँ तक जीव-रहित अण्डों का सवाल है, उन्हें दूध की श्रेणी मे नही रखा जा सकता। दूध मे आप चाहे कुछ भी मिला दे, परन्तु दूध से उस प्राणी की उत्पत्ति नही होती जिससे कि हमें दूध मिला है, जब कि अण्डों में, चाहे वे जीव-रहित हो या सजीव, डिंब या बीज होता है। जीव-रहित और सजीव दोनो ही प्रकार के अण्डे पाशविक अथवा तामसिक प्रवृत्तियो को उत्तेजित करते है और इस प्रकार मन की शान्ति और स्थिरता में बाधक होते हैं। इसके अति-रिक्त, आप अण्डो के बारे में जो कहते है अगर वह सही भी हो तो भी हम इस सिद्धान्त का सख्ती के साथ पालन करने पर जोर देते हैं ताकि किसी प्रकार की ढील या नरमी दुरुपयोग का कारण न बन जाये तथा इस प्रकार पूरा उद्देश्य ही व्यर्थ न हो जाये।

आपने सत्संगी तथा उसके सतगुरु के बारे में पूछा है, सो सतगुरु का असली स्वरूप शब्द है। सन्त मनुष्य को रूहानी शिक्षा और मार्ग-दर्शन देने के लिये शब्द में से आते है और अन्त में वापिस शब्द में ही समा जाते हैं। इसलिये इस बात का कोई खास महत्व नही कि दुबारा जन्म लेने पर आप उसी सतगुरु से मिलते है या नही। एक प्रकार से सन्त सब एक ही है। अगर अपना उद्देश्य पूरा करने के पहले ही सत्सगी चल बसे तो फिर उसका दुबारा जन्म होगा, जिसमें उसे आत्मिक-प्रगति के अधिक अवसर मिलेंगे तथा वह उस समय के देहधारी सतगुरु के पास जरूर खिंचा आयेगा। तब वह अपनी आत्मिक प्रगति वहाँ से शुरू करेगा जहाँ उसने अपने पिछले जन्म में छोडा था। यह सुनिश्चित है।

सन्त या सतगुरु से भेट भाग्य मे हो तो ही होती है। पर एक बार सन्त-सतगुरु के सम्पर्क में आने या उनकी शरण प्राप्त होने पर आपकी प्रगति उनकी दया-मेहर तथा आपके अपने प्रयास पर निर्भर होती है। सतगुरु द्वारा नाम-दान देने के बाद सफलता-प्राप्ति मे आपकी मेहनत का भी हाथ होता है। सतगुरु की कृपा से नाम मिलता है, और परिश्रम सम्भव होता है, तथा परिश्रम से आत्मिक-प्रगति के लिये और अधिक दया-मेहर तथा मदद मिलती है।

३२४—जहाँ तक बच्चों का सवाल है, आप कभी-कभी उनसे बेशक उस ताकत के बारे में बात कर सकते है जो कि सबके अन्दर व्याप्त है। उन्हे गिरजे और इतवार के धार्मिक स्कूल मे जाने दीजिये। उन्हे समझाइये कि परमात्मा का राज हमारे अन्तर मे है और जो लोग रूहानी अभ्यास करते है वे गिरजे के घण्टों को अन्तर में सुनते है। परन्तु उन्हे मजबूर नही करना चाहिये। आपके अपने जीवन का उन पर जरूर असर पड़ेगा।

३२५—जैसा कि आप जानते है ये पाँच विकार बहुत बड़ी बाधाये है और जब कोई इस मार्ग पर चलना शुरू करता है तो ये सक्रिय हो जाते है। भजन-सुमिरन, सत्सग तथा शील, क्षमा आदि नेक भावनाओं के साथ इनका सामना करना चाहिये।

आम तौर पर शब्द धुन शुरू-शुरू में धीमी होती है, परन्तु जैसे-जैसे सत्संगी अभ्यास करता जाता है यह स्पष्ट और तेज हो जाती है। वैसे पूर्व-जन्म के संस्कारी लोगों को शब्द-धुन शुरू से ही अच्छी सुनाई देती है। हाँ, जो आप सुन रहे है, वह भी शब्द का ही एक रूप है। जैसे-जैसे आप सुमिरन तथा एकाग्रता पर अधिक जोर देंगे, यह ऊँचे मण्डल के शब्द मे बदल जायेगा और आपको ऊपर की ओर खीचेगा।

हाँ, सतगुरु सत्संगी के अन्तर में अपना सूक्ष्म स्वरूप स्थापित कर देते है तथा उसकी निगरानी और सहायता करते है। अगर सत्सगी अन्दर जाये तो इस बात की सच्चाई खुद देख सकता है। सत्संगी अपने सतगुरु का दर्शन पहले स्थान में तथा कभी-कभी तीसरे तिल में भी कर सकता है। प्रेम और विश्वास पर बहुत कुछ निर्भर है।

यह अच्छा है कि आप अपने रूहानी अभ्यास को दृष्टि में रख कर अपने जीवन की योजना बना रहे है। परन्तु इसे आपके सांसारिक कर्तव्यों के रास्ते में रुकावट नही बनना चाहिये। सन्त-मत लोगो से दूर भागना या कर्तव्य के प्रति उदासीन होना नही सिखाता। प्रतिदिन नियमित रूप से भजन-सुमिरन करते हुए अपने सासारिक कर्तव्यों को भी निभाना चाहिये।

जहाँ तक अपने आन्तरिक अनुभव अपनी पत्नी को बत-लाने का सवाल है, आप दोनों के हित को देखते हुए मेरी सलाह है कि ऐसा न करे, कम से कम अभी तो नही।

३२६—मैने आपका पत्र पढा। मै आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि जब तक आप पाँच नामो का सुमिरन करना नही भूलते, तब तक किसी बात से डरने या परेशान होने की कोई वजह नही है। हुजूर महाराजजी (बाबा सावनसिहजी) ने आपको नाम दिया है अत: उनके स्वरूप को फिर से याद करके आपको उनका ध्यान करना चाहिये। सुमिरन और सतगुरु का ध्यान, ये दो वस्तुएँ अन्तर में हमारी वहुत बडी रक्षक है, ये किस सीमा तक रक्षा करती है इसका अनुमान एक साधारण आदमी लगा ही नही सकता।

मै आपकी भावनाओ को अच्छी तरह समझ सकता हूँ, क्योकि पहले आपको कभी इस प्रकार के अनुभव नही हुए है; परन्तु एक बार फिर मैं आपसे यही कहूँगा कि आप

सुमिरन के प्रभाव की आजमाइश करें और खास कर ऐसे दृश्यो के सामने आने पर सुमिरन करने लगें। ऐसे दृश्य संस्कारो के कारण आते है।

इससे पहले भी हमारे अनेक जन्म हो चुके है और उन सब जन्मों के सम्बन्ध हम पर अपना निशान छोड़ जाते है। एक समय आता है, खास कर आध्यात्मिक मार्ग और उसमे भी सन्तों के मार्ग में चलनेवालो के लिये, जब कि ये पूर्व-जन्मों के सगे-सम्बन्धी अपने फायदे के लिये उन पिछले सम्बन्धों का अधिकार जमाने की कोशिश करते है। परन्तु अगर आप उनमे दिलचस्पी न लें और सुमिरन करते रहे तो वे आप पर किसी प्रकार का दबाव अथवा मजबूरी नही डाल सकते, न आपको कोई नुक्सान पहुँचा सकते है और न ही आपको नीचे खींच सकते है। अपने सामने आनेवाली किसी भी शक्ल या रूप की ओर कोई विशेष रुचि न ले, बल्कि सुमिरन मे ध्यान लगाये रखें और वे अपने आप गायब हो जायेगे। आशा है आपके मन को सन्तुष्ट और निश्चिन्त करने के लिये यह काफी होगा।

३२७—हमें इच्छाओं से मुक्ति पानी चाहिये। सन्त-मत के सिद्धान्तों के अनुसार अपना जीवन-यापन करते हुए हमें अपने रोज के जीवन में जो कुछ भी प्राप्त हो उसे सन्तोष पूर्वक स्वीकार करना चाहिये, क्योकि हमारे अपने ही कर्मों के अनुसार सबकुछ पहले से प्रारब्ध मे लिखा हुआ है। इसी को परमात्मा के 'भाने' मे रहना या उसकी मौज में रहना कहते है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि हम आलसी या अकर्मण्य हो जाये। हमें अपने कर्तव्यों का पालन पूरी लगन और ईमानदारी के साथ करना चाहिये परन्तु उसका फल परमात्मा पर छोड़ देना चाहिये। अगर हम अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिये प्रार्थना करते रहते है तो न

केवल हम संसार मे अपने को बाँधे रखने वाली जंजीर को मजबूत बनाते है, बल्कि हमे यहाँ बार-बार वापस आना भी पड़ता है ।

यह मनुष्य शरीर हमें अपने अच्छे और बुरे कर्मों के मेल के कारण मिला है । इसीलिये जीवन में हमें सुख और दु:ख दोनों ही मिलते है । अगर हम सुख या खुशी के समय प्रसन्न और दु:ख के समय दु:खी या उदास होगे तो हम हमेशा किसी न किसी वस्तु के लिये प्रार्थना करते रहेगे और भक्ति के लिये हमें कोई समय नहीं मिलेगा, और भक्ति के बिना हमारा आवागमन से छुटकारा नही हो सकता । अपनी भक्ति को पूर्ण करने के लिये तथा जन्म-मरण के बन्धनों से छुटकारा पाने के लिये यह जरूरी है कि हम मालिक की मौज में खुश रहें ।

जब सत्संगी बहुत परेशान हो या किसी बड़ी दुविधा में उलझा हो तो उसे चाहिये कि भजन में बैठ जाय और अन्तर में मार्ग-दर्शन के लिये प्रार्थना करे । परन्तु सबसे अच्छी प्रार्थना तो मालिक से यही माँगना है कि वह हमे ताकत बख्शे कि जो कुछ भी हमारे प्रारब्ध मे बदा है उसे हम साहस, धीरज और खुशी के साथ भुगत सके ।

मैं आपकी कठिनाई को समझता हूँ । मनुष्य को अपने गुजारे के लिये कुछ न कुछ करना ही पड़ता है । जीवन-संघर्ष बहुत ही विकट है । मै यही सलाह दूँगा कि दोनों व्यवसायों में से आपको जो ज्यादा पसन्द हो उसे ही अपना ले । सन्त-मत के सिद्धान्तों को हमेशा याद रखें चाहे आपका पेशा कुछ भी हो । जब भी आप उलझन मे हों, भजन मे बैठ जाये, सच्चे मन से अभ्यास करे और उसके बाद निर्णय करे ।

३२८—शब्द-धुन ही मुख्य वस्तु है । यह कर्मों को

नष्ट करके आपको ऊपर ले जाती है। शिष्य के कर्मों के कर्ज को विभिन्न तरीको से चुकाने मे मदद करना तथा उनके कुछ अंश को अपने ऊपर ले लेना सतगुरु का कर्तव्य है। कृपया इसकी कोई चिन्ता न करे।

जब सुमिरन के द्वारा अपनी सुरत या आत्मा को आप तारा-मण्डल तथा सूर्य और चन्द्र के मण्डलो से ऊपर ले जायेगे तो सतगुरु के दर्शन कर सकेगे।

३२९—चिन्ता करने से किसी को न कभी मदद मिली है और न ही मिल सकेगी; बल्कि यह हमारी इच्छाशक्ति तथा संकटों का सामना करने के सामर्थ्य को कमज़ोर बनाती है। ऐसी सभी परिस्थितियों मे सत्संगी को वे सब प्रयास करने चाहिये जो कि उससे हो सके तथा फिर परि-णाम सतगुरु की मौज पर छोड़ देना चाहिये। चिन्ता करने या घबराने के बजाय उसे सतगुरु की दया-मेहर का आसरा लेना चाहिये। परन्तु आपके पति सत्संगी नही है, इसलिये आपके और उनके दृष्टिकोण मे अन्तर है।

आपके यहाँ आने के बारे में मैं भी वही सलाह दूँगा जो कि आपको सरदार बहादुर महाराज जगतसिंह जी ने दी थी और वह यह है कि एक नये स्थान मे आने से पहले, जहाँ का बाहरी वातावरण या रहन-सहन आपके अनुकूल न हो, आप अपने अभ्यास मे कुछ प्रगति कर ले। और अन्त में यह जरूरी बात याद रखे कि सतगुरु की कभी मृत्यु नहीं होती। वह हमेशा आपके साथ है। सतगुरु एक शक्ति है, एक लाफ़ानी ताकत है, शब्द है। यह नाशवान शरीर सतगुरु नही है।

३३०—आपको याद होगा कि नाम-दान के समय आपने शाकाहारी भोजन पर टिके रहने का वचन दिया था। ऐसी भूलों से बुरे कर्म इकट्ठे होते है जिनकी वजह से आत्मिक

उन्नति मे और देर लगती है । जैसा कि अब आप खुद महसूस कर रही है, आपकी तकलीफ का कारण पौष्टिक भोजन की कमी नही बल्कि मानसिक तनाव तथा चिडचिड़ापन था। हजारों हिन्दुस्तानी जो कि कठिन शारीरिक श्रम करते है तथा वे कई लोग जो सेना मे है और सीमाओं पर युद्ध करते है, शुद्ध शाकाहारी भोजन पर उत्तम स्वास्थ्य रख रहे है। लेकिन फिर भी देर आयद दुरुस्त आयद, सुधरने के लिये कभी बहुत देर नही होती।

अब, जब कि आपको अपनी भूल का पता चल गया है और सतगुरु ने कृपा करके आपको वापस सही भोजन पर आने का उत्तम अवसर प्रदान किया है, तो आपको चाहिये कि इस भोजन पर दृढ़ रहे तथा इस अवसर का पूरा लाभ उठाये। अगर आप अपनी इच्छा-शक्ति का प्रयोग करें तथा इस भोजन पर रहने का पक्का फैसला कर लें--खास कर अब, जब कि आपके पति भी शाकाहारी है--तो न केवल आप अपने अभ्यास में उन्नति करेगी बल्कि आपके स्वास्थ्य मे भी सुधार होगा। अगर फिर भी भोजन के बारे मे कुछ कठिनाई उत्पन्न होती है तो उसका कारण खाने की चीजो का गलत चुनाव या उनका अनुचित मेल है और इसके लिये शाकाहारी भोजन से मांसाहारी भोजन की ओर जाने की कोई आवश्यकता नही। शाकाहारी भोजन मे कई बहुत अच्छी और पौष्टिक वस्तुएँ है, परन्तु जो एक को माफ़िक आता है वह कभी-कभी हरएक को माफ़िक नही आता। अतएव आपके लिये उन्ही चीजों को चुनना अच्छा होगा जो कि आसानी से हजम हो सकें। यह बहुत आसान है, केवल इसके लिये थोड़ी समझदारी की जरूरत है।

३३१--शब्द और सतगुरु में विश्वास और प्रेम तो सन्त-मत की खास आधार-शिला है। उसके बाद आता है

सतगुरु की मौज मे अपने आप को समर्पित करना; यह एक गुलामी या पराधीनता का समर्पण नही, बल्कि एक प्रेमपूर्ण समर्पण है। इस समर्पण के बाद हमारे कार्यो का प्रेरणा-स्रोत बदल जाता है और अब अपने मन की इच्छा से कार्य करने के स्थान पर हम मालिक या सतगुरु की इच्छा में रहते हुए कार्य करते हैं। आत्मा का परमात्मा के साथ मेल हो जाता है, मन की हुकूमत खत्म हो जाती है और उस मालिक का राज हो जाता है। इसके लिये संघर्ष तो जरूर करना पड़ता है, यह अन्त तक चलनेवाली कठिन लड़ाई है; परन्तु इसके बाद आनेवाली महान सफलता के विषय में भी तो जरा सोचिये।

प्रेम और विश्वास के साथ अभ्यास मे जुटे रहे। धीरे-धीरे सुमिरन का समय बढ़ाते जाये और सुमिरन के वाद शब्द को सुनें तथा उसमें लीन होने की कोशिश करें। शब्द ही आपको अन्त मे इस जड़ ससार तथा माया से ऊपर ले जायेगा।

३३२—मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि अब आपको संसार के मिथ्या पदार्थो में कोई रुचि नही रही है और आप रोज सुबह तीन बजे से लगातार तीन घण्टे तक भजन-सुमिरन कर रहे है। तो भी मै आपको याद दिलाना चाहूँगा कि सन्त-मत हमें अपने कर्तव्यों से भागने का नही, बल्कि उन्हें करते हुए संसार की तड़क-भड़क व आकर्पण से मन को हटाने का उपदेश देता है। संसार में रहते हुए, अपने कर्तव्य और जिम्मेदारियाँ निभाते हुए भी हम इन वातो से ऊपर रह सकते है, और भजन-सुमिरन का यही प्रभाव है। जब आपका मन शान्त है और आप सासारिक आकर्षणो और लगावों से परेशान नहीं है, तब आप शान्तिपूर्ण स्थान में है। शान्ति वास्तव में अन्दर से आती है।

३३३—इन्द्रियों के मार्ग से ही हमारा खयाल बाहर फैलता है और हम बाहरी जगत से सम्बन्ध जोडते हैं। इस प्रकार बाहरी जगत से सम्बन्ध पैदा होने पर हमारे अन्दर विचार, लगाव और स्मृतियाँ पैदा होती है और वे हमें इस मायामय ससार में बाँध देती है। सुमिरन के द्वारा हम धीरे-धीरे अपने आपको अन्दर की ओर समेटते है और जितनी अच्छी तरह से हम ऐसा करने में सफल होते है, हम स्वयं को उतना ही मजबूत महसूस करते है और उतना ही अधिक हम इन विचारों और स्मृतियों से ऊपर उठने मे समर्थ होते है। पूरी लगन और दृढ़ता के साथ इसका अभ्यास करे और यदि कोई भी कठिनाई हो तो लिखने में सकोच न करे।

३३४—हम सबका समय निश्चित है, और जब ठीक समय आयेगा हम अवश्य ऊपर जायेगे। यह सच है कि मन और माया हमारा रास्ता रोकते है, परन्तु अगर हम प्रेम-पूर्वक भजन-सुमिरन करते रहे तो हमारा कार्य काफी आसान हो जाता है तथा हमारी कठिनाइयाँ दूर हो जाती है। सत-गुरु के लिये भी ऐसे शिष्यो की सहायता करना आसान होता है। सबसे जरूरी बात तो नौ द्वारों को खाली करके अपनी सुरत या चेतनता को समेट कर आँखो के केन्द्र पर लाना है। तब ही ऊपर जाना तथा तारे, सूर्य, चन्द्र आदि देखना सम्भव होगा।

जब हम सतगुरु के ज्योतिर्मय स्वरूप तक पहुँचते है तब हम अपने स्थूल शरीर में नहीं, बल्कि सूक्ष्म शरीर मे होते हैं। सूक्ष्म शरीर वहाँ के वातावरण में आसानी से विचर सकता है। इसी प्रकार और ऊपर जाने पर जब हम कारण मण्डल में पहुँचते है तो हमारी आत्मा पर केवल कारण शरीर का आवरण होता है और इसलिये उसे वहाँ किसी प्रकार की कठिनाई नही होती। परन्तु शिष्य के लिये सबसे

जरूरी काम तो यह है कि वह प्रेम और लगन के साथ अभ्यास करता रहे और शब्द से जुड़ जाये। जब आप शब्द में लीन होने लगेंगे तो वह आपको ऊपर ले जायेगा तथा सब कठिनाइयों को हल कर देगा।

यह बात बड़ी उत्साहवर्द्धक है कि आप अपने अभ्यास के समय को बढ़ा कर तीन घण्टे तक लाने में सफल हो गये है। अब आपको अपने खयाल को अधिक से अधिक समय तक आँखों के केन्द्र पर जमाने की कोशिश करना चाहिये, तब बाकी काम अपने आप हो जायेगा।

"सार बचन" तथा परमार्थी पत्रो को पढने से सहायता मिलती है और अभ्यास के समय एकाग्रता प्राप्ति मे आसानी होती है।

३३५—जिस प्रकार स्थूल संसार मे व्यायाम से शरीर के अग पुष्ट होते है उसी प्रकार आध्यात्मिक जगत मे मानसिक वृत्तियो का संयम तथा सही अभ्यास मन को निर्मल और मजबूत बनाता है, बशर्ते कि यह लगन और विश्वास के साथ किया गया हो। सतगुरु जानते है कि शिष्य अभ्यास मे कितनी मेहनत और कोशिश कर रहा है, वे उसकी देखभाल करते है और जरूरत होने पर उसकी सहायता करते है, यद्यपि आत्मिक विकास की कमी के कारण शिष्य को अभी इसका पता नही चलता।

मैं आपको यही सलाह देना चाहूँगा कि सबसे पहले आप याद रखे कि आप यहाँ थोड़े समय के लिये आये है और आपका उद्देश्य होना चाहिये कि आपको जो मनुष्य शरीर प्रदान किया गया है तथा जो अनुकूल परिस्थितियाँ आपको मिली है, उनका अधिक से अधिक लाभ उठाये। यह तभी अच्छी तरह किया जा सकता है जब आप अपने सांसारिक कर्तव्यों को ईमानदारी और पूरे सामर्थ्य के साथ निभाते हुए अधिक

से अधिक समय भजन-सुमिरन मे लगायें। सुमिरन और शब्द इस संसार मे सबसे आवश्यक वस्तुएँ है और वह सर्वोच्च लाभ है जिसे मनुष्य यहाँ प्राप्त कर सकता है। यह तो लेनेवाले पर निर्भर है कि वह कहाँ तक इस दात का फायदा उठाता है।

३३६—सभी मतों, आध्यात्मिक अभ्यासों तथा धर्मो मे आत्म-संयम पर जोर दिया गया है। आत्म-संयम का अभ्यास मन की दृढता तथा इच्छा-शक्ति के साथ करना चाहिये। क्रोध से होने वाले नुक्सान को हमेशा याद रखना चाहिये। जब मनुष्य क्रोध के वशीभूत होता है तो वह अपना नियन्त्रण खो बैठता है और बर्बादी की ओर चल पड़ता है। क्रोध में मनुष्य शान्ति पूर्वक, धैर्य के साथ भले-बुरे का विचार नही कर सकता तथा आत्मिक हानि के साथ-साथ सांसारिक क्षेत्र में भी नुक्सान उठाता है।

ऐसी भावनाओ पर विजय पाने का सबसे अच्छा उपाय पॉच पवित्र नामों का भक्तिपूर्वक सुमिरन है। सुमिरन न केवल प्रतिदिन अभ्यास के समय ही करना चाहिये, बल्कि जब भी मन में क्रोध आता हुआ मालूम हो, आपको तुरन्त मन की तवज्जह से करीब पॉच मिनट के लिये सुमिरन करना चाहिये। इससे क्रोध की सुलगती आग शान्त हो जायेगी। जितना अधिक आप भजन-सुमिरन करेगे और अपने खयाल को अन्तर की ओर मोड़ेगे उतना ही आप इन बातो से छुटकारा पायेगे तथा आत्म-संयम प्राप्त करेगे।

३३७—आपका हृदय-स्पर्शी पत्र मेरे सामने है। मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि जहाँ तक आपकी रूहानी तरक्की का सवाल है, आपकी उच्च शिक्षा की कमी इसमें किसी प्रकार से भी रुकावट नही है। एक बिलकुल अशिक्षित मनुष्य भी अगर इन शिक्षाओ का प्रेम और विश्वास

के साथ पालन करता है तो एक शिक्षित किन्तु इन गुणों से रहित मनुष्य की बनिस्बत कही अधिक तरक्की कर सकता है। सांसारिक पद या श्रेणी का महत्व केवल सासारिक बातों मे ही है। जिस प्रकार आप सत्संग में अभी जा रहे है उसी प्रकार, बगैर किसी हीनता की भावना के, नियमित रूप से जाते रहे। अब आपके सवालों को ले:—

(१) अँगूठे को बाये कान मे हलके से परन्तु दाहिने कान मे अच्छी तरह सटा कर रखना चाहिये ताकि बाहर की आवाजे सुनाई न दे। परन्तु अँगूठे को इतने जोर से भी न दबायें कि दर्द होने लगे। जब आप शब्द सुनने के लिये बैठे तो अपना खयाल आँखों के केन्द्र में रखे तथा उस समय सुमिरन न करे।

(२) अभ्यास के लिये ताकत और मदद की प्रार्थना करना ठीक है।

(३) सांसारिक बातो के लिये आपका कोई सहायता न माँगना बिलकुल ठीक है। जब सत्संगी प्रेम और श्रद्धा के साथ भजन-सुमिरन में लगा रहता है तब उचित सीमा तक उसे अपने आप सहायता दी जाती है।

३३८—जहाँ तक आपके भजन-सुमिरन का सवाल है, इस मार्ग पर सबकी प्रगति समान गति से नही होती। परन्तु प्रगति होती जरूर है, चाहे हमे उसका पता न भी हो। कोई भी प्रयत्न व्यर्थ नही जाता। हरएक सप्ताह या हरएक महीने यह जानने की कोशिश किये बगैर कि कहाँ तक प्रगति हुई है, सत्सगी को नियमित रूप से प्रेमपूर्वक अभ्यास मे लगे रहना चाहिये। इस मार्ग पर काफी आगे बढ़ कर तीसरे तिल के नजदीक आने पर या काफी अच्छी एकाग्रता हो जाने पर प्रगति का पता अपने आप चल जाता है।

मन की आदत है कि वह एक जगह ठहरने से इन्कार करता है, परन्तु उसे वश में करना चाहिये और जहाँ तक हो सके तवज्जह को आँखो के केन्द्र पर स्थिर करना चाहिये। अगर खयाल बाहर जाये—और वह बाहर जायेगा ही—तो बगैर किसी चिन्ता के उसे बार-बार वापस लाना चाहिये। यह क्रिया निरन्तर जारी रखनी चाहिये।

कभी-कभी अभ्यासी को नब्ज की धड़कन सुनाई देती है, परन्तु कृपया इसके बारे मे चिन्ता न करें। केवल अपने ध्यान को आँखों के केन्द्र पर जमाये रखे, सब-कुछ ठीक हो जायेगा। कभी-कभी अँगूठों के द्वारा कानों में ज्यादा दबाव डालने की वजह से भी ऐसा हो सकता है। दबाव किसी प्रकार का भी नहीं होना चाहिये। बिना किसी तनाव के, आराम से बैठना चाहिये।

जो शब्द सिर की चोटी से आता हो उसे सुनना चाहिये, परन्तु जो कुछ भी बायें कान की ओर से आता मालूम दे उसकी ओर कोई ध्यान नही देना चाहिये। शब्द सुनते समय यह छान-बीन करने की कोशिश न करे कि कौन-सा शब्द सुनाई दे रहा है; जो भी शब्द आये उसे अथवा उसमें से निकलनेवाले अगले शब्द को ध्यान से सुने। इस कार्य-क्रम पर करीब एक-दो महीने तक चलें, उसके बाद अगर जरूरत हो तो फिर से लिख सकते है। शुरू-शुरू में सबसे जरूरी चीज सुमिरन है और शब्द को सुनने के अभ्यास में बैठने से पहले सुमिरन को पूरा समय देना चाहिये।

३३९—भटकना तो मन का स्वभाव ही है, परन्तु हमें उसे बार-बार वापस लाना चाहिये। हमें अपने मन से कह देना चाहिये कि बाहर की ओर ले जानेवाली बातों को भजन का समय पूरा हो जाने के बाद देखा जायेगा। जब प्रेम के साथ सुमिरन किया जाता है तो मन धीरे-धीरे स्थिर

हो जाता है। मेहनत और लगन के साथ अभ्यास करना जरूरी है और सबसे आवश्यक है अभ्यास में नियमितता।

३४०——यह खुशी की बात है कि आपका सारा परिवार सन्त-मत में आ गया है; इसके फलस्वरूप सिर्फ सासारिक बातो में ही नही, बल्कि आध्यात्मिक प्रयासों में भी परस्पर सहयोग की भावना उत्पन्न होनी चाहिये। आवागमन के चक्कर तथा काल के जाल से मुक्ति पाना ही मनुष्य जन्म का सार है। मुझे खुशी है कि आप इस दृष्टिकोण को समझते है।

अब बहुत कुछ आपकी मेहनत पर, आपकी भक्ति तथा भजन-सुमिरन में नियमितता पर निर्भर है। जो स्वयं अपनी मदद करते है सतगुरु भी हमेशा उनकी मदद करता है। एक सत्संगी के लिये अपने सतगुरु की सबसे अच्छी सेवा शब्द से जुड़ना तथा अन्तर में जाना है।

३४१——सन्तो का मार्ग तो पूरे जीवन का कार्य है और हमें थोड़े से समय मे असाधारण फल की आशा नही करना चाहिये, बल्कि अपना भजन-सुमिरन लगन और प्रेम के साथ करते जाना चाहिये। नियमितता बहुत जरूरी चीज है। नियमित सुमिरन से शब्द को पकड़ने मे आसानी होती है।

डर की जिस भावना का आपने जिक्र किया है वह केवल अस्थायी है और जब आप अपना ध्यान दोनों भौहो के बीच में रख सकेंगे, तो यह डर धीरे धीरे दूर हो जायेगा। जब भी आप किसी प्रकार का भय महसूस करें, तब याद रखें कि आप अकेले नही है, सतगुरु हमेशा आपके साथ है। उस वक्त थोड़ी देर पाँच पवित्र नामो का सुमिरन करे।

जहाँ तक आपकी नौकरी का सवाल है, आपको अपने कर्तव्य का ईमानदारी और मेहनत के साथ पालन करना

चाहिये, साथ ही सन्त-मत के सिद्धान्तों को हमेशा याद रखना चाहिये ।

आपकी माताजी और आपके मित्र का जहाँ तक प्रश्न है, अगर आप देखे कि उनकी राधास्वामी मार्ग में दिलचस्पी है तो आप उनसे इसके बारे में साधारण तौर पर बात कर सकते है तथा उन्हें सन्त-मत की पुस्तकें दे सकते है। परन्तु सन्त-मत में रुचि पैदा करने का सबसे अच्छा तरीका अपने खुद के जीवन को इस प्रकार ढालना है कि वे इस परिवर्तन से प्रभावित हों और अपने आप इस मार्ग की ओर आकर्षित हों।

३४२—यह अच्छी बात है कि अभ्यास शुरू करने से पहले मन ही मन कुछ बार 'राधास्वामी राधास्वामी' दोहराया जाय तथा मन से साफ साफ कह दिया जाय कि इतने साल तक उसने चौबीसों घण्टे जो चाहा वह किया है, पर अब उसे भी वापस अपने देश जाने के लिये आत्मा का साथ देना चाहिये और इसीलिये अपने रूहानी अभ्यास के लिये नियत किये गये समय में आप उसकी ओर कोई ध्यान नही देंगे। अपने इस निश्चय पर दृढ रहें और जब तक आप अभ्यास में बैठे हों, मन चाहे कोई भी छल या शरारत करे उस ओर ध्यान न दे । यह कोई छोटा काम नही है ।

"सार बचन" में स्वामीजी महाराज के सत्संगो में से चुने हुए अंश है और पुरी साहब की पुस्तक "मिस्टिसिज्म दि स्प्रिचुएल पाथ, भाग २" में हुजूर महाराज सावनसिहजी के सत्संगो के चुने हुए अंश दिये गये है । कुछ सत्संगों के अंग्रेजी अनुवाद भी यहाँ से समय-समय पर प्रतिनिधियों को भेजे गये है, जो आपको तथा अन्य सत्संगियों को पढ़ने के लिय खुशी से दे देंगे। परन्तु सबसे ऊँचे प्रकार का सत्संग तो सतसगी का आन्तरिक आध्यात्मिक अभ्यास है । आँखो

से ऊपर वाले शरीर के भाग में सारा भेद छिपा हुआ है और सत्य की खोज अन्तर में वही करनी है । इसलिये मन को वाहरी संसार से ही नहीं बल्कि आँखों के नीचे के शरीर के हिस्सो से भी समेटना चाहिये तथा उसे तीसरे तिल में स्थिर करना चाहिये ।

३४३—अच्छा हो अगर लोग, चाहे थोड़े समय के लिये ही सही, उस उच्च चेतनता का विकास कर ले तथा अपने अह को छोडने की कोशिश करें । हमे इस प्रकार की रहनी को अपनाने की दिन-प्रतिदिन निरन्तर कोशिश करते रहना चाहिये । जो लोग भजन-सुमिरन बराबर करते रहते है उनमें प्रेम, दया और करुणा की भावनाएँ अपने आप आ जाती है और इन भावनाओं का विकास करने में उन्हें कोई कठिनाई नही होती ।

३४४—हाँ, नाम-दान मनुष्य को जीवन के प्रति एक विलकुल नया दृष्टिकोण देता है, वास्तव में नाम मिलने के वाद ही हमारा असली जीवन शुरू होता है । नाम मिलने से पहले हमारे सभी प्रयत्न, चाहे वे अच्छे रहे हों या बुरे, हमें जाल मे और अधिक फँसाते रहे है । अब आपको मुक्ति का मार्ग दे दिया गया है और आपको चाहिये कि प्रेम और श्रद्धा के साथ पूरी मेहनत करे । बाकी सब-कुछ मालिक खुद करेगा ।

३४५—यह बड़ी अच्छी वात है कि द्वेष की दुर्भावना का स्थान प्रेम और प्रशंसा की भावनाओं ने ले लिया है । विरोधात्मक और द्वेषपूर्ण भावनाएँ सबसे पहले उन्ही को हानि पहुँचाती है जो ऐसी भावनाओं को मन मे स्थान देते है । प्रेम, सन्तोष, दूसरो के गुणो की प्रशंसा अच्छे गुण है और हमें सुख व शान्ति देते है ।

सेवा करने के आपके प्रस्ताव के लिये धन्यवाद । खोये

हुए शब्द अर्थात आन्तरिक शब्द का अभ्यास तथा उसकी प्राप्ति ही सबसे बड़ी सेवा है और यह एक जीवन-भर का कार्य है। डाक्टर जान्सन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "सन्तों के मार्ग" (दि पाथ आफ़ दि मास्टर्स) में "मेसानिक लाज" वालों के 'खोये हुए शब्द' की कई बार चर्चा की है और अपने डेरे के निवास में उन्होंने हुजूर महाराजजी के आदेश के अनुसार बडी लगन के साथ शब्द-अभ्यास किया है। आशा है आप भी इस 'खोये हुए शब्द' को पाने के लिये नियमित रूप से अभ्यास कर रहे है, जो सतसगियो के लिये 'खोया हुआ' शब्द नही है।

३४६---किसी भी ऐसे कार्य को--जो ईमानदारी के साथ किया गया हो, जो किसी जरूरत को पूरा करे तथा जिसको करने मे सन्त-मत के सिद्धान्त न टूटते हों---करने की इजाजत है। सन्त-मत रोज के काम-काज में बाधा नही देता, बल्कि वह हमे अपने सासारिक कार्यो को करते हुए भजन-सुमिरन के लिये नियमित रूप से समय देने की प्रेरणा देता है।

जहाँ तक आपकी माताजी का सवाल है, हमारी तकलीफे हमारे अपने कर्मो से ही पैदा हुई है और उनके द्वारा हम अपने कर्मो के कर्ज को चुका रहे है। फिर भी, आपको उनकी सेवा करनी चाहिये और जो भी इलाज हो सके करवाना चाहिये।

३४७---यह अच्छा है कि आपको बाई ओर से शब्द सुनाई नही देते, परन्तु वे समय-समय पर सुनाई दे सकते है। फिर भी, बाई ओर से आनेवाली आवाज की ओर कभी ध्यान नही देना चाहिये, चाहे वह घण्टे की आवाज ही क्यो न हो।

पैरो के अगूठो और अँगुलियो मे सुइयों के चुभने जैसा दर्द सुरत या आत्मा के सिमटाव की वजह से होता है, जब

शरीर के निचले सिरे सुन्न होने लगते है। जैसे-जैसे सिमटाव बढ़ेगा, यह दर्द का अनुभव तथा शरीर का सुन्न होना धीरे-धीरे ऊपर की ओर बढता जायेगा। यह केवल अस्थायी बात है और अभ्यास का समय पूरा होने पर पहले की तरह चेतना और शक्ति वापस आ जाती है। इसलिये इसमें डरने की कोई बात नही है। आत्मा के सिमटाव से होनेवाले इस दर्द पर एक बार विजय पा लेने पर यह धीरे-धीरे कम होने लगता है और अन्त मे सिमटाव मे बिलकुल ही दर्द नही होता और तब अभ्यासी अपने पूरे शरीर को जब चाहे तब, बगैर किसी दर्द या कष्ट के, खाली कर सकता है। निस्सन्देह इसमे काफी समय लगता है और यह अभ्यासी की मेहनत तथा उसके पिछले कर्मो पर निर्भर करता है। हवा मे उड़ने या तैरने का अनुभव भी अच्छा है।

३४८——आपके साढे चार वर्षीय पुत्र ने इस ओर जो रुचि दिखाई है, उस पर मुझे कोई आश्चर्य नही हुआ। बच्चे अपने माता-पिता का अनुसरण तथा उनकी नकल अपने आप ही करने लगते है। इस प्रकार आप उसे बहुत अच्छी शिक्षा और परमार्थ की ओर आने के अच्छे अवसर प्रदान कर रहे है। समय आने पर उसे नाम भी मिलेगा। जैसा कि आप जानते हैं, मनुष्य में बुद्धि और विवेक का इतना विकास होना चाहिये कि वह अपने लिये किसी भी बात का खुद फैसला कर सके और किसी निर्णय पर पहुँच सके। परन्तु तब तक के लिये आप उसे, नाम तथा अभ्यास की विधि बताये बगैर, सन्त-मत तथा सन्तों की महिमा और महत्व के बारे मे प्रेम-पूर्वक कुछ बता सकते हैं। अगर वह आलथी-पालथी लगा कर बैठता है या भजन के आसन मे (बगैर मुँह पर हाथ रखे) बैठता है——जैसा कि छोटे बच्चे कई वार खेल-खेल मे करते है——तो उसे बढावा दे, क्योकि इससे उसे इस प्रकार बैठने का अभ्यास होगा जो आगे चल

कर लाभप्रद होगा। आसनों को अच्छे स्वास्थ्य के लिये व्यायाम के रूप मे प्रोत्साहन दिया जा सकता है, उन्हे आध्यात्मिक महत्व देने की जरूरत नही। वास्तव मे सभी प्रकार के योगासनों और व्यायामो के प्रति भी यही रुख अपनाना चाहिये।

३४६—हम इस संसार मे एक खास उद्देश्य से अपने कर्मों के अनुसार आते है। परन्तु हमे मनुष्य-जन्म एक और विशेष उद्देश्य के लिये मिला है। वह यह है कि हमे सतगुरु से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हो सके, हम शब्द से जुड़ सकें तथा शब्द के अभ्यास के द्वारा वापस अपने निज-धाम लौट सके, जहाँ से कि हम आये थे।

यह महान कार्य केवल मनुष्य-जीवन मे ही सम्भव हो सकता है। इसलिये हमे इस ससार मे इस प्रकार रहना चाहिये कि इस महान ध्येय के सामने हमारे लिये और सब बातें महत्व-हीन या गैर जरूरी हो जाये। हमें दुनिया में रहना है, लेकिन दुनिया के बन कर नही रहना है। हमे इस ससार मे रहना है, अपनी जिम्मेदारियो को पूरा करना है, अपने कर्तव्यो का पालन करना है, परन्तु किसी भी वस्तु से मोह नही करना है या किसी भी बात से प्रभावित नहीं होना है। यही हमारा आदर्श है और हम जितना अधिक अभ्यास अर्थात भजन-सुमिरन करेगे उतने ही इस आदर्श के समीप आते जायेगे।

शरण लेने से हमारा अर्थ है कि हम अपने कर्तव्यों का पालन करे तथा सन्त-मत के सिद्धान्तो पर दृढ़ रहते हुए पूरी मेहनत से कार्य करें और फिर परिणाम सतगुरु या शब्द पर छोड़ दें। इस बात की चिन्ता न करें कि क्या होगा। शरण लेने का अर्थ शब्द की शरण लेना है, अपने आप को शब्द के हवाले कर देना है। शब्द ही असली सतगुरु है, हमें

उसी की शरण लेना है, किसी स्थूल शरीर की नही। लगातार अभ्यास के द्वारा हमें चाहिये कि हम न सिर्फ शब्द के साथ जुड़ जाये बल्कि अपने आपको उसमे लीन कर दे, ताकि वह हमारी हर परिस्थिति मे हर प्रकार से पूरी देख-भाल कर सके।

आपको और अच्छी एकाग्रता प्राप्त करना चाहिये। और अधिक एकाग्रता प्राप्त होने पर सुरत या चेतनता की धारा शरीर से सिमटेगी (शुरू-शुरू मे कम से कम शरीर के नीचे के हिस्सो से सिमटेगी) और जो अन्धकार आपको इस समय दिखाई देता है वह प्रकाश में वदल जायेगा। यह पाँच नामों के लगातार और गहरे सुमिरन के द्वारा हो सकेगा। दिन के बाकी समय मे भी, जब आपका मन खाली हो, बगैर आँखे बन्द किये मन ही मन सुमिरन करते रहने की आदत डालना चाहिये। इसके फलस्वरूप, जब नियमित समय पर अभ्यास मे बैठेगे तो आपको सिमटाव और एकाग्रता में आसानी होगी।

३५०—रास्ता सिर्फ तब तक ही मुश्किल है जब तक कि मन वश मे नही आता। एक वार शब्द से जुड़ जाने पर या आन्तरिक धुन को आसानी से सुनना शुरू कर देने पर आपको अपना ध्यान बाहर लाने की या वाहर के सगीत को सुनने की (चाहे वह कितना ही मधुर क्यो न हो) इच्छा ही नही होगी। पर इसमे समय लगता है।

३५१—आप कोई चिन्ता न करे और न यह सोचें कि आप मुझे परेशान कर रहे है। यहाँ से स्पष्टीकरण और सहायता की आशा करना आपके लिये स्वाभाविक है। आपने जो लिखा है उसका कर्मो से गहरा सम्बन्ध अवश्य है, परन्तु इससे आपको उदास और निराश नही होना चाहिये। यहाँ कर्मो का मतलब है पूर्व-जन्म से प्राप्त सस्कार या प्रवृ-

त्तियाँ। ये प्रवृत्तियाँ पूर्व-जन्म से सम्बन्धित होने के कारण कुछ स्थितियों में बाधक बनती है। नियमित रूप से लगन-पूर्वक किये गये अभ्यास तथा सतगुरु की दया-मेहर के द्वारा इन सस्कारों का सामना किया-जा सकता है और उन पर विजय प्राप्त की जा सकती है, तथा प्रेम के साथ किये गये अभ्यास से सतगुरु की दया-मेहर मिलती है। यह शिक्षा-विज्ञान का एक सिद्धान्त है जिसे आध्यात्मिक विषयों पर केवल समझाने के लिये लागू किया गया है। अभी अभ्यास शुरू किये हुए आपको अधिक समय नही हुआ है। मन को अपनी जिद पूरी करने और स्वच्छन्द होकर भटकने की आदत पड़ी हुई है। इसलिये वह विरोध करता है। श्रद्धा, प्रेम और धैर्य के साथ अभ्यास करते रहने से आपको अवश्य सफलता मिलेगी।

अगर आप एक ही बार मे ढाई घण्टे के लिये नही बैठ सकते तो इस समय को किस्तो मे बाँट ले, अभी आप आधा घण्टा सुबह तथा आधा घण्टा शाम को बैठे। इन बैठको के समय को धीरे-धीरे दस-पन्द्रह मिनिट बढ़ाते जाये, ताकि आपके मन में असफलता या निराशा का भाव न आये। अभ्यास शुरू करने से पहले सतगुरु से प्रार्थना करे तथा अपने विचारों को एकत्रित करे। आराम से बैठे, शरीर पर किसी प्रकार का दबाव न डालें और आँखे बन्द करके नाम-दान के समय दिये गये पवित्र नामो को मन ही मन दोहरायें। अपनी तवज्जह के द्वारा (आँखो के द्वारा नही) दोनों भौहों के बीच के स्थान को, बगैर किसी खिचाव या तनाव के, देखते रहें।

हलका तथा आसानी से पचनेवाला भोजन अच्छा रहता है तथा इससे सुस्ती और आलस नही आता।

आप सोने से पहले बिस्तर में लेटे हुए भी पाँच नामों

का सुमिरन कर सकते है । आप मुझे दो या तीन हफ़्तों के वाद लिख सकते है ।

३५२—कृपया पत्र के वारे में चिन्ता न करें । अन्त भला तो सव भला । जव तक सत्संगी अभ्यास करके अन्तर में नही जाते, उन पर शक और सन्देहों के हमले होते ही रहते है । इसीलिये, शुरू-शुरू में विश्वास और अच्छी संगति जरूरी है । महत्वपूर्ण वात तो यह है कि आपकी उलझनें दूर हो गई है और भजन में कुछ उन्नति हुई है । आप सुमिरन का जितना अधिक अभ्यास करेंगे उतनी ही आपकी शक्ति वढती जायगी और आप काल के आकर्षण का सामना कर सकेंगे ।

३५३—दो या तीन हफ्ते के वाद पत्र लिखने का कहने में मेरा कोई खास मतलव नही था, मै केवल आपको यही वताना चाहता था कि जव भी लिखने के लिये कुछ हो तो आप मुझे लिखने में किसी प्रकार का संकोच न करे ।

इस मार्ग में प्राणायाम का कोई महत्व नही है । हम प्राणों की क्रियाओं मे दख़ल नही देते, केवल अपने ख़याल को तीसरे तिल अर्थात दोनो भौहों के वीच मे एकाग्र करते है । जव एकाग्रता वढ़ने लगती है तो कभी-कभी अभ्यासी को मामूली सा दम घुटने जैसा एहसास हो सकता है, पर उसके वारे में चिन्तित नही होना चाहिये । आपको अपने ध्यान को तीसरे तिल पर स्थिर रखते हुए सुमिरन करते जाना चाहिये और स्वाँस-क्रिया की ओर कोई ध्यान नही देना चाहिये । भौहों के वीच में दवाव का अनुभव ध्यान के एकाग्र होने की वजह से है । परन्तु आँखों पर जरा-सा भी जोर नही डालना चाहिये । आप जो आवाज सुन रहे है वह विलकुल ठीक है । आप इसे वरावर सुनते रहे जव तक कि इससे अच्छी कोई आवाज सुनाई न दे ।

३५४—आपने अपनी आध्यात्मिक उन्नति के खयाल से अपनी पत्नी से शारीरिक सम्बन्ध छोड दिया है, परन्तु ऐसा आपस में दोनों की स्वीकृति से होना चाहिये और इसे असन्तोष या मतभेद का स्रोत नही होना चाहिये ।

जहाँ तक आपकी छोटी बच्ची का प्रश्न है, आपने जो कुछ किया है वह ठीक है, परन्तु आप उसका सबसे अधिक भला उसे शाकाहारी भोजन पर रखकर ही कर सकते है ।

यह सही नही है कि नाम-दान के बाद सत्संगी को सात जन्म और लेने पडते है । ज्यादा से ज्यादा चार जन्म होते है, लेकिन चार से कम भी हो सकते है । चार जन्म आम तौर पर होते हैं, पर ऐसा होना बिलकुल जरूरी नही । स्वामीजी, बाबाजी और हुजूर महाराज सावनसिंहजी का भी यही कथन है । हुजूर महाराजजी तो अपने शिष्यो से कई बार कहा करते थे, "चार जन्मो का इन्तिज़ार क्यो किया जाय ? अपने कर्मो के कर्ज को जल्दी से जल्दी चुकाने की कोशिश क्यों न की जाय ?" बेशक यह इस बात पर भी निर्भर है कि कर्मो का कितना कर्ज चुकाना बाकी है और भजन-सुमिरन पर कितना समय दिया गया है ।

डेढ घण्टा काफी नही है । अगर पूरा समय देने में कोई कठिनाई हो तो अभ्यास के समय को धीरे-धीरे हर हफ्ते बढाना चाहिये, जब तक कि आप ढाई घण्टे के नियत समय तक न पहुँच जाये । अगर हमारा खयाल तेईस घण्टे तो बाहर रहता है और अन्दर एक घण्टे या उससे भी कम समय के लिये रहता है तो हम अन्दर जाने और वहाँ ठहरने की कैसे आशा कर सकते है । आपको सुमिरन के समय को बढ़ाना चाहिये ताकि आप शब्द के साथ जुड़ सके । सत्संगी के लिये यह बहुत जरूरी है ।

३५५—परिवार में आपस में अच्छे सम्बन्ध आध्या-

त्मिक जीवन में काफ़ी सहायक होते है। आपको अपने पति के साथ अधिक मेल-जोल के साथ रहने की कोशिश करना चाहिये, खास कर जब कि वे इतने स्नेहमय और सहनशील है और आप भी उनसे प्रेम करती हैं। सबसे बड़ी बाधा तो हमारा मन है और हमें इसी को जीतना और वश मे करना है। आप हर वस्तु की बारीकी से छान-बीन करके समझने में कुशल है। अपने इस स्वभाव का फ़ायदा उठाये और अपने दृष्टिकोण की छान-बीन या विश्लेषण करके गलत बातों को चुपचाप छोड़ दे। सुमिरन से प्राप्त होनेवाली एकाग्रता मन में अपने आप उठनेवाले उद्वेगों और प्रतिक्रियाओं को वश में रखने की शक्ति देगी। भजन-सुमिरन हमें सच्चा और निष्कपट बनने में मदद देता है तथा आवश्यक समता और मेल बनाये रखने के योग्य बनाता है।

३५६—"सारबचन" म स्वामीजी महाराज की शिक्षाओं का निचोड़ है। यह एक अनमोल ग्रन्थ है, इसे ध्यानपूर्वक पढ़ना और समझना चाहिये।

असली सतगुरु तो शब्द है, जो परम चेतन है, जो अमूर्त और अदेह है, परन्तु हमें समझाने, शिक्षा देने तथा हमारे सम्पर्क में आने के लिये मूर्त रूप अथवा देह धारण करता है। (जैसा कि बाइबिल में आता है, 'और शब्द ने देह धारण की'।) और इस प्रकार उसके द्वारा बहुत बड़ी संख्या में लोग मुक्ति के मार्ग पर लगाये जाते है। जैसा कि "सार-बचन" में भी लिखा है सतगुरु का असली स्वरूप शब्द है।

जैसे-जैसे आप रोज नियमपूर्वक अभ्यास करेंगे तथा आँखों के केन्द्र पर ध्यान जमाकर सुमिरन करेगे, आपके अन्तर में सतगुरु के प्रति प्रेम का भाव जाग्रत होगा। जब आपको मन में आनन्द का अनुभव होगा तथा जब आप

अन्दर प्रकाश की चमक देखने और शब्द सुनने लगेंगे तो यह प्रेम की भावना और बढ़ेगी और मजबूत होगी ।

यहाँ 'प्रेम की भावना' से मतलब है परमात्मा के मिलाप के लिये एक पूर्णतया आध्यात्मिक लगन या तड़प, जिसमे लेश मात्र भी स्वार्थ न हो । यह अनुभव का विषय है, बातों का नही ।

जब हम परमात्मा और उसकी सृष्टि की एकता का अनुभव करते है और हमें आन्तरिक साक्षात्कार अर्थात शब्द के साथ गहरा मेल प्राप्त हो जाता है, तब हमारे अन्दर अपने आप आनन्द और प्रशसा के भाव जाग्रत होते है ।

जब अन्तर मे सतगुरु के शब्द-स्वरूप से पूरी तरह मिलाप हो जाता है तो आत्मा उनके प्रेम तथा उनकी दया-मेहर के सागर में इस प्रकार लहराती है जैसे पानी मे मछली, और तब क्षण-भर की बाधा या वियोग भी असह-नीय हो जाता है । यह एक बहुत ऊँची अवस्था है और इसे प्राप्त करना हरएक सत्सगी का आदर्श है ।

डर का अर्थ है चौरासी के चक्कर का डर, मौत का डर, किसी अज्ञात वस्तु का डर। यह बोध कि सतगुरु सदैव अग-संग है और हमारी मदद करेंगे, इस भय को दूर कर देता है ।

विश्वास बेशक बहुत आवश्यक है । विश्वास के बिना कुछ भी नहीं हो सकता । अगर हमें निश्चय हो कि जिस रास्ते पर हम चल रहे हैं वह हमें अपनी मंजिल तक ले जायेगा तो हम बिना रुके या मुड़े दृढ़तापूर्वक और बेखटके चलते जाते हैं । परन्तु विश्वास एक चीज है और अन्ध-विश्वास उससे बिलकुल अलग दूसरी चीज है । शुरू-शुरू में, रेखा-गणित की प्रस्तापना या मान्यता के समान, कुछ बातों को बगैर प्रमाण के मान कर चलना पड़ता है, ताकि उन्हें

आगे चल कर सिद्ध या साबित किया जा सके ।

केवल शब्द को सुनने के लिये ही एक खास आसन की जरूरत है। सुमिरन के लिये आप किसी आरामदेह या सुविधापूर्ण आसन पर बैठ सकते है। परन्तु यह ऐसे समय करना चाहिये जब कोई विघ्न या बाधा न हो और कोशिश यह करना चाहिये कि ध्यान आँखों के केन्द्र पर जमा रहे। सब बाहरी ख़यालों को दूर रखना चाहिये। इसके सिवाय, दिन के बाकी समय में भी, जब कि आप कोई खास काम न कर रहे हो, इन नामों को मन ही मन दोहराते रहें। (उस समय किसी भी आसन की जरूरत नही है।) इससे अभ्यास के समय एकाग्रता मे मदद मिलेगी।

कृपया शाकाहारी भोजन पर स्थिर रहे। यह बहुत ही जरूरी है। हो सकता है कि आपका खाने की चीजों का चुनाव ठीक न हो, आप कोई दूसरी चीजों का मिश्रण करके ले। सुमिरन और शाकाहारी भोजन से स्वास्थ्य भी सुधारता है।

३५७—आप पर जो कुछ बीत रही है उसके बारे में जान कर अफसोस हुआ है। आप जानते है कि आत्मा परमात्मा का अंश है और उसमें परमात्मा के लिये एक स्वाभाविक आकर्षण और लगाव है; परन्तु आत्मा और परमात्मा के बीच में मन बाधा बन कर खडा है। मन ही हमारा असली दुश्मन है, जिससे हमें लड़ना है, जिसे हमें जीत कर वश मे करना है। क्या दुश्मन की राय मानना कोई अक्लमन्दी है?

आपने रोज ढाई घण्टे अभ्यास करने का वचन दिया था। सतगुरु हमारे अन्दर है और हमेशा सहायता करने के लिये तैयार हैं, परन्तु हम उनका आसरा नहीं लेते और न ही उनके आदेशों का पालन करते हैं। सहायता आती है,

परन्तु वह अन्दर से ही आती है, इसलिये हमें अपना मुँह अन्दर की ओर मोड़ना चाहिये। पहला कदम है अपने भजन और सुमिरन में, और खास कर सुमिरन में, दृढ़ रहना। अगर आपको ढाई घण्टे भजन करना बहुत कठिन मालूम देता हो तो आधे घण्टे से शुरू करें और हर हफ़्ते समय को को बढाते जाये जब तक कि आप प्रति-दिन कम से कम ढाई घण्टे तक न पहुँच जाये। फिर रोज कम से कम ढाई घण्टे अभ्यास करते रहें। सतगुरु से सहायता के लिये प्रार्थना करें।

३५८—जहाँ तक आपकी अपनी इस इच्छा का सवाल है कि आप इसी तरह औरों की भी सहायता कर सकें, इसके लिये पहला कदम यह है कि आप प्रेम और विश्वास के साथ नियम-पूर्वक ढाई घण्टे (यदि हो सके तो इससे ज्यादा भी) भजन-सुमिरन को दें। इससे आपके अन्दर प्रेम जाग्रत होगा। ऐसे प्रतिदिन किये गये अभ्यास का प्रभाव हमारे दैनिक जीवन में तथा औरों के साथ हमारे व्यवहार में झलकेगा। तब मनुष्य अपने आप औरों की भी सहायता करने के योग्य बन जायेगा।

३५९—सतगुरु की निजी उपस्थिति मे मौजूद होने के फायदों के बारे मे आपने राधास्वामी पुस्तकों मे जो पढा है, वह सही है। परन्तु हुजूर महाराज जी ने अपनी दया-मेहर में आकर निश्चित रूप से अनेक बार कहा है और कई बार लिखा भी है कि फासले या दूरी से रूहानी तरक्की में कोई रुकावट नही होती। अगर सत्सगी के अन्दर भक्ति है, वह प्यार के साथ सतगुरु का ध्यान करता है, उनको याद करता है तथा आदेश के अनुसार बराबर भजन-सुमिरन करता है तो दूर रहते हुए भी वह किसी घाटे मे नही रहता। चाहे सत्सगी सतगुरु की शारीरिक उपस्थिति मे हो या उनसे बहुत दूर, जो कुछ भी उसे मिलना है वह हुक्म में रहने, अभ्यास

करने और अपने अन्दर जाने से ही मिलना है। और इसके लिये केवल विश्वास तथा प्रेम की जरूरत है।

यह सच है कि कुछ अमेरिका निवासी यहाँ आ चुके हैं और कुछ अभी यहाँ है, परन्तु इसका यह अर्थ नही कि आप सबके लिये डेरे में आना अत्यन्त आवश्यक है। आप प्रेम और विश्वास के साथ अपना भजन-सुमिरन उतनी ही अच्छी तरह अपने घर मे भी कर सकते है, क्योंकि सतगुरु अन्दर मौजूद है और उनसे मिलने के लिये आपको सिर्फ अन्दर जाना है। आपको मालूम होना चाहिये कि डेरे का द्वार सब सत्सगियो के लिये खुला हुआ है, और जो भी आना चाहे खुशी से आ सकता है। हम सत्संगियों को यहाँ भजन-सुमिरन के लिये आने की प्रेरणा या सलाह नही देते, परन्तु अगर वे इसके लिये यहाँ आना जरूरी समझे और आना चाहे तो हम उन्हें रोकते भी नही।

आपको उन्हीं सतगुरु का ध्यान करना चाहिये जिन्होंने आपको नाम दिया था। मुझे आशा है कि इससे सब-कुछ स्पष्ट हो गया होगा।

३६०—हमारे यहाँ कोई प्रतीक नही है और न ही किसी प्रकार के रस्मोरिवाज है। अन्य रहस्यवादी संस्थाओं के अनुयाइयो को 'भाई' कहकर पुकारना ठीक है। सुरत-शब्द-योग अथवा सुरत (आत्मा) को अन्तर में शब्द-धुन के साथ जोडने का योग बहुत ऊँचे दरजे की आध्यात्मिक साधना है जो आपको मन और माया की पहुँच से परे ले जाती है।

३६१—मनुष्य के मस्तक के आस-पास दिखाई देने-वाला सूक्ष्म आभा-मण्डल (जिसे अंग्रेजी में 'ऑरॉ' कहते हैं) एक प्रकार से उसकी मानसिक तथा आध्यात्मिक गति का सूचक है। इससे मनुष्य के मनोभावों का और उसके

चरित्र का भी पता चलता है। इस आभा-मण्डल मे मनुष्य मे होनेवाले अस्थायी परिवर्तन तथा उसके चरित्र की स्थायी विशेषताएँ भी प्रतिबिम्बित होती हैं और एक कुशल व्यक्ति उन्हे पढ सकता है। यह आभा-मण्डल आन्तरिक रूहानी अवस्था को बाहर अति सूक्ष्म रूप मे प्रकट करता है।

दीक्षा या नाम-दान सतगुरु की ओर से काम करनेवाला प्रतिनिधि नही देता, बल्कि स्वयं सतगुरु अपने शब्द रूप में देते हैं। दीक्षा देनेवाली ताकत शब्द है, इसलिये सतगुरु के प्रतिनिधि के चरित्र और स्वभाव का दीक्षा लेनेवाले पर कोई प्रभाव नही पड़ता, बशर्ते कि वह प्रतिनिधि के साथ गहरे व्यक्तिगत सम्बन्ध पैदा न कर ले।

हरएक आत्मा को इस संसार में अपने-अपने नियत ध्येय की ओर चलना है, चाहे वह सामाजिक जीवन बिताते हुए ऐसा करे, चाहे एकान्त जीवन में रह कर। जो शक्ति इस दुनिया और दुनिया की परिस्थितियों को सँभालती है, वह स्पष्ट और निश्चित नियमों के द्वारा इस बात का फैसला करती है कि किस के लिये क्या उचित है। इस ससार में भी साधारण प्रतिभावाले लोग स्वाभाविक रूप से औरों का नेतृत्व स्वीकार करते है; और मनुष्य राज-नैतिक नेताओं में विश्वास रखकर उनकी बात मानते है।

इस संसार में विकास के नियमों का ज्ञान अधूरा ही है और लोग समय-समय पर इनमे फेर-बदल करते रहते हैं। यदि सृष्टि के विकास की पूरी कथा मालूम हो जाये तो आत्मा और कर्म-सिद्धान्त की इस विचार-धारा को आप सृष्टि के विकास के उद्देश्य के विरुद्ध नही पायेगे। वैज्ञानिक लोग अपने कार्य की विशेषता और सीमा के कारण आत्मा के बारे में न तो विचार करते है और न ही उसके अस्तित्व की सम्भावनाओं को मानते है। आत्मा का अस्तित्व कर्मो

के कानून के खिलाफ़ नही है। कर्मो के कानून को ठीक तरह से ध्यानपूर्वक समझने पर पता चलेगा कि कार्य और कारण के इस संसार में कोई भी वात आकस्मिक नही है। राधास्वामी साहित्य मे इस विषय में जो कुछ भी कहा गया है, वह सही है, और इसकी पुष्टि में हुजूर महाराजजी (वावा सावनसिहजी) ने अपने वचनों मे कई प्रामाणिक वाते वतलाई थी। ऐसे सन्त बहुत कम होते हैं।

जब हम कहते है कि सतगुरु को अपने अन्तर में वसा लेना चाहिये, तो इसका मतलब है कि हमे चेतन और अवचेतन रूप में निरन्तर सतगुरु का ध्यान करते रहना चाहिये। जहाँ तक तीसरे तिल का सवाल है, आपको सतगुरु को तीसरे तिल में बसाने की कोशिश करने की जरूरत नही। सतगुरु तो पहले ही इस स्थान से बहुत नज़दीक है।

हाँ, आपको अपनी तथा अपने परिवार की बाहरी आक्रमण से जीवन-रक्षा करने की इजाजत है, परन्तु आपको स्वयं आक्रमणकारी नही बनना चाहिये।

हाँ, यदि दो व्यक्ति पति और पत्नी के रूप मे रहना चाहते हैं तो उनके लिये विवाह की रीति को पूरा कर लेना आवश्यक है। वे जिस देश में रहते है, वहाँ के विवाह के नियमों और रिवाजो का उन्हे पालन करना चाहिये।

वेशक, किसी भी प्रकार की नशीली चीज नही लेनी चाहिये, क्योकि यह रूहानी तरक्की मे रुकावट पैदा करती है। धूम्रपान (सिगरेट आदि पीने) के लिये मनाही नही है; लेकिन यह तन्दुरुस्ती के लिये अच्छा नही है और इसकी आदत पड़ सकती है, जिसे छोड़ना आसान नही होता और इस प्रकार मनुष्य इस आदत का गुलाम बन जाता है। आध्यात्मिक दृष्टि से धूम्रपान के लिये कोई एतराज नही है बशर्ते कि यह थोड़ी मात्रा में किया जाय और जव चाहें

छोड़ा जा सके। अधिकांश सत्संगी धूम्रपान नहीं करते और जो थोड़े से करते है उनसे उम्मीद की जाती है कि वे डेरे मे सिगरेट आदि न पीयें।

तीसरे तिल तक पहुँचने के लिये एकाग्रता के कई तरीके हैं। परन्तु इससे आगे केवल एक ही राज-मार्ग है। जो कुछ आवश्यक है उसे सतगुरु अपने शिष्य के लिये हमेशा सुलभ कर देते है; वे अपने शिष्यों के हित का ध्यान रखते है तथा उन्हें प्रगति की ओर ले चलते हैं।

३६२—आपके आन्तरिक अनुभवों के बारे में जानकर मुझे बडी खुशी हुई। इतने थोड़े समय में इतनी प्रगति कर लेना प्रशंसनीय है। इत्मीनान रखें कि आप सही दिशा मे बढ़ रहे हैं।

आप अन्दर जो दो आँखें देखते है वे मिल कर एक आँख हो जायेगी—जिसे तीसरा तिल या तीसरा नेत्र कहते हैं। हमारा ध्यान इस आँख अथवा द्वार के बीचोबीच पूरी तरह जम जाना चाहिये, और तब हम इसी नेत्र के बीच में से निकल कर आगे बढ़ेगे। जो शब्द आप सुन रहे है वह ठीक है। बायें कान से आपको जो कुछ भी सुनायी दे उसकी ओर कोई ध्यान न दें। असल में शब्द किसी भी कान से नही आता है, परन्तु शुरू-शुरू में ऐसा लगता है कि यह कान मे से आ रहा है। यह शब्द ही हमें ऊपर खीचेगा, परन्तु पूरी एकाग्रता प्राप्त होने पर ही ऐसा होगा।

सुन्दर दृश्य, बादल व अन्य चीज़ों की ओर कोई ध्यान न दें, बल्कि अपने ध्यान को तीसरे नेत्र पर जमाये रखें।

यह सही है कि जब हम ठीक तरह से अभ्यास करते हैं और काफी एकाग्रता प्राप्त कर लेते हैं तो हमें ऐसा लगने

लगता कि सुमिरन कोई और कर रहा है और हम तो केवल सुन रहे हैं।

३६३—तवज्जह को कान की ओर न जाने दें, उसे भौहों के बीच में जमाये रखें। इस तरह आपको शब्द और अच्छी तरह सुनाई देगा। बायी ओर से आनेवाले शब्द को न सुनें, उसकी ओर ध्यान ही न दें। केवल दाहिनी ओर से आनेवाले शब्द को ही सुनें और अपने ध्यान को तीसरे तिल में स्थिर रखे। जब ध्यान अच्छी तरह एकाग्र हो जायेगा और आन्तरिक शब्द धुन साफ़-साफ़ सुनाई देने लगेगी, तब आपको बाहर का शोर-गुल सुनाई नही देगा। यह सिर्फ़ शुरू में ही बाधा डालता है। कृपया अपना अभ्यास नियमित रूप से नियत समय पर करें। इससे आपको अच्छे परिणाम मिलेंगे।

३६४—जैसा कि आपको नाम-दान के समय बताया गया होगा, आपको जो पाँच नाम दिये गये है वे अन्तर के पाँच रूहानी देशों के स्वामियों के नाम है। इन नामों में बड़ी ताकत है। अगर कोई कठिनाई आये या अभ्यास के दौरान में या और किसी भी समय कोई डर महसूस हो तो विश्वास के साथ प्रेमपूर्वक इन नामो को दोहराना चाहिये, जो भी कठिनाई या ख़तरा होगा वह फौरन दूर हो जायेगा। आप जब भी चाहें मुझे बिना किसी संकोच के लिख सकते हैं। मुझे आपकी सहायता करने में खुशी होगी।

३६५—हाँ, आपका कथन सही है। घण्टे की धुन को देर तक सुनने से हमारा ध्यान आन्तरिक केन्द्र की ओर जाता है, हमारी बोध-शक्ति बढ़ती है तथा हमारी बुद्धि तेज और निर्मल होती है। जब अन्तर में आपको अपनी इस जिन्दगी की परिस्थितियों के सही कारणों का पता लगे तो इस प्रकार आप पर प्रकट की जानेवाली बातों के लिये आपको कृतज्ञ

होना चाहिये। परन्तु उन पर अधिक सोच-विचार नही करना चाहिये, क्योंकि हमारा असली उद्देश्य तो अपने आपको और सब बातों से बेलाग करके शब्द के साथ जोड़ना है। निस्सन्देह, कर्म बड़े बलवान होते है, परन्तु सतगुरु की दया-मेहर और नाम की ताकत कर्मो के लेख को मिटा सकती है।

जहाँ तक भजन में सुनाई देनेवाली बातों का सवाल है आप बाहर आने पर उन्हें संक्षेप में लिख सकते हैं और बाद में उनकी जाँच-पड़ताल कर सकते हैं। कभी-कभी आपको उपयोगी और महत्वपूर्ण जानकारी मिल सकती है। परन्तु कभी-कभी यह जानकारी गुमराह करनेवाली तथा काल की ओर से एक छल भी हो सकता है। इससे बचने का सबसे अच्छा उपाय अन्तर में सतगुरु का ध्यान और पाँच नामों का जाप करना है। यह जाप अवचेतन रूप में भी हो सकता है, परन्तु फिर भी यह गलत दिशा से आनेवाली बातों को हटा देगा। जब आपको घण्टे का शब्द दाहिनी ओर या बीच में से सुनाई दे रहा हो या जब आप अन्दर सतगुरु के दर्शन कर रहे हो, उस समय आपके सामने जो भी बात प्रकट हो उसमे शक की कोई गुजाइश नहीं है।

३६६---जो सत्संगी प्रेम-प्यार के साथ शब्द-अभ्यास करता है, वह सिर्फ़ अपने आपको ही नही बल्कि अपने सम्ब-न्धियों और प्रिय-जनों को भी लाभ पहुँचाता है।

३६७---सन्तों की वाणी की व्याख्या का ध्येय यही है कि हम नाम-भक्ति की ओर जायें। यद्यपि व्याख्या के दृष्टि-कोण में व्यक्तिगत अन्तर हो सकता है, फिर भी जो व्याख्या हमे नाम-भक्ति में मदद देती है या उस ओर ले जाती है, वह सही व्याख्या है।

बिना किसी शर्त के अपने आपको समर्पित कर देने का विचार सही है और असल में इस सम्पूर्ण प्रणाली का आधार

है। जब ऐसा समर्पण पूर्ण हो जाता है तो फिर कुछ भी करना बाकी नहीं रहता, क्योंकि हमारी इच्छा का स्थान सतगुरु की रजा या मौज ले लेती है और जो कुछ भी जरूरी है वह अपने आप सहज रूप से होने लगता है। परन्तु यह बिना शर्त का समर्पण बुद्धि या तर्क का कार्य नही है। यह एक आन्तरिक रूहानी अवस्था है, जो केवल निरन्तर शब्द-भक्ति के द्वारा ही प्राप्त होती है।

हमें अपने शरीर की उचित देख-भाल करना चाहिये और ऊँचे तथा उत्तम ध्येय की प्राप्ति के लिये उसका उपयोग करना चाहिये। हमे न तो बहुत अधिक सँभाल और आराम के द्वारा उसे बिगाड़ देना चाहिये और न ही उसे उपवास, जप-तप आदि साधनों द्वारा सुखा देना चाहिये।

असली शान्ति मन में है। अगर मनुष्य नियमित रूप से प्रेम-पूर्वक भजन-सुमिरन में लीन है तो उसे संसार में रहते हुए भी उतनी ही शान्ति प्राप्त हो जाती है जितनी कि किसी आश्रम या एकान्तवास में मिल सकती है। शरीर और मन दोनों को ही कार्य में व्यस्त रखना चाहिये।

जैसे-जैसे आप स्थिरता के साथ भजन-सुमिरन में ध्यान लगायेंगे और अन्दर शब्द के साथ जुड़ेंगे, आपके सन्देह और आपकी कठिनाइयाँ अपने आप दूर होती जायेंगी। तब आप अपने अन्दर अपार शान्ति महसूस करेंगे और अपने सम्पर्क में आनेवाले हरएक व्यक्ति के प्रति प्रेम और सद्भाव का अनुभव करेंगे और आपका मन सच्ची नम्रता से पूर्ण हो जायेगा।

इस पद को सँभालनेवाले को परम्परा से "महाराज जी" कहा जाता है; इसीलिये यहाँ लोग मुझे महाराज जी कहते हैं। जो लोग बाहर से आते हैं वे भी यहाँ के लोगों के समान मुझे यही कह कर पुकारते हैं। आप जैसे चाहें

मुझे पुकार सकते है।

केवल नाम और शब्द की भक्ति ही काल को दूर भगा सकती है। कोरे लफ्ज, चाहे वे कुछ भी हों, न तो काल को खींच सकते हैं और न उसे भगा सकते है।

हमारी ध्वनियों से सम्बन्ध रखनेवाली भारतीय शब्दों के उच्चारण की कुंजी जैसी यहाँ पर कोई चीज नही है। महत्व तो सन्त-मत की शिक्षाओं का है। आप "सार-बचन" का किस प्रकार उच्चारण करते है यह उतना महत्वपूर्ण नही जितना कि "सार बचन" में लिखी बातों को समझना और उन पर अमल करना है।

३६८—आपका यह विचार सही नहीं है। सत-देश में कोई आवरण या परदे नही है। जब तक हम मन और माया की सीमा को पार नही कर लेते, हमारे लिये सृष्टि के इन रहस्यों को समझना सम्भव नहीं है और साधक को चाहिये कि इनमें न उलझे।

यह सच है कि सत लोक से नीचे के मण्डलों में स्थायी रूप से रहने वाली आत्माएँ कभी-कभी सृष्टि की योजना के अनुसार इस संसार में देह धारण करती है और अपना कार्य पूर्ण करके वापस वही चली जाती है। दूसरी आत्माएँ भी जो किसी न किसी वजह से वहाँ ठहरी हुई है, समय-समय पर यहाँ जन्म लेती हैं, ताकि वे अपनी रूहानी तरक्की की गति बढ़ा सकें या यहाँ ऊँचे दरजे की दीक्षा पाकर सत-देश पहुँच सके। ऊपर के मण्डलों की बनिस्बत यहाँ रूहानी प्रगति ज्यादा जल्दी होती है।

मन और मस्तिष्क दो अलग-अलग चीजें है। मन को मात्रा अथवा नाप-तौल के आधार पर नही परखा जा सकता। पिछले जन्मों का संचित ज्ञान और संस्कार उभर कर मनुष्य को असाधारण प्रतिभावाला बना देते है। जो

जीव निचली जूनों में से आते है और जिनके संस्कार निम्न स्तर के होते हैं, वे घटिया दिमाग पाते हैं और मूर्ख होते हैं। दोनों ही अवस्थाओं के पीछे कर्मों का हाथ है।

अगर किसी परिवार में कोई एक व्यक्ति मानसिक रोग से पीड़ित है, तो उसकी इस दशा के लिये क्या किसी हद तक परिवार के दूसरे सदस्य जिम्मेदार हैं या वह व्यक्ति अपने अगले जन्म में मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त करेगा या नही, यह सब व्यक्तिगत बातों पर निर्भर है। इसके लिये कोई निश्चित नियम नहीं बताया जा सकता।

परिवार के सदस्य पिछले कर्मों और सम्बन्धो के अनुसार इकठ्टे होते है। कई लोग, जिनके स्वभाव और संस्कार अलग-अलग होते है, एक ही होटल या घर में रहते हैं। उनका रहना और खाना-पीना एक-सा होता है, परन्तु यह जरूरी नही कि उनका दृष्टिकोण और उनके ध्येय भी समान ही हों।

ऊँचे रूहानी लोकों में जो "सुधार के मण्डल" है, उनमें रहने वालों को यही दुःख है कि वे सत्पुरुष के प्रत्यक्ष दर्शन नही कर पाते। उनके लिये यह सजा भी कुछ कम नही।

हाँ, स्वामीजी महाराज या कबीर साहिब जैसे परम सन्तो को बचपन से ही अपनी ऊँची आध्यात्मिक गति का पता होता है। फिर भी अपने पूरे जौहर में आने के लिये उन्हें माया के परदे को बेधना पड़ता है, जो उनकी स्थिति में बहुत घना नही होता। दीया, तेल और बाती तीनों ही मौजूद रहते हैं, लेकिन फिर भी उन्हें रोशन करने के लिये एक चिनगारी की जरूरत होती है।

जो सन्तों की वाणी को सही ढंग से समझते हैं और यह जान लेते है कि नाम और शब्द दोनों एक ही है, केवल वेही एक देह-धारी मौजूदा सतगुरु की जरूरत महसूस करते

है और उसे स्वीकार करते है। ऐसे लोगो की सख्या सीमित ही है।

जब हम अन्दर जाते है, शब्द के साथ जुड़ते है और अन्तर में सतगुरु के स्वरूप की झलक देखते है, केवल तभी हमारे अन्दर सच्चा प्रेम पैदा होता और बढ़ता है। इस प्रेम को पैदा करने का भजन-सुमिरन के अलवा सबसे अच्छा उपाय है सन्त-मत की पुस्तको को पढ़ना, अन्तर में जानेवाले तथा शब्द से जुड़े हुए प्रेमी सत्सगियों की संगति, बगैर किसी पुरस्कार की भावना के संगत की सेवा, जब भी सभव हो देह-स्वरूप सतगुरु का सत्सग और संगति और पाँच पवित्र नामों का गहरा तथा निरन्तर सुमिरन।

हमें निरर्थक सोच-विचार में समय नष्ट नही करना चाहिये, बल्कि खाली मिलनेवाला प्रत्येक क्षण भजन-सुमिरन में लगाना चाहिये। तभी हम सन्त-मत की सचाइयो को अपने अन्तर मे अपने ही लिये सिद्ध कर सकेंगे।

३६६—हमारे जन्म-दिन हमें याद दिलाते है कि वक्त गुजरता जा रहा है और कितना अनमोल व कीमती समय बीत चुका है। अगर उसे भजन-सुमिरन मे लगाया गया है तो उसका उचित उपयोग हुआ है, वरना वह व्यर्थ बरबाद किया गया है। इसलिये आत्म-निरीक्षण के लिये तथा आइन्दा भजन-सुमिरन में और ज़्यादा वक्त देकर अपने समय का पूरा और अच्छा उपयोग करने का दृढ़ निश्चय करने के लिये जन्म-दिन एक अच्छा मौका है। जब तक हम भजन-सुमिरन में पूरा समय नही देते, तब तक हमारा सारा जीवन ही व्यर्थ जा रहा है, क्योकि मनुष्य-जन्म का ख़ास उद्देश्य ही परमात्मा की प्राप्ति है। यह प्रेम और भक्ति तथा उसकी दया-मेहर के बिना नहीं हो सकता। यह दया-मेहर भी नियमित भजन-सुमिरन के फल-स्वरूप प्राप्त होती है।

३७०—आपको यह जानकर खुशी होगी कि हमने "रिलीजियस एण्ड चेरीटेबल एक्ट" के अन्तर्गत एक सोसाइटी रजिस्टर करवाई है। इस सोसाइटी के विधान और नियमों की एक प्रति आपको भेजी जा रही है। मैंने डेरे का सब रुपया और जायदाद सोसाइटी के नाम कर दी है। मेरे मन पर से बोझ उतर गया है, हालाँकि मुझे मालूम है कि इससे मेरी जिम्मेदारियाँ कम न होंगी। मुझे पहले की तरह काम करना पड़ेगा और सोसाईटी के कार्यो की निगरानी रखनी होगी। परन्तु फिर भी मुझे खुशी है कि कुछ प्रमुख सत्संगियों को सगत की उस जायदाद के लिये जिम्मेदार बना दिया गया है जो कि अब तक मेरे तथा मेरे पूर्व के गुरु साहिबानों के हाथ मे थी।

३७१—जैसा कि आज इससे पहले वाले पत्र मे आपको लिख चुका हूँ, मैंने सत्संग की सम्पूर्ण सम्पत्ति और धन-राशि को एक रजिस्टर्ड सोसाइटी के हवाले कर दिया है, जिसके सदस्य कुछ पुराने और विश्वसनीय सत्संगी है। यह विचार मेरे मन में कई वर्षो से था, परन्तु कुछ कानूनी उलझनो तथा अन्य कठिनाइयों की वजह से इसे अभी तक अन्तिम रूप नही दिया जा सका था। इस सम्बन्ध में मुझे राय साहिब मुशीराम तथा कुछ और सत्सगियों से मूल्यवान सहायता मिली है और यह उनकी मदद से ही सभव हो सका है। इसके बारे मे मैंने आपको अलग पत्र लिखा है और उसके साथ सोसाइटी के विधान और नियमो की एक प्रति भी भेजी है।

३७२—अन्तर मे शब्द के साथ जुड़ने के लिये एक जीते-जागते देहधारी सतगुरु की आवश्यकता अनिवार्य या लाजिम है। हम संसार के प्यार मे इतने उलझे हुए हैं कि जब तक प्यार करने के लिये हमें उससे अच्छी चीज या

उससे उत्तम व्यक्ति नही मिलता तब तक हमारे लिये उसके मोह-जाल से छुटकारा पाना आसान नही। इस ससार में हमारे प्रेम के लिये एक देह-स्वरूप सतगुरु से अच्छा पात्र कौन हो सकता है ? उनका असली स्वरूप शरीर नही, बल्कि शब्द है। हमारा उद्देश्य शब्द में लीन होना है। हमारे प्रेम के लिये कोई न कोई आधार चाहिये। इस संसार के लोगो और पदार्थो से अपना मोह तोड़ने के लिये हमें उनसे ऊँची और बेहतर एक ऐसी हस्ती चाहिये जिससे हम अनुरक्त हो सकें। सतगुरु इस रूहानी मार्ग को पहले ही तय कर चुके है और अगर हम प्रेम व भक्ति के साथ उनकी शरण में आ जायें, तो वे हमें भी वापस अपने असली धाम ले चलेंगे।

इस रास्ते में कई कठिनाइयाँ और रुकावटे है, जिनको पार करने के लिये हमें एक देह-स्वरूप सतगुरु की जरूरत है, जो खुद यह रास्ता तय कर चुके हैं और हमारी भी इस मार्ग में मदद कर सकते है। सतगुरु को हमारे प्यार की जरूरत नही है, पर उनकी शरण लेने और उनका ध्यान करने मे फायदा हमारा ही है। अपना प्यार वे स्वयं ही प्रदान करते है और इससे हमें संसार के लोगों और पदार्थो की ओर से अपने ध्यान और प्यार को हटाने में मदद मिलती है। बेशक हमें मनुष्य-मात्र से प्रेम करना चाहिये, परन्तु एक मोह-रहित भाव से तथा उसे मालिक के प्रति निस्वार्थ सेवा समझते हुए, और इस प्रेम में वासना या अधिकार की भावना का लेश भी नही होना चाहिये।

सन्त-मत किसी पर दबाव डालने में विश्वास नहीं करता। गैर-सत्संगियों के प्रति सत्संग का ध्येय यही है कि उनके सामने सन्त-मत के सिद्धान्तों को स्पष्ट रूप में रख दिया जाय और फिर उन्हें अपना निर्णय स्वयं करने दिया जाय। यह हमारा कर्तव्य है कि हम सच्चे जिज्ञासुओं की

सहायता करे और उन्हे सन्त-मत के बारे में पूरी जानकारी दें। जिनके भाग्य मे है वे खुद ही सतगुरु की शिक्षा को स्वीकार कर लेगे।

जहाँ तक उन स्वादो का सवाल है जिन्हे 'हानिरहित स्वाद' कहा जाता है, जितना ज्यादा हम उनमे प्रवृत्त होते है, हमारा मन उतना ज्यादा सांसारिक पदार्थो मे फैलता है। हमारा ध्येय तो मन को समेटना या एकाग्र करना है। इन स्वादो की लालसा से यह साबित होता है कि उस असली आनन्द का स्वाद लेने के लिये अभी हम अन्तर की ओर भली प्रकार प्रवृत्त नही हुए है।

ये कथित हानिरहित स्वाद या निर्दोष सुख न केवल थोडे समय तक रहनेवाले है, बल्कि इनके बुरे असर भी होते है, जब कि आँखो के केन्द्र पर एकाग्र होने से आत्मा को स्थायी लाभ प्राप्त होते है। और फिर सतगुरु ने हमारे लिये जो हिदायते दी है, वे हमारी आत्मा के कल्याण के लिये ही है और हमें कभी उन्हे टालने या उनके खिलाफ बर्ताव करने का खयाल भी नही करना चाहिये। हमे आज्ञाकारी व सधा हुआ सैनिक बनना चाहिये और अपने सेनापति का हुक्म मानना चाहिये। वह मालिक खूब जानता है कि हमारे लिये क्या अच्छा है और हमे हमेशा उसके हुक्म के अन्दर रहने की कोशिश करना चाहिये। जिन बातो की हमें खास तौर पर मनाही की गयी है, वे चाहे अच्छी है या बुरी, उनका निषेध हमारे भले के लिये ही है।

हमारा ध्येय शब्द-धुन के साथ जुड़ना है और इसकी पूर्ति के लिये हमें सासारिक सुखो की ओर से मुख मोड़ना होगा। परन्तु इसका यह अर्थ नही कि जब तक हमे शब्द-धुन से जुड़ने का सौभाग्य न मिले, हम इन सासारिक सुखों का स्वाद लेते रहे। हमे शब्द को प्राप्त करने के लिये

कोशिश करते हुए इन सासिरक सुखों से दूर रहना चाहिये, क्योंकि शब्द हमें ऊपर की ओर ले जाता है जब कि ससार के सुख हमें नीचे खीचते है, और एक ही समय दोनों ओर जाना असम्भव है।

जब हम अन्तर में शब्द के साथ जुड़ जायेंगे तो उसका महान आन्तरिक आनन्द हमारी तवज्जह को अपने आप बाहर के सासारिक सुखों की ओर से हटा देगा। परन्तु हमें इस अवस्था की प्राप्ति के लिये मेहनत करनी पड़ेगी और और अभ्यास के दिनों में हमें आत्म-संयम और अनुशासन भी रखना होगा। हो सकता है कि यह कठिन मालूम दे, क्योंकि हमारा मन केवल सारे शरीर में ही नही, बल्कि ससार के विविध कार्यो और रुझानों में भी फैला हुआ है। परन्तु यह छोटा-सा त्याग हमारे उस महान ध्येय को देखते हुए कुछ भी नही है, जिसकी प्राप्ति पर हमें सब कर्मो के बन्धनों से मुक्ति और आवागमन के चक्कर से छुटकारा मिल जायेगा।

मीटिंग में तथा प्रश्नोत्तर के समय सतगुरु की सहायता प्राप्त करने का सबसे अच्छा तरीका है मीटिग मे आने से पहले कम से कम एक घण्टा भजन में बैठना।